# हिंदू खटिक जाति

## एक धर्माभिमानी समाज की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन का इतिहास

(सिकंदर एवं तैमूर आक्रमण से लेकर विदेशी मुस्लिम आक्रांताओं एवं अंग्रेज शासकों की बर्बरता के परिणाम का एक ऐतिहासिक अवलोकन)

हिंदू खटिक जाति की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन की ऐतिहासिक घटनाओं एवं विभिन्न कालखंडों का इस कृति में सजीव चित्रण है। वैदिक काल के बलि देने वाले खट्टिक (ब्राह्मण) त्रेता युग के पहले भगवान् श्रीराम के कुल के पूर्वज राजा खट्वाग (क्षत्रिय), द्वापर युग यानी महाभारत काल के पूर्व काशी अथवा मिथिलांचल में मांस का व्यवसाय करने वाले ऋषि व्याध (वैश्य) और मुगलकाल में महाराष्ट्र के संत उपसराव एवं ब्रिटिश काल में राजस्थान के संत दुर्बल नाथ (दलित) को अपना पूर्वज मानने वाले हिंदू आज खटिक जाति के लगभग 1871 गोत्रों, उपनामों एवं उपजातियों के रूप में पहचाने जाते हैं। तैमूर लंग के लूटपाट एवं अत्याचार का मुहतोड़ प्रत्युत्तर कठोर राज्य के कठिकों (खटिक) ने दिया था। सिकंदर के विश्व विजय के स्वप्न को भी खटिक जाति ने ही चूर-चूर किया था। विदेशी मुगल, तुर्क एवं मुसलिम आक्रांता शासकों के हिंदू उत्पीड़न तथा हिंदुस्थान में हिंदुओं को हिंदू होने का यानी हिंदू टैक्स अथवा जजिया कर का खुलकर विरोध महान् हिंदू खटिक जाति ने किया था। विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के हिंदुस्थान में प्रवेश से लेकर उनके शासन तक लगातार डटकर यदि किसी ने उनका विरोध किया तो खटिक जाति ने किया। अंग्रेजों के विरुद्ध 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के नायक मेरठ के 'तितौरिया' भी खटिक ही थे।

सामाजिक समरसता दर्शन की दिशा में चिंतन के लिए बाध्य करती इस कृति से संपूर्ण हिंदू समाज को सकारात्मक चिंतन की एक दिशा प्राप्त होगी।

# हिंदू खटिक जाति

# हिंदू खटिक जाति

## एक धर्माभिमानी समाज की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन का इतिहास

*(सिकंदर एवं तैमूर आक्रमण से लेकर विदेशी मुसलिम आक्रांताओं एवं अंग्रेज शासकों की बर्बरता के परिणाम का एक ऐतिहासिक अवलोकन)*

**डॉ. विजय सोनकर शास्त्री**

*एम.बी.ए., पी-एच.डी. (शास्त्री उपाधि)*

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

ISO 9001:2008 प्रकाशक

प्रकाशक • **प्रभात प्रकाशन**
4/19 आसफ अली रोड,
नई दिल्ली–110002
सर्वाधिकार • सुरक्षित
संस्करण • 2016
मूल्य • पाँच सौ रुपए
मुद्रक • नरुला प्रिंटर्स, दिल्ली

---

**HINDU KHATIK JATI**
*by* Dr. Bizay Sonkar Shastri Rs. 500.00
Published by Prabhat Prakashan, 4/19 Asaf Ali Road, New Delhi-2
e-mail: prabhatbooks@gmail.com ISBN 978-93-5048-567-5

# आमुख

'हिंदू खटिक जाति : एक धर्माभिमानी समाज की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन का इतिहास' नामक इस पुस्तक से केवल खटिक जाति का ही नहीं अपितु संपूर्ण भारतवर्ष का इतिहास प्रकाशित हो रहा है। हिंदू लोक जीवन के आलोक में हिंदू समाज की हजारों जातियों के अंतर्गत आनेवाली 'खटिक जाति' के वर्तमान स्वरूप का विषद् अध्ययन प्रस्तुत पुस्तक में है। खटिक जाति के प्राचीन स्वरूप एवं इसकी वर्तमान सामाजिक और आर्थिक परिस्थिति में कल्पना से परे अंतर दृष्टिगोचर है। अतीत के गौरवशाली इतिहास को संवहन करनेवाली खटिक जाति वर्तमान समय में अनुसूचित जाति के अंतर्गत चिह्नित है। यदि खटिक जाति वैदिक काल से लेकर मध्यकाल के पूर्व तक एक सम्मुन्नत जाति थी; तो वर्तमान में उसके सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक पतनयुक्त इस प्रत्यक्षीकरण के पीछे क्या और कौन से कारक हैं? आज देश भर में प्राप्त खटिक जाति के ऊपर प्रस्तुत यह शोधग्रंथ इस जाति की विशाल जनसंख्या को आत्मबोध की अनुभूति कराने एवं सर्वमुखी संपूर्ण सशक्तीकरण हेतु इनके पथ निर्धारण की दिशा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में भारत का स्वर्णिम इतिहास, प्राचीन इतिहासकारों द्वारा भारत के इतिहास लेखन में की गई भयंकर भूलें, हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति की विस्तृत विवेचना, खटिक जाति के संदर्भ में उसके गौरवशाली अतीत एवं राजवंशीय इतिहास की शौर्ययुक्त प्रस्तुति और इसके साथ ही इस महान् जाति के दीर्घकालीन संघर्ष, जय-पराजय, सम्मान और पराभव की रोमांचकारी गाथा ही इस पुस्तक की विशेषता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस जाति की वर्तमान दयनीय स्थिति का कारण गत मध्यकाल एवं ब्रिटिशकाल में व्यापक उत्पीड़न, अत्याचार तथा शोषण है। खटिक जाति हिंदू धर्म एवं हिंदू संस्कृति की पूर्ण वाहक जाति होने के कारण हिंदू स्वाभिमान एवं हिंदू गौरवबोध हेतु सर्वदा

संघर्षरत थी। हिंदू धर्म की रक्षा एवं उन्नयन हेतु प्राचीनकाल से लेकर आज तक यह जाति हिंदू विरोधी शक्तियों से लोहा लेती रही है। इतिहास लेखन में न्याय नहीं होने के कारण खटिक जाति की भूमिका एवं हिंदुस्थान के लिए इनका योगदान स्पष्ट नहीं हो सका। प्रस्तुत पुस्तक में तथाकथित स्वार्थी इतिहासकारों द्वारा छोड़े गए वही अधूरे कार्यों को पूर्ण करने का लेखक द्वारा प्रयास है। समृद्धशाली भारत की धन-संपदा को लूटने के लिए अरब और पश्चिम एशिया के बड़े-बड़े आतंकियों एवं आक्रांताओं द्वारा यहाँ जब-जब आक्रमण हुए तो खटिक जाति जैसी अनेक स्वाभिमानी एवं योद्धा जातियों ने ही न केवल उनका सामना किया, अपितु उन्हें मुँहतोड़ उत्तर भी दिया। अनेक विदेशी आक्रांताओं के विश्व विजय के स्वप्न को भी उनके द्वारा चकनाचूर कर दिया गया। इसलिए खटिक जाति जैसी सैकड़ों जातियाँ, जो वास्तव में योद्धा प्रजाति की जातियाँ हैं, उनके प्रति इस देश में श्रद्धा होनी चाहिए एवं ऐसी जातियाँ पूर्णरूपेण सम्मानित हों।

हिंदुस्थान की संस्कृति आदिकाल से ही एक मानवीय दृष्टि पर आधारित संस्कृति की संयोजक थी, जो कालांतर में एकात्म मानववाद के रूप में फलीभूत हुई है। एकात्म मानववाद व्यक्ति, समाज एवं संसार को कभी विभक्त नहीं करता है। यह तो शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के अनंत एवं समग्र सुख की चिंता करता है। ऐसे में भारत पर हुए लगभग तेरह सौ वर्षों के लगातार आक्रमण के बाद उक्त चिंतन आधारित लोकजीवन पर व्यापक प्रभाव हुआ। मध्यकाल में हिंदू संस्कृति का स्वरूप भी मिले-जुले चिंतन धाराओं से प्रभावित होना प्रारंभ हुआ और कालांतर में अनेक प्रकार की विकृतियों ने घेरकर हिंदू संस्कृति एवं चिंतन को दूषित कर दिया। आज हिंदू ही आपस में बँटे हुए 'सर्वे सन्तु निरामया' एवं 'वसुधैव कुटुंबकम्' के स्थान पर स्वजातीय एवं स्व के उत्थान तक सीमित है। ऐसे में खटिक जाति जैसी सैकड़ों जातियों द्वारा प्रस्तुत किए गए महान् त्याग, बलिदान एवं संघर्ष के उदाहरण निष्प्रभावी हो रहे हैं।

आज संसार के संपूर्ण देश अपनी संस्कृति, सभ्यता एवं प्राचीन धरोहर को न केवल बचाने बल्कि उसे बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करने में लगे हुए हैं, किंतु हिंदू तो अपने में ही इतने बँटे हैं कि अपनी संस्कृतिरूपी श्रेष्ठ धरोहर की भी रक्षा करने में असमर्थ हो रहे हैं। हमारे पूर्वजों ने इस महान् कल्याणकारी संस्कृति को विश्व कल्याणार्थ प्रस्तुत किया और हमारी हिंदू संस्कृति एवं विचारधारा आनेवाले समय की आवश्यकता भी है, जबकि विश्व की अनेक सभ्यता आपस में शत्रु भाव से टकरा रही हैं, ऐसे में भी हिंदू संस्कृति एवं हिंदू लोकजीवन अपने तात्त्विक श्रेष्ठता को बनाए हुए, आनेवाले दिनों की चुनौतियों का सामना करने हेतु दृढ़ है। इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं कि आनेवाले समय में हिंदू संस्कृति विश्व समुदाय की न केवल आवश्यकता बल्कि यह समस्त संसार के लिए अपरिहार्य होगी। इसी में संसार का कल्याण निहित है। हिंदू खटिक जाति एवं

इसकी हजारों उपजातियाँ (पुस्तक का परिशिष्ट एक देखें) जो ऐसे मानवोपयोगी संस्कृति एवं धर्म की रक्षा के लिए सर्वदा तत्पर थी, उन्हें आनेवाला समय सर्वदा स्मरण एवं नमन करेगा।

डॉ. विजय सोनकर शास्त्री द्वारा लिखित पुस्तक 'हिंदू खटिक जाति : एक धर्माभिमानी समाज की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन का इतिहास' के आद्योपांत अध्ययन से यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि बाह्य आक्रांताओं के द्वारा हिंदुस्थान में हिंदुओं का प्रचंड दमन, दलन, उत्पीड़न एवं उन पर अत्याचार हुआ तथा उसके उपरांत भी हिंदू एवं हिंदू संस्कृति सुरक्षित रह गई। मध्यकाल एवं ब्रिटिशकाल के उत्पीड़न एवं अत्याचार का प्रत्युत्तर देनेवाली प्रमुख जातियों में खटिक जाति भी थी। इसकी कल्पना की जा सकती है। पुस्तक में वर्णित विविध प्रकार के तथ्य हिंदू धर्म एवं हिंदू लोकजीवन के सरस तथा कल्याणकारी स्वरूप को स्पष्ट करते हैं। हिंदू धर्म में खटिक वंश एवं गोत्र के अंतर्गत प्रागैतिहासिक काल एवं आखेट युग के साथ वैदिक युग में खटिक जाति की पहचान 'बलि देनेवाले ब्राह्मण' के रूप में दिया गया है। प्राचीन काल के कठ, कठोर, कठिक एवं खटिक इत्यादि जातियों को संवर्गीय सिद्ध करना और भौगोलिक प्रत्यक्षीकरण (रहन-सहन) के आधार पर उनमें साम्य सिद्ध करना यह अत्यंत दुरुह कार्य था। हिंदू खटिक जाति के ज्ञानी, साधु-संत एवं धर्म-पुरुषों तथा हिंदू समाज के लिए उनका योगदान विशेष रूप से महाभारत काल के धर्मव्याध्र, मध्यकाल के सदन खटिक, ब्रिटिश काल में महाराष्ट्र के उपासराव जी महाराज, राजस्थान के दुर्बलनाथजी महाराज का वर्णन सरांहनीय है।

डॉ. विजय सोनकर शास्त्री ने मुगलकाल के हिंदू समाज का जो चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, वह वास्तव में कुछ चिंतन के लिए बाध्य कर देता है। हिंदुस्थान में हिंदुओं को हिंदू होने का कर (जजिया कर) देना यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण रहा होगा। जो लोग कर देने में असमर्थ रहे होंगे, उनका क्या हुआ होगा? मुहम्मद गजनबी तो हजारों मन सोना-चाँदी बहुमूल्य रत्नादि लूटकर ले गया, किंतु लाखों स्त्रियों को भी गुलाम बनाकर यहाँ से ले गया। क्या उन बेबस एवं लाचार स्त्रियों की चीत्कार आज भी हिंदुस्थान के हिंदुओं के कान में नहीं गूँज रही है? भारत के सभी ईसाई एवं मुसलमान धर्मांतरित हैं। भारत के मुसलमान एवं वर्तमान तथाकथित दलित जातियाँ मध्यकाल के विदेशी आक्रांता तुर्क एवं मुगलों के आतंक, अत्याचार, उत्पीड़न, ज्यादती एवं दुर्भावना की शिकार है। विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों से हिंदू खटिक वंश का ऐतिहासिक युद्ध उक्त घटनाओं का प्रमाण है। हिंदू खटिक जाति के महान् योद्धाओं का विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों के दमन चक्र के विरुद्ध उठे चेतावनीपूर्ण स्वर की कथा इस पुस्तक की विशेषताओं में से एक है।

पुस्तक में वर्णित हिंदू खटिक जाति द्वारा हिंदू धर्म, संस्कृति एवं स्वाभिमान की रक्षा और इसलामिक जेहाद तथा विदेशी आक्रांता मुसलिम शासकों के धर्म परिवर्तन के अभियान को खटिक जाति द्वारा सुअर पालन के माध्यम से असफल बनाने एवं उनके ज्यादतियों का मुँहतोड़ उत्तर देने संबंधित विवरण का आधार अत्यंत स्वाभाविक है। स्मरणीय रहे कि मुसलिम आक्रांताओं के यहाँ आने के पूर्व भारत में सुअर पालन का कोई भी उल्लेख नहीं मिलता। स्वधर्म रक्षा हेतु हिंदू जातियों द्वारा अपनाया गया कार्य था। इससे धर्मरक्षा तो हुई किंतु सामाजिक सम्मान गिरता गया।

हिंदू खटिक जाति केवल विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों का ही नहीं अपितु विदेशी ब्रिटिश शासकों के भी अत्याचार की शिकार हुई थीं। महान् खटिक जाति का अंग्रेजों से भयंकर प्रतिद्वंद्विता का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि वे इन्हें क्रीमिनल कास्ट यानी अपराधी जाति की सूची में डालकर इनके निरपराध, निर्दोष एवं भोले-भाले सदस्यों का भी भयंकर उत्पीड़न करते थे। अंग्रेजों द्वारा खटिक जाति को अपराधी घोषित करने के पीछे स्वतंत्रता की लड़ाई एवं सत्ता के विरुद्ध उनकी भावना का आक्रामक प्रदर्शन था। यह भी एक महान् आश्चर्य था कि पूरी-की-पूरी जातियाँ Criminal Castes क्यों घोषित कर दी गई? व्यक्ति अपराधी हो सकते हैं किंतु पूरी-की-पूरी जातियों को अपराधी घोषित करना एक बड़े षड्यंत्र का भाग था, जिसके तहत संघर्षशील जुझारू जातियों को Criminal Castes में डाल दिया गया था। इस प्रकार पुस्तक में इस तथ्य को प्रमाणों के साथ प्रस्तुत किया गया है कि खटिक जाति एक स्वतंत्रता सेनानी जाति ही थी एवं स्वतंत्रता के महान् आंदोलन में इस जाति की अग्रणी भूमिका थी।

पुस्तक में खटिक जाति को हिंदू संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की पहचान के रूप में प्रस्तुत करना खटिक जाति के इतिहास के साथ लेखक द्वारा न्याय किया गया है। संस्कृति एवं धर्म के रक्षक के साथ आर्थिक व्यवस्था की मेरुदंड के रूप में खटिक जाति का स्थान इस जाति के महत्त्व को सिद्ध करती हैं। किंतु खटिक जाति की वर्तमान दयनीय सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक दशा इस चिंतन के लिए बाध्य करती है कि देश की ऐसी अनेक हिंदू जातियाँ जिन्हें अनुसूचित जाति की सूची में रखा गया है, उनकी दयनीय स्थिति के पीछे मध्यकाल एवं ब्रिटिशकाल की शासकीय दुर्भावनाएँ एवं उत्पीड़न ही है। पुस्तक में खटिक जाति के सशक्तीकरण एवं पुनरुत्थान का विधिवत विवेचन एवं उनकी संस्तुति विशेष रूप से इन्हें जो कुछ स्थानों पर अनुसूचित जाति में रखा गया, उसे बढ़ाकर 'इन्हें संपूर्ण देश में अनुसूचित जाति में शामिल किया जाए' इस पर समाज एवं सरकार को चिंतन करने की आवश्यकता है।

डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, पूर्व सांसद एवं राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति

आयोग, अध्यक्ष (चेयरमैन) भारत सरकार ने चेयरमैन के रूप में एक चुनौतीपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। इतना ही नहीं, हिंदू समाज में सामाजिक समरसता विषय पर एक नए दृष्टिकोण से चर्चा प्रारंभ करके विशेष रूप से हिंदू समाज का वह रूप समाज के समक्ष लाने का प्रयास किया है, जो हिंदू विरोधी देशी एवं विदेशी शक्तियों द्वारा षड्यंत्र रचकर लंबे समय से स्थापित की गई थी। हिंदू धर्मग्रंथों में प्रक्षिप्तता (मिलावट), पौराणिक धर्मग्रंथों के कुछ महत्त्वपूर्ण कथानकों को तोड़-मरोड़कर उनकी प्रस्तुतीकरण एवं हिंदू धर्मग्रंथों के अनुकरणीय चरित्रवाले हमारे मर्यादित व्यक्तित्वों को विवादित करके उन्हें हिंदुओं के मानस से मिटाने के षड्यंत्र को समाज के मध्य प्रकाशित करने का कार्य किया है। डॉ. विजय सोनकर शास्त्री विविध विषयों, जैसे—हिंदू वैचारिकी, सामाजिक समरसता, अनुसूचित जातियों का सामाजिक सशक्तीकरण, दलित पहचान को मिटाने का सिद्धांतयुक्त चिंतन एवं दलित आंदोलन की सकारात्मक दिशा इत्यादि विषयों पर संपूर्ण देश में चल रही राष्ट्रीय चर्चा को चलानेवालों में एक अग्रणी भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं।

डॉ. विजय सोनकर शास्त्री ने बाल्यावस्था से ही संघ से जुड़ने के कारण राष्ट्रोत्थान एवं परमवैभव की संकल्पना के साथ अभिभूत भाजपा, संस्कार भारती, विश्व हिंदू परिषद् एवं स्वदेशी जागरण मंच के विविध दायित्वों का निर्वहन किया है। भारतीय संसद् में सैकड़ों महत्त्वपूर्ण प्रश्न एवं परिचर्चा के साथ समाज में समरसता के व्यावहारिक पक्ष एवं हिंदुत्व की अवधारणा एवं उसकी सकारात्मक भाव इत्यादि महत्त्वपूर्ण विषयों पर कार्य किया है। वर्तमान में डॉ. सोनकर शास्त्री द्वारा किए जा रहे साहित्य रचना का लाभ संपूर्ण समाज को प्राप्त होगा।

डॉ. विजय सोनकर शास्त्री के उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी शुभकामनाएँ हैं। परमात्मा से यही अपेक्षा है कि वे डॉ. शास्त्री को पर्याप्त ज्ञान एवं बुद्धि देते रहें, ताकि वे समाज की सेवा में अधिकाधिक योगदान कर सकें।

**—डॉ. कृष्ण गोपाल**

सह-सरकार्यवाह,

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

# विचारभूमि

प्रस्तुत पुस्तक हिंदू खटिक जाति की उत्पत्ति, गौरवशाली इतिहास एवं राष्ट्रीय योगदान के साथ महान् हिंदू खटिक जाति के दुर्भाग्यपूर्ण पतन के ऐतिहासिक कारणों तथा कारकों को प्रकाशित करने के उद्देश्य से लिखी गई है। खटिक जाति हिंदू संस्कृति एवं हिंदू धर्म की पूर्णवाहक जाति होने के कारण हिंदू स्वाभिमान तथा हिंदू गौरवबोध हेतु सर्वदा संघर्षरत है। हिंदू विरोधी शक्तियों से हिंदू खटिक जाति का लगातार संघर्ष होता रहा है। मध्यकाल की भयानक कालीरात्रि में विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों से निरंतर युद्ध एवं उसके तत्पश्चात् क्रूर अंग्रेज व्यापारियों तथा अंग्रेज शासकों से भी स्वतंत्रता का भयानक संग्राम इसी हिंदू खटिक जाति एवं इसके महान् योद्धाओं ने किया था। इतिहास के पृष्ठों पर यद्यपि हिंदू खटिक जाति की गौरवगाथा यत्र-तत्र अंकित है किंतु विदेशी मुसलिम आक्रांता सुल्तानों, नवाबों एवं बादशाहों इत्यादि के चाटुकारों तथा अंग्रेजों के पिट्ठुओं ने हिंदुस्थान के इतिहास लेखन में अपने-अपने शासकों का बढ़ा-चढ़ाकर गुणगान किया। परिणामस्वरूप खटिक जाति के महान् योद्धाओं, देश के माटी के अमर सपूतों तथा हिंदू धर्म एवं संस्कृति के रक्षकों की भूमिका को यथोचित् स्थान एवं सम्मान नहीं प्राप्त हो सका।

हिंदू खटिक जाति पर जब यह पुस्तक मैं लिख रहा था, ठीक उसी समय देश के विभिन्न प्रांतों में हमारा लगातार प्रवास भी चल रहा था। जहाँ भी गया वहाँ मैं खटिक जाति के लोगों से संपर्क एवं प्रबुद्ध लोगों, इतिहासविदों एवं इस प्रकार के सामाजिक विषयों के जिज्ञासुओं से साक्षात्कार भी करता रहा। क्षेत्रीय विद्वानों, खटिक जाति के सम्मानित चौधरी-सरदारों से मिला तथा छोटे-बड़े पुस्तकालयों में जाने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। हमारे पिता स्व. श्री शिवलाल 'नेताजी' तो स्वयं हिंदू खटिक जाति के समाज सुधारक एवं स्वतंत्रता सेनानी भी थे। उनके आस-पास के वातावरण ने हमें बहुत कुछ समझाया था।

श्री शिव मंगल राम 'वैद्य' एवं भ्राता श्री राजनाथ सोनकर शास्त्री पूर्व सांसद (वाराणसी), श्री मामचंद्र रिवारिया (दिल्ली), श्री मथुरा प्रसाद सुवल (जयपुर), स्व. श्री सामाजी राव (बंगलौर) एवं स्वं. श्री आर.के. कल्याणकर (सिमोगा, कर्नाटक), श्री प्रेमलाल एवं पी. दशरथ (हैदराबाद), स्व. श्री रघुनाथ राव जाधव (नासिक) इत्यादि लोगों से मैंने बहुत कुछ महत्त्वपूर्ण संदर्भ प्राप्त किए। भिन्न-भिन्न व्यक्तियों ने हिंदू खटिक जाति का इतिहास अत्यंत रोचक एवं गौरवमयी बताया, किंतु पुस्तकालय तो लगभग मौन ही रहे। इस जाति के महान् स्वाभिमानी तथा गौरवशाली इतिहास का विवेचन वर्तमान एवं प्राचीन इतिहासकारों ने व्यवस्थित नहीं किया। करोड़ों जनसंख्या को संवहन करती हिंदू खटिक जाति मध्यकाल एवं ब्रिटिशकाल के प्रचंड दमन, दलन एवं उत्पीड़न के उपरांत अपना सबकुछ खोकर केवल अपनी बहू-बेटियों की अस्मत एवं सम्मान तथा अपना स्वाभिमान बचाने में सफल हो पाई थी। ऐसे योद्धा प्रजाति के गौरवगान एवं स्वाभिमान हेतु चुनौतीयुक्त संघर्ष का इतिहास तथा धर्म और राष्ट्र रक्षा की अमर कथाओं को पर्याप्त एवं यथोचित स्थान उपलब्ध न होना हिंदू खटिक जाति के प्रति राष्ट्रीय स्तर पर उदासीनता का पर्याय है। विदेशी आक्रांता शासकों के शासनकाल में जिस प्रकार देश को लूट-पाटकर खोखला किया गया, ठीक उसी प्रकार उन्हीं आक्रांताओं को चुनौती के साथ मुँहतोड़ प्रत्युत्तर देती स्वाभिमानी हिंदू खटिक जाति का भी लगातार दमन, दलन, उत्पीड़न एवं अत्याचार के साथ उसे आर्थिक रूप से निर्बल एवं खोखला बना दिया गया। इस देश पर लगभग आठ सौ साल तक विदेशी शक्तियों, जिसमें छह सौ वर्षों तक मुसलिम आक्रांता शासकों एवं लगभग दो सौ साल तक विदेशी अंग्रेज आक्रांता शासकों के किए गए दमन, दलन, उत्पीड़न, उपेक्षा एवं उदासीनता का शिकार धर्माभिमानी, स्वाभिमानी, राष्ट्राभिमानी अनेक जातियों के साथ हिंदू खटिक जाति को भी होना पड़ा था।

हिंदू खटिक जाति आज उन्नतिशील सामाजिक व्यवस्था, प्रगतिशील राजनैतिक व्यवस्था एवं विकासशील आर्थिक व्यवस्था के वर्तमान कालचक्र से होते हुए अबाध तथा तीव्र गति से भविष्य की ओर अग्रसर है। इस समय लगभग प्रत्येक क्षेत्र में विकास के अनेकानेक अवसर दृष्टिगत हैं। पुस्तक का लक्ष्य खटिक जाति के सशक्तीकरण की दिशा में प्रर्याप्त संभावनाओं को खोजना है। दलित संवर्ग में आने के कारण खटिक जाति के लोग अपने मानस में स्थापित हीन भावना को त्यागकर आरक्षण, सरकारी अनुदान एवं अनुसूचित जाति की श्रेणी में दिए जानेवाली नौकरियों एवं व्यवसाय को अपनाकर लाभ लेने हेतु प्रोत्साहित हो सके। हिंदुस्थान के विकास में खटिक जाति का व्यापक योगदान है। खटिक जाति हिंदुस्थान की ऐसी एकमात्र जाति है, जो गाँवों में किसानों के रूप में एवं शहरों में एक व्यवसायी की भूमिका में वंशानुगत अथवा व्यावहारिक रूप से पहचान के साथ उपादेयता बनाए हुए है। देश भर में केवल ब्राह्मण एवं खटिक ऐसी दो ही जातियाँ

हैं, जो एक नाम एवं एक कार्य से राष्ट्रीय स्तर पर पहचान रखती हैं। ब्राह्मण का नाम संपूर्ण देश में ब्राह्मण एवं उनका कार्य पूजा-पाठ संपन्न करना एवं कराना है, ठीक उसी तरह देश के प्रत्येक भाग में यानी संपूर्ण देश में पाई जानेवाली हिंदू खटिक जाति भी एक नाम 'खटिक' एवं कार्य एक 'मांस व्यवसाय' के कारण चिह्नित है। खटिक जाति एवं ब्राह्मण जाति में यह एक ऐतिहासिक साम्यता है।

आज हिंदुस्थान आणविक संपन्न महाशक्ति के रूप में विश्व मंच पर स्थापित है। यदा-कदा देश की छवि को क्षति पहुँचाने के लिए योजनाबद्ध रूप से मिथ्या एवं भ्रमात्मक विषयों के माध्यम से प्रचार किया जा रहा है। अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के संदर्भ में आवश्यकता से अधिक दुष्प्रचार किया गया है। इन जातियों के संदर्भ में प्रमुखता के साथ यह भी प्रचार हुआ है कि उनकी दीन एवं दयनीय दशा के लिए तथाकथित हिंदू समाज की कुछ जातियाँ (ब्राह्मण एवं क्षत्रिय संवर्गीय) ही मुख्यत: उत्तरदायी हैं। इन्हीं जातियों ने इनका दमन एवं दलन किया है। कुछ तथाकथित विद्वानों ने यहाँ तक विचार प्रकट किया है कि दलित जातियाँ हजारों वर्षों से हिंदू समाज में हैं। इनको बनाने के पीछे वैदिक काल की वर्ण व्यवस्था का हाथ है। जबकि वास्तविकता तो यह है कि 'दलित' शब्द की उत्पत्ति का स्रोत सन् 1931 में अंग्रेजों द्वारा कराए गए जनगणना के समय से है। उन्होंने 'डिप्रेस्ड क्लास' शब्द प्रयुक्त किया, उसे ही बाद में महाराष्ट्र में डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने अपने आंदोलन में 'अछूत' के स्थान पर 'दलित' शब्द से संबोधित किया था। वैसे भी लगभग आठ सौ वर्षों से जब हिंदू केंद्रीय शासन एवं सत्ता में ही नहीं रहा तो ब्राह्मण एवं क्षत्रिय संवर्गीय हिंदू जातियों को दलित समस्या के लिए उत्तरदायी ठहराना उचित एवं प्रमाणित नहीं है। हिंदू समाज में पवित्रता की भावना पर आधारित अस्पृश्यता एवं अस्पृश्यता का आधार अस्वच्छ कार्य यानी मल-मूत्र ढोना अथवा सफाई करना तथा चर्मकर्म और मुसलिम आक्रांताओं से बचने के लिए अस्वच्छ पशु यानी सुअर पालन से है। इसीलिए मध्यकाल में बलपूर्वक हिंदुओं को अस्वच्छ कार्यों में लगाना दलित समस्या का मूल कारण था। कालांतर में अस्वच्छ व्यवसाय से ही स्थायी अस्पृश्यता की स्थापना होती चली गई और स्वाभिमानी हिंदू योद्धाओं को विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों द्वारा दंडस्वरूप बलपूर्वक इस अभिशाप को धारण करवाकर उन्हें अस्पृश्य जातियों की श्रेणी में ठेल दिया गया। जबकि हिंदू संस्कृति और लोकजीवन में वैदिक काल से लेकर मध्यकाल तक स्थायी अस्पृश्यता का एक भी उदाहरण नहीं है। इसलिए यह स्पष्ट है कि अस्वच्छ कार्यों को बलपूर्वक कराने के पीछे हिंदू समाज अथवा तथाकथित ब्राह्मण एवं क्षत्रिय संवर्गीय हिंदू जातियों की भूमिका अप्रमाणित है।

इस पुस्तक के लेखन के पूर्व हमारे मन में कुछ प्रश्न और भी उठे थे। डॉ. बी.आर. अंबेडकर की पुस्तक 'शूद्रों की खोज' के प्राक्कथन में ही स्पष्ट रूप से यह लिखा है कि

भारत की वर्तमान दलित (अनुसूचित जातियाँ) एवं प्राचीन शूद्रों में अंतर है। यह डॉ. बी.आर. अंबेडकर द्वारा उठाया गया एक गंभीर निष्कर्षयुक्त प्रश्न था। समयाभाव एवं कार्यों की अधिकतावश डॉ. बी.आर. अंबेडकर इस प्रश्न की दिशा में ज्यादा आगे नहीं बढ़े, अन्यथा आज दलितों की उत्पत्ति की खोज की आवश्यकता नहीं रह जाती। किंतु हमने दलितों की उत्पत्ति, कारक तथा कारण, कौन-कौन सी जातियों को दलित श्रेणी में लाया गया, दलित संवर्गीय जातियों की अस्वच्छ कार्यवृत्ति, दलित बनाने का उद्देश्य एवं दलित बनानेवाले शासकों की पहचान इत्यादि महत्त्वपूर्ण प्रश्न का बड़ी गंभीरता से उत्तर प्राप्त करने का प्रयास किया है। डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने वस्तुत: जिन प्रश्नों को उठाकर किंतु समयाभाव एवं कार्य की व्यस्ततावश छोड़ दिया था, हमने उन्हीं प्रश्नों का इतिहास एवं धर्मशास्त्र में यथोचित एवं प्रामाणिक उत्तर खोजने का प्रयास किया है। एक तरह से श्रद्धेय डॉ. अंबेडकर के छूटे हुए अति महत्त्वपूर्ण कार्यों को हमने उसी क्रम में आगे बढ़ाने का कार्य किया। डॉ. अंबेडकर ने कुछ ऐसा कहा था कि मेरे साथियों मेरे कारवाँ को यानी संघर्ष को आगे नहीं बढ़ा सकना तो कोई बात नहीं किंतु इसे पीछे भी मत आने देना, किंतु हमें असीमित प्रसन्नता है कि हमने डॉ. अंबेडकर के उस दलितोत्थान की दिशा में अपेक्षित शोध कार्य को यानी उनके चिरप्रतिक्षित कारवाँ को आगे बढ़ाने का एक कठिन कार्य किया है।

हमें आभास है कि कुछ विद्वान् एवं विशेष रूप से दलित साहित्यकार पुस्तक में प्रस्तुत तथ्यों से सहमत नहीं होंगे, किंतु यह उनकी हठधर्मिता एवं पूर्वाग्रह होगा, क्योंकि पुस्तक में दिए जा रहे प्रत्येक तथ्य के पीछे पर्याप्त प्रमाण हैं। हमने प्रयास किया है कि सरल एवं सरस रूप में दलित समस्या का यथोचित् समाधान देकर इस समस्या को सर्वदा के लिए मिटा दिया जाए। यदि दलित जातियाँ अपने धार्मिक कट्टरता एवं अद्वितीय राष्ट्रवाद के लिए विदेशियों द्वारा दमन एवं दलन के उपरांत दलित बना दी गई तो इस चिंतन पर कम-से-कम देश के किसी व्यक्ति या विद्वान् को चिंता या आपत्ति नहीं होनी चाहिए। हमने इस समस्या के पीछे अपनों का नहीं बल्कि विदेशियों का दोष पाया है। इसलिए विदेशी मुसलमान आक्रांता शासकों अथवा अंग्रेजों से कम-से-कम अपने देश के किसी व्यक्ति अथवा विद्वान् को अकारण सहानुभूति का प्रदर्शन हमारे जैसे लेखकों के लिए विस्मयकारी ही होगा। हिंदुस्थान के मुसलमानों एवं दलितों की उत्पत्ति बिलकुल एक ही समान कारणों से है। वे हिंदू जिन्होंने बल प्रयोग के उपरांत इसलाम स्वीकार कर लिया वे मुसलमान हो गए और वे धर्माभिमानी, स्वाभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी हिंदू जो किसी भी मूल्य पर न तो टूटे और न ही झुके, तब उनका हिंदू स्वाभिमान ध्वस्त करने के लिए बलपूर्वक अस्वच्छ कार्यों में लगाने एवं धन-संपदा छीनकर उनका हर प्रकार से दमन एवं दलन कर उन्हें दलित बना दिया। इसलिए भारतीय मुसलमान एवं दलित मध्यकाल के विदेशी मुसलिम शासकों द्वारा दंडित महान् हिंदू योद्धा जातियों के वंशज हैं। इसलाम पंथ

अपनाने के कारण एवं हिंदू पूजा पद्धति से कट जाने के उपरांत भी भारतीय मुसलमान ज्यादातर आज भी हिंदू समाज एवं संस्कृति से विलग नहीं अपितु संलग्न हैं। हिंदुस्थान के प्रत्येक नागरिक की नागरिकता हिंदू ही है, भले ही वह हिंदू, मुसलमान या ईसाई मत एवं पंथ को माननेवाला ही क्यों न हो।

सौभाग्यवश अनुसूचित जातियों के संदर्भ में भारत सरकार द्वारा सन् 1935 में एक सूची तैयार की गई थी। उस समय पूरा देश 9 प्रांतों में विभक्त था। इसलिए वह सूची 9 भागों में विभक्त थी। सन् 1935 में ही 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट' के अधीन निकाले गए 'ऑर्डर इन कौंसिल' का सरकारी आदेश दलित संदर्भ में प्रयुक्त यह प्रथम सरकारी गजट था। प्रत्येक भागों में उस प्रांत के लोगों, नस्लों, जातियों तथा समूहों को इस सूची में रखा गया जो अस्पृश्यता जैसे व्यवहार से प्रभावित थे। अस्पृश्यता के साथ ऐसी भी जातियाँ, नस्लों तथा समूहों को उस सूची में रखा गया जो अस्वच्छ पेशों में लगी पाई गई, जिनके कारण उन्हें अस्पृश्य माना जाता था। यह एक भयानक सूची थी, जिसमें 429 जातियाँ शामिल थीं। अनुसूचित जाति के निर्धारण के लिए आज भी भारत सरकार की यही दो शर्तें यानी प्रथम, अस्पृश्यता और द्वितीय, अस्वच्छ पेशा ही है। इसके अलावा कोई अन्य शर्त नहीं है। यदि अस्पृश्यता एवं अस्वच्छ पेशों की उत्पत्ति, उसका कारण, उसके बीच के कारक एवं उत्पत्ति के काल (समय) का प्रमाण मिल जाए तो बड़ी लंबी-चौड़ी चर्चा अथवा वेद-शास्त्रों के अध्ययन से मुक्त होकर अस्पृश्यता के निदान में समाजसेवक, विद्वतजन एवं देशभक्त लग सकते हैं। हिंदू धर्मग्रंथों के गहन अध्ययन के उपरांत जैसा कि हमने पूर्व में भी कहा है कि डॉ. बी.आर. अंबेडकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वर्तमान दलित प्राचीन वैदिक काल के शूद्र नहीं हैं और इसलिए शूद्रों के दंड-विधान तथा नियम-कानून वर्तमान दलितों पर न ही लागू होते हैं और न ही इसे समाज को मानना भी चाहिए। (शूद्रों की खोज, प्राक्कथन का तृतीय पैराग्राफ) डॉ. अंबेडकर गहन अध्ययन के उपरांत अपनी एक अन्य पुस्तक 'अछूत कौन और कैसे' में भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हिंदू समाज के चारों वर्ण अस्पृश्य नहीं थे। अस्पृश्य तो वे थे जो गैर-हिंदू थे और वे छितरे हुए थे। ('अछूत कौन और कैसे' की भूमिका, पृष्ठ-3) डॉ. अंबेडकर ने इसी पुस्तक में यह सिद्ध करके कि अछूत एवं अपवित्र दोनों अलग हैं, इस समस्या को समझने एवं अंतिम निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए हमें प्रकाश पुंज दे दिया।

इस कृति के अध्ययन के पूर्व मेरी यही विनती है कि जिस प्रकार डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने 'अछूत कौन और कैसे' के पृष्ठ-4 पर उल्लेख किया है कि 'संभव है, आलोचक मेरी इस 'कमी' (संस्कृत भाषा में लिखे हिंदू धर्मग्रंथों का अंग्रेजी भाषा में अनुवादित साहित्य को पढ़ना) का उपयोग मेरी सारी विचार-सारणी को रद्दी की टोकरी में डालने के लिए करें और कहें कि यह ऐतिहासिक खोज के सिद्धांत के सर्वथा

प्रतिकूल है। यदि आलोचकों का यही मत हो, तो मैं उन्हें याद दिलाना चाहता हूँ कि यदि कोई ऐसा नियम है जो ऐतिहासिक निष्कर्षों पर शासन करता है और कहता है कि किसी मत को केवल इसलिए अस्वीकार कर दो कि उसकी बातें सीधी-साधी नहीं मिलतीं, तो यह नियम ही खराब है।' प्रबुद्धजनों से निवेदन है कि हमारी कृति जो वैसे तो पूर्णरूपेण स्पष्ट है किंतु अगर कहीं दुर्गमता आए तो उसे कड़ियों से कड़ी जोड़ने के क्रम में देखने का प्रयास करें। डॉ. बी.आर. अंबेडकर के साथ जो सहिष्णुता दिखाई गई, मुझे भी उसकी अपेक्षा है। डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने उसी पुस्तक के पृष्ठ 5 पर लिखा है कि 'इसलिए कहाँ कड़ियाँ खोई हुई हैं, वहाँ उनके पुन:निर्माण करने का प्रयत्न करने के लिए मुझे क्षमा-याचना करने की जरूरत नहीं है, और केवल इसी कारण मेरा मत दूषित भी माना नहीं जा सकता। अधिकांश में मेरी सारी विचार-सारणी अथवा मत का आधार यथार्थ घटनाएँ और उनसे जो अनुमान निकाले गए, वे हैं।' मेरा भी मत है कि इतिहास लेखन की यह सबकुछ कठिनाइयाँ हैं जिन्हें विद्वत् पाठकगण सरलता से समझ सकते हैं। इसका एक उदाहरण मैं देना चाहूँगा। यदि वर्तमान दलित वर्ग अस्पृश्यता एवं अस्वच्छ पेशा से ही संबंधित है तो हिंदुस्थान में इसका इतिहास खोज लें। हमें शूद्रों या अन्य वर्गों में इन तथ्यों को खोजना निरर्थक है, क्योंकि वर्तमान दलित न तो शूद्र हैं और न ही छितराई हुई अहिंदू जातियाँ, जिनका उल्लेख डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने अपनी पुस्तक में किया है। वर्तमान दलित मध्यकाल में विदेशी मुसलिम, तुर्क एवं मुगल आक्रांता शासकों द्वारा दंडस्वरूप दमन, दलन एवं उत्पीड़न के उपरांत बलपूर्वक अस्वच्छ कार्यों में ठेल दी गई जातियाँ हैं, जिनका विस्तृत प्रमाण प्रस्तुत पुस्तक में देखा जा सकता है।

'हिंदू खटिक जाति' शीर्षक पर आधारित इस पुस्तक में एक सीमित ही भाववृत्ति है, किंतु इसी क्रम को हमने अपनी अन्य दो पुस्तकों में भी बनाए रखा है। 'हिंदू चर्मकार जाति' तथा 'हिंदू वाल्मीकि जाति' नामक शीर्षक से लिखी दोनों अन्य पुस्तकों में दलित इतिहास लेखन का कार्य लगभग पूर्ण हुआ है। वैसे इन पुस्तकों का स्वतंत्र स्वरूप है, किंतु विषद् एवं विराट् अध्ययन की दृष्टि से एवं दलित समस्या तथा निराकरण की दृष्टि से तीनों पुस्तकों का समन्वित अध्ययन शोधकर्त्ताओं एवं जिज्ञासुओं के लिए अत्यंत उपयोगी होगा।

लेखक एवं लेखन कार्य के संदर्भ में मुझे इतना अवश्य व्यक्त करना है कि हमें बाल्यावस्था से ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखाओं पर जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। विद्यालय जाने के पूर्व संघ की शाखाओं पर गया। वहाँ हमें यह लगा ही नहीं कि हम किसी जाति-विशेष अथवा पंथ-संप्रदाय के हैं। इतना ही नहीं, हमें यह भी प्रतीत नहीं हुआ कि हम वाराणसी या उत्तर प्रदेश के हैं। वहाँ तो केवल अखंड भारत की बातें बड़ी प्रमुखता से हुईं। भारत को विश्व परिवार का एक सदस्य मानकर हम 'वसुधैव कुटुंबकम्'

की भावना के साथ परमवैभव का मंत्र संसार को दे रहे थे। संघ वैचारिकी में प्रत्येक विषय को समग्र के भाव में देखने का प्राकृतिक एवं स्वाभाविक भाव है। वहाँ हमें खंड में देखने का स्वभाव ही नहीं मिला। जिस प्रकार अंकगणित की प्रत्येक इकाइयाँ अलग-अलग होकर भी एक समग्रता अथवा निरंतरता का बोध कराती है, ठीक उसी प्रकार संघ चिंतन में समग्रता एवं निरंतरता का हमें बोध हुआ। राष्ट्र चिंतन में क्षेत्र एवं प्रदेश समाहित था। हिंदुत्व चिंतन में पंथ-संप्रदाय और मत-मतांतर से ऊपर देश की लगभग छह हजार पाँच सौ जातियों से बना संपूर्ण हिंदू समाज समाहित था। आज भी अंतर्मन की भित्तियों में बाल्यकाल के वे ही चित्र अंकित हैं। आज भी वही स्वभाव बना हुआ है कि हम देशव्यापी या राष्ट्रव्यापी के स्थान पर विश्वव्यापी चिंतन करते हैं। 'वसुधैव कुटुंबकम्' एवं 'सर्वे भवंतु सुखिन:' की हिंदू वैचारिकी हमारे चिंतन का प्राणतत्त्व हैं। 'समूह का चिंतन' ही हमारी राजनीति की संक्षिप्त परिभाषा के रूप में हमारे मानस में स्थापित है। इसलिए हमारे लेखन में वही सब सामग्री सर्वत्र दृष्टिगोचर होंगी।

'हिंदू खटिक जाति : एक धर्माभिमानी समाज की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन का इतिहास' उक्त तथ्यों एवं विचारों के आलोक में अवगाहित है। सत् सत्गुरु की असीम अनुकंपा एवं शुभेच्छुओं की मंगलकामना के परिणामस्वरूप यह कृति आज संसार के समक्ष प्रस्तुत है। हिंदू हृदय सम्राट् श्रद्धेय अशोक सिंहलजी, संरक्षक विश्व हिंदू परिषद् द्वारा शोधपरक इस कार्य के संदर्भ में दिए गए मार्गदर्शन ही मुख्य स्रोत हैं। श्री सिंहलजी द्वारा निरंतर नीति संगत शोध की अभिप्रेरणा, उत्साहवर्धन एवं असीमित मात्रा में दिए गए स्नेह तथा ममता इस लेखन कार्य की भूमिका है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पूज्य सरसंघचालक श्रद्धेय श्री मोहनराव भागवत द्वारा इस कृति की प्रशंसा एवं इस दिशा में और भी आगे बढ़ने का दिशा-निर्देश मेरे साहित्य सृजन की राह में पाथेय जैसा है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह माननीय सुरेश जोशी 'भैयाजी जोशी' द्वारा मेरे रचित साहित्यों पर संतोष की अभिव्यक्ति मेरे लिए बहुमूल्य पुरस्कार के समान प्रतीत होता है। माननीय सह-सरकार्यवाह सुरेश सोनीजी एवं माननीय सह-सरकार्यवाह दत्तात्रेय होसबाले के प्रति विशेष आभार व्यक्त करना ही उनके द्वारा दिया प्यार, स्नेह एवं सम्मान है। माननीय बजरंगलालजी गुप्त, संघचालक, उत्तर क्षेत्र राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा कर्मभूमि में लक्ष्य प्राप्ति हेतु उत्साहवर्धन के साथ तथा उनके द्वारा समय-समय पर दिए गए सुझाव हमारी साहित्यिक यात्रा की राह में प्रकाश स्तंभ के समान प्रतीत हुए। डॉ. कृष्ण गोपालजी, सह-सरकार्यवाह, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा अनेकानेक विषयों का अन्वेषणात्मक अभिव्यक्ति, सारतत्त्व का सारगर्भित संप्रेषण तथा अप्रतिम स्नेहिल मार्गदर्शन मेरे लिए सफलता का द्वार प्रमाणित होता है।

श्री अटल बिहारी वाजपेयी, श्री लालकृष्ण आडवाणी, डॉ. मुरली मनोहर जोशी,

श्री राजनाथ सिंह, श्री नरेंद्र भाई मोदी एवं श्री नितिन गडकरी जी के साथ श्रीमती सुषमा स्वराज एवं श्री अरुण जेटली जी को अवश्य धन्यवाद दूँगा, क्योंकि मुझे इन विभूतियों का लगातार स्नेह प्राप्त हुआ। राष्ट्र की आशा और आकांक्षाओं की पूर्ति के निमित्त बने प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र भाई मोदी जी से दलित विषयक हुई एक लंबी परिचर्चा इस कृति में अवगाहित है। राजनीतिक क्षेत्र में वैसे तो अनेकों विभूतियों का अपनी पार्टी से भी इतर अन्य पार्टियों के लोगों का प्यार मिला पर मेरा प्रयास रहा कि राजनीतिक क्षेत्र की चुनौतियों को जाति, धर्म, पंथ, वर्ग तथा राजनीतिक विचारधारा इत्यादि से ऊपर उठकर विचार करूँ एवं कम-से-कम भारतीय इतिहास की सच्चाइयों को प्रमाणों के साथ समाज के समक्ष लाऊँ। मेरा यह प्रयास आज इस पुस्तक के रूप में फलीभूत है। मैं राजनीतिक क्षेत्र के उन अनेकशः महाविभूतियों को अपने मन की गहराइयों से आभार व्यक्त करता हूँ।

माननीय महेश शर्मा, पूर्व अध्यक्ष, खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग; डॉ. महेश चंद शर्मा, पूर्व सांसद, अध्यक्ष, एकात्म मानववाद अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान; श्री वीरेंद्र सिंह, पूर्व सांसद; श्री सुनील पांडेय, सचिव, भारतीय किसान संघ; श्री डी.एस. विरैया, विधान परिषद् सदस्य तथा चेयरमैन अंबेडकर डेवलपमेंट बोर्ड, कर्नाटक; श्री सी. चेलप्पन (आई.ए.एस.) पूर्व सदस्य, राष्ट्रीय अनु.जाति एवं जनजाति आयोग; प्रो. रामजी मालवीय, प्रो-वाइस चांसलर, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी; श्री सत्यप्रकाश असीम, राजनीतिक संपादक, दैनिक 'आज'; श्री राधेश्याम, श्री गड़वाघाट आश्रम, वाराणसी; श्री विजय खंडेलवाल, प्रदेश प्रभारी, उड़ीसा सामाजिक समरसता अभियान, विश्व हिंदू परिषद्; श्री सुरेश खंडेलवाल, संयोजक, उद्योग प्रकोष्ठ, भाजपा, नई दिल्ली; श्री सी.वी. पाटोदिया, सलाहकार, बिड़ला ग्रुप; श्री एन. सुरेश रेड्डी, हैदराबाद, कानून का अधिकार : एक जनांदोलन के दक्षिण भारत के संयोजक; श्री पी. गुनासेकरन, श्री रंजन खन्ना, चिरंजन एडवरटाईजिंग; श्री अमलेंदु हलदर, वरिष्ठ नेता, यू.बी.आई. बैंक कर्मचारी कल्याण संगठन, कोलकाता, श्री मनोज चौधरी, पानीपत; डॉ. योगेश कटारिया, दिल्ली; श्री विनोद वैरवा, राजस्थान; इंजी. रंजन कुमार; इंजी. जे.एल. गुप्ता; डॉ. सुरेंद्र झा; श्री राज कुमार अग्रवाल, वाराणसी; इंजी. अनुराग कुशवाहा, वाराणसी; श्री विवेक सोनकर, कोलकाता; श्री महेश आहिरवार, ग्वालियर; श्री शांत प्रकाश, गाजियाबाद; श्री विजय पहाड़िया व श्री शीतल सिंह, इंदौर; श्री विश्राम सिंह, मैरीटार, बलिया; श्री लक्ष्मी नारायण सोलंकी, भीलवाड़ा; श्री अतीस कुमार सोनकर, बिलासपुर; श्री रोहित सोनकर, लुधियाना; अश्विनी कुमार, भिवानी आदि सभी शुभेच्छुओं के प्रति आभारी हूँ।

मैं विश्व हिंदू परिषद् के राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री दिनेशजी एवं अंतरराष्ट्रीय महामंत्री श्री प्रवीण भाई तोगड़िया के द्वारा दिए जानेवाले उत्साहवर्धन तथा हिंदू मिशन के प्रति उनकी सुस्पष्ट निर्दिष्ट नीति जो मेरे लिए प्रेरक रही, इस कृति के माध्यम से उन्हें मैं धन्यवाद

देता हूँ। ठा. सूबेदार सिंह, सदस्य, अखिल भारतीय मार्गदर्शक मंडल, गो-रक्षा संवर्धन परिषद् एवं पूर्व केंद्रीय मंत्री, विश्व हिंदू परिषद् के प्रति मैं हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ। विश्व हिंदू परिषद् के केंद्रीय मंत्री स्व. मा. रामफलजी; मा. पुरुषोत्तम सिंह एवं अ.भा. संपर्क प्रमुख; महावीरजी, प्रदेश संगठन मंत्री, उ.प्र.; श्री शिवदास सिंह, क्षेत्रीय संगठन मंत्री, अ.भा. सामाजिक समसरता अभियान एवं श्री भागवत सिंह के अविस्मरणीय उत्साहवर्धन के लिए मैं उन सबका कोटिश: धन्यवाद करता हूँ।

इस कृति के माध्यम से मैं श्रद्धेय 1008 श्री शंकराचार्य स्वामी जयेंद्र सरस्वतीजी महाराज एवं श्रद्धेय 1008 कनिष्ठ शंकराचार्य स्वामी विजेंद्रजी महाराज, कांचिपुरम; श्रद्धेय आचार्य स्वामीश्री धर्मेंद्रजी महाराज, श्रीपंचखंडपीठ, जयपुर, स्वामी ब्रह्मदेवजी महाराज, श्रीब्रह्मविद्यापीठ, वेस्टइंडीज, दक्षिण अमेरिका; स्वामी राधे-राधे बाबा, इंदौर; स्वामी जगदीश मुनिजी महाराज एवं स्वामी देवानंद गिरीजी, हरिद्वार का मैं अध्यात्म के क्षेत्र में विशेष मार्गदर्शन के लिए हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

वात्सल्यमयी माँ एवं कर्मयोगी बाबाजी का आशीर्वाद, बड़े भाइयों, बहनों तथा भाभियों के स्नेह तथा पत्नी की सहधर्मिता ने इस पुनीत कार्य को संपन्न करने के लिए सर्वदा प्रेरित किया। मेरी धर्मपत्नी द्वारा मेरे कार्यों का व्यक्तिगत रूप से मूल्यांकन मेरे लिए अप्रतिम प्रेरक रहा। मेरे प्रिय भानजों, भतीजों एवं बच्चों ने भी एक सहायक के रूप में सहयोग देकर जीवन की अनेकानेक कमियों को दूर किया। मेरे मन में उन सभी के प्रति अगाध स्नेह है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि प्रभु उनके प्रति सदैव स्नेहिल भाव रखें।

अंत में मैं सर्वशक्तिमान, विश्वरूप, विराट् चेतना शक्ति, सृष्टि संचालनकर्ता, करुणामयी जगन्माता एवं परमपिता परमेश्वर रूप सत् सत्गुरु से जाने-अनजाने हुई गलती, अपराध एवं पाप के लिए क्षमा माँगते हुए इस कृति को दलित समाज के साथ संपूर्ण हिंदू समाज के उत्थान के लिए प्रस्तुत करता हूँ। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक हिंदू धर्म में व्याप्त सामाजिक विषमता, सांस्कृतिक विखंडन एवं विविध प्रकार के सामाजिक भेदभाव को मिटाने के साथ हिंदू धर्म एवं संस्कृति के वैश्विक प्रचार-प्रसार तथा द्वेष-भाव से तर्क करनेवाले महानुभावों की जिज्ञासा को शांत करने के लिए अवश्य उपयोगी सिद्ध होगी। हिंदू धर्म के पुरोधाओं, विचारकों, साहित्यकारों और विद्वानों के प्रति लेखक सदैव आभारी रहेगा, जिनकी कृतियों एवं विचारों से वह समुन्नत हुआ।

**—डॉ. विजय सोनकर शास्त्री**

शास्त्री भवन
चाँदपुर इंडस्ट्रियल इस्टेट
वाराणसी-221006 (उ.प्र.)
इ-मेल : dr.bsshastri@gmail.com

# अनुक्रम

*आमुख* ........................................................................ *5*
*विचार भूमि* ............................................................... *11*

प्रस्तावना ................................................................... 25

*अध्याय–1*

**हिंदू धर्म में खटिक वंश एवं गोत्र** ........................................ **47**
1.1 प्रागैतिहासिक काल एवं आखेट युग .......................................... 48
1.2 वैदिक काल का खट्टिक ............................................................ 53
1.3 सनातन संस्कृति एवं हिंदू धर्म .................................................. 57
1.4 मध्यकालीन काठियावाड़ एवं कठ तथा कठिक जाति ..................... 62
1.5 खटिक वंश एवं गोत्र ............................................................... 68
1.6 खटिक जातियों का राजवंशीय इतिहास ....................................... 72
1.7 खटिक जाति का भौगोलिक प्रत्यक्षीकरण एवं रहन–सहन ............... 74
1.8 खटिक एवं खटिक जाति का उपनाम ............................................ 77

*अध्याय–2*

**खटिक वंश में ज्ञानी धर्म–पुरोधा एवं खटिक जीवन–वृत्ति** ........................ **81**
2.1 हिंदुस्थान में ऋषि–परंपरा ....................................................... 82
2.2 प्राचीन हिंदू धर्म एवं ज्ञान के पुरोधा ........................................ 83
2.3 हिंदू धर्म में खटिक जाति का प्रमुख स्थान ..................................... 87

2.4 खटिक वंश में ज्ञानी एवं धर्म पुरोधा ........................................ 89
2.5 महर्षि व्याघ्र एवं उनकी रचना व्याघ्र गीता ........................................ 92
2.6 महात्मा सदन खटिक का मांस-व्यवसाय ........................................ 95
2.7 संत शिरोमणि दुर्बलनाथ ........................................ 97
2.8 खटिक जाति की जीवन-वृत्ति ........................................ 100

*अध्याय-3*

**विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से खटिक वंश का ऐतिहासिक युद्ध ............... 107**

3.1 'सोने की चिड़िया'—हिंदुस्थान की समृद्धि ........................................ 108
3.2 मिलिंद को पढ़ाया अहिंसा का पाठ और सिकंदर के स्वप्न को किया भंग ........................................ 111
3.3 अरब-आक्रमण का दिया मुँहतोड़ जवाब ........................................ 113
3.4 महमूद गजनबी के साथ लगातार युद्ध ........................................ 116
3.5 इसलामिक आक्रांता मुहम्मद गौरी एवं तत्कालीन खटिक वंश ........ 119
3.6 तैमूरलंग से अपने दम पर लिया लोहा ........................................ 121
3.7 आंतरिक कलह एवं आक्रांताओं के षड्यंत्र से हिंदू हुए पराजित ..... 124
3.8 विदेशी आक्रांताओं के दमन-चक्र का निरंतर विरोध ........................ 125

*अध्याय-4*

**खटिक जाति द्वारा हिंदू धर्म, संस्कृति एवं स्वाभिमान की रक्षा ..................... 134**

4.1 उत्तर भारत में हिंदू एवं मुसलमानों का युद्ध ........................................ 135
4.2 इसलामिक जेहाद का मुँहतोड़ जवाब ........................................ 140
4.3 विदेशी इसलामिक शासकों द्वारा धर्मपरिवर्तन अभियान ................ 141
4.4 खटिक जाति द्वारा हिंदू धर्म रक्षा ........................................ 145
4.5 धर्म रक्षार्थ सुअर पालन ........................................ 147
4.6 सुअर व्यवसाय एवं हिंदू संस्कृति निर्वहन ........................................ 150
4.7 इसलामिक निरंकुशता की टक्कर लेती खटिक जाति ........................ 152
4.8 हिंदू स्वाभिमान की रक्षक खटिक जाति ........................................ 155

*अध्याय-5*

**विदेशी मुसलिम एवं अंग्रेज शासकों के अत्याचार की शिकार खटिक जाति ........................................ 158**

5.1 खटिक जाति एक योद्धा जाति ........................................ 159
5.2 विदेशी मुसलिम शासकों से भयंकर टक्कर.............................. 163
5.3 मुसलमान शासकों के प्रचंड उत्पीड़न से बचने हेतु हिंदुओं का बड़ी संख्या में जंगल में पलायन.............................................. 164
5.4 मुसलिम आक्रांताओं के भयानक अत्याचार की शिकार खटिक जाति के लोग ........................................................................ 170
5.5 हिंदू धर्म रक्षा ............................................................... 174
5.6 अंग्रेजों से पुनः टकराव एवं उनके द्वारा अपराधी जाति घोषित ........ 176
5.7 अंग्रेजों द्वारा खटिक जाति का भारी सामाजिक एवं आर्थिक उत्पीड़न 181
5.8 सामाजिक एवं आर्थिक उत्पीड़न से खटिक हुए दलित................. 186

*अध्याय-6*

**स्वतंत्रता आंदोलन में खटिक जाति की अग्रणी भूमिका ............................194**
6.1 अंग्रेजी शासन का खटिक जाति द्वारा भारी विरोध........................ 195
6.2 अंग्रेजों द्वारा स्थापित कस्टम रेखा का उल्लंघन ........................... 197
6.3 स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम 'मेरठ 1857 की क्रांति' के असली नायक खटिक वंश के तितोरिया ................................... 200
6.4 स्वतंत्रता सेनानियों की तरह खटिक जाति अंग्रेजी शासन में अपराधी घोषित.................................................................. 203
6.5 खटिक स्वतंत्रता सेनानी देश भर में ...................................... 205
6.6 गांधी आंदोलन और खटिक समाज ....................................... 211
6.7 धर्म, संस्कृति एवं मातृभूमि पर खटिक जाति न्योछावर................ 214
6.8 मातृभूमि के असली सपूत खटिक .......................................... 219

*अध्याय-7*

**हिंदू संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की पहचान खटिक.....................................222**
7.1 हिंदुस्थान के प्रत्येक भाग में खटिक जाति ................................ 223
7.2 हिंदू धर्म और संस्कृति की वाहक खटिक जाति.......................... 227
7.3 भारतीय अर्थव्यवस्था की मेरुदंड हिंदू खटिक जाति .................... 232
7.4 खटिक जाति की पहचान हिंदू धर्म रक्षक................................. 236
7.5 विश्वव्यापी उग्रवाद की पर्याय इसलामिक ताकत को खटिक जाति प्रत्योत्तर देने में सक्षम ........................................ 238

7.6 राजनीतिक ढाँचें में खटिक जाति अति महत्त्वपूर्ण ........................ 242
7.7 खटिक जाति की सांस्कृतिक राष्ट्रवादी मानसिकता ...................... 244
7.8 हिंदू खटिक जाति का उज्ज्वल भविष्य ........................................ 246

*अध्याय-8*

**खटिक जाति का पुनरुत्थान एवं सशक्तीकरण ..................................... 251**
8.1 दलित जातियों की दयनीय परिस्थिति ........................................ 252
8.2 खटिक जाति दलित जाति की श्रेणी में ........................................ 257
8.3 दलित जातियों के पुनरुत्थान में ही राष्ट्रहित ................................. 263
8.4 खटिक जाति का सामाजिक उत्थान आवश्यक ............................ 267
8.5 खटिक जाति का आर्थिक विकास आवश्यक ............................. 271
8.6 खटिक जाति का शैक्षणिक एवं राजनैतिक सशक्तीकरण ............... 273
8.7 खटिक जाति को संपूर्ण हिंदुस्थान में अनुसूचित जाति में सम्मिलित करना आवश्यक ................................................... 278
8.8 हिंदू हितरक्षण की पर्याय खटिक जाति ........................................ 284

*उपसंहार ........................................................................................ 292*
***परिशिष्ट :** (हिंदू खटिक जाति एवं उपजातियों की सूची) .................. 300*

*संदर्भ ग्रंथ सूची.................................................................................. 335*

# प्रस्तावना

उत्पत्ति, उत्थान, पतन और पुनरुत्थान प्रकृति का शाश्वत नियम है। नियति के इस नियम से सभी प्रभावित हैं। मानव समाज इस प्रभाव को सर्वाधिक महसूस करता है। यही कारण है कि वह सदैव प्रकृतिपरक जीवन पद्धति का अनुसरण करने का आह्वान करता है। हिंदुस्थान इन प्रयासों का सर्वाधिक चर्चित देश है एवं आदिकाल से इस अमर संदेश का प्रसारण करता भी रहा। जिन्होंने सुना और आत्मसात् किया, वे आज भी विद्यमान हैं और जिन्होंने अनसुनी की, वे आज अस्तित्व खो चुके हैं। ऐसे मर्यादित देश हिंदुस्थान को नष्ट-भ्रष्ट करने हेतु अनवरत प्रयत्न हुए, जिसके फलस्वरूप यहाँ के मानव समाज को भारी क्षति उठानी पड़ी।

आर्यावर्त में उत्पन्न मनु-शतरूपा की संतानें जब आर्यावर्त यानी भारतवर्ष से विश्व भ्रमण कर गई तो उनकी आर्यावर्त में ही वापसी के समय उनका सनातन स्वरूप बहुत कुछ बदल चुका था। वे अपनी मातृभूमि और अपने माता-पिता, भाई, बहन, आचार्यगण आदि सभी को भूल चुके थे। पर्याप्त समय तक अलग-थलग रहने के कारण आर्यावर्तवासी भी भूल चुके थे कि वे अपने ही हैं। हमने उनको विदेशी माना। उनके आक्रमणों का उत्तर दिया। शरणागत होने पर हमने उन्हें फिर से अपना लिया।

मध्यकाल में स्थिति बदली। विदेशी मुसलिम आक्रांताओं और उनके बाद ब्रिटिश शासकों ने भारतवर्ष यानी हिंदुस्थान के निरीह एवं शांतिप्रिय लोगों को इतना प्रताड़ित किया कि उसका इतिहास पढ़कर लोगों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हिंदुस्थान को लूटकर कंगाल बनाने के विश्वविख्यात अपराधी अरब के विदेशी तुर्क एवं मुसलिम आक्रांताओं ने हिंदू धर्म को समाप्त करने हेतु जो नरसंहार किया उसमें सर्वाधिक उत्पीड़ित वे ही किए गए जो देश की, राष्ट्रीय संपदा की और अपने प्रिय प्रजा की रक्षा में संलग्न थे यानी क्षत्रिय योद्धा तथा दूसरे वे ज्ञानी ब्राह्मण जो हिंदू धर्म का प्रचार-प्रसार मानव हित में

'वसुधैवकुटुंबकम्' और 'विश्व बंधुत्वभाव' की वैचारिकी को आवधारित करने के कारण कर रहे थे। उनको इसलाम और ईसाईयत के नाम पर उत्पीड़ित करके उनकी हत्याएँ तक कर दी गईं, कौड़ियों के मोल गुलाम बनाकर उन्हें बेच डाला गया और जो शेष रह गए उन्हें अस्वच्छ, अपावन एवं वृत्ति विरुद्ध कार्यों में दमन, दलन एवं उत्पीड़न के उपरांत लगाकर इतने खंडों में उनको बाँट दिया गया कि आज वे अपने मूल स्वरूप को समझने और अपने यथार्थ यानी प्राचीन को समझने के लिए व्याकुल हैं। परंतु वे करें क्या? उनके गौरवशाली इतिहास को ही बदल दिया गया है। धर्मग्रंथों में प्राक्षिप्तता यानी मिलावट कर दी गई है। धर्मरक्षक और देशरक्षकों के समक्ष आज यह एक जटिल प्रश्न है कि असंख्य टुकड़ों में बँटे हुए अपने ही भाई-बहनों को वे कैसे पहचानें? ऐसे ही लोगों के लिए यथार्थ इतिहास का सृजन आज की सर्वप्रमुख आवश्यकता है। हिंदू खटिक जाति की उत्पत्ति, उत्थान एवं पतन का इतिहास इसी आवश्यकता की पूर्ति का एक प्रयास है।

खटिक जाति का यह इतिहास पूर्णतः भारतीय इतिहास लेखन-पद्धति और वामपंथी जनवादी लेखकों की पश्चिमपरस्त लेखन-नीति से इसका विरोधाभास है। मध्ययुगीन मुसलिम इतिहासकारों ने मांस और मदिरा के लालच में लेखन कार्य किया, अतएव उनका इतिहास यथार्थ हो ही नहीं सकता। अंग्रेजों ने भी 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति पर आधारित भावना से लेखन कार्य किया, अतएव उनकी लिखावट में प्रक्षिप्तता यानी मिलावट के अलावा और कुछ नहीं है। जनवादी लेखकों ने उन्हीं दुरा ग्रहों को आधार बनाकर लेखनी चलाने का कार्यारंभ किया है जो नग्न-चित्रण के कारण हिंदू समाज और हिंदुस्थान, दोनों के ही लिए घातक है। इन लेखकों ने खटिक जाति को अब तक लगभग दो हजार से भी अधिक नाम-संबोधन दे डाले हैं[1] और इस संख्या में निरंतर शोध और अध्ययन करने के कारण वृद्धि करते जा रहे हैं, जिसका एकमात्र उद्देश्य है खटिक जाति की शक्ति को टुकड़ों में बाँटकर उसे कमजोर बनाना और उसका मुख्यतः राजनीतिक लाभ उठाना। ग्रंथ की प्रस्तावना में इन सभी की ओर ध्यान दिलाते हुए खटिक जाति के सशक्तीकरण हेतु उसके गौरवशाली इतिहास के यथार्थ स्वरूप को प्रस्तुत किया जा रहा है।

वर्तमान वातावरण में सत्ता हथियाने एवं उसके संचालन में वर्चस्व स्थापित करने की दृष्टि से जाति समीकरण एवं अन्यान्य जातियों द्वारा अपनी अंतर्भूत शक्तियों के प्रदर्शन की परंपरा स्पष्ट दृष्टिगत है। प्रत्येक क्षेत्र में राजनीति का वर्चस्व है। सामाजिक जगत् हो या आर्थिक, यहाँ तक कि धार्मिक क्रिया-कलापों में भी राजनीति का हस्तक्षेप

---

1. देखिए—पुस्तक का परिशिष्ट (1)

सामान्य रूप से दिखाई दे रहा है। राजनीति में अग्रणी होकर प्रत्येक व्यक्ति अथवा समाज सत्ता को हथियाकर शासन पर अपना प्रभुत्व रखना चाहता है। ऐसे में सामान्य जाति, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियाँ, सभी अपने को एकत्रित, संगठित और जागृत करके तथा अन्य जातियों के साथ समीकरण स्थापित करके सत्ता इत्यादि में भागीदारी कर रही है। ऐसे में खटिक जाति को भी अपने अंदर विद्यमान अंतर्भूत शक्ति को जागृत करके वर्तमान राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में अपने लिए भी राजनीतिक संभावनाओं को तलाशने की आवश्यकता है।

हिंदुस्थान एक लोकतांत्रिक देश है। यहाँ की संप्रभुता का स्वामित्व जनमत के पास है। जनमत एवं जनाधार के लिए जातीय समीकरण सर्वाधिक अनुकूल है। मध्ययुगीन विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के शासनकाल में सुरा-सुंदरी के सुखोपभोग में संलिप्त शासकों के मन-मस्तिष्क में घमंड छाया हुआ था। वे जनमत अथवा जनतंत्र की भावना से परे थे।

इसलामिक शासकों ने सर्वप्रथम हिंदुओं को अनेक भागों में विभक्त किया इससे उनके मध्य दूरी बढ़ी और एक जाति के लोगों को अनेक टुकड़ों में विभाजित करके उनकी शक्ति को और भी कमजोर कर दिया गया। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में यह दूरी और भी अधिक किया। भेदभाव बढ़ाकर उन्होंने लंबे समय तक शासन करने की सोच बनाई थी, परंतु स्वतंत्रता के दीवानों ने जिस प्रकार से जाति-भेद को भुलाकर उनको भारत छोड़ने हेतु चुनौती दी, उन्होंने अंग्रेजी शासन के पाँव उखाड़ डाले। अंग्रेज शासकों ने मुगलों द्वारा दमन एवं दलन के शिकार हुए लोगों को 'दलित' संबोधन देकर उनके प्रति घड़ियाली आँसू बहाए और कहा कि शेष हिंदुओं, विशेषत: ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों के साथ रहने पर वे दलित उनके अत्याचार एवं उत्पीड़न के कारण कभी सुखी नहीं हो सकेंगे। जबकि कुछ भारतीय मुसलमानों को बहकाने में वे सफल रहे और परिणामस्वरूप हिंदुस्थान बँट गया एवं पाकिस्तान का जन्म हुआ और सांप्रदायिकता की आग में लाखों हिंदू और भारतीय मुसलमानों को झुलसना पड़ा।

कलुषित भावनाओंवाले वे अरबी विदेशी तुर्क एवं मुसलमान और ब्रिटेन के अंग्रेज-मानसिकताओं के तथाकथित चिंतक आज भी पाकिस्तान के भारतीय मुसलमानों को हिंदुस्थान के साथ एकजुट होकर महान् हिंदू राष्ट्र के निर्माण में बाधा का कार्य कर रहे हैं, क्योंकि उनको हिंदुओं और भारतीय मुसलमानों की एकता से खतरा है। अपने शासनकाल में अंग्रेजों ने केवल देश को लूटने और हिंदुओं को सैकड़ों टुकड़ों में ही बाँटने का कार्य किया और इसी का परिणाम है कि आज हजारों नामों एवं संबोधनों से युक्त खटिक जाति स्वयं एकजुट होने के प्रति उदासीन है।

जातीय आधार पर एकता और राजनीतिक आधार पर उदासीनता के कारण ही आज

का खटिक समाज बहुत पीछे रह गया है। यह तो सिद्ध हो चुका है कि मुगलों और अंग्रेजों के लगभग आठ सौ वर्षों के शासनकाल में ही दलित जातियों का निर्माण हुआ एवं बाद में शासन-सत्ता की दुराग्रहपूर्ण नीतियों के कारण वे और भी अधिक दयनीय स्थिति को प्राप्त हुए। स्वतंत्रता मिलने के पैंसठ वर्ष पूरा होते-होते आज दलित समाज संपूर्ण क्षेत्रों में विकास की दौड़ में शामिल हो चुका है, किंतु दलितोत्थान के संदर्भ में हमें चिंतन करना होगा कि राजनीति के क्षेत्र में बिना अग्रसर हुए दलितों को विकास का पूरा लाभ नहीं मिल सकता है। यही कारण है कि खटिक जाति की उपजातियों से संख्या में बहुत कम होने के बाद भी इन अनेक दलित जातियों के लोग देश के विभिन्न महत्त्वपूर्ण पदों को सुशोभित कर रहे हैं। सत्ता में होने अथवा सत्ता में सशक्त पकड़ होने के कारण ही हिंदू चमार जाति की प्रत्येक उपजातियों को अनुसूचित जाति की सूची में रखकर हर प्रकार का लाभ दिया जा रहा है, जबकि खटिक जाति को कुछ ही प्रांतों में अनुसूचित जाति की श्रेणी दी गई है। अनेक प्रांतों में खटिक जाति एवं उसकी विविध उपजातियाँ पिछड़ी जाति अथवा सामान्य जाति श्रेणी में विवश होकर पड़ी हुई हैं। खटिक जाति के विकास को अवरुद्ध होने का यह सबसे महत्त्वपूर्ण कारण है कि संपूर्ण देश में खटिक जाति को अनुसूचित जाति में नहीं रखी गई है। यह तभी संभव है, जब खटिक जाति के लोग संगठित होकर शासन-सत्ता पर अपना प्रभुत्त्व स्थापित नहीं कर लेते।

खटिक जाति संपूर्ण देश में पाई जाती है। विदेशी लेखकों ने मनमाने ढंग से इसकी सात उपजातियों का नामोल्लेख अपने-अपने ढंग से किया है, जो किसी भी खटिक जाति के विचारकों को मान्य नहीं है। कुछ लोगों ने एक जाति में 10-20 जातियों की संभावनाओं का उल्लेख करने के साथ ही उत्तर भारत के 360 खटिक-गोत्रों और दक्षिण भारत के एक सौ से अधिक गोत्रों की चर्चा के परिप्रेक्ष्य में भारत में खटिक जाति की अवस्थिति का संज्ञान कराया है। देश के विभिन्न भागों में खटिक जाति के लोग विभिन्न प्रकार के व्यवसायों में संलग्न हैं और अपने नाम के साथ कई प्रकार के उपनाम (टाइटिल, सरनेम) लगाते हैं। कुछ लोगों को पेशा के आधार पर तथा कुछ को उनके आवास-क्षेत्र और पूर्वजों के नामों के आधार पर भी संबोधित किया जाता है। एक ही नाम को विभिन्न स्थानों पर विभिन्न प्रकार से संबोधित किया जाता है जिसका कारण उस क्षेत्र की बोलचाल की भाषा ही है। अब तक की उपलब्ध नाम-सूचियों में 'व' को 'ब' और 'भ' को 'य' अथवा 'म' पढ़ने की भी त्रुटि पाई जाती है। इसलिए नामों में पुनरावृत्ति-दोष भी देखा जाता है। प्रस्तुत पुस्तक के परिशिष्ट (1) में अकारादिक्रम से प्रस्तुत सूची का अवलोकन यह सिद्ध करता है कि हिंदुस्थान में रहनेवाले सभी खटिक लोग प्रायः दो हजार से भी अधिक नामों एवं संबोधनों द्वारा जाने-पहचाने जाते हैं। आरंभ में ब्राह्मण और कालांतर में क्षत्रिय धर्म-कर्म (वृत्ति) अपनानेवाले खटिक जाति के प्रति व्यवहृत

हजारों संबोधन अस्वाभाविक नहीं है, क्योंकि अकेले ब्राह्मण जाति के ही लगभग एक हजार से भी अधिक उपजातियों का उल्लेख डॉ. भीमराव अंबेडकरजी ने किया है।[1] यदि क्षत्रिय वंशावली[2] के 1100 गोत्रों की ओर दृष्टिपात किया जाए तो दोनों जातियों से संबद्ध खटिक जाति के दो हजार से भी अधिक उपनाम अथवा संबोधन आश्चर्य की बात नहीं है।

आश्चर्य की बात यदि है तो केवल यह कि हिंदुस्थान में केवल दो ही जातियाँ ऐसी हैं, जो संपूर्ण देश में पाई जाती हैं—एक है ब्राह्मण और दूसरी है खटिक जाति। अपने विभिन्न उपजातियों और गोत्रों के आधार पर तीसरी बड़ी जाति चमार अवश्य है, किंतु जैसे ब्राह्मण सर्वत्र ब्राह्मण नाम से और खटिक सर्वत्र खटिक नाम से जाने जाते हैं, वैसे ही चमार सर्वत्र चमार नाम से नहीं जाने जाते हैं। हिंदू धर्म के अंतर्गत प्राप्य लगभग साढ़े छह हजार जातियों की यह भी एक विशेषता ही है कि इनमें कुछ जातियाँ उत्तर भारत में हैं तो दक्षिण भारत में नहीं हैं और जो दक्षिण में हैं वे उत्तर में नहीं हैं। पूर्वोत्तर भारत की जातियाँ पूर्वोत्तर भातर से बाहर अप्राप्य है। किंतु पश्चिम भारत की जातियाँ देश के अन्यान्य भागों में पाई जाती हैं, क्योंकि उसी क्षेत्र पर सर्वाधिक विदेशी तुर्क एवं मुसलमान आक्रांताओं के आक्रमण हुए और लोगों को उत्पीड़न से बचने के लिए देश के अन्य भागों में पलायित होकर दर-ब-दर का जीवन-यापन करना पड़ा।

हिंदू खटिक और ब्राह्मण, इन दोनों जातियों में अनेक स्तरों पर एकरूपता पाई है। प्राचीन वैदिक काल में यज्ञ-बलि का कार्य ब्राह्मण करते थे। वेदोत्तर काल में बलि-कर्म के लिए एक अलग बलि-कर्म करनेवाला ब्राह्मण वर्ग की भूमिका थीं, जिन्हें बलि देनेवाला ब्राह्मण अथवा 'खट्टिक' कहा जाता था। आज भी देश के अनेक भागों में खटिक या खटिक, नाम से चिह्नित इस जाति का मुख्य व्यवसाय पशु-बलि अथवा बकरा एवं सुअर को काटने और उसका मांस बेचने से ही संबंधित है। ऋग्वेद में लकड़ी काटनेवाला ब्राह्मण, खेती करनेवाला ब्राह्मण, पशुपालन करनेवाला ब्राह्मण, मंत्रोचार करनेवाला ब्राह्मण, होता ब्राह्मण इत्यादि के उल्लेख के साथ बलि देनेवाले ब्राह्मण का उल्लेख है। 'खट्टिक' शब्द शुद्ध संस्कृत शब्द है। दूसरी ओर यह कि खटिक भी पूरे देश में खटिक नाम से ही जाने एवं पहचाने जाते हैं, ठीक उसी तरह जैसे ब्राह्मण सर्वत्र केवल ब्राह्मण के ही रूप में जाने जाते हैं। ब्राह्मण और खटिक के गोत्र, उपजातियों की संख्या तथा आचार-व्यवहार पूर्णतः वेदकालीन ब्राह्मणों से मिलते-जुलते हैं। खटिक जाति के पुरोहित भी सनाढ्य एवं गौड़, दोनों प्रकार के ब्राह्मण पाए जाते हैं। जैसे ब्राह्मणों में आमिष और निरामिष मिलते हैं, वैसे

---

1. डॉ. भीमराव अंबेडकर का संपूर्ण वाङ्मय, भाग-पृष्ठ से तक।
2. क्षत्रिय वंशावली, भाग-2, पृष्ठ 404 एवं ठा. श्यामलाल मदकारिया (भदौरिया) : सूर्यवंशी 360 गोत्रिय क्षत्रिय वंशावली, पृ. 67।

ही खटिक जाति में भी होते हैं। हिंदू धर्म में पूजा-पाठ, धर्मोत्सवों का संपादन आदि के अनेक आधार हैं, जिनके आधार पर यह सिद्ध होता है कि वर्तमान खटिक प्राचीनकाल का ब्राह्मण है और आज यह संपूर्ण भारतवर्ष में अलग-अलग हजारों नाम-संबोधनों के साथ ब्राह्मणों की ही भाँति सर्वव्यापी बनकर निवास करते हैं।

खटिक जाति का वर्तमान स्वरूप वेदकालीन 'खट्टिक' से पूर्णरूपेण साम्य है। वेद में उल्लिखित खट्टिक और उनके शारीरिक संरचना एवं व्यवसाय (पशुओं की बलि देना अथवा काटना) में और वर्तमान खटिक वंश में अत्यधिक साम्यता है। ऋग्वेद में उल्लिखित बलि देनेवाला ब्राह्मण यानी खट्टिक और वर्तमान समय में बलि देनेवाले मंदिर—जैसे उत्तर प्रदेश में विंध्याचल, मध्य प्रदेश में मैहरदेवी, कलकत्ता में कालीधाम, असम में कामाख्या देवी आदि की साम्यता इस बात की ओर संकेत करती है कि वर्तमान बलि देने की परंपरा में आज भी ब्राह्मण इत्यादि प्रयुक्त होते हों, परंतु वैदिक काल में तो बलि का काम खट्टिक ही करते थे। इस तथ्य के आधार पर वर्तमान खटिक जाति की उत्पत्ति को वैदिक काल से जोड़ना पूर्णरूपेण तथ्यगत एवं तर्कसंगत है।

वैदिक काल में पशु-बलि केवल धार्मिक औचित्य से ही होती थी और उसे वेदविहित कार्य की संज्ञा प्रदान की गई थी। मध्ययुग में जिस प्रकार से आहार के लिए प्रतिदिन हजारों-लाखों पशुओं को विदेशी मुसलिम शासकों द्वारा काटा अथवा कटवाया जाता था, वैसी स्थिति वैदिक काल में नहीं थी। वैदिक काल में गौ-वध पूर्णतः निषिद्ध था और गाय एवं गंगा दोनों ही माँ की तरह पूज्य थीं। लोग उसकी शपथ लेते थे। इस तरह याज्ञिक पशु-बलि और पशु-हत्याओं में अंतर रखा गया था। खटिक जाति के लोग कभी भी पशुओं की हत्या अथवा उनको काटने के लिए नियुक्त नहीं किए जा सके थे—बलपूर्वक भी नहीं। खटिक मध्ययुग में भी केवल याज्ञिक कार्यों और धार्मिक अनुष्ठानों के अवसर पर पशुओं की बलि कार्य तक ही सीमित थे। आहार के लिए विभिन्न प्रकार के पशुओं की हत्याएँ मुसलिम कसाइयों द्वारा मुसलमानों के हिंदुस्थान में प्रवेश के साथ ही प्रारंभ हो गया था। कसाई को कुछ लोग खटिक की एक प्रजाति बकरकसाव से जोड़कर खटिक को मुसलिम खटिक कहने की भूल करते हैं, जबकि बकरकसाव का अर्थ है—बकरे का मांस बेचनेवाला खटिक। पशु-बलि में मुख्यतः बकरे का ही प्रयोग वैदिक काल से होता आया है, जो आज तक हो रहा है। अतः वर्तमान खटिक जाति को वेदकालीन 'खट्टिक' से साम्य रखनेवाली जाति कहा जा सकता है।

खटिक जाति का पूरे देश में मांस एवं फल का व्यवसाय है, किंतु आज यह एकमात्र ऐसी हिंदू जाति है जो नगरों में व्यवसायी एवं ग्रामीण क्षेत्र में खेतिहर किसान के रूप में पहचान रखती है। याज्ञिक ब्राह्मण के रूप में पशु-बलि के लिए नियुक्त वेदकालीन खट्टिक ही प्रारंभ में मांस का व्यापार करते थे। बकरे को काटने का उनको परंपरा से अभ्यास था।

यह कार्य अन्य नहीं करते थे। परंतु मध्ययुग में ब्राह्मण-क्षत्रिय विरोधी विदेशी मुसलिम शासकों ने पशुओं को काटने का कार्य मुख्यत: भारतीय मुसलमानों अथवा पराजित हिंदुओं से भी कराया और खटिक जाति के व्यवसाय पर आघात पहुँचाया। मुसलमानों द्वारा आज भी पशुओं को तड़पाकर (हलाल कर) मारने की परंपरा है। पशु जब तड़प-तड़पकर मरता है, तो वही मांस इसलाम मजहब के लोगों को मान्य होता है। एक झटके से पशु को बिना पीड़ा दिए उन्हें जीवन से मुक्त कर देना इसलाम में स्वीकार्य नहीं है। मांसाहार में अधिक रुचि रखनेवाले विदेशी एवं भारतीय, दोनों ही मुसलमानों के लिए हलाल-मांस विहित किए जाने से झटका मांस की खटिक की दुकानें प्राय: बंद होने लगी और ये लोग भूखों मरने की स्थिति में आ गए। वास्तव में जिस प्रकार झटका का मांस मुसलमानों के लिए हराम है ठीक उसी प्रकार हलाल का मांस हिंदुओं के लिए भी हराम है।

जीविका पर आघात पहुँचाने वाले मुगल शासकों का विरोध करने के बदले खटिक जाति ने अपने ब्राह्मण-स्वभाव के अनुसार ही अपने व्यवसायों में परिवर्तन कर लिया और वे मांस-विक्रय का कार्य आंशिक रूप में करने के साथ ही फलों का भी व्यवसाय करने लगे। फलों की आपूर्ति बनाए रखने के लिए बहुत से खटिक जाति के लोग नगरों से गाँवों की ओर चले गए और वहाँ खेती-बाड़ी का काम करने लगे। परिश्रमी होने के कारण उन्होंने खेतों में अन्न के साथ-साथ शाक-सब्जियों को भी उगाया और फलदार वृक्षों के बाग भी लगाए। ऐसे खटिक खेतिहर किसान कहलाए जो अन्नोत्पादन से अपना भरण-पोषण करते थे और शाक-सब्जियों को नगरों में भेजकर अपना व्यवसाय संवर्द्धन करते थे। आज भी अनेक प्रांतों में खटिक जाति के लोगों की आर्थिक स्थिति एक संपन्न किसान की है। इसी आधार पर इनको अनुसूचित जाति की श्रेणी से वंचित भी रखा गया है। ऐसे स्थानों पर वे पिछड़ी जाति की श्रेणी में हैं। यदि उनको भी अनुसूचित जाति की श्रेणी मिल जाती तो उनका सर्वांगीण विकास हो सकता था। समानता और सामाजिक न्याय की संवैधानिक व्यवस्थावाले इस देश में एक ही जाति के साथ दो तरह की नीति न्यायसंगत तो नहीं ही है, परंतु इसके निदान के लिए खटिक जाति की सामूहिक शक्ति का प्रयोग आवश्यक होगा।

खटिक जाति मांस एवं फल व्यवसाय के अलावा सरकारी नौकरियों एवं राजनीति में भी अपनी पहचान स्थापित कर चुकी है। परंतु मुख्य रूप से वहीं पर जहाँ इसे अनुसूचित जाति की श्रेणी प्रदान करते हुए आरक्षण का लाभ दिया गया है। आरक्षण-सूची के बाहर के भी कुछ खटिक जाति के लोग अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति की सुदृढ़ता के बल पर आगे विकास कर सके हैं, परंतु ऐसे लोगों की संख्या कम है। इस जाति के लोगों का मुख्य व्यवसाय पूरे देश में मुख्यत: मांस का ही है। जहाँ तक फल व्यवसाय की बात है, यह व्यवसाय पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं कानपुर-लखनऊ तक के

खटिक समाज द्वारा विस्तृत किया गया है। बंगाल, बिहार, झारखंड, उड़ीसा एवं ऐसे ही अन्य प्रांतों में जो फल व्यवसाय देखने को मिलता है, उसमें भी मुख्यत: पूर्वी उत्तर प्रदेश के ही खटिक लगे हुए हैं। इससे स्पष्ट होता है कि मांस व्यवसाय का सर्वत्र प्रचार-प्रसार होने से उसका कोई एक केंद्र स्थान निर्धारित नहीं है, परंतु फल व्यवसाय का केंद्रस्थल पूर्वी उत्तर प्रदेश ही माना जाता है। खटिक जाति के लोग अपने मांस-व्यवसाय को ही प्राचीन परंपरा का व्यवसाय मानते हैं।

खटिक जाति का आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक स्तर पहले से अधिक ऊँचा हुआ है। यही कारण है कि इस जाति के लोग चिकित्सा, इंजीनियरिंग, सेना और अन्य सरकारी नौकरियों में पहुँच चुके हैं। आरक्षण की सुविधा जिनको मिल रही है, वे लोग उच्च पदों पर पदोन्नति का भी लाभ पा सके हैं। इस जाति के मेधावी लोग प्रशासनिक अधिकारी एवं न्यायाधीश तक हो चुके हैं। इधर राजनीति में आरक्षण की व्यवस्था का लाभ उठाते हुए भी अनेक खटिक राजनेताओं ने विधान सभाओं और लोकसभा का प्रतिनिधित्व किया है। परिशिष्ट में उल्लिखित खटिक संबोधनों के आधार पर देखा जाए तो देश की राजनीति में खटिक जाति की अच्छी भागीदारी देखने को मिलती है। भारतीय संसद् की सदस्यता और अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग के राष्ट्रीय अध्यक्ष का पद तो स्वयं लेखक को भी प्राप्त हो चुका है। खटिक जाति के लोग राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री के पद पर भी आसीन हुए हैं। परंतु पूरे खटिक समाज का राजनीति पर वर्चस्व अभी तक स्थापित न होने से उसकी राजनीतिक पहचान आंशिक रूप में ही प्राप्त होती है। अभी खटिक समाज की अत्यधिक जनसंख्या आर्थिक और शैक्षिक स्तर पर उन्नत नहीं हो पाई है। इस जाति को राष्ट्रीय स्तर पर आरक्षण का लाभ न मिलने से भी इसकी पहचान ठीक स्थापित नहीं हो पा रही है। इसके लिए संयुक्त प्रयास की आवश्यकता है और यह संयुक्त प्रयास मुख्यत: वे ही लोग कर सकते हैं जिनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ है।

खटिक जाति एक हिंदू धर्मानुयायी जाति है। वैदिक काल में याज्ञिक कार्यों को पूरा करनेवाली एक ब्राह्मण यज्ञ-पशुओं को काटने के ही कारण बाद में उच्च ब्राह्मण श्रेणी से स्थानांतरित होते हुए क्षत्रियवर्गीय यानी समाज की सुरक्षा एवं राष्ट्र-रक्षा के कार्यों में प्रयुक्त होती चली गई। पशुओं के बलि-कर्म से ही ऊर्जा प्राप्त खटिक योद्धाओं की शौर्यपूर्ण भूमिका प्राय: क्षत्रिय योद्धाओं के रूप में परिवर्तित हुईं। आज भी अनेक क्षत्रिय जाति के वंश एवं गोत्र खटिक जाति में पाए जाते हैं। अत: कहा जा सकता है कि वैदिक काल से ही खटिक जाति के लोग धर्म (हिंदू) के कट्टर अनुयायी एवं धर्मरक्षक, राष्ट्ररक्षक बलशाली योद्धा के रूप में स्थापित क्षत्रिय थे।

खट्वांगवंशी खटिक जाति के लोग केवल बलि-कर्म के लिए ही खड्ग का प्रयोग करते थे। परंतु जब गुजरात, राजस्थान और संपूर्ण पश्चिमोत्तर भारत पर विदेशी मुसलिम

तुर्क आक्रांताओं ने आक्रमण करके मंदिरों और घरों को लूटना आरंभ किया तथा हिंदुओं को मौत के घाट उतारने के साथ ही देवालयों को ध्वस्त भी करना प्रारंभ किया तो उस समय मंदिरों में रहकर पशुओं की बलि देनेवाले यही खटिक जाति के लोगों ने सबसे पहले उनका मुँहतोड़ उत्तर एवं प्रतिरोध किया था। उस समय कोई भी आक्रमण ऐसा नहीं हुआ जिसमें केवल हिंदू ही मारे गए थे। खटिक जाति के ब्राह्मण पुजारियों ने जब देखा कि उनके क्षत्रिय राजागण आपसी एकता के अभाव में मारे जा रहे हैं तो मंदिरों की रक्षा के लिए उन्होंने स्वयं शस्त्र उठाया और आक्रांताओं को सर्वाधिक मात्रा में मौत के घाट उतारा। इन खट्टिक ब्राह्मणों की संख्या तो बहुत ही कम थी, परंतु इनमें अदम्य साहस भरा हुआ था, इसलिए एक खटिक कम-से-कम पचास विदेशी आक्रांताओं पर भारी था। इनके शौर्य एवं पराक्रम के कारण ही पूर्व काल में लोगों ने इनमें ब्राह्मणत्व और क्षत्रियत्व, दोनों पाया और अद्भुत जाति के नोम से सम्मानित किया।

हिंदू धर्म के प्रति समर्पित खटिक जाति को अकेला ही वह गौरव प्राप्त है कि समय पर उसने धर्म के लिए कार्य किया और जब देश पर आँच आने लगी उस समय देश-रक्षा के भी कार्य में भाग लिया। इस प्रकार खटिक जाति ही एकमात्र ऐसी जाति पाई जाती है, जिसने धर्म और देश, दोनों के लिए रक्षा-युद्ध में अपना जीवन बलिदान कर दिया, परंतु हिंदू धर्म, हिंदू स्वाभिमान और हिंदुस्थान पर जीते जी आँच आने नहीं दी। विदेशी मुसलिम तुर्क आक्रांताओं से भिड़ने का साहस इसी जाति में था। इस जाति ने रणक्षेत्र में कभी पीठ नहीं दिखलाई। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आज भी देखा जा सकता है। सांप्रदायिक दंगों में जब भारतीय मुसलमान क्रूर बनकर तलवारें भाँजते हुए हिंदू जनसंख्या पर टूट पड़ते हैं और जाने-पहचाने अपने पास-पड़ोसियों की हत्या निर्दयतापूर्वक करने लगते हैं उस समय घरों में ताले लगाकर जहाँ अन्य हिंदू लोग भाग जाते हैं वहीं पर एकमात्र खटिक जाति के लोग हैं जो अपनी जान की चिंता किए बिना हिंदू परिवारों की जान बचाने के लिए सीना तानकर धर्मांधों का मुकाबला करते हैं और उनको खदेड़-खदेड़ कर मारते हैं। प्रायः संपूर्ण देश भर में यह देखा जा सकता है कि जहाँ मुसलमानों की बस्तियाँ होती हैं वहीं पर उनके क्रूरता एवं हिंदुओं के प्रति दुराग्रह के प्रत्युत्तर दोनों के लिए मानो खटिक जातियों की बस्तियों की बसाहट है। एक समय ऐसा था जब विदेशी आक्रांता मुसलमान यदि तलवार से भी नहीं डरता था तो भी वह एक खटिक से अवश्य भयभीत रहता था। अपनी नमाजों में भी वह अल्लाह से यही प्रार्थना करता था कि हर इनसान से उसकी मुलाकात हो परंतु किसी खटिक से उसकी कभी भेंट न हो। ऐसी खटिक जाति को भला कौन नहीं कहेगा कि यह प्रथम हिंदू जाति है जो हिंदू धर्म के प्रति तन-मन-धन से समर्पित है।

खटिक जाति ने अपनी ब्राह्मण-बुद्धि का बहुत अच्छा प्रयोग कर दिखाया था।

जब मध्यकाल में हिंदू परिवारों की सुरक्षा की कोई गारंटी नहीं रह गई तो विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से अपने परिवारों की रक्षा हेतु अनेक लोग पलायित होकर दुर्गम एवं जंगलों-पर्वतों में चले गए, परंतु खटिक जाति ने अपने घरों में ही सुरक्षित रहकर अपनी बहू-बेटियों की अस्मत की भी रक्षा करते हुए डटकर विदेशी मुसलिम आक्रांताओं का उत्तर भी दिया। उसने इसलाम के शत्रु-पशु सुअर को अपने घरों के इर्द-गिर्द बाँधकर उसे पालतू पशु के रूप में स्वीकार कर लिया। हिंदू धर्म में विष्णु का वाराह अवतार पूज्य है, अतः खटिक जाति ने वाराह-पशु (सुअर) को अपनाया और लोगों के मन में एक अच्छी सोच उत्पन्न की कि हिंदू देवताओं के पशु-पक्षी स्वरूपों का भी सम्मान होना चाहिए।

अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद के खतरों की संभावना पर दृष्टिपात करने वालों में विशेषकर हिंदुओं को खटिक जाति के सुअर-पालन से एक बहुत बड़ी प्रेरणा लेनी चाहिए। आज, सभी लोग यह जानते हैं कि विश्व पर शासन करने के लिए एक तरफ ईसाई प्रयत्नशील हैं तो दूसरी ओर मुसलिम। ईसाई अपनी जनसंख्या धर्मांतरण द्वारा बढ़ा रहे हैं। उनका प्रभाव मुसलिम जनसंख्या पर तो नहीं पड़ रहा है, किंतु आदिवासी जनजाति संवर्ग के हिंदुओं पर उनका प्रभाव तीव्र गति से पड़ रहा है। इसका ज्वलंत प्रमाण यह है कि जनजातियों की संख्या निरंतर घटती जा रही है और दलित ईसाइयों की संख्या बढ़ती जा रही है। मुसलिम जनसंख्या अपना विस्तार जन्म-दर में वृद्धि करके कर रही है। एक पुरुष के लिए चार पत्नियाँ विहित कर दिया गया है। एक स्त्री के लिए कम बच्चे पैदा करने को ठीक नहीं माना जाता है। ऐसे में यह सुनिश्चित है कि अतिशीघ्र ही इस देश में मुसलमानों की आबादी हिंदुओं से अधिक हो जाएगी और विदेशी मुसलिम जेहादों में भारतीय मुसलमान भी सम्मिलित हो जाएँगे और अपने ही प्राचीन काल के रक्त संबंधित भाई-बंधु यानी हिंदुओं को समाप्त करने में विलंब नहीं करेंगे। ऐसे में हिंदुओं को अपनी जनसंख्या वृद्धि एवं हिंदू धर्म की रक्षा के प्रति सजग रहकर खटिक जाति, जो हिंदुओं एवं हिंदू समाज की रक्षा के लिए सजग है, उसे सहयोग, सम्मान के साथ शक्ति प्रदान करनी चाहिए।

खटिक जाति एक हिंदू धर्मानुयायी जाति होने से हिंदू धर्म, संस्कृति तथा धर्मयुक्त हिंदू जीवन-पद्धति के संरक्षण एवं अनुपालन में यह अन्यान्य हिंदुओं से अग्रणी है। हिंदू मंदिरों में देवी-देवताओं को समर्पित किए गए समस्त संपदाओं की सुरक्षा का दायित्व इन्हीं पर निर्भर था, क्योंकि वे स्वयं भी दानदाताओं में से एक थे। दान-कर्म उनके धर्म-कर्म का एक प्रधान अंग था। हिंदू धर्म के समस्त 10 तत्त्वों (धृति अथवा धैर्य, क्षमा, दम (तपस्या), अस्तेय (चोरी न करना), शौच (पवित्रता), इंद्रिय निग्रह, (धी) आध्यात्मिक ज्ञान, विद्या, सत्य तथा अक्रोध (अहिंसा) को उन्होंने धर्मरक्षक होने के नाते अपने जीवन

में उतार लिया था। उन्होंने हिंदू जीवन-पद्धति में निहित आचार-व्यवहार, मर्यादित आचरण, प्रकृति का संरक्षण, दृश्य एवं अदृश्य सत्ता के प्रति सम्मान इत्यादि को जो हिंदू संस्कृति के मूलतत्त्व माने जाते हैं उनको भी आत्मसात् कर लिया था। यही कारण था कि वैदिक काल से आज तक खटिक जाति हिंदू धर्म और संस्कृति के प्रति स्वयं तो निष्ठावान पाई ही जाती है, अन्य हिंदुओं को भी इसके लिए सदैव प्रेरित करती रहती है। इसका जीवंत प्रमाण किसी भी हिंदू मंदिर के निर्माण हेतु धन संग्रह के समय, रामलीलाओं एवं अन्य धार्मिक आयोजनों के समय मिल जाता है। ऐसे कार्यों में खटिक जाति को इसमें बढ़-चढ़कर भाग लेते हुए पाते हैं। हिंदू खटिक जाति के सापेक्ष कुछ ही जातियाँ ऐसी देखने में आती हैं जो हिंदू धर्म और संस्कृति के संरक्षण एवं अनुपालन में निष्ठावान पाई जाती हैं। अन्य हिंदू जातियाँ हिंदू जीवन-पद्धति का अभिप्राय कुछ रीति-रिवाजों को संपन्न करने और पूजा-पाठ करने को ही मानती हैं, जबकि हिंदू जीवन पद्धति वास्तव में प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करके जीवन जीने का सिद्धांत है।[1] खटिक जाति को हिंदू जीवन-पद्धति के तीनों कारकों अर्थात् सत्, ऋत और ब्रह्म का सम्यक् ज्ञान है। उसे पता है कि प्रकृति सत्य है और सत्य ही प्रकृति है, प्राकृतिक नियमन ही ऋत है और प्रकृति तथा उसके नियमन को संचालित करनेवाली शक्ति ही ब्रह्म है।[2]

खटिक जाति की महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह जाति बहादुर एवं स्वाभिमानी है। बाह्य आक्रमणकारियों के विरुद्ध अथवा कोई विशेष संकट आने पर सदैव युद्ध एवं लड़ने के लिए तत्पर यह जाति स्वभाव से ही आक्रामक है। यह एक योद्धा जाति है। हिंदू मंदिरों पर आक्रांताओं का आक्रमण हिंदू अस्तित्व के लिए खतरे की घंटी थे और हिंदू जाति को बहादुरी एवं उनके स्वाभिमान के लिए चुनौती भी थे। इस पर विशेष रूप से ध्यान दिया था इसी खटिक जाति ने जो उन दिनों मंदिरों में अपने लिए निर्धारित किए गए कार्यों को पूरा करने हेतु सदैव तत्पर रहते थे। विदेशी आक्रांताओं से जूझने का साहस सर्वप्रथम इसी जाति के लोगों ने दिखलाया और बहादुरी के साथ लड़ते रहे। विदेशी आक्रांताओं की सैकड़ों तलवारों से इनका शरीर तार-तार हो गया, फिर भी वे बहादुरी से उनका मुकाबला करते रहे। तार-तार से बने दिल्ली के तातारिया अथवा तितौरिया वंश के खटिकों की बहादुरी की कहानी भला कौन नहीं जानता है?

हिंदू राजवंशी परंपरा में राष्ट्र की रक्षा के लिए जिस चतुरंगिणी सेना का संकलन किया जाता था उसमें सेना का कोई भी अंग ऐसा नहीं था, जिसमें खटिक जाति के

---

1. शर्मा. डॉ. मुंशीराम : वैदिक संस्कृति और सदाचार, पृ. 332-334 (वेद कथांक, कल्याण, 1999)
2. उपाध्याय, बलदेव : वैदिक साहित्य और संस्कृति, शारदा संस्थान, वाराणसी, 1998, महाभारत, शांतिपर्व तथा धर्मशत्रांक, पृ. 106

सैनिक न रहे हों। खटिक जाति के स्वाभिमान को चुनौती नहीं दी जा सकती थी। युद्ध में लगातार लगे रहना इनका स्वभाव था। ये किसी भी प्रकार के युद्ध में भाग लेने हेतु सदैव तत्पर रहते थे। सेना की अग्रपंक्ति में खटिक सैनिकों को ही रखा जाता था। इनकी शारीरिक बनावट इतनी अद्‌भुत थी कि शत्रु देखते ही काँप उठते थे। युद्ध की समस्त कलाओं में वे निपुण थे, इसलिए उनको हिंदू योद्धा कहा जाता था। इनके योद्धा-स्वभाव का प्रत्यक्ष अवलोकन उस समय हो जाता है, जब किसी कमजोर हिंदू को किसी अन्य पंथ या मजहबवालों द्वारा सताया जाता है। अन्य जाति के लोग जहाँ देखकर भी मुड़ जाते हैं, इस जाति के लोग रुकते हैं और दमन का प्रतिकार करते हैं। यदि किसी पीटे जाते हुए व्यक्ति को देखकर कोई उसकी रक्षा के लिए आ जाए तो समझ लेना चाहिए कि वह या तो क्षत्रिय है अथवा खटिक है। खटिक की बहादुरी इतनी ख्यात है कि इस जाति से उलझने का साहस कोई नहीं कर पाता है। अन्याय का विरोध और उसका शक्तिशाली प्रत्युत्तर देने में भी खटिक जाति सबसे आगे पाई जाती है।

खटिक जाति के लोग प्रारंभ से ही विदेशी ताकतों से मोरचा लेनेवाले माने जाते रहे हैं। तैमूरलंग से खटिक वंश के लोगों ने भयंकर मोरचा लिया था। तैमूर के दाँत खट्टे करनेवाली इस जाति का भारी संख्या में नरसंहार हुआ। यह घटना सन् 1397 ई. की है। समरकंद से लगभग 60 किलोमीटर दूर ट्रांस आक्सियाना के शहर सब्जदार में सन् 1336 ई. में जन्म लेनेवाले तैमूर का भारत पर आक्रमण केवल धार्मिक कारणों से नहीं हुआ था बल्कि वह यहाँ की विपुल संपदा का स्वामित्व प्राप्त करने और स्थायी रूप से शासन करने के लिए हुआ था। उस समय विदेशी आक्रांता सुल्तान मुहम्मद तुगलक का शासन-प्रबंध कुछ अव्यवस्थित हो चुका था और तैमूर उसका लाभ उठाना चाहता था। पहले उसने अपने पौत्र पीर मुहम्मद को भेजा और जब उसने असफल होने पर और सैनिक सहायता माँगी तब तैमूर स्वयं आया। उसके साथ कुल 92 हजार सैनिक थे, जबकि दिल्ली विजय के समय 15 लाख।[1] इतिहासकारों ने उल्लेख किया है कि वह सभी युद्धों को जीतनेवाला रहा। यह कथन असत्य है। दीपालपुर और अजोधन में ही उसके मुख्य-मुख्य सैनिक मार दिए गए थे और भटनीर में भी उसने हिंदू राजा राव दलजीत से संधि करने के बाद ही निहत्थे लोगों को मारकर अपना पराक्रम दिखलाया था। उसके लाख प्रयास के बाद भी भटनीर और मेरठ की हिंदू नारियाँ और भारतीय मुसलमान महिलाओं को अपहृत करने का अवसर नहीं मिल पाया था, क्योंकि दोनों ही संप्रदाय की नारियों ने हिंदू धर्म-व्यवस्था के नियमों का पालन करते हुए जौहर-व्रत का आश्रय ले लिया था।[2]

---

1. श्री वास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पृ. 589, 593
2. वही, पृ. 593

मालफूजात-ए-तिमूरी (तैमूर की आत्मकथा) के मिथ्या कथानकों पर ध्यान दिया जाए तो स्पष्ट पता चल जाता है कि दिल्ली पर विजय प्राप्त करने के बाद भी तैमूर क्यों वापस अपने देश चला गया? लेखकों ने उसकी भारी फौजों और भारत में पड़े दुर्भिक्ष को ही उसका कारण बतलाया है, परंतु वास्तविक कारण यह था कि युद्ध करते-करते उसके अपने सैनिक प्राय: समाप्त हो चुके थे और कुछ लालची सुल्तानों के भाड़े के सैनिकों के बल पर लाखों हिंदू युद्ध-बंदियों से उसे अपनी जान के लिए सुरक्षा की संभावना समाप्त हो चुकी थी। उल्लेखनीय है कि विश्वविजेता सिकंदर के सैनिक जिस तरह से कठ (खटिक) जाति के हिंदू योद्धाओं से युद्ध करने का साहस नहीं जुटा पाए थे और सिकंदर के लाख प्रयास के बाद भी वे अपने देश को वापस भाग निकले थे, उसी प्रकार से तैमूर ने भी जब इन्हीं कठ जाति के हिंदू युद्धबंदियों से अपने लिए खतरा समझा तो वह भी भाग खड़ा हुआ।

खटिक जातियों ने इतनी बहादुरी के साथ युद्ध किया था कि उसकी याद आते ही सिकंदर के सैनिकों के रोएँ खड़े हो जाते थे। उसी तरह से तैमूर को भी लोहे के चने चबाने पड़े। तैमूर एवं सिकंदर हिंदुस्थान में तत्कालीन विदेशी आक्रांता तुर्क सुल्तानों एवं नवाबों से समझौता करके हिंदुओं को ही लुटते एवं उनकी महिलाओं को गुलाम बनाकर व विपुल संपदा के साथ अरब ले जाने की मानसिकता रखते थे। पश्चिम एवं उत्तर भारत में ही इनका आतंक था। हिंदुओं का सौभाग्य था कि यहाँ खटिक जाति की संख्या अधिक थी। खटिक सैनिक हिंदू धर्म के अनुयायी थे। मानवीय परंपरा के अनुसार शरणागत की रक्षा करना उनका दायित्व हो जाता था। उनसे युद्ध में विजय न पाते देख तैमूर ने अपने सैनिकों से हथियार रख देने को कहा और एक संधि-प्रस्ताव बनाकर कठ के राजा के पास भेजा कि वह उससे मैत्री करना चाहता है और खटिक सैनिकों को सम्मानित भी करना चाहता है। धूर्तों पर विश्वास करने के कारण ही भारी संख्या में खटिक जाति के लोग बंदी बनाए गए थे और उनको धमकी दी गई थी कि यदि वे तैमूर को दिल्ली पहुँचने तक शांति बनाए नहीं रखे तो उनके स्त्री-बच्चों का वध.कर दिया जाएगा। तैमूरलंग ने यह भी स्पष्ट कहा था कि उसका उद्‌देश्य केवल दिल्ली जीतना है। बाद में उसने रात में सोते हुए लाखों खटिक सैनिकों की हत्या करवाई और उनके एक लाख सिरों का ढेर लगवाकर उस पर रमजान की तेरहवीं तारिख पर नमाज अदा की। लूटपाट, आगजनी और नरसंहार के बल पर तैमूर कभी कठिक (खटिक) जातियों पर शासन नहीं कर सकता था, अत: भारत से उसका पलायन स्वाभाविक था। हिंदू इतिहासकारों का यथार्थ मत यही है, वैसे परंपरागत इतिहास लिखनेवाले तैमूर को भले ही अपराजेय सिद्ध करने का प्रयास करें, किंतु उसके लिए उनके पास तैमूर की आत्मकथा पुस्तक के अतिरिक्त और कोई भी साक्ष्य नहीं है। इसे तो खटिक जाति के ही लोग जानते हैं कि भले ही आक्रांता की धूर्तता के कारण उनको

भयंकर नरसंहार के साथ भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ी थी, परंतु हिंदुस्थान की धरती पर तैमूर के दाँत खट्टे करने का कार्य केवल इसी जाति के सैनिकों ने किया था।

सिकंदर और तैमूर की विशाल सेना से लोहा लेनेवाले कठ (खटिक) जाति ने इसलाम के विदेशी आक्रांताओं, लुटेरों एवं शासकों के समक्ष कभी घुटने नहीं टेके, इसका उल्लेख निष्पक्ष लिखे गए इतिहास ग्रंथों में मिलता है। तैमूर ने कठ जाति के लोगों का जो भयानक नरसंहार किया वह केवल धोखे से उनको निहत्था करने के बाद ही, जबकि उनके राजा को मैत्री के लिए सादर आमंत्रित किया गया था। वे अपने स्त्री और बच्चों के साथ वह उत्सव देखने गए थे, परंतु जब उनके राजा को बंदी बनाया गया तो वे शस्त्रविहीन होने को अपना दुर्भाग्य मान लिए और बंदी बना लिए गए। निहत्थों का छल-कपटपूर्ण किया गया नरसंहार किसी भी युद्ध-नियमावली के विरुद्ध माना जाता है, परंतु तैमूरलंग ने अपने हित के लिए वह जघन्य कुकृत्य किया। जब उसे होश आया कि इसके प्रतिशोध में उसकी जान जा सकती है तो भयाक्रांत होकर उसने दिल्ली की गद्दी पर शासन करने का लालच त्यागकर घर वापसी यानी भागने का मन बनाया।

यह सच है कि खटिक जाति के सैनिकों ने तैमूर का भी डटकर सामना किया, फिर भी अनेक स्थानों पर आक्रांताओं को भारत-विजय का लाभ मिला। इसका एक कारण तो हिंदू राजाओं में एकजुटता की कमी थी, परंतु दूसरा कारण यह था कि सेना में धर्मांतरित मुसलिम सैनिकों की संख्या अधिक होने के कारण जहाँ मुहम्मद तुगलक के प्रतिनिधि हिंदू राजा थे, वे भी उन लालची सैनिकों के भीतरघात से पराजित होते रहे थे। जिस सेना में हिंदू सैनिक विशेषकर खटिक जाति के लोग अधिक थे उनको जीतना तैमूर के लिए टेढ़ी खीर बन गया था। दीपालपुर और अजोधन में उसके महत्त्वपूर्ण सैनिक इसीलिए मार दिए गए थे कि वहाँ की सेना में काठिक (खटिक) जाति के सैनिकों की संख्या अधिक थी।

उस समय इसलामिक आक्रांताओं एवं शासकों के समक्ष घुटने टेकनेवाले कायर, डरपोक एवं लालची थे। उनमें वे लोग अधिक थे जिन्होंने बौद्ध धर्म त्यागकर इसलाम स्वीकार कर लिया था। कायर एवं लालची लोग भी युद्ध के मैदान से भागते, आत्मसमर्पण करते और दृढ़ संकल्पित सैनिकों का मनोबल तोड़ते थे। गोपनीय सामरिक सूचनाएँ दुश्मनों तक वे ही पहुँचाते थे। लूटपाट का धन पाने के लालच से वे हिंदू सेनाओं में प्रवेश करते और युद्ध के समय मुसलिम आक्रांताओं के लिए काम करते थे। विदेशी आक्रांताओं द्वारा कुछ भेदिए, बहुरुपिए एवं पीर तथा औलिया के रूप में हिंदुस्थान में स्थापित होकर देश के विरुद्ध कार्य किया। आपस में प्रतिद्वंद्विता एवं ईर्ष्या-द्वेष रखनेवाले शासक भी युद्ध के समय विदेशी आक्रांताओं का ही साथ दिया करते थे। ऐसे लोगों में एक भी खटिक अथवा एक भी खटिक राजा नहीं था। आज भी राष्ट्रीय सुरक्षा में लगे

हुए अनेक जाति के लोगों को जासूसी और देश के लिए विद्रोह करते पाया गया है, परंतु यह गर्व की बात है कि अभी तक किसी खटिक पर ऐसा कलंक नहीं लगा है।

वर्तमान समय में हिंदू जातियाँ भले ही भूल जाएँ कि मध्ययुग में उनको मुसलिम आक्रांताओं के अमानवीय उत्पीड़नों का शिकार होना पड़ा था, परंतु खटिक जाति उसे आज तक याद रखे हुए है। बड़ी संख्या में हुए हिंदुओं के नरसंहार के लिए जिम्मेदार इसलामिक शक्तिरूपी राक्षस को यह जाति आज लगभग तेरह सौ वर्षों बाद भी नहीं भूल सकी है। हिंदू मंदिरों में लूटपाट और नरसंहार करनेवालों को उन्होंने मरते दम तक सफल होने नहीं दिया था। अपने देवी-देवताओं का अपमान बहुत नजदीक से देखा था, क्योंकि उस समय वे मंदिर परिसर में ही होते थे। उनके साथ उनके स्त्री-बच्चे भी होते थे जिनको छलपूर्वक जिंदा पकड़कर विदेशी आक्रांताओं द्वारा खटिक ब्राह्मणों से याज्ञिक पशु-बलि के खड्ग तक रखवा लिए जाते थे, यद्यपि निहत्था होने का लाभ उनको कभी नहीं मिल सका और वे अपने परिवार सहित मार दिए गए अथवा गुलाम बनाकर बगदाद की सड़कों पर कौड़ियों के मोल बेच दिए गए। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए उनकी स्त्रियों ने अपने को किस तरह जिंदा आग के हवाले किया और जौहर-व्रत का पालन किया, इसे वे लोग अत्यंत करीब से देखे थे। उनके सामने ही उनके बच्चों को मार दिया जाता था, इसे भला वे कैसे भूल सकते हैं? तैमूर को लाखों खटिक नरमुंडों पर खड़े होकर नमाज पढ़ते उन्होंने देखा था और यदि वह भगा नहीं दिया गया होता तो उसके मस्तक का उच्छेदन काठिक (खटिक) लोग कर दिए होते।

खटिक जाति अत्यंत धार्मिक होने के बाद भी अपने धर्म के साथ खिलवाड़ करनेवालों को कभी क्षमा प्रदान करनेवाली नहीं रही। इसलामिक शक्तिरूपी राक्षसों को अपने प्रतिशोध का शिकार बनाने के लिए वह सदैव तत्पर रही है। तैमूरलंग, सिकंदर आदि के आक्रमणों एवं धर्मरक्षक ब्राह्मण, देशरक्षक क्षत्रिय तथा सामान्य हिंदुओं की बहू-बेटियों को गुलाम बनाकर लाखों लाख की संख्या में देश के बाहर ले जानेवाले खूँखार आततायियों को खटिक वंश के लोग अब भी नहीं भूल पाए हैं। दर-ब-दर की जिंदगी जी रहे स्वाभिमानी एवं राजवंशीय हिंदू आज सामाजिक हीनता, आर्थिक दीनता एवं दयनीय स्थिति की विवशता के लिए जिम्मेदार उन एकमात्र विदेशी मुसलिम शासक आक्रांताओं को भला कैसे भूल सकते हैं? और जब अपने ही देश के मुसलमान या अन्यान्य लोग उन्हीं आक्रांताओं के रूप में सामने आते हैं तो खटिक वंश के लोग उसका मुँहतोड़ जवाब देने के लिए सीना तानकर सड़कों पर आ जाते हैं, जिनके परिणामस्वरूप हिंदू समाज आतंक और व्याभिचार के इस दानवरूपी मानसिकता से बच जाता है। यह इसीलिए संभव है कि बड़ी संख्याओं में हुए इसलामिक काल के उत्पीड़न को वे आज तक नहीं भूल पाए हैं।

मुसलमानों के साथ स्वाभाविक विरोध की मानसिकता के साथ यह जाति आज भी इनसे जमकर टक्कर लेती है। इसके पार्श्व में भारत के मुसलमानों के प्रति द्वेष-भाव नहीं अपितु वह इसलाम भाव है जिसके कारण हिंदुस्थान में भारी विध्वंस हुआ। लाखों स्त्रियों की अस्मत लूटी गईं, लाखों निर्दोष लोगों की इसलिए हत्या हुई कि वे हिंदू थे। लंबे काल तक लाखों लाख हिंदू आक्रांत किए गए। मुसलमानों के साथ इनका इसलिए विरोध होना अत्यंत स्वाभाविक है। सैकड़ों वर्ष के युद्ध के कुत्सित परिणाम में खटिक जाति को एवं ऐसे ही अन्य जातियों जैसे, भंगी (वाल्मीकि), पासी, चमार आदि को स्वाभाविक रूप से इसलाम विरोधी मानसिकता का बना दिया है। विदेशी इसलामिक शासकों के दमन, दलन, अत्याचार, उत्पीड़न और हिंदू होने के स्वाभिमान को भंग कर दलित बनाने की घटनाओं ने उनके मन में घृणा भर दी है और उस तरह का खूँखार वातावरण उनके समक्ष आते ही वह स्वतः युद्ध के मानसिकता में इन्हें पहुँचा देता है। इस प्रकार यह विदित होता है कि खटिक जाति में इसलाम के विरुद्ध स्वभावगत एवं स्वाभाविक मानसिकता है। वोट-बैंक मुसलिम तुष्टीकरण की नीतियाँ इन्हें पसंद नहीं है। इन्हें यह भी अस्वीकार है कि वर्तमान दलित मुसलिम उनके ही भाई-बंधु हैं। वामपंथियों एवं कांग्रेसी विचारधारा के नेताओं को खटिक जाति ने स्पष्ट रूप से चेतावनी दे डाली है कि मुसलिम तुष्टिकरण की नीति देश के करोड़ों उन हिंदुओं के लिए चुनौती बन जाएगी जिन मुसलमानों के पूर्वजों ने स्वाभिमानी एवं गौरवशाली हिंदुओं को दलित बनाया। यह सच है कि मुसलमानों के विषय में खटिक जाति की सोच बिलकुल आधारयुक्त एवं प्रामाणिक है। वर्तमान समय में भारतीय मुसलमान छोटी सी धार्मिक बात को लेकर इतना अधिक आक्रोशित हो जाता है कि किसी भी हिंदू की जान मारने पर उतारू हो जाता है। कोई भी हिंदू राजनेता जब मुसलिम धार्मिक आयोजनों में भाग लेता है और मजारों पर चादर चढ़ाता है तो एक भी हिंदू उसका विरोध नहीं करता है, परंतु जब एक मुसलिम जनप्रतिनिधि किसी हिंदू मंदिर की ड्योढ़ी लाँघ जाता है तो इसलाम विरुद्ध घोषित करके उसे दंडित किया जाता है। क्या इसलामिक विश्वबंधुत्व का भाव यही है? ऐसे लोगों की मानसिकता जब आज तक नहीं बदल पाई है तो उनके द्वारा सदियों से उत्पीड़ित खटिक, चमार, भंगी आदि जातियाँ जो विदेशी तुर्क, मुसलिम एवं मुगल आक्रांताओं से पीड़ित थी वे भला उनको कैसे भूल सकती हैं? मुसलमानों के साथ उनके स्वाभाविक विरोध का मुख्य कारण यही है कि वर्तमान हिंदू-मुसलमान यदि अपने को भारतीय मानते और लिखते भी हैं तो उनको भी सभी भारतीयों के साथ स्नेह और सद्भाव रखना ही होगा और हिंदू धर्म के विरोध में विषवमन बंद करना होगा। तभी वे खटिक आदि जातियों की मानसिकता में परिवर्तन की अपेक्षा कर सकते हैं।

हिंदू धर्म की रक्षा के लिए खटिक वंश ने इसलाम के कट्टर शत्रु सुअर नामक

जानवर को अपना पालतू पशु बनाया। खेती या अन्य किसी उपयोग का पशु न होते हुए भी सुअर के पालन एवं उसके मांस के व्यवसाय में उत्तर भारत के खटिक शामिल हुए। यह निश्चित रूप से असाधारण बात है। जिसके मल-मूत्र का उपयोग खाद आदि के रूप में हो नहीं सकता। उसके गोबर से उपले तक नहीं प्रयोग में लाए जा सकते। जिसके दुग्ध की न तो मात्रा है और न ही कोई मूल्य है। जिसका पालन-पोषण हिंदू समाज में अभी भी घृणाप्रद माना जाता है। ऐसे जानवर को पालतू बनाने का खटिक जाति का प्रयास निरुद्देश्य नहीं रहा है। यह पशु विष्णु के वाराह अवतार से जुड़े होने के बाद भी आज से पाँच सौ वर्ष पूर्व तक किसी हिंदू के घर में पालित नहीं हुआ, परंतु आज उसके पालन के लिए सरकारी स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। सुअर पालन एक उद्योग के रूप में प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके लिए सरकारी स्तर पर आर्थिक सहयोग भी दिए जा रहे हैं। यह सरकारी प्रयास कदापि इसलिए नहीं है कि यह पशु मुसलमानों का शत्रु-पशु है। बल्कि इसका मांस ईसाई समुदाय के लिए अधिक रुचिकर होता है और यह विदेशी निर्यात सामग्री का एक प्रमुख अंग बन चुका है। विदेशों में इसके मांस की माँग अधिक मात्रा में है। मुसलमान इसके मांस को अपवित्र एवं हराम समझता है।

खटिक जाति के लोग योद्धाओं की तरह काँटा से काँटा निकालने की मानसिकतावाले मिलते हैं। चूँकि हिंदू गोमाता के प्रति इसलामिक भावनाओंवाले जघन्य भाव रखते हैं, इसलिए खटिक भी उनके शत्रु-पशु को अपना मित्र बनाने की एक चुनौती दिया था। मध्ययुगीन शासक आखेट करते समय जंगली सुअरों को मारकर खा जाते थे। बौद्ध भिक्षुओं द्वारा वे सुन रखे थे कि जंगली सुअर का मांस अत्यंत स्वादिष्ट होता है। हिंदू राजा भी आखेट के समय ऐसे सुअरों का वध करते थे। परंतु कुछ ही समय बाद सुअर को इसलाम-विरुद्ध पशु घोषित कर दिया गया और उसका मांस वर्जित कर दिया गया। मुसलमान उस पशु से अपनी दूरी बनाए रखने लगे, इसलिए जिन हिंदू जातियों ने मुसलमानों से अपनी दूरी रखनी चाही उसने सुअर पालन आरंभ कर दिया। खटिक के साथ ही आज का वाल्मीकि, मुसहर आदि भी सुअर पालते हैं। मध्य प्रदेश के जनजाति समाज के लोग अपने आवासों पर सुअर का चित्र बनवाते हैं। यह कार्य वे उन दिनों से करते आए हैं जब से उनको इसलामिक आक्रांताओं से अपने लिए सुरक्षा के उपाय ढूँढ़ने की स्थिति आई। ऐसा करने का प्रत्यक्ष लाभ उनको प्राप्त भी हुआ और मुसलिम आक्रांता उनके घरों पर कभी आक्रमण नहीं बोल सके। इस तरह से सुअर पशु को पालकर खटिक जाति ने अपने परिवार के साथ अपनी बहू-बेटियों की रक्षा की। दूसरी ओर मूर्ति-पूजा के कट्टर विरोधियों के सम्मुख विष्णु के वाराह अवतार की प्रत्यक्ष पूजा करके उनको निरुपाय बना दिया। संत रैदास ने मुगलों से बचने के लिए जहाँ निरंकार पूजा का प्रणयन किया, वहीं खटिक जाति ने साकार-पूजा के प्रतीक सुअर एवं उसके

स्वरूप वाराह अवतार में भगवान् विष्णु को सम्मानित किया।

मुसलमान आक्रांताओं का सीधा प्रहार मुख्यत: खटिक जाति पर हुआ था और सर्वाधिक दमन एवं दलन उनका ही हुआ था इसलिए खटिक जाति के लोगों के मन में इसलामधर्मियों के प्रति जन्मजात विरोध भाव पाया जाता है। वे कभी भी मुसलमानों के साथ ऐक्य स्थापित करना नहीं चाहते। उनसे वे हर स्तर पर दूरी बनाए रखने का प्रयास किए। इसके लिए ही उन्होंने मुगलों के घृणित पशु सुअर को विशेष रूप से पाला। सुअर पालने एवं उसके मांस के उपयोग से यह जाति अपने तथा अपनी बहू-बेटियों के साथ इसलाम से दूरी बनाने में सफल रही। परंतु मल-मूत्र खानेवाले सुअर जैसे घृणित पशु को समाज का एक अंग बनाकर अपनी जाति की पहचान को खटिक जाति ने इससे जोड़ दिया जिसे यह जाति हिंदू समाज में घृणा एवं अपवित्रता के भाव का शिकार होकर सामाजिक रूप से पतित समझी जाने लगी। जबकि सुअर पालन का मुख्य उद्देश्य अपने को हिंदू बनाए रखते हुए अपनी बहू-बेटियों की रक्षा करना ही मुख्य था। आज भी वाराणसी के निकट गाजीपुर जानेवाले मार्ग पर अवस्थित रजवाड़ी ग्राम और इसके आसपास के ब्राह्मणों के गाँवों में बेटी के प्रथम विदाई के अवसर पर एक सुअर के बच्चे को पटककर मार दिया जाता है और बेटी उसके निकले रक्त पर पाँव रखकर ससुराल प्रस्थान करती है। वहाँ भी इसके पीछे यही तर्क है कि मुसलमानों से बहू-बेटियों की रक्षा हो सके। आज हिंदू समाज ने इस भावना को सम्मान देना स्वीकार कर लिया है इसलिए सुअर पालने का कार्य वृहद स्तर पर अनेक तथाकथित उच्च जातियों में पाया जाता है। विश्वास है कि किसी दिन सारे हिंदू इस पशु को मात्र इसलिए पालने का प्रयास करेंगे कि यह पशु इसलाम माननेवालों का शत्रु-पशु है। सुअर एक प्रयोग है हिंदू धर्म की रेक्षा के लिए और यह प्रयोग सर्वप्रथम जिस जाति ने किया वह हिंदू समाज में पुरस्कार के योग्य है। भविष्य में यदि हिंदू धर्म सुअर का अवलंबन करके शाश्वत रह पाया अथवा संसार में छाए इसलामिक आतंकवाद का प्रत्युत्तर सुअर पालन से दे पाया तो यह खटिक जाति के लिए विशेष गौरव की बात होगी, क्योंकि इस पद्धति का जनक खटिक जाति है।

खटिक वंश ने न केवल इसलाम को ठुकराया बल्कि उसे फैलने से रोकने में भी सफल रही। मंदिरों के देवी-देवताओं को अपमानित करने और उनके वस्त्राभूषणों को लूटने के लिए निरीह पुरोहित-पुजारियों पर जिन विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने शस्त्र प्रहार किया, उनका मुँहतोड़ जवाब सर्वप्रथम खटिक जाति ने ही दिया, क्योंकि उनके ही पास उस समय पशु-बलि के लिए एक खड्ग होता था, जबकि अन्य पुजारी एवं भक्तगण नि:शस्त्र आते थे। राज्यरक्षक क्षत्रिय और उनकी सेनाएँ तो बाद में आती थीं, सबसे पहले तो वे खट्टिक यानी बलि कार्य संपन्न करनेवाले ब्राह्मण ही भिड़ते थे जिन्हें आज खटिक

नाम दे दिया गया है। उन कठिक जातियों की मार इतनी तीक्ष्ण एवं प्रभावी होती थी कि उससे बचकर जो भी विदेशी तुर्क एवं मुसलिम आक्रांता अपने देश गया वह फिर कभी भी किसी लालच में हिंदुस्थान के मंदिरों को लूटने के लिए नहीं आया और यही कारण था कि अरब के विदेशी आक्रांताओं की सेना में सदैव नए-नए लुटेरे सैनिक ही आते रहे।

कठिक जातियों ने सिकंदर के सैनिकों को मार-मारकर बेजान कर दिया था परिणामस्वरूप वे सिकंदर के लाख कहने के बाद भी हिंदू खटिक जातियों से युद्ध करने का साहस नहीं जुटा पाए। उन्हें सिकंदर का कोई भी प्रोत्साहन अथवा पुरस्कार प्रलोभित नहीं कर सका। इस तरह सिकंदर के साथ आए हिंदू धर्म के विरोधियों को इसी खटिक जाति ने देश में फैलने से रोका। इसी तरह तैमूर को छद्म युद्ध के साथ मारने में यह जाति सबसे आगे रही। दीपालपुर, अजोधन और भटनीर में तैमूर के मुख्य सेनापति और अनेक जाँबाज बहादुरों को मौत की नींद सुला देनेवाले ये खटिक हीं थे, जो उन दिनों हिंदू राजाओं की सेना में महत्त्वपूर्ण पदों पर आसीन थे। उन लोगों ने तैमूर की सेनाओं का अंत नहीं किया होता तो वह दिल्ली को जीत लेने के बाद भी भाग खड़ा नहीं हुआ होता। दिल्ली का ताज जिन दिनों में अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता था उस समय में उसे विजित करके भी भाग खड़ा होना यह सिद्ध करता है कि तैमूर को अपनी जान के प्रति यदि खतरा था तो उस खटिक जाति से ही था। निस्संदेह यदि पश्चिम में कठिक सैनिकों का मजबूत सैन्य-बल नहीं होता तो विदेशी आक्रांताओं का भारत में प्रवेश बहुत पहले ही हो गया होता। इस तरह स्पष्ट है कि इस देश में इसलाम के प्रसार को सैकड़ों वर्षों तक रोक रखने का अप्रत्याशित प्रयास कठिक अथवा खटिक जाति ने ही किया था।

स्वतंत्रता संग्राम में खटिक जाति की इतनी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही जिसकी इतिहासकार भी कल्पना नहीं कर सकते। यही कारण है कि स्वतंत्रता संग्राम के लिए लिखे गए इतिहास में खटिक जाति का जितना योगदान था, वह नहीं लिखा गया। स्वतंत्रता संग्राम का प्रथम बिगुल फूँकनेवाली मेरठ के तितोरिया वंश (खटिक जाति) के लोगों को लोग भूल गए और याद भी नहीं करते जिनके महिलाओं के व्यंग्य बाण पर नौजवान रंगरूटों ने मिलट्री छावनी में कैद किए हुए सिपाहियों को मुक्त कराकर ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ आवाज को बुलंद किया और उसी रात्रि में सैकड़ों अंग्रेज शासकों को मांसाहारयुक्त पशुओं के वध करने के अभ्यासी खटिकों ने टुकड़े-टुकड़े करने के बाद बैरक की छावनी के आसपास बस्तियों में बसे खटिक, वाल्मीकि एवं जाटव (चमार) लोगों के हवाले कर दिया गया। फिर तो मेरठ के जाँबाज तितोरिया (खटिक), वाल्मीकि, जाटव नौजवानों के साथ पूरा मेरठ शहर खड़ा होकर भोर होते-होते दिल्ली की तरफ कूच कर दिया।

चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, सुभाषचंद्र बोस, मन्मथनाथ गुप्त, ऊधम सिंह जैसे

क्रांतिकारियों को अंग्रेज शासक अपराधी समझते थे। उन्हीं अंग्रेजों ने सन् 1891 में जब भारतीयों की जनगणना कराई, उस समय खटिक जाति को अपराधी जाति की श्रेणी में रखा गया। इस प्रकार अंग्रेज शासकों ने संपूर्ण खटिक जाति को स्वतंत्रता सेनानी होने का प्रमाण-पत्र उसी समय प्रस्तुत कर दिया था। यह खटिक जाति, जो अंग्रेजों की दृष्टि में अपराधी जाति थी, उसने तो अठारहवीं शताब्दी से ही भारत की आजादी के लिए लड़ते हुए अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था। सुअर से नफरत न करनेवाले खटिक जाति के लोग और गाय को अपनी माँ समझकर उसकी पूजा करनेवाले खटिक जाति के व्यक्ति ने शहीद मंगल पांडे के द्वारा घड़े से पानी पीने के लिए मना करने पर उनको अंग्रेजों द्वारा प्रयुक्त गाय और सुअर की चरबी से बने कारतूस के बारे में जानकारी देकर उनकी आँखें खोल दी थी कि पंडितजी आप हमें पानी पीने से रोकते हैं किंतु जिन कारतूसों को आप दाँत से काटते हैं वह सब सुअर एवं गाय की चरबी से बनता है। रोकना है तो रोक दीजिए ब्रिटिश हुकूमत को जो अपनी मनमानी करते हुए आपके धर्म के विरुद्ध कार्य कर रही है। मंगल पांडेय के प्रेरक रहे इस खटिक जाति के अज्ञात नामधारी आजादी के दीवाने को आज पूरे खटिक जाति के साथ पूरा देश नमन करता है। वास्तव में अंग्रेजों ने जिस खटिक जाति को पूरे देश में अपराधी जाति घोषित कर दिया था, वह पूर्णरूपेण स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत स्वतंत्रता सेनानी जाति मानी जानी चाहिए।

मुसलमान आक्रांताओं एवं शासकों तथा अंग्रेजी सरकार के साथ जबरदस्त टक्कर लेनेवाली खटिक जाति का दमन, दलन एवं उत्पीड़न लगातार हुआ। यही कारण है कि सैकड़ों वर्षों के इस मुकाबले में खटिक जाति सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से कमजोर होकर दलित के रूप में आज चिह्नित है। ब्राह्मण एवं क्षत्रिय, दोनों के गुणों से संपन्न और दोनों के ही उत्तरदायित्वों का हिंदू समाज के लिए निरंतर निर्वहन करनेवाले खटिकों को नेतृत्वविहीन करके उन्हें कृषि, फल एवं मांस आदि के व्यवसाय में लगे रहने पर विवश किया गया। उनके खेतों एवं बागों को नष्ट करके तथा उनको गंदे व्यवसायों से संबद्ध करके उनका सामाजिक और आर्थिक दलन किया गया। शासन एवं सत्ता में भागीदारी करनेवाले खटिक जाति के लोगों को अंग्रेज शासकों द्वारा अपराधी जाति घोषित करके उन्हें राजनीति से दूर रखने का प्रयास किया गया, क्योंकि राजनीति में वे किसी भी गैर-शासक के अंधभक्त नहीं हो सकते थे और न ही किसी भी प्रकार के लाभ अथवा प्रलोभन से उनको हिंदू धर्म से विमुख किया जा सकता था। उन्होंने दलित होना स्वीकार किया, किंतु इसलाम और अंग्रेजी दासता को कभी सवीकार नहीं किया।

खटिक जाति का राजवंशी इतिहास भी रहा है। प्राचीन राजा खट्वाङ्ग के वंशज

के रूप में स्थापित खटिक जाति की अपनी पहचान है। इक्ष्वाकु वंश में ही खट्वाङ्ग, दिलीप एवं रघु हुए थे, एवं इक्ष्वाकु के वंशजों का संपूर्ण भारत पर राज्य था। महाराज दशरथ और भगवान् श्री राम भी इस प्रकार उसी खट्वाङ्ग वंश के ही थे। सूर्यवंशी एवं रघुवंशी क्षत्रियों के रूप में खटिक पूरे देश में शासन करते थे। हिंदू राष्ट्र और हिंदू समाज की रक्षा का दायित्व उन्होंने शासन-सत्ता को सम्हालते हुए किया, जबकि वैदिक काल में धर्म रक्षा का निर्वाह उन्होंने खट्रिक ब्राह्मण के रूप में किया था।

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं एवं शासकों तथा अंग्रेजों के द्वारा दमन, दलन एवं उत्पीड़न और शोषण करके दयनीय स्थिति में पहुँचाई गई खटिक जाति को अब उन्नति के मार्ग पर स्वत: अग्रसर होना होगा। ऐसा हो भी रहा है कि अब खटिक जाति अपने प्राचीन कुल, वंश और रक्त के आनुवांशिक क्षमताओं के आधार पर स्वतंत्र भारत के इस स्वतंत्र वातावरण में अपनी खोई हुई शक्ति को जागृत कर रही है। विदेशी मुसलिम आक्रांताओं एवं अंग्रेजों के प्रचंड उत्पीड़न के बाद यह जाति एक अजीबोगरीब स्वभाव, चरित्र एवं परिस्थितिजन्य वातावरण को प्राप्त हो गई थी। परंतु अब इस जाति को अपने प्राचीन 'स्व' को पहचानकर वर्तमान आधुनिक संसार की दौड़ में जातिगत एकता को कायम रखते हुए स्वत: अग्रसर होना होगा। वर्तमान समय में शासन, सत्ता और सरकार पर निर्भर रहने से उसे न्याय मिलनेवाला नहीं है। खटिक जाति अंग्रेजों द्वारा अपराधी जातियों की सूची में रखकर परोक्ष रूप से स्वतंत्रता सेनानी घोषित की जा चुकी थी। अनेक प्रांतों में आरक्षण का लाभ पाने से खटिक जाति को रोका जाना यह सिद्ध करता है कि खटिक समाज को स्वत: संगठित होकर वर्तमान शासन-व्यवस्था में अपने भागीदारी के अस्तित्व को स्थापित करना होगा, ताकि वह भी आरक्षण का लाभ पा रही अपने समकक्ष की जातियों के साथ विकास की मुख्यधारा से जुड़ सके।

धर्मरक्षक एवं देशरक्षक खटिक जाति को चमार जाति की भाँति केंद्रीय सरकार द्वारा पूरे देश भर में अनुसूचित जाति की सूची में रखकर लाभान्वित किया जाना चाहिए था, परंतु ऐसा नहीं किया गया है। यह जाति केवल हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, दिल्ली, चंडीगढ़ में अनुसूचित जाति की श्रेणी में है जबकि बिहार, गुजरात, कर्नाटक, उड़ीसा और पांडिचेरी में उसे पिछड़ी जाति की श्रेणी दी गई है। आंध्र प्रदेश, असम, जम्मू-कश्मीर, केरल, मणिपुर, मेघालय, तमिलनाडु, त्रिपुरा, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश, दादरा एवं नगर हवेली, गोवा, दमन एवं दीव, सिक्किम, लक्षद्वीप, अंडमान, निकोबार द्वीपसमूह और नागालैंड में इसे ब्राह्मण एवं क्षत्रिय जातियों के साथ सामान्य वर्ग में रखा गया है। इस अंतर को समाप्त करके सभी प्रदेशों में इस जाति को अनुसूचित जाति की सूची में रखा जाना सामाजिक न्याय एवं समानता के अधिकार के अंतर्गत होगा। इसके लिए स्वयं भी

खटिक जाति द्वारा संगठित होकर शासन-प्रशासन पर दबाव बनाने की आवश्यकता है।

अनेक ऐतिहासिक साक्ष्यों से यह सिद्ध हो चुका है कि खटिक जाति का अपना एक गौरवशाली इतिहास रहा है और इस जाति ने विदेशी मुसलिम आक्रांताओं तथा अंग्रेजों का डटकर मुकाबला भी किया था, अतएव वर्तमान समय में स्वतंत्रता संग्राम में अगुवाई करने का प्रतिफल प्राप्त करने के लिए खटिक जाति को स्वतः आगे आना होगा। उसे समाज में अपनी प्रतिष्ठापरक प्रस्थिति (स्टेटस) को पुनः स्थापित करना होगा और हिंदू समाज को मनवाना होगा कि वे ब्राह्मण और बाद में क्षत्रिय, दोनों ही जाति-श्रेणियों में रहे हैं, विदेशी आक्रांताओं को खदेड़ने एवं उनसे लोहा लेने और आज भी उन जैसी मानसिकतावालों से लड़ने-भिड़ने की क्षमता रखते हैं। साथ ही हिंदू धर्म से संबंधित समस्त कार्यों का संपादन एक ब्राह्मण के रूप में करते हैं, अतएव उनकी सामाजिक परिस्थिति को उन्नत मानना आवश्यक है। उन्हें समाज को यह भी बतलाना होगा कि देश की अर्थव्यवस्था में उनकी भागीदारी विशेष महत्त्व की थी और आज भी है। उनको दीनहीन स्थिति में लाने के लिए विदेशी मुसलिम आक्रांता एवं अंग्रेज शासक ही उत्तरदायी है।

खटिक जाति के लोगों को वर्तमान हिंदुस्थान के सामने अपनी वर्तमान सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थिति को उन्नत रखना होगा, अन्यथा वे विकास की धारा में अन्य जातियों से पीछे रह जाएँगे। इन त्रिमार्गी विकास के साथ उनको राजनीति में भी खुलकर अपने संगठन एवं शक्ति का प्रयोग करना होगा तभी यह जाति अपने वर्तमान को अपने प्राचीन गौरवशाली परिस्थिति में पहुँचा सकेगी, अपने प्राचीन राजवंशीय कुल तथा वंश को सम्मान का आदर्श प्रदर्शित कर सकेगी और अपने चिरस्मरणीय इतिहास को दुहरा सकेगी।

□

*अध्याय-1*

# हिंदू धर्म में खटिक वंश एवं गोत्र

किसी भी धर्म अथवा जाति को समझने के लिए उससे संबंधित इतिहास से बढ़कर कोई अन्य साधन नहीं है। इतिहास ही उत्पत्ति, विकास और अवनति अथवा विनाश की जानकारी कराता है। वास्तव में इतिहास ही किसी देश और जाति का सर्वस्व है और वही पूर्वजों की उपार्जित विद्या, धन एवं धरोहर है। अनभिज्ञता का इतिहास ही दीपशिखा बनकर मार्गदर्शन करता है। इतिहास ही देश और जाति का वह नेत्र है, जिसे नष्ट कर देने पर मजबूत-से-मजबूत क्षत्रप भी समाप्त हो जाता है। किसी भी देश अथवा जाति के लोग अपने इतिहास को पढ़कर ही अपने बारे में कुछ कह सकते हैं, समझ सकते हैं और खुशी एवं खेद प्रकट कर सकते हैं। यही कारण है कि जब विजेता जातियों ने दूसरों को पददलित (निम्न) बनाना चाहा तब उन्होंने पहले उनके इतिहास को नष्ट कर दिया, ताकि कुछ समय उपरांत वे यह भूल जाए कि वे किस वंश एवं गोत्र के हैं और उनका अतीत किस प्रकार का था।[1] हिंदू धर्म में वर्तमान समय की अनेक जातियों के साथ ऐसा ही हुआ है, जिनमें से खटिक जाति भी एक है। प्रस्तुत अध्याय में खटिक जाति के स्वर्णिम अतीत का परिचय विविध बिंदुओं के अंतर्गत कराया गया है।

अध्याय के प्रथम उपशीर्षक में भारतीय इतिहास के प्रारंभिक समय अर्थात् प्रागैतिहासिक काल एवं आखेट युग का परिचय कराया गया है। इसमें बतलाया गया है कि हड़प्पा एवं सिंधु सभ्यता के जो अवशेष मिले हैं उनके आधार पर विद्वानों एवं इतिहासकारों (विशेषकर पुरातत्त्वविदों) ने प्रागैतिहासिक काल का निर्धारण किस प्रकार

---

1. भारती, स्वामी परमानंद : खटिक क्षत्रिय वंशावली (श्री लक्ष्मी प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर) भूमिका-पृष्ठ 2

से किया है और बतलाया है कि उस काल का हिंदू आदि मानव किस प्रकार से भोंड़े पत्थरों को अस्त्र-शस्त्र के रूप में प्रयुक्त करके मांसाहार के लिए आखेट करता था।

अध्याय का द्वितीय उपशीर्षक है—'वैदिक काल में खट्टिक'। इसमें वैदिक काल का परिचय कराते हुए उस समय में खटिक जाति की परिस्थिति एवं भूमिका पर प्रकाश डाला गया है। तीसरे उपशीर्षक के अंतर्गत सनातन संस्कृति और हिंदू धर्म का विवेचन करते हुए यह बतलाया गया है कि खटिक जाति आज भी सनातन संस्कृति और हिंदू धर्म की संवाहक जाति है। खटिक जाति कभी मध्यकाल में काठियावाड़ में कठ अथवा कठिक जाति के नाम से पहचानी जाती थी, इसलिए चतुर्थ उपशीर्षक के अंतर्गत इन तथ्यों पर भी प्रकाश डाला गया है।

अध्याय का पाँचवाँ उपशीर्षक खटिक जाति के विविध वंशों एवं गोत्रों की जानकारी कराता है, जबकि छठे उपशीर्षक के अंतर्गत खटिक जातियों के राजवंशीय इतिहास का उल्लेख किया गया है। खटिक जाति का भौगोलिक प्रत्यक्षीकरण एवं रहन-सहन सातवें उपशीर्षक में चित्रित करते हुए आठवें और अंतिम उपशीर्षक में खटिक जाति का संक्षिप्त परिचय कराते हुए वर्तमान समय में उसके लिए व्यवहृत उपमानों (सरनेम, टाइटिल इत्यादि) का उल्लेख किया गया है।

## 1.1 प्रागैतिहासिक काल एवं आखेट युग

इतिहास लेखन के दो स्वरूप मिलते हैं—एक वह जिसमें तिथियों के साथ घटनाओं का क्रमबद्ध विवेचन होता है, और दूसरा वह जिसमें घटनाओं का उल्लेख तो होता है किंतु उसमें तिथियों का उल्लेख नहीं होता है। इस प्रकार प्रथम विधा तिथि अंकन को महत्त्व देती है, जबकि द्वितीय (भारतीय) विधा तथ्यों को मुख्य मानते हुए तथ्यात्मक इतिहास को सम्मान देती है और तिथि अंकन को आवश्यक नहीं मानती। प्रागैतिहासिक काल का इतिहास तिथि-क्रम से युक्त न होकर उपलब्ध तथ्यों पर आधारित है। हिंदुस्थान के आरंभिक दिनों में बिना तिथि-समय का उल्लेख किए ही अनेक इतिहास ग्रंथ प्रणीत हुए, जैसे—पुराण, रामायण, महाभारत आदि। पाश्चात्य देशों में ऐसे ग्रंथों को अनैतिहासिक माना गया है और जब से यहाँ यानी भारत का इतिहास तिथि-समय के साथ लिखा मिलता है, केवल उसी को ऐतिहासिक माना गया है।

ऐतिहासिक काल में भी जहाँ से तिथि-क्रम मिलते हैं उसके पूर्व के समय को प्रागैतिहासिक काल माना जाता है और ऐतिहासिक काल को तीन भागों में विभक्त करके प्राचीनकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल का नाम दिया गया है। प्रागैतिहासिक काल का संबंध केवल प्राचीनकाल के इतिहास से संबंधित है—प्राचीन से भी प्राचीनकाल का समय जिसे इतिहासपूर्व अथवा पूर्व ऐतिहासिक (प्राग ऐतिहासिक) कहा जा सकता है।

इतिहासविदों ने मानव-समाज के विकास-क्रम के जिन चार आधारों पर चार अवस्थाओं का उल्लेख किया है,[1] उसके आधार पर प्रागैतिहासिक काल और ऐतिहासिक काल को ठीक से समझा जा सकता है, यथा—

| क्रम संख्या | वर्गीकरण आधार | प्रथम अवस्था | द्वितीय अवस्था | तृतीय अवस्था | चतुर्थ अवस्था |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | समाजशास्त्रीय आधार | वन्यावस्था | बर्बरावस्था | प्रारंभिक सम्यावस्था | विकसित सम्यावस्था |
| 2. | पुरातात्विक आधार | प्रस्तरयुगीन अवस्था | ताम्र-कांस्य युगीन अवस्था | लौहयुगीन अवस्था | यंत्रयुगीन अवस्था |
| 3. | अर्थशास्त्रीय आधार | शिकारयुगीन अवस्था | पशुपालन अवस्था | कृषियुगीन अवस्था | औद्योगिक युगीन अवस्था |
| 4. | राजशास्त्रीय आधार | कबीलायुगीन अवस्था | अराजकयुगीन अवस्था | सामंतयुगीन अवस्था | लोकतंत्र या राष्ट्रयुगीन अवस्था |

उपरोक्त तालिका के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इतिहास लेखन की वैज्ञानिक अथवा पाश्चात्य विधा के अनुसार मानव विकास-क्रम का इतिहास जहाँ से तिथियों के साथ मिलता है, उसके पूर्वकालिक इतिहास को ही प्रागैतिहासिक काल का इतिहास कहा जाता है। डॉ. राधेशरण के अनुसार प्रागैतिहासिक युग इतिहास का एक बड़ा लंबा युग है, और हड़प्पा सभ्यता का प्रादुर्भाव इस युग के उत्तरवर्ती काल में हुआ था। पत्थर के बहुउपयोग के कारण यह पाषाण काल कहलाया। इस पाषाणकाल के भी तीन उप-काल हैं, यथापूर्व पाषाणकाल, मध्य पाषाणकाल तथा उत्तर पाषाण काल।[2]

प्रागैतिहासिक युग के प्रारंभ में मानव वृक्षों के नीचे एवं प्राकृतिक गुफाओं में रहा करता था। आदि मानव कंद-मूल, फल एवं मांस आदि से अपनी क्षुधा शांत करता था। भोंडे पत्थरों का प्रयोग करता था। आगे चलकर जब उसे पत्थर से अग्नि का ज्ञान हुआ, वह अग्नि का प्रयोग मांस को भूनने और अपनी सुरक्षा में करने लगा। उसके भोंडे पत्थर भी तराशकर सुंदर, नुकीले बनाए जाने लगे। कालांतर में अग्नि से धातु का ज्ञान हुआ और प्रागैतिहासिक काल का धातु युग आरंभ हुआ जिसमें पत्थरों के स्थान पर धातु के औजार आदि बनाए जाने लगे। धातुकाल भी काफी लंबे समय तक व्यतीत हुआ। इसका

1. सिंह, प्रो. परमानंद : बौद्ध साहित्य में भारतीय समाज, काशी विद्यापीठ, वाराणसी, 1996, पृष्ठ-44
2. डॉ. राधेशरण : भारत की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना और संस्कृति के मूल तत्त्व, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1995, पृष्ठ-1

उल्लेख निम्नलिखित पंक्तियों में देखा जा सकता है—

'प्रागैतिहासिक पाषाण काल से धातुकाल के उस लंबे क्रम में मानव सभ्यता के आदिम क्रम से गुजरा और धातुकाल में उसने सभ्यता की एक ऐसी आधारशिला रखी, जो नदी, घाटी एवं अंचलों में विकसित हुई और यह घाटी सभ्यता भी विकास-क्रम के साथ आगे बढ़ी। इन सभ्यताओं के प्राप्त विविध अवशेषों के पूर्व हड़प्पा सभ्यता तथा हड़प्पा सभ्यता का ज्ञान होता है।'[1]

इतिहासकारों ने स्वीकार किया है कि भारतीय समाज के उत्कर्ष का इतिहास प्रागैतिहासिक युग से प्रारंभ होता है, जबकि आदिम मानव प्रारंभिक अवस्था में था।[2] उसके औजार विश्व के अन्य प्रागैतिहासिक देशों के मनुष्यों के औजारों की भाँति पत्थर के थे, जो लैबाल्बा आधार पर तराशे गए थे। पत्थर के औजार बनाने की यह दूसरी पद्धति थी, जिसका काल प्राय: 50,000 से 1,00,000 ई. पू. माना जाता है।[3] यह उल्लेखनीय है कि लघु-पाषाण संस्कृति से संबद्ध प्रागैतिहासिक काल के जो अवशेष मद्रास, मैसूर, हैदराबाद, बंबई में मिले हैं, वे भी अति प्राचीनकाल के ही माने जाते हैं।[4] उस काल के लोग नदियों के किनारे आवश्यक वस्तुओं की खोज में लगे रहते थे।[5] प्रागैतिहासिक काल के लघु-पाषाण मानव के अनेक अवशेष पाए जा चुके हैं[6] जिनका विस्तृत विवेचन यहाँ अप्रासंगिक होगा।

प्रागैतिहासिक काल में पाषाण-युग के बाद कांस्य युग का प्रादुर्भाव माना जाता है, परंतु इसके विकास का इतिहास अज्ञात है। इसके स्थान पर उत्तरी भाग में ताम्र धातु और दक्षिणी भाग में लौह धातु से निर्मित औजारों को पाया गया है।[7]

अतएव कहा जा सकता है कि प्रागैतिहासिक सभ्यता के अवशेष भारत के विभिन्न हिस्सों में मिले हैं, किंतु सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और प्रामाणिक अवशेष पाकिस्तान स्थित सिंधु नदी और उसकी सहायक नदी रावी की उपत्यका में प्राप्त हुए हैं।[8]

संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रागैतिहासिक युग के लोगों के समयानुसार

---

1. डॉ. राधेश्याम : भारत की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना और संस्कृति के मूल तत्त्व, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1995, पृष्ठ-1
2. मिश्र, जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, 1980, पृष्ठ-21
3. कौसांबी : दि कल्चर ऐंड सिविलाइजेशन इन एंशिएंट इंडिया, पृष्ठ-56
4. गार्डन : प्री-हिस्ट्रॉरिक बैकग्राउंड ऑफ इंडियन क्रल्चर, पृष्ठ-22
5. सकालिया : द गोदावरी पैलियोलिथिक इंडट्रीज पृष्ठ-15
6. सकालिया, सुब्बाराव और जोशी : स्टडीज इन दि प्रीहिस्ट्री ऑफ कर्नाटक, पृष्ठ 60-61
7. अग्रवाल एंड घोष : रेडियो कार्बन ऐंड इंडियन आर्कियोलॉजी, 1973
8. ह्वीलर दि इंडस सिविलाइजेशन, 1969

प्राकृतिक चुनौतियों को स्वीकार किया तथा अपनी आवश्यकतानुसार अपने समाज का क्रमिक उत्कर्ष किया। वे अपने तथा अपने पशुओं के आहार और उसके उत्पादन को ध्यान में रखकर अन्य प्रदेशों की ओर अग्रसर हुए। फलत: समाज के विस्तार के साथ-साथ जनवृद्धि भी हुई है। वे आखेट के परिश्रम से बचने के लिए पशुओं को पालने लगे और कृषि कार्य की ओर भी उन्मुख हुए।

प्रागैतिहासिक काल का समय निश्चित रूप से अनुमान का ही प्रसंग बनकर रह गया है, फिर भी विद्वानों और इतिहासकारों ने पुरापाषाण काल का समय 150,000 ई. पू., मध्यपाषाण काल का समय 25,000 ई. पू. से 10,000 ई. पू., नवपाषाण काल का समय 10,000 ई. पू. से 1000 ई. पूर्व और ताम्रयुग का समय 2500 ई. पू. से 200 ई. पू. तक माना है।

प्रागैतिहासिक काल में आदि मानव का जन्म किस प्रकार हुआ, विश्व के किस स्थान पर उसका प्रथम प्रादुर्भाव हुआ और उसने किस प्रकार से अपने मानव जीवन का विकास किया, यह आरंभ में विवाद का विषय अवश्य था, क्योंकि पाश्चात्य विद्वानों ने साक्ष्यों के अभाव में आदि मानव को अपने देश में जन्म लेनेवाला घोषित किया और आदि मानव संस्कृति का आरंभ भी अपने ही देश को बतलाया। परंतु हड़प्पा एवं सिंधु सभ्यता के साक्ष्यों ने सबके मुँह पर ताले लगा दिए हैं, जिसके फलस्वरूप अब यह निर्विवाद रूप से मान लिया गया है कि विश्व का प्रथम मानव (आदि मानव) हिंदुस्थान स्थित पंजाब और शिवालिक (हिमालय) की ऊँची भूमि पर विकसित हुआ और कालांतर में सिंधु की तराई में कृषि-सभ्यता विकसित हुई।[1] भूख लगने पर उसने जीव-जंतुओं और अपने से कमजोर पशु-पक्षियों को मारकर उनका मांस खा लिया तथा उनके न मिलने पर लताओं-वृक्षों के कंद-मूल तथा फलों को भी आहार हेतु अंगीकार किया। पशु-मांस हेतु पशुओं को मारने का उसका प्रथम प्रयास यह सिद्ध करता है कि आदि मानव का स्वरूप एवं स्वभाव आज के खटिक से कदापि भिन्न न था। आदि मानव का रूप एवं स्वभाव वैदिक काल में याज्ञिक कार्यों के संपादन के समय खटिक ब्राह्मण से पशु-बलि का कार्य-स्वभाव प्रमाणित करता है। पशु-बलि में आज भी खटिक सबसे आगे पाए जाते हैं। आखेट युग में तो उसका जीवन पूर्णत: शिकारी का ही था और वह युग भी शिकार-युग अथवा आखेट-युग के नाम से प्रसिद्ध है। इतिहास के ग्रंथों में आखेट-युग का उल्लेख अत्यंत रोचक विधि से हुआ है।

आखेट एवं शिकारयुगीन आदि मानव दो पैरों पर खड़ा होनेवाला 'इरेक्ट्स' था,

---

1. भारतीय इतिहास-कांग्रेस अधिवेशन 1952 (ग्वालियर) में सभापति डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी का वक्तव्य (देखें-दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-3)

न कि चार पैरों पर चलनेवाला पशु (एनीमल), यद्यपि अनेक अर्थों में वह पशु से अधिक विकसित नहीं था। जंगली शक्तिशाली जानवर जिस तरह से बलहीन और छोटे जानवरों को मारकर खा जाते थे, उसी तरह आदि मानव भी शिकार करके खाद्य-संचय करता था। अकेला शिकार करने में वह अपने को कमजोर पाता था इसलिए समूह बनाकर पशुओं पर हाँका डालता था, उनको दौड़ाकर ऊँची चट्टानों से नीचे गिरा देता अथवा पत्थर से बने गदा, बर्छी, खुरचनी, पाषाणफलक आदि से उन पर आक्रमण करता था। मांस के अतिरिक्त वह कंद-मूल और फल भी खाता था। जल-पान की सुविधा हेतु वह नदी-झरनों के आस-पास रहता था। पशु भी जल पीने आते तो उसे वह आसानी से पा लेता था। वर्षा-सर्दी से बचने के लिए वह पहाड़ी गुफाओं या आगे उभरी हुई चट्टानों के नीचे निवास करता था। आखेट के लिए वह समूहों में दूर-दूर तक घूमा करता था और शिकार पा लेने पर सामूहिक रूप से उत्सव मनाता था। भोजन भी प्रायः समूह में करता था। पाषाण-अग्नि का आविष्कार कर लेने के बाद वह मांस को भूनकर भी खाने लगा तथा अवकाश के समय वह गुफाओं की दीवारों पर कुछ दृश्यों का चित्रांकन भी करता था। उनके द्वारा चित्रित अनेक गुफा-चित्र और शैल-चित्र मिले हैं। गेरु रंग से बने कुछ ऐसे चित्र मिले हैं जिसमें वह पशु की पिछली टाँग को रस्से में फँसाकर खींच रहा है।[1] हड़प्पा सभ्यता के प्राप्त कुछ मुद्राओं पर आखेट के दृश्य अंकित हैं, जैसे—धनुष वाण से युक्त शिकारी को बारहसिंगे का पीछा करते हुए प्रदर्शित किया गया है।[2]

आखेट युग की दशाओं का अध्ययन करने पर यह पाया जाता है कि उस समय प्रस्तरयुग, वन्यावस्था, कबीला-युग लगभग उसके साथ-साथ चल रहा था। यह भी पता चलता है कि आखेटयुगीन आहार मुख्यतः दो ही थे—पहला, मांस और दूसरा, फल। दोनों ही उनको निःशुल्क उपलब्ध थे, जिनको वे खाने के लिए आपस में बाँट लेते थे। आगे चलकर इन आहारों का आपस में लेन-देन भी आरंभ हुआ जो एक प्रकार के वाणिज्य अथवा व्यापार के सापेक्ष 'बार्टर-सिम' कहलाता है। जो लोग किसी दिन आहार नहीं ला पाते थे, वे दूसरों से इस शर्त (अनुबंध) पर ले लिया करते थे कि दूसरे दिन वापस कर देंगे। यहीं से वाणिज्य अथवा व्यापार की बुनियाद पड़ी और यह नींव स्थापित करनेवाला मांस तथा फल का आहार-व्यापार करनेवाला आदि मानव खट्टिक था। कहना न होगा कि विश्व-वाणिज्य के जनक आज के खटिक हैं जिनको प्रागैतिहासिक काल में आदि मानव की संज्ञा प्रदान की गई थी। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आज भी खटिक जाति का मुख्य व्यवसाय मांस-फल विक्रय ही है।

1. सिंह, रिपुदमन : शारीरिक मानव विज्ञान, प्रथम संस्करण, 1974 (लखनऊ), पृष्ठ-256
2. राधेशरण : भारत की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना एवं संस्कृति के मूल तत्त्व, पृष्ठ-101

आखेटयुगीन शिकारी अथवा आखेटक कालांतर में ब्याध, बाधिक, बहेलिया भी कहे जाने लगे।[1] मोनियर विलियम्स ने आखेट का अभिप्राय ब्याध, मृग्यु, मृणादि, पशुहंता, खट्टिक (खटिक) से, आखेटक की मंतय याघत्री, याधी, मृगयाकारिणी से, खट्टिक का आशय व्याध, बधिक, मांसविक्रेता से और सौनिक का अर्थ शौनिक, व्याध, बधिक, हिंसक, मांसविक्रेता, मांसविक्रयी, कौटिक, वैतसिक और शूनवान से लगाया है।[2] अंग्रेज लेखकों ने आखेटक को शिकारी अथवा खटिक ही बतलाया है।

## 1.2 वैदिक काल का खट्टिक

वैदिक काल को आर्यों की सभ्यता से सत्यापित किया गया है और कहा गया है कि वह काल ईसामसीह के जन्म से 2500 वर्ष पहले से लेकर ईसा के 600 वर्ष पहले तक रहा। श्री परमानंद भारती के अनुसार, ईसामसीह के जन्म दिन से ईस्वी सन् चला है[3] जो ई. सं. 1950 को आधार मानकर विवेचित किया जाए तो पता चलता है कि उस समय से 4450 साल से लेकर 2500 साल तक वैदिक काल रहा। इन दोनों संख्या के बीच के समय ही आर्यों ने इसका नाम आर्यावर्त रखा, जिसे अब हिंदुस्थान कहते हैं।[4]

वैदिक काल दो भागों में विभक्त किया जाता है—(1) आदि वैदिक अथवा ऋग्वैदिक काल, और (2) उत्तर वैदिक काल। आदि वैदिक काल अर्थात् ऋग्वैदिक काल वह काल था जिसमें प्रारंभिक आर्यों के क्रिया-कलाप पश्चिमोत्तर भारत से लेकर गंगा की प्राय: पश्चिमी घाटी तक ही सीमित था। ऋग्वेद का रचना काल विभिन्न लोगों ने अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत किया है, यथा—1200-100 ई.पू. (अधिकांश लोग)[5] ऋग्वैदिक काल की भौगोलिक सीमाएँ ऋग्वेद में आए हुए कुछ नामों से जानी जा सकती है। तद्युगीन कुछ राजाओं के नाम भी आए हैं किंतु पुराणों के सहयोग के बिना उनका इतिहास जान पाना कठिन है। तद्युगीन खट्टिक राजाओं का इतिहास भी इसी कारण से पुराणों आदि हिंदूधर्म ग्रंथों के आधार पर ही संकलित किया गया है।

उत्तर वैदिक काल का अभिप्राय उस काल से है जिस काल में ऋग्वेद के बाद

---

1. सोनकर, आर.डी. : भारत की व्याध जातियाँ, प्रकाशन केंद्र, डालीगंज रेलवे क्रॉसिंग सीतापुर रोड, लखनऊ-226020, 2007, पृष्ठ (भूमिका- III)।
2. विलियम्स, मोनियर : संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोश।
3. इतिहास तिमिरनाशक, भाग-1, पृष्ठ-5
4. भारती, परमानंद : खटिक क्षत्रिय वंशावली (देवली, छावनी निवासी, मुद्रक-श्री लक्ष्मी प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर, पृष्ठ-8।
5. डॉ. राधेशरण : भारत की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना और संस्कृति के मूल तत्त्व, पृष्ठ-19-20।

के तीन अन्य वेदों, वेदांग, सूत्रों एवं अन्य परवर्ती आर्य साहित्य की रचना हुई थी। ऋग्वेद के बाद सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद की रचना हुई और उसी के साथ पर्याप्त मात्रा में आर्य साहित्य का सृजन हुआ। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् एवं अन्य परवर्ती साहित्य द्वारा वेदों के वर्ण्य-विषय एवं प्रतिपादित तथ्यों का स्पष्टीकरण किया गया। विद्वानों के अनुसार उत्तर वैदिक काल लगभग 600 ई.पू. तक समाप्त हो चुका था। इस काल के आर्यों का भौगोलिक ज्ञान आदि वैदिक काल के आर्य-ज्ञान से अधिक हो चुका था। वैदिक काल के पूर्वार्द्ध तक आर्य दक्षिण की ओर नहीं बढ़ पाए थे किंतु उत्तर वैदिक काल में वह क्रमशः दक्षिण से भी जुटने लगे थे।

वैदिककालीन समाज जातिविहीन था। उसे हिंदू धर्म का स्वर्णिम युग माना गया है। उस समय समाज में जातियों का अस्तित्व नहीं था। उत्तर वैदिक काल में समाज के जटिल होने के साथ-साथ वर्ण के गुण धर्म को स्वीकृति प्राप्त हुई। वास्तविकता तो यह है कि वेदों में वर्ण शब्द तक का कहीं उल्लेख नहीं है। वैदिक काल के बाद धीरे-धीरे वर्णों की श्रेणीबद्धता का विकास हुआ जो कालांतर में वर्ण-व्यवस्था के रूप में प्रभावी हुआ। लोकजीवन की विषमताओं में वृद्धि, सत्ता और शक्ति की सनक के परिणामस्वरूप समाज में वर्ण-व्यवस्था के साथ-साथ विभिन्न कार्यों को संपादित करनेवाले वंशानुगत समूहों का जन्म हुआ। उस समय चूँकि कार्य विशेष के लिए कौशल प्राप्त करना सामान्य जन के लिए अपने परिवार एवं कुटुंब में ही संभव था, परिणामतः वंशानुगत जातियाँ भी अस्तित्व में आईं। जातियों की संख्या कर्मानुसार सीमित थी। एक ही वर्ण में कई जातियाँ समाहित थीं। परंतु सामाजिक धरातल पर उनमें समरसता व्याप्त थीं। वैदिक काल में वृत्ति के आधार पर खट्टिक ब्राह्मण केवल इसी नाम से जाने जाते थे, क्योंकि खट्टिक लोगों का मुख्य कार्य यज्ञ-पशुओं की बलि देने से ही संबंधित था। वैदिक काल तक खट्टिक जाति के लोग मांस का व्यवसाय नहीं करते थे, बल्कि अपने बच्चों को पशु-बलि से संबंधित याज्ञिक मंत्र सिखलाते और पशु-बलि की विधि समझाते थे।

स्वर्णिम वैदिक युग में समाज पितृमूलक एवं पितृप्रधान था और पिता अपनी संतति का आचार्य (गुरु) हुआ करता था। उस समय वर्ण-व्यवस्था यदि उत्तर वैदिक काल में मिलता भी है तो वह उतना जटिल नहीं था। वैदिक काल के वर्ण-संख्या को भी लेकर लोगों में मतभेद है। रामधारी सिंह दिनकर ने केवल तीन ही वैदिक-वर्ण माने हैं।[3]

वैदिक काल में खट्टिक का संबंध ब्राह्मण वर्ण से ही था और उसे यज्ञ-पशुओं की बलि का धार्मिक कार्य सौंपा गया था। परंतु असुरों (वर्तमान अरबी-ईरानी विदेशी मुसलमान

---

1. अथर्व. 12।2।54, 18।3।6, 9।17।4, 3।14।5
2. शास्त्री, डॉ. विजय सोनकर : दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-37
3. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-74

जिनको आर्यों ने अनाचारी, अधर्मी, अकर्मण्य, लुटेरे होने से बहुत पहले ही मार भगाया था) के भारत-प्रवेश पर रोक लगाने का कार्य भी उनको सौंपा गया था। उस समय तक राजा का कार्य यज्ञ-संपादन, प्रजापालन और प्रजा-रक्षा का था, परंतु सीमा रक्षक का कार्य ब्राह्मण खटिक को ही सौंपा गया था। इस तथ्य की पुष्टि इसी से हो जाती है कि मध्यकाल अथवा पूर्व मध्यकाल में जब भी देश पर बाहरी आक्रमण होते थे, इसी जाति के लोग सीमा पर ही डटकर आक्रांताओं को रोकने का साहस प्रदर्शित करते थे। निश्चित है कि उनको यह साहस विरासत में वैदिक काल और उसके पूर्व के ही काल से मिला था। बलि का अर्थ शौर्य कार्य यानी वीरता से था।

वैदिक काल में पाप और पुण्य, दोनों की वैचारिकी थी इसलिए लोकजीवन में यह बराबर ध्यान रखा जाता था कि अनजाने में भी पाप न हो जाए। वैदिककालीन समाज यदि भूल से भी पाप कर बैठता तो उसके लिए न केवल प्रार्थना, अपितु प्रायश्चित्त भी किया करते थे। प्रायश्चित्त में कभी-कभी अपने जीवन तक को उत्सर्ग कर देना होता था। वैदिककालीन खट्टिक यानी वर्तमान हिंदू खटिक इसमें भी पीछे नहीं रहते थे। बलि-कर्म की थोड़ी सी भूल यदि हो जाती तो वे अपना हाथ काट लेते अथवा अपनी गरदन ही उड़ा देते थे। हिंदू धर्म की व्यवस्था कहीं से भी अस्त-व्यस्त न होने पाए इसके लिए वह बराबर ध्यान रखते थे। शरणागत की रक्षा, परोपकार की भावना, दान-कर्म की उत्कंठा उनमें सर्वाधिक मात्रा में पाई जाती थी। यह स्थिति आज भी देखने को मिल जाती है।

इसलाम एवं ईसाई धर्म में पाप (सिन) की व्याख्या है कि पाप हो जाने पर प्रार्थना कर लेनी है, किंतु पुण्य की व्याख्या उनके यहाँ नहीं की गई है। ऐसा इसलिए कि पुण्य का संबंध सीधे-सीधे प्रायश्चित्त है। यही कारण है कि वैदिक काल में जब विदेशी आक्रांता असुरों के नाम से हिंदुस्थान में प्रवेश करते और ऋषि-मुनियों को तप करते अथवा यज्ञ-कार्य संपन्न करते पाते तो उनको मार देते थे। इसके लिए उनको किसी तरह के पाप का भय नहीं था। परंतु उनको जब सीमा-रक्षक खटिक ब्राह्मण पकड़ लेते तो क्षमायाचना करने पर सीमा पार भाग जाने का ही आदेश देते थे। ऐसा इसलिए कि वे स्वर्ग-नरक की अवधारणा करते थे। पुनर्जन्म में उनका विश्वास था। ईश्वर को मानते थे। अपराधियों को दंड देने का कार्य वह ईश्वर पर छोड़ देते थे। इसी का लाभ उठाकर भविष्य में वे ही असुर विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के रूप में बार-बार आए और भारत पर आक्रमण तथा लूट-पाट किए।

वैदिक काल में खट्टिक सर्वदा मनोरम प्रकृति के साथ सामंजस्य रखते थे। उनका रहन-सहन, खान-पान, दिनचर्या एवं ऋतुचर्या आदि सभी कुछ प्रकृतिपरक था। उनको आयुर्वेद का भी ज्ञान था और वे आयुर्वेद को केवल चिकित्सा पद्धति से ही नहीं अपितु

जीवन-पद्धति से आबद्ध कर रखे थे। जड़ी-बूटियों का प्रयोग आहार-विहार (भोजन सामग्री) के रूप में करते थे। अकाल पड़ने की स्थिति नहीं आती थी। यज्ञों के माध्यम से लोग मनवांछित वर्षा कर अपने कृषि एवं चरागाहों के लिए पर्याप्त जल प्राप्त कर लेते थे। ऐसे प्रयोग पाश्चात्य जगत् में अब सोचे जा रहे हैं, किंतु हिंदुस्थान में वैदिक-कालीन ऋषियों ने यज्ञ-कर्म से ऐसे अनेक सफल प्रयोग कर डाले थे। याज्ञिक प्रयासों से वे लोग अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी सुलभ कर लिया करते थे।[1] आज के विज्ञान को प्रकृति के समक्ष विवश होना पड़ता है, परंतु वैदिक काल में यज्ञ द्वारा वर्षा कराना असंभव न था। इसके परिणामस्वरूप भारतीय समाज परम वैभव (भौतिक उन्नति और आध्यात्मिक उत्कर्ष) को प्राप्त था।[2] किसी भी व्यक्ति को किसी वस्तु का अभाव नहीं था। वैदिक काल की खट्टिक जाति अपने धर्म को तन-मन-धन से मान्य करती थी। धर्म ही उनका सबकुछ था। धार्मिक जीवन-पद्धति के लिए निर्धारित सभी दस तत्त्वों[3] का अनुपालन वे सावधानी एवं निष्ठा के साथ करते थे। धर्म के विरुद्ध कोई भी कार्य वे नहीं करते थे। चोरी, अनावश्यक किसी की हत्या, आलस्य, असत्य कथन और लालच के दुर्गुण उनमें नहीं थे। हिंदुत्व की रक्षा के लिए वे सबकुछ त्याग सकते थे। दया, क्षमा के गुण भी उनमें थे, परंतु धर्मविरुद्ध किसी भी अवमानना को वे अस्वीकार कर देते थे। यही कारण था कि वैदिक शिक्षा में वह सबसे आगे थे। अनेक वैदिक ऋचाओं की रचना उन्होंने स्वयं की थी जिनमें से अधिकांश का प्रयोग यज्ञ-बलि के समय किया जाता था। (हिंदू) संस्कृति के अनुरूप अपनी जीवन-शैली को वह पूर्णतया ढाल चुके थे। धार्मिक उत्सवों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित होती थी। बलि-उत्सव उनके आदेश से आयोजित एवं स्थगित होते थे।

वैदिककालीन खटिक ने उसी प्राचीन काल में ही आज के वैश्विक चिंतन, यथा—विश्वबंधुत्व, बसुधैव कुटुंबकम् आदि के बारे में चिंतन करना और उसके लिए कार्य करना आरंभ कर दिया था। आतंकवादी गतिविधियों का प्रत्युत्तर वे सीमा पर दिया करते थे। भीतरघातियों को देशनिकाला के स्थान पर मृत्युदंड का प्रावधान खटिक जाति की ही देन है। इसके लिए राजाज्ञा की प्रतीक्षा तक वे नहीं करते थे। अतएव कहा जा सकता है कि वैदिक काल में खट्टिक का जीवन आदिम काल (प्रागैतिहासिक काल) के कष्टों से मुक्त हो चुका था।

---

1. शर्मा, रामनारायण : प्राचीन भारत में भौतिक प्रगति एवं सामाजिक संरचनाएँ—1992
2. अथर्ववेद 6/50, 6/72, शतपथ ब्राह्मण /6/2-3
3. मनुस्मृति, 6/92

## 1.3 सनातन संस्कृति एवं हिंदू धर्म

हिंदुस्थान के अतिरिक्त विश्व का कोई भी देश ऐसा नहीं है जिसके पास सनातन (पुरातन) संस्कृति, सनातन सभ्यता, सनातन (हिंदू) धर्म और सनातन प्रकृति-पुरुष इन सबका एक साथ होना पाया जाता हो। यहाँ की संस्कृति आदिकालीन है, जिसे प्रागैतिहासिक कालीन संस्कृति नाम दिया जाता है। यह हजारों-लाखों वर्ष पहले हमारे ऋषियों एवं मुनियों द्वारा समस्त मानव के कल्याणार्थ संप्रेषित है। इसका महत्त्व प्रत्येक व्यक्ति, समुदाय और देश के लिए है। यह सनातन संस्कृति कभी पुरानी अथवा निष्प्रयोज्य नहीं हो सकती। यह हड़प्पा एवं सिंधुघाटी की सभ्यता, सरस्वती सभ्यता और दजला-फरात की सभ्यता, मध्य एशिया तक के कालासागर तट की सभ्यता की प्रतीक है। यह सिथियन, यूनान, असीरियन, सुमेरियन, खाल्डियन, रोमन आदि संस्कृतियों की तरह केवल मानव समाज के संवहन हेतु अभिजात्य संस्कृति नहीं है।[1] इसका मूल वेदों में है, बल्कि वेदों पर आधारित सनातन धर्म में निहित है। अतएव कहा जा सकता है कि यह संस्कृति वर्तमान प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। सफल मानव जीवन के लिए उपयोगिता की दृष्टि से हिंदू संस्कृति विचारणीय है। इस संदर्भ में यह एक ज्वलंत साक्ष्य है कि हजारों वर्षों से इसकी धारा अविच्छिन्न रूप से चली आ रही है। सनातन और सार्वभौमिक होने के कारण यह संसार के समस्त लोगों के लिएं स्वीकार योग्य है। अन्य शब्दों में कह सकते हैं कि हिंदू सनातन संस्कृति भारतीय संस्कृति है और भारतीय संस्कृति संपूर्ण जगत् की संस्कृति है।

हिंदुस्थान की यह सनातन संस्कृति अपना एक लंबा इतिहास रखती है। इस पर आदिकाल से निरंतर कुठाराघात होते रहे हैं किंतु इसे विनष्ट करने जो भी आए, यहाँ की संस्कृति में घुल-मिलकर रह गए और अपनी मूल संस्कृति तक को भूल गए। मध्ययुग और उसके बाद अंग्रेजी शासनकाल में यहाँ की सनातन संस्कृति को अधिक कष्ट झेलना पड़ा, फिर भी उसने अपना मौलिक स्वरूप बनाए रखा। आज भी उस पर चहुँमुखी कुठाराघात हो रहा है। उसके उत्थान के संघर्ष एवं प्रयास को आज देश में चाहे जिस दृष्टि से देखा जाए, किंतु हिंदुओं के इस प्रयास के पीछे भी विश्व कल्याण का ही भाव निहित है। सनातन एवं सार्वभौमिक होने के कारण यह समस्त लोगों के लिए व्यावहारिक रूप में स्वीकार योग्य है। इस संस्कृति में सहिष्णुता के भाव हैं। इसमें संगठन के प्राकृतिक भाव और सामाजिक समरसता के गुण पाए जाते हैं।

हिंदुस्थान की सनातन संस्कृति का प्रत्यक्ष अवलोकन करना हो तो उसके आदि मानव के जीवंत स्वरूप में देखा जा सकता है। वह जीवंत स्वरूप धर्माभिमानी एवं

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, हिंदू वैचारिकी, पृष्ठ-11

राष्ट्राभिमानी खटिक का है जिसे आज न तो ब्राह्मण श्रेणी में माना जाता है और न ही क्षत्रिय श्रेणी में। जब तक यज्ञों का सम्मान था, देश की सुरक्षा व्यवस्था की चिंता थी, खटिक ब्राह्मण और खटिक क्षत्रिय हिंदू समाज में सर्वत्र पूजनीय एवं सम्माननीय थे। आज उनकी आवश्यकता केवल उस समय महसूस की जाती है, जब देश में कोई धार्मिक आयोजन होता हो अथवा सांप्रदायिकता की ज्वाला धधक उठती हो तो खटिक जाति हिंदू धर्मरक्षक के रूप में मोरचा लेती है।

हिंदुस्थान पर थोपी गई बाह्य संस्कृतियों का प्रभाव कुछ-न-कुछ तो पड़ा ही है, किंतु एकमात्र खटिक जाति ही यह चुनौती के साथ कह सकती है कि उसका सनातन स्वरूप आज भी पूर्ववत है। यज्ञ-हवन और बलि-कर्म उनके धार्मिक अंग हैं। मांस-फल का आहार और उसका व्यापार उसकी सनातन वंश-परंपरा का प्रतीक है। प्रलयकाल में असुरों द्वारा पृथ्वी को रसातल में ले जाकर पृथ्वी एवं पृथ्वीवासियों को तरह-तरह से सताया जा रहा था, उसका उद्धार करके पुनः उसे जल से बाहर लानेवाले वाराह प्रभु के प्रतीक सुअर का पालन कोई नवीनतम कार्य नहीं है। आदि मानव को जंगली सुअर (शूकर) का मांस सर्वाधिक प्रिय था। इसलिए कि इस पशु की खेती अथवा दुग्धादि के रूप में मानव के लिए उपयोग नहीं था। इसलिए सुअर नामक पशु के मांस को दोषमुक्त मानकर उसका सेवन मांसाहारियों द्वारा किया जाता था। जिस प्रकार सनातन संस्कृति में अक्षुण्णता एवं स्थायित्व के गुण पाए जाते हैं उसी प्रकार से खटिक जाति में भी हिंदू सनातन संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने का भाव पाया जाता है।

सनातन संस्कृति में सहिष्णुता अथवा सद्भावना पाई जाती है। इसी कारण से यहाँ वसुधैव कुटुंबकम्, विश्वबंधुत्वभाव, सर्वे भवंतु सुखिनःसर्वे संतु निरामयाः की चिंतनधाराएँ भी पाई जाती है। सनातन संस्कृति सहिष्णुता के कारण ही भेदभावरहित थी। इसमें बाह्य शक्तियों द्वारा किसी भी प्रकार की कुरीतियाँ बलपूर्वक प्रविष्ट नहीं कराई जा सकी थीं इसे किसी भी खटिक के परिवारों में एक साथ देखा जा सकता है। खटिक जाति के लोग कभी भी अनावश्यक रूप से असहिष्णु नहीं होते। यदि उनके साथ छल-कपट न किया जाए तो वे प्रत्येक के प्रति सदैव सद्भावना व्यक्त करते रहेंगे और सबके साथ मैत्री एवं सहिष्णुभाव रखेंगे। यह मौलिक गुण खटिक जाति के लोगों को सनातन हिंदू संस्कृति से उपहार में जन्म काल से प्राप्त है।

सनातन संस्कृति में जातीय कठोरता के बंधन ढीले होने लगे हैं। अब कोई किसी की जाति नहीं पूछता है। धार्मिक तटस्थता अथवा धर्मनिरपेक्षता की नीति से धार्मिक रूढ़िवादिता एवं कट्टरता भी केवल हिंदू विरोधी इसलाम एवं ईसाईयत तक सीमित रह गई है। व्यक्तिवादिता में वृद्धि होने से संगठन की सामूहिकता निर्बल हुई है। समाज में बंद स्तरीकरण अब खुल गया है। आर्थिक वर्गों के निर्माण के साथ ही एकाकी परिवारों

की स्थापना होने लगी है। इसे हिंदू सनातन संस्कृति की अवनति नहीं कह सकते। यह तो एक परिवर्तन है। वास्तव में यह परिवर्तन अच्छा नहीं माना जा सकता है। एकाकी परिवार व्यवस्था का कुपरिणाम अब स्पष्ट दिखने लगा है। एकाकी परिवार की महिलाओं में अकेलापन एवं वृद्ध समाज द्वारा असुरक्षा व्यक्त किया जा चुका है। खटिक समाज भी इसका अनुमोदन नहीं करती, आज भी इस जाति के लोग अधिकांश संयुक्त परिवारों में रहना अत्यधिक अच्छा मानते हैं। वैसे भी, यह परिवर्तन सनातन संस्कृति को प्रभावित करने के बजाय एक तरह से लोकोपयोगी बनने हेतु संघर्षशील है किंतु यह एक असफल सामाजिक परिवर्तन है।

सनातन संस्कृति की यह सबसे बड़ी विशेषता कही जाती है कि वह सत्यनिष्ठ व्यवहार को मर्यादित आचरण के रूप में प्रस्तुत करता है। उत्तम आचरण भी मर्यादाच्युत होने पर अनुत्तम आचरण के रूप में परिभाषित होने लगता है। मर्यादा का आशय हिंदू मानव-मूल्यों से है। इन मूल्यों का नियमन हिंदू समाज-व्यवस्था को समुचित एवं व्यवस्थित रूप से संचालित रखने के लिए किया गया है। हिंदू समाज के नियम ही व्यवहारों और आचारों के लिए मूल्यवान होते हैं और इन मूल्यों के अनुसार आचरण मर्यादित होते हैं।

हिंदू संस्कृति का तात्पर्य प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित कर प्रकृति के नियमों के अनुरूप जीवन जीने की कला है।[1] हिंदू जीवन-पद्धति के अनुसार पाँच तत्त्वों से बने मानव शरीर के लिए प्रकृति में व्याप्त उन्हीं पाँचों तत्त्वों का संरक्षण, संचय एवं संवर्धन करने का आजीवन प्रयास किया जाता है। संस्कृति के साथ ही व्यक्ति और समाज भी अपनी परंपराओं के अनुकूलन हेतु पूर्णतः प्रकृति पर आश्रित है। प्रकृति ही इनकी नियंता और निर्मात्री है। हिंदू संस्कृति का संदेश भी प्रकृति की रक्षा एवं मानव अस्तित्व का संतुलित संवर्धन है। इसका मूल उद्देश्य यह है कि चूँकि हिंदू संस्कृति अथवा जीवन पद्धति से सत्, ऋत् और ब्रह्म यानी प्रकृति, प्रकृति का नियमन एवं प्रकृति को संचालित करने हेतु आवश्यक ऊर्जा शक्ति ही समाविष्ट है, अतः इस पद्धति पर आधारित लोकजीवन का यह स्वाभाविक धर्म है कि वह इन्हें संरक्षित और संतुलित रखे। इस धर्म के अनुपालन में वह प्रकृति के समस्त अंगों और उपांगों का संरक्षण करता है।[2]

सनातन संस्कृति का तात्पर्य और प्रकृति के नियमों पर आधारित क्रिया, प्रक्रिया, या प्रतिक्रिया के कारण मानव के स्वभाव तथा मानसिक प्रत्यक्षीकरण का निर्धारण है। प्रकृति का स्वरूप, प्रकृति के सिद्धांत (आधुनिक विज्ञान) पर आधारित हैं इसलिए हिंदू

---

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, हिंदू वैचारिकी, पृष्ठ-20
2. अथर्ववेद 12/1/26,12/1/42

संस्कृति मानव जीवन में प्रकृति के अनुरूप स्वअस्तित्व रक्षा एवं समाज के स्वतः गतिशीलता और निरंतरता का प्रत्यक्ष प्रारूप है।[1] जिस प्रकार वस्त्र-संस्कृति में ऋतु एवं मौसम के अनुरूप वस्त्र-संस्कृति का निर्धारण होता है, उसी प्रकार हिंदू संस्कृति के प्रत्येक आयाम में ऋतु, मौसम, जलवायु तथा वातावरण की प्रभावी भूमिका होती है। इसी आधार पर कहा जाता है कि प्रकृति ही हिंदू संस्कृति के प्रत्येक आयाम का आधार है, अर्थात् प्रकृति ही संस्कृति है—'नेचर इज इटसेल्फ हिंदू कल्चर।' प्रकृति कभी किसी व्यक्ति या समुदाय के प्रति भेदभाव नहीं रखती है।

सनातन संस्कृति प्रकृतिधर्मा कही गई है। प्रकृति का भी अपना धर्म होता है। प्रकृति अपने धर्म के अनुसार ही क्रियाशील है। जब भी प्रकृति में अप्राकृतिक क्रियाएँ होने लगती हैं, तो यह समझ लेना चाहिए कि कोई अधार्मिक अथवा अप्राकृतिक कृत मानव द्वारा प्रकृति के साथ किया गया है। प्रकृति के विरुद्ध मानवीय व्यवहारों के कारण ही अप्राकृतिक कृत्य यानी प्राकृतिक आपदाएँ आती हैं।

सनातन संस्कृति का मूर्त्तस्वरूप 'व्यक्ति' प्रकृति से उत्पन्न और प्रकृति में सम्मिलन का गुण रखता है। उसे अपने अस्तित्व के लिए प्रकृति के अनुरूप ही व्यवहार करना आवश्यक होता है अन्यथा उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। ऐसा इसलिए कि हिंदू संस्कृति की आधार संरचना प्रकृतिप्रदत्त गुणों से संयुक्त रही है। कृषि एवं पशुपालन पर आधारित सामाजिक तथा आर्थिक संगठनों का अस्तित्व प्रकृति के साथ सार्थक संबंधों पर आधारित था। प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित कर अपनी गति को बनाए रखनेवाला हिंदू समाज ब्रह्मांड के मूल रहस्यों का ज्ञान करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहा है।

सनातन संस्कृति के साथ ही हिंदू धर्म, हिंदू जीवन-पद्धति और हिंदू राष्ट्र भी प्रकृति का पोषक एवं उससे पोषित रहा है। प्रकृति का शाश्वत सिद्धांत निरंतरता तथा लयबद्ध गतिशीलता है। हिंदू संस्कृति भी इसी सिद्धांत की पोषक रही है। इसमें संस्तरण के साथ होनेवाले परिवर्तन एवं परिवर्द्धन ठीक उसी प्रकार से क्रियाशील हैं जैसे हम प्रकृति में पाते हैं। हिंदू संस्कृति में अन्य संस्कृतियों के सम्मिश्रण से उसकी मौलिकता समाप्त नहीं हुई, ठीक वैसे ही जैसे प्रकृति में पर्यावरण संबंधी प्रायोजित प्रदूषण से प्रकृति की मौलिकता समाप्त नहीं हो सकती है। अन्य संस्कृतियों के समन्वय से हिंदू संस्कृति के स्वरूप तथा क्षेत्र में विस्तार ही हुआ है जिसके परिणामस्वरूप उसकी मौलिकता और भी विस्तृत एवं विशाल हो गई है। यह क्रिया भी ठीक उसी प्रकार से हुई है जैसे प्रकृति में पर्यावरण-प्रदूषण की रोकथाम के लिए किए गए उपायों से प्रकृति के संरक्षण एवं विस्तार में स्वतः अभिवृद्धि हो जाया करती है। अतः कहा जा सकता

---

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, हिंदू वैचारिकी, पृष्ठ-20

है कि सनतान संस्कृति की ही भाँति खटिक जाति भी हिंदू संस्कृति की सनातनता का प्रतीक है। हिंदू संस्कृति की सनातनता के जितने भी आधार पाए जा सकते हैं, उन सभी आधारों पर खटिक जाति भी सनातन यानी प्राचीन जाति सिद्ध होती है।

सनातन संस्कृति की ही भाँति हिंदू धर्म भी सनातन है। वैदिक कालीन मानव समुदाय के रूप में खट्टिक यानी खटिक जाति की स्वीकृति भी उसे सनातन हिंदूधर्मी सिद्ध करता है। सनातनकालीन मानव अथवा आदि हिंदू खट्टिक ही था। यज्ञ-कर्म का एक आवश्यक कर्म बलिकर्म वैदिक खट्टिक ही करता रहा। अतएव हिंदू धर्म से वर्तमान खटिक जाति सदैव सन्निकट ही रहा। यह भी कहा जां सकता है कि कालांतर में हिंदू धर्म की रक्षक भूमिका में खटिक जाति ही रक्षक रही। प्रागैतिहासिक काल में खटिक समुदाय का सर्वप्रथम धर्म था अपना पोषण एवं रक्षण तथा इसमें सफल होने पर परमपुरुष के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन। उस समय धर्म की परिभाषा का उसे ज्ञान भले नहीं था, किंतु वह यह जानता था कि वह सर्वशक्तिमान है या नहीं है, पर उसे जीवन देकर धरती पर भेजनेवाली कोई अजन्मा, सृष्टि संकलनकर्ता यानी अदृश्य शक्ति अवश्य है। वह उसके प्रति सदैव निवेदित रहा।

प्रागैतिहासिक काल के उपरांत वैदिक काल में जब हिंदू धर्म का आधार वेदों में तैयार कर दिया गया तो कोई भी वेद-विरुद्ध नहीं जा सका। संपूर्ण मानव लोक जीवन वेद पर ही अवलंबित था। बलि के मंत्र, पशु-पूजा के मंत्र बनाए जा चुके थे। वैदिक काल के मानव ने धर्म की जो भी व्याख्याएँ प्रस्तुत कीं उन सबमें आध्यात्मिक और भौतिक शक्तियों का सहयोग लिया गया था और संपूर्ण धर्म-कर्म प्रकृतिपरक ही बनाए गए थे। ऐसा इसलिए था कि प्रकृति ही प्रधान थी, है और रहेगी भी, इसीलिए कहा जा सकता है कि हिंदू धर्म था, है और सर्वदा रहेगा भी। अत: जिस तरह से ब्रह्मांड अनादि है, अज्ञात है, अगम्य है, उसी तरह हिंदू धर्म भी अद्वितीय है। धर्म पूर्णत: प्रकृतिमार्गी है। धर्म पृथ्वी पर स्वयंभू है। धर्म को भारतीय ऋषियों, मुनियों और देवताओं ने अपने प्रयोगों एवं अनुभवों से पुन: प्राप्त किया।

हिंदू धर्म का तात्पर्य सामाजिक विधि-विधान एवं लोकाचार को धारण करने से है। 'धारयति इति धर्म:', वेदों में इसीलिए उल्लेख है—समाज के नियम और व्यवस्था को धारण कर उनका अनुपालन किया जाए एवं यह मानव के लिए परम आवश्यक है। हिंदू धर्म सदैव प्रकृति के नियम के अनुसार जीवन जीने की कला प्रस्तुत करता है। धर्म को अधर्म के सापेक्ष यह समझना चाहिए कि विधि का विषय धर्म है और निषेध का विषय अधर्म है। जो नियम समाज द्वारा मान्य है उसके पालन को धर्म कहते हैं एवं जो समाज द्वारा निषिद्ध हो वह अधर्म है। खटिक जाति को हिंदू धर्म के सापेक्ष यदि तुलना की जाए तो वह सदैव हिंदू धर्म का संवाहक ही पाया जाएगा। हिंदू धर्म के सभी दस

तत्त्वों का पालन करना खटिक जाति के लोगों के स्वभाव में सम्मिलित है।

हिंदू धर्म और खटिक जाति का हिंदू धर्म से संबंध अनेक प्रकार से तुलनीय है। वैदिक समाज में बहु-देवतावादी यज्ञप्रधान धर्म रहा है, जो जीवन के संचालन के लिए आवश्यक था। हिंदू जीवन-तत्त्वों को यथावत अवधारित करनेवाले ब्रह्मांड के ही देवता थे, जिनकी अर्चना सामान्य जन यज्ञों और यज्ञविधानों में प्रदत्त हवियों के माध्यम से करते थे। यज्ञ-बलि के समय खट्टिक यह नहीं कहता था कि वह किसी विशेष देवता के प्रति ही बलि का कार्य करेगा। चूँकि उस समय हिंदू धर्म में बहुदेवतावादी भावना थी, इसलिए ब्राह्मण खट्टिक सभी देवताओं के लिए बलिकर्म हेतु उद्यत रहता था और किसी भी देवता के प्रति भेदभाव नहीं करता था।

हिंदू धर्म को मिटा देने के जितने भी प्रयास हुए उन सभी समय में खटिक जाति किसी-न-किसी रूप में अवश्य रही। जैसे—प्रारंभ में धर्मरक्षक के रूप में ब्राह्मण खटिक बनकर, फिर देशरक्षा के लिए क्षत्रिय खटिक बनकर, देश के लिए आहार और उसके व्यापार का निर्देशन बनकर और लोगों को मांस तथा फल के आरंभिक व्यापार की शिक्षा देकर और हिंदू धर्म की रक्षा में अपना सर्वस्व न्योछावर करके। आज भी हिंदू धर्म की रक्षा में खटिक सबसे आगे रहते हैं। इसी तरह हिंदू धर्म के लिए दान देने में तथा हिंदू धर्मोत्सवों के संपादन में भी वे सबसे आगे रहते हैं। इसी आधार पर कुछ लोग यह सच ही कहते हैं कि खटिक जान लेने के बाद यह पूछने की आवश्यकता नहीं रहती है कि वह हिंदू है या नहीं, क्योंकि अन्य जाति के लोग क्रिश्चियन आदि मिल सकते हैं, किंतु खटिक जाति का व्यक्ति धर्मांतरित तो हो ही नहीं सकता।

## 1.4 मध्यकालीन काठियावाड़ एवं कठ तथा कठिक जाति

भारत का मध्यकालीन इतिहास वास्तविक रूप से 1206 ई. से आरंभ होता है, जब दिल्ली की गद्दी पर सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक आसीन हुआ। 1206 ई. से 1526 ई. तक प्राय: 320 वर्षों का काल मध्ययुगीन भारतीय इतिहास में दिल्ली सल्तनत के उत्थान, पतन और हिंदू राजवंशों की गिरावट का काल था। इन 320 वर्षों के लघु काल में तथाकथित गुलाम शासकों (1206-1290 ई.), खिलजीवंशीय शासकों (1290-1320 ई.), तुगलकवंशीय शासकों (1320-1414 ई.) और सैयद तथा लोदीवंशीय शासकों (1414-1526 ई.) का दिल्ली सल्तनत की गद्दी पर बैठना हुआ।

सल्तनतकाल की बुनियाद मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान और राणा सांगा के

1. डॉ. राधेशरण : भारत की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना और संस्कृति के मूल तत्त्व, पृष्ठ-184

साथ भयानक युद्ध के उपरांत रखी थी। उसकी विजय का मुख्य कारण यह था कि हिंदुओं में राजनीतिक चेतना का अभाव था। 'कोउ नृप होय हमें का हानि, चेरी छोड़ न होइहै रानी' का निराशायुक्त भाव उस समय उनमें अंतर्भूत था। चक्रवर्ती सम्राट् हर्षवर्द्धन जैसा कोई दूसरा हिंदू राजा नहीं था जो सबको एक साथ लेकर चलता और जनता में जागृति लाता। रामधारी सिंह ने उचित ही लिखा है कि पतन तो इस देश का हर्षवर्द्धन के बाद ही आरंभ हो गया था, क्योंकि उसके बाद चक्रवर्ती सम्राट् के पद पर हिंदुस्थान में कोई राजा नहीं बैठ सका। केंद्र की शक्ति टूट गई और कोई किसी को रोकनेवाला न रहा। परिणाम यह हुआ कि सारे देश में छोटे-छोटे राज्य उठ खड़े हुए और वे आपस में ही युद्ध करने को अपना परम कर्तव्य मानने लगे। अपना राज्य और अपनी राजधानी राजाओं को इतनी प्यारी हो उठी कि देश का अस्तित्व ही वे भूल बैठे। प्राय: प्रत्येक राजा को प्रत्येक दूसरे राजा से कुछ-न-कुछ शिकायत थी, जिसके कारण, कोई भी चार राजे एक राजा का साथ देने को तैयार नहीं थे।[1]

हिंदू राजाओं के आपसी वैमनस्य का एक जीवंत उदाहरण यह है कि जिस समय गजनी के अमीर ने सोमनाथ पर चढ़ाई की, उसके पहले उसने झालोर के राजा वाक्पतिराज को अपने पक्ष में कर लिया था। वाक्पतिराज ने मारवाड़ पर चढ़ाई के समय भीमदेव से सहयोग माँगा था और भीमदेव ने मारवाड़ को अपना नातेदार बताकर मदद करने से इनकार कर दिया था, इसलिए गजनी के अमीर ने जब सोमनाथ पर चढ़ाई की तो मदद माँगने पर वाक्पतिराज ने भीमदेव को नकारात्मक उत्तर दे दिया था। भीमदेव की पराजय के लिए वह हिंदू राजा वाक्पतिराज भी जिम्मेदार था।[2] पृथ्वीराज और राणा सांगा को कुछ हिंदू राजाओं का जो सहयोग प्राप्त हो गया था, उसे हिंदू-स्वभाव के अपवाद का ही उदाहरण समझना चाहिए।[3]

मध्यकाल का उत्तरार्द्ध पानीपत में बाबर द्वारा इब्राहीम लोदी (सल्तनतकाल के अंतिम सुल्तान) की पराजय से आरंभ होता है और मुगलों से अंग्रेजों द्वारा सत्ता छीन लेने तक समाप्त होता है। यह समय 1526 ई. से 1707 ई. तक का था। 1757 ई. तक भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन स्थापित हो चुका था, जो 1857 ई. की क्रांति के साथ समाप्त हो गया और 1857 ई. से 1947 ई. तक देश में इंगलैंड का ही क्राउन राज्य चला था।

मध्यकाल का पूर्वार्द्ध अस्थिर शासन-व्यवस्था का परिचायक था। विदेशी आक्रांता सुल्तान आपस में ही दिल्ली की गद्दी प्राप्त करने के लिए निरंतर लड़ते रहे तथा हिंदू

1. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-258।
2. मुंशी, कन्हैयालाल माणिकलाल : जय सोमनाथ।
3. दिनकर, रामधारी सिंह (पूर्वोद्धृत, पृष्ठ-258)

जनता का शोषण, उत्पीड़न एवं दमन-दलन के उपरांत बलपूर्वक हिंदुओं का धर्म परिवर्तन करते रहे। उत्तरार्द्धकाल में मुगलों ने हिंदुओं के साथ मिलकर राज्य करने का प्रयास किया, किंतु उसके भी कुछ बादशाह ऐसे हुए जिन्होंने हिंदुओं को सभी प्रकार से भरपूर प्रताड़ित किया। उन्होंने हिंदुस्थान के किसी भी प्रदेश को प्रभावित करने से नहीं छोड़ा। सर्वत्र जमकर लूटपाट और मार-काट किया तथा हिंदुओं को गुलाम बनाकर बगदाद की सड़कों पर कौड़ियों के मोल बेचा, स्त्रियों को अपनी हवस का शिकार बनाया, अबोध बच्चों को उनके माता-पिताओं के सामने ही मार डाला। हिंदू युद्धबंदियों को अपमानित किया। उनसे अस्वच्छ, अपवित्र और घृणित कार्य कराया। उनकी सामाजिक पद-प्रतिष्ठा को मिट्टी में मिलाया। लोगों का घर-बार उजाड़ा और उसमें आग लगवाई। जिंदा खाल उतरवाना, खौलते पानी की कढ़ाई में डाल देना, पशुओं की खाल में बंद कर देना और खुलेआम चौराहों पर फाँसी और शूली का दंड देना, उनके लिए यह सब सामान्य बात थी। लोगों पर इतने कर लगाए कि वे बस्ती छोड़कर जंगलों में पलायन कर गए। जंगलों को कटवाकर जानवरों की भाँति उनका शिकार किया गया और जंगल की लकड़ियाँ धर्मांतरित मुसलमानों में बाँट दी गईं। भागे हुए हिंदुओं के लगान उनके पड़ोसवाले से वसूले गए। हिंदू आस्था के प्रतीक जितने भी मंदिर थे उनको तोड़कर वहाँ मसजिदें बनाई गईं और देवी-देवताओं की मूर्तियों को विखंडित करके मसजिदों की सीढ़ियों पर लगाया गया, ताकि लोग उस पर पैर रखकर आ-जा सकें। कुल मिलाकर मध्यकाल को हिंदू दमन, दलन एवं उत्पीड़न का काल कहा जाना उचित होगा। हिंदू जनता का सर्वाधिक उत्पीड़न विदेशी आक्रांताओं ने किया, जिसे आज भले ही कोई भूल जाए परंतु खटिक जाति के लोग कभी नहीं भूल सकते हैं। मुगलों के प्रति यह वैरभाव आज भी उनके मन में विद्यमान पाया जाता है, जो स्वाभाविक भी है, क्योंकि सिकंदर, तैमूरलंग आदि के समय से यह खटिक जाति बराबर यूनानियों और विदेशी मुसलमानों के उत्पीड़न का प्रत्युत्तर बहादुरी से देती आई थी। जब यह जाति कठ एवं काठिक के रूप में काठियावाड़ में थी, तब भी इस जाति ने अपने दुश्मनों के रूप में इन इसलामिक संस्कृति के माननेवाले को तीक्ष्णता से जवाब दिया था। उस समय यह खटिक जाति कठ अथवा कठिक जैसे संबोधनों को लेकर जीवंत थी। देशरक्षा का उसका प्राचीन कर्तव्य उस समय भी उसे निर्वहन करना पड़ता था। वैदिक युग की उसकी ब्राह्मण-वृत्ति, पूर्व मध्यकाल और मध्यकाल में उसकी शस्त्रग्राही क्षत्रिय-वृत्ति हिंदू धर्मरक्षक और देशरक्षक की भूमिका के निर्वहन में संलग्न थी। जहाँ तक मध्ययुगीन काठियावाड़ का प्रश्न है, वह भी अपने प्राचीन नामों एवं प्रसिद्धियों से भले ही कुछ अलग-सा दीखने लगा था, परंतु उसका गौरवशाली अतीत आज भी विद्यमान है।

काठियावाड़ महाभारतकाल में आनर्त देश कहलाता था। विजय-यात्रा (राजसूय

यज्ञ) के समय इसे अर्जुन ने विजित किया था।[1] वहाँ का राजा शाल्व था और आनर्त देश की राजधानी सौभनगर में थी। विष्णुपुराण में आनर्त की राजधानी कुशस्थली (द्वारका का प्राचीन नाम) उल्लिखित है।[2] आनर्त नामकरण के बारे में कहा गया है कि बलराम (श्रीकृष्ण के भ्राता) की पत्नी रेवती के पिता रैवत थे और रैवत के पिता थे आनर्त और यह नाम उनके ही नाम से जुड़ा है। अतः आनर्त नगरी द्वारका का नाम था।[3] गिरनाथ के प्रसिद्ध अभिलेख के अनुसार रुद्रदामन ने 150 ई. के लगभग अपने पहलव अमात्य सुविशाख को आनर्त और सुराष्ट्र आदि जनपदों का शासक नियुक्त किया था। ऐसी यथार्थ संभावना है कि आनर्तदेश में पहले यज्ञ-कार्य अधिक होते थे और यज्ञ-बलि का कार्य काठिक (खट्टिक) करते थे जो ब्राह्मण-कुल से संबंधित थे।

शाल्वयुगीन काठियावाड़ को जब शाल्वपुर नाम दिया गया था, उस समय वह अलवर (राजस्थान) के परवर्ती प्रदेश का प्राचीन नाम था। वहाँ के शाल्व नरेश से काशीराज की बड़ी कन्या अंबा प्रेम करती थी, जिसका अपहरण भीष्म ने किया था। सावित्री के श्वसुर द्युमत्सेन शाल्वपुर के राजा थे।[4] शाल्व को मातिकावतक का राजा कहा गया है और उसका संबंध प्राचीन शाकल या वर्तमान स्यालकोट से भी था।[5]

काठियावाड़ के कुशस्थली नाम पड़ने के बारे में कहा जाता है कि महाराज रैवत ने समुद्र में कुश बिछाकर यज्ञ किया था, और पीछे त्रिविक्रम भगवान् ने कुश दानव का वध भी यहीं किया था। द्वारका में रणछोड़जी के मंदिर (जिसके शिखर पर संसार की सबसे ऊँची ध्वजा फहरती है) के निकट त्रिविक्रम का मंदिर है। कुशस्थली को ही कुशवती और कुशावत भी कहा गया है। इस नगर से 'पुण्यजनों' (पणि या पणिक अर्थात् प्राचीन ग्रीस के फिनीशियन[6] जो कुश की संतान थे) का भी संबंध था। शार्याती के मूलपुरुष शर्याति की राजधानी भी कुशस्थली थी।[7] रामायण काल में कुशावती (दक्षिण कोसल) के राजा श्री राम के ज्येष्ठ पुत्र कुश थे।[8] महाभारत में हरिद्वार और कनखल के निकटस्थ तीर्थ का नाम कुशावर्त है।[9] काठियावाड़ का द्वारका प्रतिरूप भी प्राचीनकाल

1. महाभारत-सभापर्व 26, 4
2. विष्णुपुराण, 4, 1, 64
3. महाभारत, उद्योगपर्व 7, 6
4. महाभारत, आदिपर्व-102, वनपर्व 14-22, 294, 7 विष्णुपुराण 2/ 3/17 तथा बुद्धचरित 9, 70
5. माथुर,विजेंद्र कुमार : ऐतिहासिक स्थानावली (राजस्थान हिंदू ग्रंथ अकादमी, 1990) पृष्ठ-63, 127, 162, 457, 896,-897, 977, 997
6. बेडल : मेकर्स ऑफ सिविलाइजेशन, पृष्ठ-80
7. हरिवंशपुराण 1, 14 विष्णुपुराण 4/1/64, 4/1/91, तथा महाभारत, सभा. 15/50-51
8. कालिदास : रघुवंश, सर्ग 16, 32, 33 एवं महावंश 2, 6, कुसजातक।
9. महाभारत, आदिपर्व, 103

से संबंधित हैं जो वर्तमान सौराष्ट्र, गुजरात में पड़ता है। यह पश्चिमी समुद्र तट के निकट द्वीप पर बसा हुआ है।

कठ गणराज्य प्राचीन पंजाब का प्रसिद्ध गणराज्य था। कठ (खट्टिक) लोग वैदिक आर्यों के वंशज थे। इसी वंश के तत्त्वदर्शी विद्वानों ने कठोपनिषद् की रचना की थी। अलक्षेंद्र (सिकंदर) के आक्रमण के समय (327 ई.पू.) कठ गणराज्य रावी और व्यास नदियों के बीच के प्रदेश या माझा में बसा हुआ था। कठों के शारीरिक सौष्ठव एवं वीरता की प्रशंसा ग्रीक इतिहासकारों ने की है। सिकंदर के हजारों सैनिक कठों के हाथों मारे गए थे। इससे घबराकर सिकंदर के सैनिकों के लाख कहने पर भी व्यास नदी के पार पूर्व की ओर बढ़ने से साफ इनकार कर दिया था। कठ, कंठ, कंथ,[1] खटिक अपने परिवार में केवल बलवान लोगों को ही देखना पसंद करते थे। इस वंश का महाभारतकालीन क्राथ नरेश कौरवों के पक्ष से युद्ध किया था।[2]

काठियावाड़ (गुजरात) के नामकरण के बारे में किसी तरह का भ्रम नहीं रह गया है। वास्तव में पश्चिमी पंजाब क्षेत्र में सिकंदर के सैनिकों से हुई मुठभेड़ के बाद कठ जाति के लोग भारी संख्या में काठियावाड़ प्रदेश में आकर बस गए और तत्पश्चात् घूमते-फिरते राजपूताना और मालवा तक जा पहुँचे। वे सूर्य के उपासक थे। तदुपरांत मध्यकालीन उत्पीड़न और मांस व्यवसाय के कारण वे देश के अन्य सभी भागों में जाकर निवास करने लगे, जहाँ स्थान, कुल-वंश, गोत्र, कुलगुरु आदि के आधार पर इनके अनेक नाम संबोधनों की हजारों कड़ीवाली एक श्रृंखला बन गई। आज इनकी पहचान लगभग दो हजार से भी ऊपर के उपनामों, टाइटिल आदि के साथ की जाती है जिसको अकारादिक्रम से पुस्तक के परिशिष्ट-1 में व्यवस्थित करके अवलोकनार्थ प्रस्तुत किया गया है।

कठों के निवास स्थान को सुराष्ट्र और सौराष्ट्र भी कहते हैं। विजय-यात्रा में इसे महाभारतकालीन सहदेव ने जीता था।[3] सौराष्ट्र समुद्र के भीतर आभ्राकार भूमि पर स्थित है।[4] द्वारकापुरी इसी देश में स्थित थी।[5] अपरांत के साथ इसका उल्लेख विष्णुपुराण में मिलता है।[6] काठियावाड़ के सापेक्ष हमें कई नाम सौराष्ट्रीय भागों के मिलते हैं, जैसे— हालार (उत्तर-पश्चिमी भाग), सोरठ (पश्चिमी भाग), गोहिलवाड़ (दक्षिण-पूर्वी भाग),

---

1. महाभारत, अनुशासनपर्व 25, 13
2. महाभारत, सभापर्व 38, विष्णुपुराण 5, 38, 9 तथा श्रीमद्भागवत 10। 50-52
3. पाणिनि 2, 4, 20
4. रायचौधरी : पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एंशिएंट इंडिया, पृष्ठ-202
5. महाभारत, सभापर्व, 31, 62
6. विष्णुपुराण 2, 3, 16, 4, 24, 68

आदि। सोरठ में बबर शेर पाया जाता है। सौराष्ट्र अपने अष्ट नदियों के लिए प्रसिद्ध है—चंद्रभागा, भद्रावती, प्राची, सरस्वती, शशिमती, वेत्रवती, पलाशिनी और सवर्णसिकता। धोधा आदि प्रदेशों की लोककथाओं में सौराष्ट्र की सुंदर नारियाँ, बहादुर कठ-कठिक (खट्टिक), उत्तम नस्ल के सुंदर घोड़ों, सोमनाथ का मंदिर आदि को सौराष्ट्र का रत्न बतलाया गया है।

काठियावाड़ के सापेक्ष उसके पुरातन एवं प्राचीन नामों का विस्तृत विवेचन करने का अभिप्राय उस देश, प्रदेश एवं वहाँ के काठिक (खटिक) जातियों के गौरवशाली अतीत की जानकारी कराना रहा है। जहाँ तक मध्यकाल की बात है, उस समय विदेशी आक्रांता तुर्क एवं मुसलिम लुटेरों द्वारा सोमनाथ मंदिर के वैभव को लूटने के अभिप्राय से तथा बहादुर कठिक (खटिक) योद्धाओं का स्वाभिमान रौंदने के प्रयास से ही बार-बार उस पर आक्रमण होते रहे और हर बार उन आक्रांताओं का मुँहतोड़ उत्तर देने का कार्य कठिक यानी खटिक जाति के शूरवीरों से भी होता रहा। उनको उन दिनों धर्मरक्षा हेतु सोमनाथ सहित सभी मंदिरों का पशु-बलि कार्य सौंपा गया था। मध्यकाल के बहुत पूर्व उन कठिक जातियों की एक अविस्मरणीय मुठभेड़ सिकंदर के साथ हुई थी और मध्यकाल में दूसरी जबरदस्त लड़ाई तैमूरलंग से हुई थी जिसका सामना उस समय का तुगलक सुल्तान, जो दिल्ली अथवा पूरे भारत का राजा था, वह भी नहीं कर सका था। यह अपने आप में अनोखी बात है कि यदि देश के सारे राजा-महाराजा केवल खटिकों के नेतृत्व में भी एकजुट हुए होते तो यह आश्चर्य नहीं कहा जा सकता कि दिल्ली का तख्त पलटा जा सकता था और देश को मुगलों की गुलामी कभी नहीं सहनी पड़ी होती।

कुछ विद्वानों का यह मानना अनौचित्यपूर्ण है कि तैमूरलंग ने जिस समय काठिकों के लाखों नरमुंडों का पहाड़ बनाकर उस पर नमाज अदा की थी उसी समय से कठिक लोग इतिहास के पृष्ठों पर कहीं नजर आते हैं। वास्तव में उस समय देश का नेतृत्व प्रायः क्षत्रिय राजवंशों के हाथ में था और ब्राह्मण वर्ग को केवल राज्य का पौरोहित्य ही प्रदान किया गया था। परंतु जिन हिंदू राजाओं ने कठिक जातियों की बहादुरी की गाथाओं को सुना था उन्होंने उनको अपनी सेनाओं में सेनापति का पद दिया था। यही कारण है कि हिंदू राजाओं की सेनाओं में कठिक जातियों को भारी संख्या में स्थान प्रदान किया गया। राजाओं के साथ यह जाति युद्ध करती थी, उनके संधि करने के कारण विवश रह जाती थी और अधीनता स्वीकारने के बाद तो चुप बैठने के अतिरिक्त उनके पास कोई चारा नहीं था। हिंदू सैनिक जहाँ मुगलों पर भारी पड़ते थे, उनमें अधिकांश सैनिक खटिक जाति के ही होते थे। तैमूर ने अपने पौत्र के नेतृत्व में जब सेना भेजी थी तो उसके महत्त्वपूर्ण सैनिकों को इसी कठ, कठिक एवं पार्श्वियों (खटिक एवं पासी) की सेना ने भारी क्षति पहुँचाई थी तथा सेनापति और महत्त्वपूर्ण सैनिकों को मार डाला था। इसी के

प्रतिशोध में तैमूर ने कठ, कठिक एवं पार्श्वी स्त्रियों एवं बच्चों को मरवा डाला और लाखों निहत्थों की गरदन कटवा डाली थी। फिर भी उन कठ, कठिक एवं पार्श्वी जातियों के युद्ध करने का मनोबल कहीं से भी कम नहीं हुआ था और वे राणा प्रताप का भरपूर सहयोग किए थे। छत्रपति शिवाजी की छापामार सेना में इनको विशेष स्थान प्राप्त था। चूँकि देशरक्षा में लग जाने से इनको सदैव युद्ध में लगे रहना पड़ा था, अतएव इनकी सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति दयनीय अवश्य थी। अंग्रेजों ने भी इनके शौर्यमय इतिहास सुन रखे थे, इसलिए उन्होंने भी इनकी आर्थिक स्थिति पर सर्वाधिक प्रहार किया। अंग्रेजों द्वारा इनके शौर्य के कारण इस मांस-विक्रेता जाति खटिक को सरकारी गजट में अपराधी जाति की सूची में शामिल करने से स्वयं हिंदू तक इनको अपनी दुकानें नहीं देते थे। इसलिए वे सड़क की पटरियों और फुटपाथों पर ही व्यवसाय करते थे। परंतु स्वतंत्रता के बाद इनकी स्थिति में सुधार हुआ है, यह सर्वविदित है। केवल शासन-प्रशासन में इनकी अल्प भागीदारी और हजारों की संख्या में इनके विखंडित सह-संबंधों यानी उपजातियों में बँटे हुए रूप के कारण ही अब तक स्थिति दयनीय है। इनके साथ राष्ट्रीय स्तर पर भी भेदभाव किया जा रहा है। ऐसे में इनकी जागृति की प्रतीक्षा है और अपेक्षा है कि वे अपने प्राचीन एवं मध्यकालीन गौरवशाली कर्तव्यों का प्रदर्शन करके अपनी स्थिति को अच्छी बनाए।

## 1.5 खटिक वंश एवं गोत्र

वंश का अर्थ है कुल और कुल का संबंध कुटुंब अथवा परिवार से है। मनुष्य का कुल अथवा वंश अथवा स्वयं मनुष्य भी अपने पारिवारिक या आनुवांशिक गुण के माध्यम से ही समृद्धि एवं विकास को प्राप्त होता है। कुल अथवा वंश के संदर्भ में परिवार अथवा कुटुंब सामाजिक जीवन की इकाई ही नहीं बल्कि आधार-शिला है।[1] परिवार का निर्माण पुरुष (पिता), स्त्री (माता) और उनके पुत्र-पुत्रियों से होता है। हिंदुस्थान महाभारतकालीन द्वापर युग के अलावा सदैव पुरुष-प्रधान देश रहा, इसलिए यहाँ पितृ-सत्तात्मक वंश-परंपरा चली। पिता का पुत्र ही पिता के कुल अथा वंश का संवर्द्धक माना जाता रहा है। पुत्रियाँ अथवा स्त्रियाँ दूसरे घरों की बहुएँ बनकर उस दूसरे कुल अथवा वंश के संवर्द्धन में सहायक होती हैं। खटिक वंश के लिए भी यही हिंदू परिवार-प्रथा के नियम मान्य हैं।

प्रश्न है कि खटिक वंश का आरंभ कहाँ से होता है? वस्तुतः वंश के मूल में नस्ल (शारीरिक बनावट) की वैचारिकी जन्म लेती है, इसलिए खटिक वंश की जानकारी के

1. मिश्र, जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ-375

लिए हिंदुस्थान में निवास करनेवाले लोगों की प्रजातियों पर विचार करना युक्तिसंगत होगा। मांस, कंदमूल एवं फल खानेवाला प्रथम मानव जिसमें वर्तमान खटिक जाति के लक्षण थे, अज्ञात प्रजाति का था, परंतु था तो मानव ही, न कि पशु। अतः खटिक वंश मानव-नस्ल से अलग नहीं हुआ। अब, प्रश्न दूसरा यह है कि वह द्रविड़ वर्ग का निग्रोलायड था, अथवा मूलतः मंगोलिया निवासी मंगोलायड नस्ल का किरात था अथवा कोल, मुंडा, जैसी जातियों वाला आस्ट्रोलायड नस्ल का था?

उपरोक्त प्रश्न खटिक वंश के सापेक्ष अनुचित प्रतीत होते हैं, क्योंकि वंश की मूल प्रजाति (हिंदू) सनातन प्रजाति है, क्योंकि यह सिद्ध हो चुका है कि विश्व का प्रथम मानव हिंदुस्थान के पंजाब प्रांत में हिमालय के पास शिवालिका की ऊँची भूमि पर जन्मा था।[1] कालांतर में वह भ्रमण-चक्रामण करते हुए विश्व के विभिन्न भागों में भी गया। मानव जिस दिशा में गया, वहाँ की जलवायु एवं जलवायु के अनुरूप जीवन-पद्धति तथा जीवन-रक्षण के साथ मानव अस्तित्व की निरंतरता एवं गतिशीलता को बनाए रखने का सफल प्रयास किया। इस आधार पर विश्व के प्रत्येक देश का प्रथम मानव अथवा सनातन (हिंदू) मानव हिंदू ही था और वे सभी एक ही प्रजाति के थे। विभिन्न देशों की जलवायु से उसके वंशजों की प्रजाति (शारीरिक स्वरूप) धीरे-धीरे परिवर्तित होती रही इसलिए उसको निग्रोलायड, मंगोलायड, आस्ट्रोलायड आदि नाम उसके निवास स्थान से जोड़कर प्रदान किए गए। कालांतर में वे प्रजातियाँ जब हिंदुस्थान में किसी प्रकार आकर यहाँ की हो गई तो उनको उनके हिंदू से परिवर्तित प्रजाति के नाम से पुकारा गया। अतएव खटिक वंश को किसी प्रवासी जातियों से जोड़ना न्यायसंगत न होगा।

हिंदू संस्कृति को माननेवाली अनेक प्रजातियों के उल्लेख के साथ यह बात स्वतः सिद्ध है कि सनातन धर्म (हिंदू) के माननेवालों की प्रजाति ही मानव की प्रथम जाति रही होगी। आज भी निग्रोलायड, मंगोलायड और आस्ट्रोलायड अपने को हिंदू कहते हैं और हिंदू मानते हैं। उनके रीति-रिवाज सबकुछ हिंदुओं की ही तरह है। विश्व में हिंदू संस्कृति और सभ्यता का प्रचार-प्रसार भी उन्हीं लोगों ने किया इसलिए आज भी विश्व के समस्त देशों में हिंदू जीवन-पद्धति को अपनाए हुए जीवन-यापन करनेवाले लोग मिलते हैं।

खटिक वंश की वृत्ति वैदिककाल में याज्ञिक पशुओं की बलि देने की थी और वे ब्राह्मण वंश के ही थे, इसमें किसी प्रकार का भ्रम नहीं होना चाहिए, क्योंकि यज्ञ कार्य का अनुष्ठान क्षत्रिय अथवा ब्राह्मण कोई भी कर सकता था, परंतु उसका संपादन केवल ब्राह्मण ही करते थे। यज्ञों में बलि-कर्म विशेष महत्त्व का माना जाता था और यह कार्य

---

1. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-3

खटिक वंश के लिए नियत किया जा चुका था, क्योंकि तत्कालीन खटिक वैदिककालीन बलि कार्य करनेवाला 'खट्टिक' था। जिसे भिन्न-भिन्न समयों पर भिन्न-भिन्न नाम एवं संबोधन प्रदान किए गए। इनको धर्मरक्षा का कार्य भी सौंपा गया था, क्योंकि शारीरिक दृष्टि से वे अन्य ब्राह्मणों से हृष्ट-पुष्ट होते थे। बलि-कर्म साहस का काम था और यही साहस आगे चलकर देश-रक्षा के काम आया जब बाहरी तत्त्वों ने हिंदू आस्था के प्रतीक मंदिरों एवं देवालयों पर आक्रमण करके लूटपाट किया। कालांतर में ऐसा प्रतीत होता है कि जब यज्ञों में पशु-बलि का काम बंद होने लगा अथवा इसे ब्राह्मणों द्वारा न कराके उनके द्वारा नियुक्त क्षत्रियों द्वारा कराया जाने लगा, उस समय वर्णांतर का लाभ देते हुए खटिक जाति को ब्राह्मण-वंश से क्षत्रिय-वंश में स्थानांतरित कर दिया गया अथवा पशु-बलि का कार्य जब क्षत्रियों को सौंपा गया उस समय खटिक भी वह कार्य करने के कारण क्षत्रिय वंश में समझा जाने लगा।

क्षत्रियों को कुल दो वंशों में विभक्त किया गया—सूर्यवंश और चंद्रवंश। इनकी अनेक शाखाएँ हुईं और कुछ शाखाओं की संख्या 1100 संकलित किया गया। इसमें सूर्यवंशी-रघुवंशी शाखा के अंतर्गत खटिक वंश को रखा गया और सूर्यवंशी महाराजा खट्वांग (दिलीप) को इनका मूल पूर्वज माना गया। इनके दो पुत्र थे—दीर्घवाहु और महाप्रख्यात। इन दोनों को रघु एवं खाशदो पुत्र हुए। दीर्घवाहु वंश में रघु से क्रमशः अज, दशरथ, श्रीराम हुए। वस्तुतः दीर्घवाहु और महाप्रख्यात से कुल चार शाखाएँ बन गईं—

प्रथम शाखा—कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में चली गई जो खटकुल गोत्र के नाम से कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में प्रसिद्ध है।

द्वितीय शाखा—खश गोत्रीय तथा रघुवंशी के नाम से चली जिसमें रघुवंशियों को खेटिक कहा गया। तीसरी शाखा मराठा राजपूतों में चली गई, जो इन्हीं पूर्वजों के नाम से इनको खटके कहते हैं। चौथी शाखा इन्हीं महाराज खट्वांग की वैश्व (वैश) बनी जो इन्हीं पूर्वज के नाम से खटवा, खीटवाल एवं खटके नाम से प्रसिद्ध हुई अर्थात् खटिक कुल का मूल वंश महाराजा खट्वांग के आरंभ होता है और आगे चलकर चार वंशों के रूप में परिणित (व्यापक) है। यही कारण है कि आज प्रायः दो हजार से अधिक नामों एवं संबोधन से देश के कोने-कोने में निवास करनेवाले खटिक यह समझ नहीं पाते कि वस्तुतः वे किस कुल अथवा वंश के हैं। जबकि यह स्पष्ट है कि वे एक ही कुल अथवा वंश के हैं—महाराजा खट्वांग वंश के। यहाँ यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि ब्राह्मणों में खटकुल गोत्र के नाम से कान्यकुब्ज ब्राह्मण एवं रघुवंशीय क्षत्रियों में खश, खेटिक तथा मराठा राजपूत खटके, वैश क्षत्रियों में खटवा,खीटवाल एवं खटके को देखकर प्रमाणित है कि खटिक जाति ब्राह्मण एवं तद्उपरांत क्षत्रिय वर्ण में परिवर्तित होकर आज खटिक के रूप में हैं।

हिंदू खटिक गोत्र का संकेत भी यही प्राप्त हो जाता है कि यह जाति महाराजा खट्वांग के गोत्र की है। इसके पूर्व वैदिककाल में जब वह ब्राह्मण खटिक था उस समय उसका गोत्र वही था जो वर्तमान समय में ब्राह्मणों का है। क्षत्रिय होने के बाद जब खटिक जाति के लोग पेशे, स्थान, राजवंशावली (कुल) इत्यादि के आधार पर विभिन्न वंश एवं कुलों से संयुक्त हुए उस समय, उनके अलग-अलग गोत्र भी हुए। अकेले क्षत्रिय वंश में उसके 360 गोत्रों का उल्लेख किया जाता है। कहा जाता है कि आरंभ में 360 जागीरें थीं। इसलिए उनके जागीरदार खटिक वंश के लोग 360 गोत्रोंवाले कहे गए। कुछ लोगों का यह कहना है कि सूर्यवंश में आरंभ में 12 गोत्र थे। बाद में 100 और 360 उपगोत्र बने। राजाओं के नाम से 50 उपगोत्र बने। अन्यत्र 65 उपगोत्र, 71 और 84 शाखाओं का भी उल्लेख मिलता है। दक्षिण भारत में क्षत्रियों का गोत्र मरहठे कहलाते हैं। कुछ लोगों ने दक्षिण भारतीय खटिकों के 101 उपगोत्र और उत्तर भारतीय खटिक जाति के 360 और 633 उपगोत्रों[1] का भी उल्लेख किया है। इनमें एक ही नाम दुहराए भी गए हैं। साथ ही लोगों की सूचियों के नामों में भी कुछ अंतर मिलता है। स्वामी परमानंद भारती ने इतिहासप्रसिद्ध 36 राजवंशों की सूची को क्रमशः टाड-राजस्थान से, मतिरामकृत नृपवंशावली से, प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक से, चंदवरदाई की पुस्तक से, कुमारपाल चरित से, गुजराती की पुस्तक से, विचियों के भाटों से संकलित करके प्रस्तुत किया है और उसी के साथ टाड साहब की शुद्ध नामावली में 36 राजवंशों का भी उल्लेख किया है,[2] किंतु इनमें भी खटिक जाति के गोत्र एवं उपगोत्र का वास्तविक स्वरूप स्पष्ट नहीं हो पाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि खटिक जाति के गोत्रों को प्रस्तुत करने की सबकी अपनी-अपनी पद्धति है, जबकि सामान्य रूप से कोई भी पद्धति स्पष्ट एवं संतोषप्रद नहीं है। गोत्र के सापेक्ष यदि हम सप्तर्षियों की बात करें तो गोत्र प्रवर्त्तक के रूप में कुल सात ऋषि मिलते हैं—(1) जमदग्नि, (2) भारद्वाज, (3) विश्वामित्र, (4) अत्रि, (5) गौतम, (6) वशिष्ठ और (7) अगस्त्य। मांधाता की पत्नी सोमप्रभा से उत्पन्न संतानों (सोमवंशियों) के कुल 25 गोत्रों का भी उल्लेख यह स्पष्ट करता है कि गोत्रों में ऋषियों का अनुक्रम अंगीकार किया गया है। प्रह्लाद, अत्रि, वशिष्ठ, शुक (संतकुमार), कण्व, पाराशर, विश्वामित्र, भारद्वाज, कपिल, सौनक, याज्ञवल्क्य, जमदग्नि, गौतम (ब्रह्म), मुद्गल, व्यास, लोमश, अगस्त्य, कौशिक, वत्स, मकन, माल्यवति, दुर्वासा, नारद, काश्यप-शांडिल्य, वकदाल।[3]

---

1. सोनकर, आर.डी. : भारत की व्याध जातियाँ, पृष्ठ-202-212
2. स्वामी परमानंद भारती, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ-101-108
3. भदकारिया (भदौरिया) : पूर्वोद्धृत, पृष्ठ-173

वर्तमान समय में वैवाहिक पाणिग्रहण संस्कार के पुनीत अवसर पर वर-कन्या के तीन पीढ़ी पीछे के परिवार प्रमुख (पिता) का नाम गोत्रोच्चारण के रूप में व्यवहृत होने की परंपरा है। दूसरी बात यह कि एक ही गोत्र कई जातियों में भी व्यवहृत है। इसी आधार पर विद्वानों ने पाया है कि खटिकों के गोत्र क्षत्रिय जातियों में आज भी पाए जाते हैं।[1] परंतु यह गोत्र-वर्णन संतोषप्रद नहीं है। यही कारण है कि प्रस्तुत पुस्तक में खटिक जाति के गोत्रों की संख्या परंपरागत विधि से 360 अथवा 633 आदि न देकर पुस्तक के अंत में एक परिशिष्ट दे दिया गया है और खटिक जाति के लोगों द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले उपनामों के साथ ही समस्त प्रकार के संबोधनों, कुलों, वंशों और परंपरागत वर्णित गोत्रों आदि की अकारादि क्रम से एक सूची कुछ संक्षिप्त परिचय के साथ दे दी गई है जिसका उद्‌देश्य मात्र यही है कि सभी संबंधित खटिक जाति के लोग खटिक समाज की जागृति में अपना योगदान करेंगे और अपने गोत्र के संबंध में मेरे मौलिक चिंतन की इन पंक्तियों के साथ संतोष करेंगे—'हिंदू लोक जीवन में स्थापित धर्म एवं संस्कृति के आलोक में गोत्र का विवेचन आवश्यक है। हिंदू संस्कृति में गोत्र का उल्लेख इस प्रकार से है—सर्वप्रथम गोत्र तीन थे। ऐसी मान्यता है कि तीन गोत्र गर्ग, गौतम एवं शांडिल्य अति प्राचीन गोत्र हैं। उक्त तीनों गोत्र सतयुग के ऋषियों के नाम से बने हैं। उक्त काल में वर्ण-व्यवस्था न होने के कारण इन ऋषियों को किसी वर्ण विशेष में नहीं रखा जा सका था। तत्पश्चात् 13 गोत्र का अस्तित्व प्रकाश में आया। ये भी 13 गोत्र तत्कालीन यानी सतयुग की पीठिका अथवा पूर्ववैदिक काल के महान् ऋषियों के नाम से बने हैं। उक्त तीन गोत्र और अन्य दस गोत्रों को जोड़कर इसकी संख्या 13 हुई। इसके बाद सतयुग एवं त्रेतायुग यानी रामचंद्र के युग के मध्य कुछ अन्य ऋषियों के प्रादुर्भाव से इन गोत्रों की संख्या 23 हो गई थी। इन 23 गोत्रों की संख्या में वर्ण के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, इतर वर्ण यानी वैश्य एवं शूद्र अन्यान्य ऋषियों को सम्मिलित किया गया। कालांतर में द्वापर युग यानी महाभारत के पूर्व एवं महाभारतकाल में गोत्रों की यह संख्या कुल 117 हो गई। आज हम यदि गोत्रों की चर्चा करते हैं, तो उनकी अधिकतम संख्या 117 है।'[2]

## 1.6 खटिक जातियों का राजवंशीय इतिहास

हिंदुस्थान में राजवंशी राज्य-परंपरा का एक लंबा इतिहास है। पृथ्वीराज चौहान की पराजय और कुतुबुद्‌दीन ऐबक के सुल्तान बनने के उपरांत भी मुसलिम आक्रांताओं

---

1. भदकारिया (भदौरिया) : पूर्वोद्‌धृत, पृष्ठ-162
2. महाभारत

द्वारा अविजित हिंदू राज्यों में राजवंशीय परंपरा थी। मध्यकाल में विजित राज्यों में भी सुल्तान को कर देनेवाले राजा होते थे। मध्यकाल के बाद अंग्रेजों के शासनकाल में भी राजाओं का ही राजवंशीय शासन एक निश्चित सीमा तक था। अंग्रेजी शासनकाल में प्रीविपर्स अधिनियम लागू होने के बाद से राजवंशी शासन देखने को नहीं मिलते हैं।

आदिकाल के अब तक की राजवंशी परंपरा का प्रतिनिधित्व कभी-न-कभी और कहीं-न-कहीं खटिक जाति को भी मिला था, भले ही इतिहास के पृष्ठों पर वह अंकित न पाया जाता हो। परंतु खटिक जाति की योद्धा-प्रवृत्ति और उसका अनेक युद्धों में भाग लेना उसके राजवंशीय शौर्य का ही प्रतीक है। 360 गोत्रों की सूची प्रस्तुत करनेवालों ने भी प्रत्येक गोत्र में किसी-न-किसी राजवंश का उल्लेख अवश्य किया है। जिस काठियावाड़ को खटिक जाति का देश कहा जाता है उसके प्राचीन नाम आनर्त पर दृष्टि डाली जाए तो वहाँ का राजा आनर्त, रैवत (बलभद्र की पत्नी रेवती के पिता) और शालव का नाम स्मरण दिलाने योग्य हैं। कठ गणराज्य का क्राथ नरेश[1] भला क्योंकर खटिक राजवंश से संबंधित नहीं था, जिसने महाभारत में कौरवों की ओर से युद्ध में भाग लिया था। विष्णुपुराण[2] ने सौराष्ट्र में जिन राजाओं के राज्य की ओर संकेत किया है, क्या उनमें खटिकवंशीय राजा नहीं थे? गणराज्य पुष्कलावती का राजा हस्ती जिसने 30 दिनों तक अकेले ही सिकंदर के बलिष्ठ सैनिकों से लोहा लिया था और तक्षशिला के राजा आंभी द्वारा सिकंदर के साथ सहयोग करने के कारण ही पराजित हो सका था, वह खटिक नहीं तो और कौन था? चिनाव तथा रावी नदी के बीच के प्रदेशों में रहनेवाली 'कथेयोई' तथा 'कथा' जाति के लोगों ने जिनकी राजधानी सांगला[3] थी और जिन्होंने सिकंदर के छक्के छुड़ा दिए थे वे खटिक नहीं तो और कौन थे? सोमनाथ मंदिर में महमूद गजनी को लोहे के चने चबवाने पर काठिक जाति ने ही तो विवश किया था?[4] समरकंद का सुल्तान चगताई तैमूरलंग ने तुगलक शासकों से दिल्ली तो जीत लिया, परंतु दीपालपुर, अजोधन और भटनीर में उसे करारी शिकस्त काठिक जातियों से ही मिली थी जिससे वह इतना भयभीत था कि दिल्ली की गद्दी प्राप्त कर लेने के बाद भी उसका साहस नहीं हुआ कि हिंदुस्थान में एक माह भी रुके।[5]

---

1. रायचौधरी : पोलीटिकल हिस्ट्री ऑफ एंशिएंट इंडिया, पृष्ठ-202
2. विष्णुपुराण 4, 24, 68
3. पांडेय, विमलचंद : प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, भाग-1 एवं महाजन, विद्याधर : प्राचीन भारत का इतिहास।
4. बैल, कैप्टन एच. विलफोर्स : हिस्ट्री ऑफ काठियावाड़।
5. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पूर्वांचल प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ठ-590-91

काठोर राज्य के सैनिकों के पास मुख्य रूप से धनुष, वाण, तलवार और झलुआ ही था तथा युद्ध के विकसित अस्त्र-शस्त्र नहीं थे और न ही उनके पास हाथी, घोड़े ही पर्याप्त मात्रा में थे। उन्होंने अपने अल्प साधनों से ही युद्ध लड़ा, पहाड़ियों में छिपकर गोरिल्ला अथवा छापामार युद्ध किया और कम संख्या में होने पर भी तैमूर के सैनिकों के दाँत खट्टे कर दिए। छत्रपति शिवाजी की सेना में भाग लेने के समय छापामार युद्ध से औरंगजेब को भारी क्षति उठाने का विधान उनका ही था। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि खटिक जाति ने छापामार-युद्ध का आविष्कार किया, जो आज भी व्यवहार में लाया जाता है।

खटिक जाति के राजवंशीय एवं सैद्धांतिक मूल्यों पर आधारित इतिहास की झलक हमें अनेक हिंदू एवं विदेशी आक्रांताओं के भयानक युद्धों में मिल जाती है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता थी कि इन्होंने किसी भी मूल्य पर मुगलों की सेना के साथ मिलकर हिंदू राजाओं के विरुद्ध युद्ध नहीं किया, जबकि अन्य जाति के लालची सैनिक मुगलों की सेनाओं में भरती होते रहते थे। महाराणा प्रताप की सेना में खटिकवंशीय लोगों की संख्या सर्वाधिक थी।

चित्तौड़ के राज सिंहासन हेतु जब में सूरजमल और पृथ्वीराज (सूरजमल के भतीजे) में युद्ध हुआ तो सूरजमल की सेना में खटिक सैनिक अधिक थे और उन्होंने पराजित सूरजमल को अपने राज्य 'कांठल' में शरण देकर उसके राज्य को पुनर्गठित कराया।[1] गुजरात एवं मालवा के सुल्तानों ने जिस समय राणा सांगा के मेवाड़ पर आक्रमण का डटकर सामना किया। इससे स्पष्ट है कि खटिक जाति का देश में अनेक स्थानों पर राज्य नहीं था परंतु कुछ देश और अनेक हिंदू राजाओं की सेनाएँ, इनसे भरी पड़ी थीं जिनको खटिक जाति के राजवंशी इतिहास के साथ जोड़ना न्यायसंगत होगा।

## 1.7 खटिक जाति का भौगोलिक प्रत्यक्षीकरण एवं रहन-सहन

उल्लेख किया जा चुका है कि उत्तर, दक्षिण और पूरब दिशा में निवास करनेवाली जातियाँ प्रायः उन्हीं क्षेत्रों में आज भी अधिकांश रूप में निवास करती हैं, भले ही रोजी-रोटी के कारण कुछ एक को देश के अन्य भू-भागों में निवास करना पड़ रहा हो। पश्चिम की जातियों के बारे में ऐसा नहीं है। चूँकि पश्चिमोत्तर भारत सदैव से ही विदेशी आक्रमणों से प्रभावित रहा इसलिए इस क्षेत्र की जातियाँ देश के अन्य भागों में जाकर बसती रहीं। लगातार आक्रमणों एवं उन आक्रमणों के कुप्रभाव के कारण ही इस प्रकार की प्रवृत्ति पश्चिमोत्तर भारत के अनेक जातियों में उभरी थी। हिंदू संस्कृति में पुरुषों के

1. टाड : राजस्थान का इतिहास।

लिए आक्रमण का प्रत्युत्तर देने का विधान तो है, किंतु उन्हें अपने स्त्री-बच्चों एवं परिवार की सुरक्षा करने का भी विधान है। अतएव अपने परिवार की सुरक्षा के लिए यदि पश्चिमोत्तर की जातियाँ देश के अन्य भागों में फैल गई अथवा जाकर निवास करने लगीं तो इसे मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति ही कहा जा सकता है।

देश अथवा क्षेत्र छोड़ने का आरोप अभी तक केवल एक ही जाति पर नहीं लगाया जा सकता है, और वह है खटिक जाति। इस जाति के लोग कालांतर में रोजी-रोजगार के उद्देश्य से देश के प्रत्येक कोने में आज भले बसे हुए पाए जाते हैं, किंतु किसी भी आक्रमण अथवा युद्ध के भय से वे कभी भी नहीं भागे। वर्तमान में पूरे देश की भौगोलिक स्तर पर समीक्षा की जाए तो खटिक जाति संपूर्ण देश में अनेक उपजातियों, उपनामों, कुल-वंश-गोत्रों, स्थानीय संबोधनों के साथ पाए जाते हैं। खटिक जाति का देश भर में मांस का व्यापार तथा कुछ स्थानों पर मांस व्यवसाय के साथ ही कृषि, सब्जी और फल-व्यवसाय के आधार पर पहचानी जाती है। इस जाति की वेशभूषा, बोली एवं भाषा, खान-पान, रहन-सहन, धार्मिक एवं सांस्कृतिक आयोजन, सबकुछ वहाँ के क्षेत्र विशेष के अनुसार पाया जाता है। जहाँ खटिक अति लंबे काल से रह आए हैं, वे वहाँ के मूल निवासी प्रतीत होते हैं।

वर्तमान समय में खटिक जाति के लोग देश के प्रत्येक क्षेत्र में रहने के कारण न तो बाहरी कहे जाते हैं और न ही उनको प्रवासी माना जाता है। वे जहाँ भी हैं वहाँ के मूल निवासी के रूप में अवस्थित हैं। उनके नाम संबोधन क्षेत्र विशेष से प्रभावित हैं, इसलिए अन्य स्थान के अपनों की पहचान वे मुश्किल से कर पाते हैं। कुछ प्रांतों में खटिक जाति के लोग संगठन बनाकर अपनों को जोड़ने का काम कर रहे हैं। उनका लक्ष्य देश भर के खटिक समाज को एकसूत्र में जोड़ना है। ऐसा प्रतीत होता है कि शीघ्र ही सोनकर खटिक, माली खटिक, बकरा खटिक, सुअर खटिक, चिकवा, रैया, लाड, कलाल आदि का भी भेदभाव समाप्त हो जाएगा। शैक्षिक विकास, आर्थिक उन्नति और जनजागृति से किसी समय शीघ्र ही खटिक समाज क्षेत्रीयता की परिसीमा और भौगोलिक आधार पर पाए जानेवाले अंतर को मिटाने में सफल होगा।

खटिक जाति को एकसूत्र में बाँधने हेतु किसी भौगोलिक प्रत्यक्षीकरण की समस्या भी नहीं रह गई है। क्योंकि इस जाति के लोग एक-दूसरे के प्रांतों में जाने और उनसे मेल-मिलाप बढ़ाने में लग गए हैं। फिर भी काठियावाड़ को छोड़ चुके खटिक आज एक जिज्ञासा रखते हैं कि उनका मूलस्थान किस प्रकार की भौगोलिक विशेषताओंवाला है? इसे देखने के लिए वे वहाँ जाते भी हैं। परंतु अधिकांश लोग अर्थाभाव एवं समयाभाव के कारण नहीं जा पाते हैं। ऐसे ही लोगों के लिए काठियावाड़ और उसके नवीन तथा प्राचीन नाम आदि का परिचय प्रस्तुत अध्याय में कराया गया है। आज भी गुजरात का

काठियावाड़ अनेक अर्थों में खटिक जाति के लिए गौरव का विषय है।

जहाँ तक रहन-सहन की बात है, वर्तमान समय में सभी लोग अपने-अपने क्षेत्र के अनुसार हिंदू जीवन-पद्धति पर अपना निर्वाह कर रहे हैं। हिंदू धर्म में उनकी अपूर्व निष्ठा है। हिंदू संस्कृति के सनातनधर्मी खटिक लोग आज भी अपने संपूर्ण कार्य धार्मिक आधारों पर संपादित करते हैं। हिंदू धर्म में उनकी निष्ठा और विदेशी मुसलिम आक्रांताओं को अपना स्वाभाविक शत्रु समझने के कारण वर्तमान मुसलिम संस्कृति से घृणा करते हैं। वर्तमान जातिविहीन समाज की चल पड़ी अवधारणा में भी खटिक जाति के लोग सभी जातियों से संबंध रखना चाहते हैं, यही कारण है कि सांप्रदायिकता की आग फैलते ही हिंदू खटिक मुसलमानों पर कहर बनकर टूट पड़ते हैं और हिंदुओं के आन-बान की रक्षा करते तथा उनका साहस बढ़ाते हैं।

खटिक जाति देश के किसी भी क्षेत्र में निवास करती हो किंतु उसका रहन-सहन हिंदू-शैली में ही मिलता है। धोती, कुर्ता, सिर पर टोपी अथवा पगड़ी इनका मुख्य पहनावा है। वैश्वीकरण के प्रभाव में यदि खटिक युवाओं द्वारा पैंट-शर्ट, कुर्ता-पायजामा पहना जाता है तो वह वर्तमान समय में टीका-टिप्पणी का कारण नहीं रह गया है। इनका खान-पान शाकाहारी और मांसाहारी, दोनों तरह का है। दूध और फल का भी सेवन करते हैं। व्यायाम तो बूढ़े तक करते हैं। शरीर को पूर्णरूपेण से स्वस्थ रखना इनकी प्राथमिकता है। ये हर जगह हृष्ट-पुष्ट मिलते हैं। हिंदू धर्म में अटूट आस्था एवं विश्वास रखते हैं और हिंदू देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। नवरात्र पूजा में जोत जंवारा की स्थापना करने तथा बकरों की बलि देते हैं (अब वह प्रथा प्रायः समाप्त है)। कभी गुसई-पुसई तथा लाड़ोबाई के नाम से देवी पूजा एवं पशु बलि होता था तथा जोत जन्म में जाते थे, यद्यपि अब बलि कर्म बंद है और कम मात्रा में जोत जलाते हैं। शैक्षिक स्तर ऊँचा होने के साथ ही ये लोग चिकित्सक, प्रशासनिक अधिकारी और जनप्रतिनिधि तक होने लगे हैं। खटिक जाति के लोग स्वाभिमानी होते हैं तथा अन्य दुर्गुणों से क्रमशः दूर हैं। अंतरजातीय विवाह इनको मान्य नहीं। जहाँ का सामाजिक और आर्थिक स्तर ऊँचा नहीं उठ पाया है और जिन क्षेत्रों में अभी भी अशिक्षा की स्थिति है, केवल वहीं पर खटिक समाज पिछड़ा हुआ है। बाल विवाह, मद्यपान एवं बालश्रम जैसी कमियाँ पाई जाती हैं। दहेज-प्रथा पर जागृति आई है। भोजभात एवं श्राद्धादि के समय अपव्यय में कटौती करने का प्रयास अब सभी कर रहे हैं। वाणिज्य में अधिक रुचि रखने के कारण अपने बच्चों को शिक्षा देने के बदले खटिक जाति उनको भी रोजगार में अधिक लगाते रहे हैं, किंतु अब इस विषय में जागरूकता आई है। कन्याएँ भी शिक्षा प्राप्त करने हेतु अग्रसर हुई हैं। इस प्रकार यह कहना उचित होगा कि इनके समस्त क्रिया-कलाप हिंदू रस्म-रिवाजों के अनुसार ही होते हैं।

वर्तमान समय में संविधान द्वारा छुआछूत एक दंडनीय अपराध घोषित किया जा चुका है, इसलिए इस खटिक जाति के प्रति कुछ स्थानों पर होनेवाली अस्पृश्यता अब प्रायः समाप्त हो चुकी है। कहीं-कहीं खटिक जाति के साथ कुछ जातियों द्वारा अस्पृश्यता का भेदभाव अवश्य है, परंतु खुलकर वे कभी ऐसा व्यवहार प्रकट नहीं करती हैं। श्री देवेंद्र पाल तोमर की एक शोध पुस्तक 'हिंदू अछूत जातियों में छुआछूत' (कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2003) देखने को मिली है, जिसमें लेखक द्वारा मेरठ के कुछ क्षेत्रों का अध्ययन प्रस्तुत करते हुए यह दिखलाने का प्रयास किया है कि चमार, खटिक, भंगी, डोम, बहेलिया लोग आपस में छुआछूत का भेदभाव आज भी रखते हैं और स्वयं खटिक भी सोनकर खटिक, माली खटिक, बकरा खटिक, सुअर खटिक (चिकुआ) आपस में भेदभाव रखते हैं। ऐसे अध्ययनों का अब कोई अर्थ नहीं रह जाता है, क्योंकि छुआछूत संविधान में वर्जित है। यहाँ यह कहना यथार्थ है कि उक्त सभी जातियाँ आपस में भेदभाव रखें या न रखें, किंतु मुसलमान जाति के साथ इनका किसी भी स्तर पर मेल-मिलाप नहीं होता है। इन्हें क्षोभ है कि इसी पंथ के विदेशी आक्रांताओं ने गौरवशाली राजवंशी धारा से अलग करके खटिक जाति को दीनहीन दलित बना दिया है।

## 1.8 खटिक एवं खटिक जाति का उपनाम

खटिक क्या है और उसकी उपजातियाँ तथा उसके उपनाम कितने हैं, इस विषय में स्वदेशी एवं विदेशी विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से विचार व्यक्त किया है। कोई भी विचाराभिव्यक्ति आलोचनीय हो सकती है, निंदनीय कदापि नहीं, क्योंकि प्रत्येक प्रस्तुति पूर्णतः आधारहीन हो ही नहीं सकती। खटिक जाति के बारे में आज तक ज़िन महानुभावों ने अपने विचार प्रकट किए हैं, वे सदैव स्तुत्य हैं। इससे विदेशी विचारों के प्रति सजगता की आवश्यकता है, क्योंकि वे विचार भारतवासियों के प्रति पूर्वाग्रहयुक्त मिलते हैं।

वस्तुतः खटिक जाति निस्संदेह मूलतः हिंदुस्थान की हिंदू जाति है। इसका संबंध हिंदू आदि मानव से न मानने का कोई औचित्य नहीं है। वैदिक काल, प्राचीन काल, मध्यकाल और आधुनिक काल सभी में इसका अस्तित्व कुछ परिवर्तनों के साथ बना रहा है। वैदिक साहित्य में जब वर्ण एवं जातिविहीन व्यवस्था के शंकुल प्राप्त होते हैं तो अन्य जातियों की भाँति खटिक जाति का भी उल्लेख न होना स्वाभाविक है। इसी कारण वर्ण-जाति के आलेखन काल में प्रणीत ग्रंथों में इस जाति का उल्लेख होना भी स्वाभाविक है। इस जाति का संबंध अमरकोश के कोटिश्च शब्द और उसके अपभ्रंश शब्द कौटिक, कठिक, खटिक इत्यादि से स्थापित करना सराहनीय प्रयास हो सकता है। संस्कृत का 'खट्टिक' शब्द दो शब्दों का युग्म है—खट्ट + इक = खट्टिक = व्याध, बधिक, मांस विक्रेता। वर्तमान खटिक मांस विक्रेता है इसलिए खटिक शब्द उसके लिए व्यवहृत होना

अनुचित नहीं है। किंतु खटिक को वर्तमान खट्टे की होनेवाली ध्वनि और इक का अर्थ अलग करना वास्तव में खटिक जाति के कार्यों को ही प्रतिबिंबित करता है, न कि उस जाति की कोई समाजशास्त्रीय परिभाषा को व्यक्त करता है। फिर भी हमें अभी तक उसी से संतुष्ट रहना है तब तक कि खटिक की कोई सर्वमान्य परिभाषा न सुलभ हो सके। यह अवश्य है कि आखेट (मृगया) से आखेटक और आखेटक को खटिक कहना अग्राह्य है। यहाँ सूना शब्द भी विचारणीय है। सूना का अर्थ है—वधस्थान। सूना से सौनिक शब्द की उत्पत्ति भी प्राकल्पित है, क्योंकि सौनिक शब्द खटिक की एक उपजाति के लिए प्रयुक्त है। सौनिक से ही सोनकर शब्द का निर्माण विशुद्ध रूप में वही अर्थ रखता है जो अर्थ रखते हैं खटिक शब्द के समरूप आखेटक, आखेटिक, सौनिक जैसे शब्द। अतएव खटिक जाति को परिभाषित करने की आवश्यकता नहीं, बल्कि उपरोक्त के आधार पर उसे समझने की आवश्यकता है।

खटिक की अनेक उपजातियाँ प्रकाश में हैं। जैसे—सोनकर खटिक, माली खटिक, बकरा खटिक, सुअर खटिक (चिकुआ खटिक) और अंतिम दोनों का युग्मनाम टेढ़ अथवा ढेढ़ खटिक। खटिक को खटिक करके भी एक अलग उ़पजाति बनाने का प्रयास हुआ है। कुछ स्थानों पर कठ, काठिक, बूचड़, खेटिक, सौनिक, सुनकर, सोनखर, सुनखर, कोटिक, कटिक, कलाल, मसालेदार, राजखटिक, पासी, कसाई, बधिक जैसे उपनाम दिए गए हैं, कठोपनिषद् की रचना करनेवाली इस जाति को उस उपनिषद् के आधार पर कोई जाति उपनाम नहीं दिया गया है। अतएव यवनों से पुष्पमित्र शुंग (ब्राह्मण शासक) द्वारा कठ अथवा काठिक लोगों का काठोर राज्य, जिसकी राजधानी सांगल (स्यालकोट) थी, को मुक्त कराने की घटना के आधार पर खटिक का मूल जाति-नाम 'कठ अथवा काठिक' अधिक प्रिय लगता है। दक्षिण भारत के विभिन्न राज्यों में खटिक जाति के अनेक उपनाम एवं श्रेणियाँ अवस्थिति हैं। रैया, चिकवा, लाढ़ एवं कलाल श्रेणी कर्नाटक में इसी प्रकार आंध्रप्रदेश में निश्चित रूप से पेशा, स्थान, कुल-वंश आदि आधारों पर खटिक जाति के अनेक उपनाम पाए जाते हैं जिनका उल्लेख विदेशी और स्वदेशी विद्वानों एवं लेखकों ने किया है। सभी ने प्रायः 7 या उससे अधिक उपजातियों के नामों की सूची दी है और सभी के साथ उसका व्यवसायगत परिचय भी दिया है, जैसे—चांडाल, वराबा, मोगरिया, बचरा, चोला, खिरही, तावड़ा, चमरिया, टाकी, दायमा, बागड़ी, बेकनवाला (सूकरमांसवाला), मेवाफरोश (फलवाला), राजगर (मकान बनानेवाला), सोमबट्टा (रस्सी बनानेवाला), कोलदार, सकवा, सोनखर, बकरसाव (बकरी मारनेवाला) घोड़चढ़ाव (साईस), अयोध्यावासी, सोनकर मांस के साथ ही (फल विक्रेता), बौरिया (पल्लेदार), पासी खटिक (ताड़ी विक्रेता), चक, चिकवा, रंगिया, धनगर, बहेलिया, खसाई, आरे खाटिका, बीरवाल जैन, अदरखी वैश्य,

बिहारी वैश्य, शिकारी, आखेटक, कठिक या काठिक, चौहान, चिक (बकरसाव), कवारिया (मेवाफरोश), राजौरया, कबाड़िया याकबारिया, खरा, खललू, बिलवारिया, बड़गूजर, चौसेनी, खत्री, सांवरिया, गंधीला, तोमर, सेगरवार, कनौजिया, सगहिया, बंदीछोर, तनबीना, इत्यादि।[1]

विद्वानों ने खटिक के उपनामों (उपजातियों) की संख्या 7, 65, 71, 84, 101 दक्षिण भारतीय, 360 गोत्रीय, 633 गोत्रीय, 816, जैसे अंकों से गणना करने का प्रयास किया है।[2] वर्तमान स्थिति कुछ और ही है। खटिक जाति के जिन 360 गोत्रों की चर्चा की गई है, केवल उसी के आधार पर यदि शाखाओं और प्रशाखाओं को मिलाकर गणना की जाए तो खटिक जाति के उपनामों (संबोधनों) की संख्या लगभग दो हजार के आस-पास हो जाती है, जैसा कि सुविधा के लिए पुस्तक के परिशिष्ट-1 में प्रस्तुत है। इस विषय में मेरा अपना विचार है कि विभिन्न उपनामों के आधार पर देश में यत्र-तत्र बिखरे हुए खटिक-कुल को आज अस्वीकारने और भेदभाव जैसा दुराग्रह रखते हुए उनको न अपनाने का कोई औचित्य नहीं रह गया है। उपनाम कुछ भी हो, खटिक तो केवल खटिक ही हैं। यह सबसे बड़े गर्व की बात है कि जितने उपनाम खटिक जाति में पाए जाते हैं, हिंदू धर्म की किसी भी जाति में उपजातियों या उपनामों की इतनी बड़ी संख्या नहीं मिलती है। इसलाम शेख, अहमद, अंसारी, खान जैसे कुछ उपनामों तक सीमित है और ईसाई भी गिनती के उपनामों तक सीमित हैं, यानी विश्व के भी किसी धर्म में किसी जाति में खटिक जाति जितने उपनाम नहीं है।

इस प्रकार संपूर्ण तथ्यों पर विचार करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि खटिक जाति का संबंध प्रागैतिहासिक काल और आखेट युग से ठीक उसी प्रकार से आबद्ध है जैसे अन्य हिंदू जातियों का पाया जाता है। यह जाति वैदिक काल में भी खट्टिक यानी बलि करनेवाली ब्राह्मण का कार्य अथवा पशु-बलि करती थी और सनातन हिंदू संस्कृति एवं हिंदू धर्म के अनुसार अपना जीवन-यापन करती थी। कालांतर में खटिक जाति के बलिकर्म भाव पर आधारित शौर्य अथवा वीरता की भावना ने समाज रक्षा कार्य में इस जाति को प्रेरित किया। यानी इस जाति से कुछ शाखाएँ क्षात्रधर्म में प्रवीण होकर क्षत्रिय जातियों के रूप में चिह्नित हुई। मध्यकाल में भी इस जाति ने पुनः देश-रक्षा का दायित्व सम्हाल लिया था और पूर्णतः जुझारू हो चुकी खटिक जाति को क्षत्रियधर्मी न माना जाना इसके गौरवशाली त्याग और बलिदान का अपमान होगा। इसके काठोर राज्य (सांगल

---

1. सोनकर, आर.डी. : भारत की व्याध जातियाँ, पृष्ठ-66
2. स्वामी परमानंद भारती (पूर्वोद्धृत) पृष्ठ-49-50, भदौरया, ठा. श्यामलाल भदकारिया, पृष्ठ-55, 67, 196, जाति अन्वेषण, भाग-2, पृष्ठ-51 तथा विदेशी लेखक हट्ठन एवं शेरिंग।

अथवा स्यालकोट) और काठियावाड़ की ओर सिकंदर, मिनिंडर, महमूद गजनी, तैमूरलंग तथा अन्य विदेशी आक्रांताओं ने आँख उठाकर देखने का साहस नहीं किया और जिसे चित्तौड़, मेवाड़ के राणा सांगा, राणा प्रताप आदि ने सम्मानित किया उसे क्षत्रिय न मानकर दलित जाति में गिनना कहाँ तक न्यायसंगत है, स्वयं विचारणीय विषय बन जाता है। इस जाति के वंश-कुल एवं गोत्र आदि की विविधता और इसके राजवंशीय इतिहास की महानता तथा ख्यातिलब्धता, साथ ही इस जाति के भौगोलिक प्रत्यक्षीकरण एवं रहन-सहन एवं हजारों हजार की संख्या में नामों-उपनामों की संख्या आश्चर्यजनक है। इन्हीं संदर्भों में आज तक हिंदू खटिक वंश एवं गोत्र हिंदू धर्म का प्रतीक स्तंभ और कर्णधार बना हुआ है। यह सभी उपनामधारी उपनाम एवं वर्गीकरण खटिक समाज के लिए गौरव का विषय होना चाहिए।

□

*अध्याय-2*

# खटिक वंश में ज्ञानी धर्म-पुरोधा एवं खटिक जीवन-वृत्ति

खटिक जाति की यह एक अद्‌भुत विशेषता ही मानी जाएगी कि इसमें प्रत्येक युग एवं काल में सनातन धर्म में आस्था रखनेवाले, हिंदू धर्म-कर्म एवं यज्ञ-बलि संपन्न करनेवाले और हिंदू धर्म की रक्षा में प्राणोत्सर्ग कर देनेवाले हजारों-लाखों लोगों के साथ ही महर्षि व्याघ्र, संत शिरोमणि दुर्बलनाथ, उपासरावजी महाराज जैसे धर्म एवं ज्ञान के पुरोधा भी विद्यमान पाए गए हैं। प्रस्तुत अध्याय में इसी तथ्य को उजागर किया गया है और यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि वृत्ति (जीविका, अर्थोपार्जन, व्यवसाय) से धार्मिक संसाधन संकलित करने की क्षमता प्राप्त होती है और यदि धर्मनिष्ठा दृढ़ बनी रहे तो वृत्ति सदोष हो ही नहीं सकती।

हिंदुस्थान में सभी वर्ग अपनी-अपनी वृत्ति में नियोजित एवं नियमित थे। ऋषि-परंपरा भी वृत्तिविहीन नहीं थी। ज्ञान-दान उनकी मुख्य वृत्ति थी। इस कार्य में प्राचीन हिंदू धर्म एवं ज्ञान के अनेक पुरोधाओं को संलग्न पाया जाता है। उनके ज्ञान-दान का ही परिणाम रहा कि हिंदू समाज अपने सनातन हिंदू धर्म को आज तक शाश्वत रख सका है। इसमें खटिक जाति भी कभी पीछे नहीं रही, वस्तुत: खटिक वंश का सनातन हिंदू धर्म में प्रमुख स्थान रहा है। वर्तमान समय में यह जाति अपने मौलिक सनातन हिंदू धर्म का पालन करने में संलग्न है। यदि इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों का अवलोकन किया जाए तो खटिक वंश में अनेक ज्ञानी एवं धर्म पुरोधाओं का गरिमामय एवं दैवी चमत्कारपूर्ण विवरण मिलता है। महर्षि व्याघ्र और धर्म एवं ज्ञानोपदेशपरक उनकी रचना 'व्याघ्र-गीता' का समादर महाभारत में उसी प्रकार से हुआ है जैसे भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा

उद्बोधित श्रीमद्भगवद्गीता का हुआ है।

खटिक जाति के लिए एक गर्व की बात है कि महर्षि व्याघ्र की भाँति संसार में कोई दूसरा पुरुष नहीं हुआ जिसकी रचना का सम्मान किया गया हो। खटिक वंश ने इस आक्षेप को भी निरस्त किया है कि उसके वंश में कोई ऐतिहासिक संत नहीं हुआ। संत शिरोमणि दुर्बलनाथ एवं उपासरावजी मध्ययुगीन संतों की उसी महान् परंपरा में हुए थे जिनमें संत कबीर, गोस्वामी तुलसीदास, संत रैदास प्रभृति अनेक संत हुए थे। उसी क्रम में खटिक वंश के महान् संत दुर्बलनाथ और उनके विविध चमत्कारों का उल्लेख करने के साथ ही अंत में खटिक जाति की जीवन-वृत्ति (व्यवसाय) अर्थात् मांस-व्यवसाय और फल एवं कृषि कार्य के सापेक्ष कृषि के परंपरागत एवं वैश्विक लाभ-हानियों पर भी विचार किया गया है।

## 2.1 हिंदुस्थान में ऋषि-परंपरा

प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य का संपूर्ण प्रयास अपने लिए आहार आहरित करने में ही व्यतीत हुआ। वन पशुओं का मांस प्राप्त किया, प्रकृतिप्रदत्त निःशुल्क कंदमूल एवं फलों को खाया, पशुओं के दुग्धामृत का पान किया, कृषि कर्म से अन्न एवं शाक-सब्जियों का उपयोग किया, अर्थात् अपना संपूर्ण व्यवहार आहार के निमित्त किया। परंतु वैदिक काल के प्रारंभिक चरण में अर्थात् ऋग्वेद काल में उसने भौतिक चिंतन के साथ ही आध्यात्मिक चिंतन की दिशा में भी प्रयास किया। सच तो यह है कि यह चिंतन ऋग्वेद की रचना के पहले से ही सनातन धर्म के चिंतक, संत, महात्माओं, ऋषियों और मुनियों ने आरंभ कर दिया था और प्रकृति में होनेवाली अद्भुत हलचलों का सूक्ष्म चिंतन करने तथा उनकी आध्यात्मिक कारकता एवं कारणता की खोज किया था। उन्होंने अपने चिंतन का परीक्षण किया था और सत् (प्रकृति) एवं ऋत् (प्रकृति नियम) के नियामक ब्रह्म (ऊर्जा) को एकीकृत करके सत्, ऋत एवं ब्रह्म पर आधारित समीकरण के आधार पर हिंदू जीवन-पद्धति का निर्माण किया था। हिंदू जीवन-पद्धति में हिंदू तत्त्वों के जिन दस आवश्यकताओं का उन्होंने नियोजन किया वह भी पूर्णतः परीक्षित एवं शोधपरक हैं। ऐसे व्यवस्थाकारों को ऋषि नाम दिया गया। शोध-कार्य-व्यवस्था के नियम का निर्माण किसी एक ऋषि ने नहीं किया था, इसलिए उन सभी ऋषियों के संयुक्त स्वरूप को ऋषि कुल की संज्ञा दी गई। ये ऋषि हिंदुस्थान में प्रत्येक समय में होते रहे और अपने दिशा-बोध से समाज को लाभान्वित करते रहे। इसी परंपरा को ऋषि-परंपरा का नाम दिया जाता था।

हिंदुस्थान में ऋषि परंपरा का आरंभ वैदिक युग से अथवा उसके कुछ पूर्व के समय से माना जाता है। वेद तो स्वयंभू हैं। किंतु उसकी ऋचाओं के अलग-अलग मंत्र

ऋषि द्वारा प्राप्त हुए। किंतु उन सभी ऋचाओं को एकत्रित करके उन्हें सर्वजन के लिए सुलभ कराने का कार्य महर्षि व्यास ने किया। यही कारण है कि महर्षि व्यास को महर्षि वेद व्यास की उपाधि प्राप्त हुई। वेद के प्रथम ऋचा की रचना किस ऋषि ने की यह अब तक शोध का विषय है। किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि ऋचाओं की रचना करनेवाले को ही ऋषि कहा गया। वेद की अनेक ऋचाएँ हैं और सभी की रचना किसी-न-किसी ऋषि द्वारा ही हुई। उन्होंने सर्वप्रथम प्रकृतिजन्य देवताओं (यथा सूर्य, सोम, इंद्र, वरुण, वायु, अग्नि, रुद्र इत्यादि) के प्रति मानव की स्तुति एवं वंदना का प्रयोजन किया। ये देवता प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों के नियामक माने गए। उसी के अनुरूप उनकी पूजा एवं वंदना के मंत्र रचे गए। मंत्र-शक्ति का प्रायोगिक परीक्षण किया गया और उसे सत्य एवं नित्य के अधीन नियंत्रित पाया गया। मंत्रों के प्रयोग से यज्ञ, बलि, तप आदि की व्यवस्था की गई और तब जाकर हिंदू धर्म को एक परीक्षित एवं प्रायोगिक धरातल मिला, जिस पर भौतिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों का मानव हित में उपयोग संभव था। यह व्यवस्था हमारे ऋषि परंपरा का ही योगदान है।

वर्तमान समय में भी ऋषि परंपरा का दृश्यावलोकन गुरु परंपरा के रूप में किया जा सकता है। आज का प्रत्येक हिंदू चाहे वह खटिक हो अथवा किसी भी अन्य जाति का हो, अपने तथा अपने परिवार को किसी-न-किसी गुरु-परंपरा से आबद्ध रखे हुए हैं। सांप्रदायिक एवं जातिगत भेदों की अधिकता और हिंदू आध्यात्मिक चिंतन के विभिन्न आचारों के आलोक में अनेक विधि से अध्यात्म चिंतन में संलग्न गुरुओं की अपनी अलग-अलग गुरु परंपरा चल पड़ी है। यह परंपरा संपूर्ण हिंदुओं द्वारा मान्य की जाती हो अथवा नहीं, परंतु जो परंपरा चल रही है, वह वास्तव में उसी प्राचीन हिंदू ऋषि-परंपरा का ही प्रतिरूप है। यह युग-परिवर्तन के साथ ही वर्तमान स्वरूप में आज भी पाई जाती है।

खटिक जाति के लोग प्राचीन ऋषि-परंपरा में अधिक विश्वास करते हैं। अतएव प्राचीन काल से हिंदू धर्म में प्रतिष्ठित देवी-देवताओं के पूजा-पाठ पर अधिक ध्यान देते हैं और जो निरंकार-पूजा के प्रति निष्ठा रखते हैं वे लोग वर्तमान गुरु-परंपरा को अंगीकार करते हैं। साकार-पूजा में आस्था रखनेवाला खटिक अपने धार्मिक कार्यक्रमों का संपादन अब ब्राह्मण पुरोहित से कराते देखे जाते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि खटिक जाति द्वारा हिंदुस्थान क़ी ऋषि-परंपरा का पूर्णतः अनुमोदन है।

## 2.2 प्राचीन हिंदू धर्म एवं ज्ञान के पुरोधा

हिंदू धर्म वैज्ञानिक अनुसंधान है, जो ऋषियों द्वारा हजारों वर्षों के शोध इत्यादि से निर्मित है, न कि इसलाम और ईसाई धर्मों की भाँति किसी एक व्यक्ति विशेष की

नियामक व्यवस्था से है। इसका निर्माण वैदिक काल में ऋषियों और मुनियों, संतों और महात्माओं ने मिलकर किया था। इसके प्रणयन में प्रकृति और प्रकृति पुरुष, दोनों संलग्न थे। ज्ञान के हजारों हजार पुरोधाओं ने इसके विषय में अपना-अपना चिंतन-दर्शन प्रस्तुत किया था और तब जाकर संकलित होकर बना था हिंदू धर्म। हिंदू धर्म जैसे अमूल्य निधि को वेदों, आरण्यकों, उपनिषदों, धर्मसूत्रों, रामायण, महाभारत, पुराणों, स्मृतियों में सुरक्षित किया गया। यह धर्म हजारों हजार वर्षों से प्रणयित है। भारतवर्ष तो ऋग्वेद काल से ही भारतीयों का जीवन आस्तिक विचारों और धार्मिक चेतना से प्रभावित रहा है।[1] कर्मों का निरूपण भी सदाचार और धर्म से प्रेरित तथा अनुप्राणित था।

वैदिकयुगीन खट्टिक (ब्राह्मण) पुरोधा भी इस वर्ण-धर्म के निर्माण में भागीदार थे और उन्होंने ऋषि-आश्रमों के लिए यज्ञ-धर्म, ब्रह्मचारियों के लिए भिक्षा-धर्म, गृहस्थों के लिए अन्नदान-धर्म और वानप्रस्थियों, संन्यासियों के लिए यति-धर्म के नियमों का निर्माण एवं अनुमोदन किया था। आश्रम-व्यवस्था के सापेक्ष वर्ण-धर्म का नाम वर्णाश्रम धर्म रखा गया। वैदिक युग के परवर्ती काल में धर्म का विशद् विश्लेषण किया गया और उसे वैदिक धर्म नाम दिया गया। यह धर्म हमें अगम्य एवं अबोधन का सुगमतापूर्वक बोध करानेवाला हुआ। प्रकृति को वैदिक धर्म भावना का प्रेरक तत्त्व माना गया और सृष्टि के नियंता के रूप में देवी-देवताओं की अवधारणा हुई। मानव में देवत्व का निरूपण हुआ और भौतिक जगत् की व्याख्या भी की गई। इंद्र, वरुण, सूर्य, रुद्र, अग्नि, सोम, वायु, अश्विन, पर्जन्य, बिबश्वान, मरुत इत्यादि को प्रकृतिपरक मानकर मानव हित के लिए इनकी वंदना की गईं। इनके प्रति स्तुति, यज्ञ, व्रत आदि होने लगे। उपनिषद्काल में ज्ञान के ही समान औपनिषदिक धर्म प्रचलन में आया। ज्ञान के पुरोधाओं ने अनेक उपनिषदों की रचना की। कठ (खटिक) जाति के ऋषि पुरोधा ने कठोपनिषद् की रचना की और अपने जाति स्वभाव के अनुसार ही उसमें मृत्यु के देवता यमराज तथा उनके आहार के लिए भेजे गए नचिकेता का उपाख्यान है, यद्यपि यमराज ने नचिकेता की ज्ञान-भक्ति से प्रसन्न होकर उसे कई एक वरदान तक दिया था।

इस प्रकार वैदिक और औपनिषदिक धर्मों को संयुक्त करने से धर्म का जो स्वरूप हुआ उसे कालांतर में हिंदू धर्म की संज्ञा दी गई। डॉ. जयशंकर मिश्र ने इसे स्वीकार किया है कि हिंदू धर्म का उद्गम स्थल वैदिक धर्म है, जिसमें वैदिक देवत्व और ज्ञानतत्त्व का सन्निवेश है।[2] महाकाव्यकालीन हिंदू धर्म में विष्णु के अवतार और पृथ्वी पर सत् की प्रतिष्ठा की चर्चा की गई तथा राम और कृष्ण को विष्णु का अवतार माना

1. मिश्र जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ-667
2. मिश्र, जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ-698

गया। परंतु वैदिकयुगीन यज्ञों का उस युग में नवीन संदर्भों के साथ अनुपालन किया गया। साधारण गृहस्थ पंच-यज्ञ करता था, जिसमें पितरों, देवों, ब्राह्मणों, अतिथियों और सूतों को संतुष्ट किया जाता था।[1] स्वर्ग प्राप्ति की कामना तथा युद्ध-विषयक पापों के प्रायश्चित्त स्वरूप मनसा-वाचा-कर्मणा राजन्य वर्ग के लोग अश्वमेध यज्ञ और राजसूय यज्ञ करते थे।[2] कर्म, भक्ति और मुक्ति हिंदू धर्म के स्तंभ थे। जन्म-मरण से मुक्ति हेतु तप, व्रत, उपवास आदि होते थे। नरक-भय और स्वर्ग प्राप्ति पर चिंतन होता था।

पौराणिक धर्म में शिव, विष्णु, शक्ति आदि के सापेक्ष वैष्णव धर्म, भागवत धर्म, शैवधर्म, शतधर्म इत्यादि का नियोजन हिंदू धर्म में ही किया गया। यह धर्म समस्त हिंदू मानव के लिए प्राण समान था। बौद्ध-जैन धर्मों का अभ्युदय भी हिंदू धर्म के ही अंतर्गत अनीश्वरवादी धर्म के रूप में हुआ, परंतु इसलामिक दमन, दलन एवं उत्पीड़न के आगे बौद्ध धर्म और जैन धर्म नतमस्तक हो गए, जबकि हिंदू धर्म प्राण देकर भी सुरक्षित रखा गया। हिंदू धर्म के समस्त सोपानों पर अपने को अवस्थित, व्यवस्थित एवं समन्वित रखते हुए खटिक जाति के लोगों ने न तो अपना देश छोड़ा और न ही धर्म छोड़ा। विदेशी इसलामिक आक्रांताओं ने अनेक हिंदू जातियों को बलपूर्वक मुसलमान बना डाला, परंतु खटिक जाति ने उसने मोरचा लेकर या तो मौत को गले लगाया अथवा अजेय रहकर अपने हिंदू धर्म की रक्षा करने में सफल रहे। उनको जंगलों में जानवरों की तरह भागना या भटकना भी नहीं पड़ा, बल्कि वे अपने घरों के चारों ओर इसलाम के शत्रु पशु सुअर से घेराबंदी करके मुसलिम बस्तियों के समक्ष भी डंके की चोट पर अड़े रहे। यही कारण है कि देश भर में जहाँ भी खटिक जाति की प्राचीन बस्तियाँ हैं, वहीं बगल में मुसलिम बस्तियाँ हैं। धर्म पर मर मिटने की शिक्षा उनको अपने पुरोधाओं से प्राचीन काल से ही मिलती आई है।

प्राचीन हिंदू धर्म एवं ज्ञान के पुरोधाओं में निःसंदेह खटिक जाति के पुरोधाओं का भी प्रतिनिधित्व था, परंतु उस समय ऋषि-मुनियों, ज्ञानियों, विद्वानों, उपदेशकों आदि की कोई जाति नहीं होती थी, बल्कि सभी को हिंदू धर्म एवं ज्ञान का पुरोधा ही कहते थे। इसीलिए खटिक जाति के पुरोधाओं के नाम अलग से प्रकाशित होने का कोई औचित्य नहीं है। फिर भी कुछ नामों की सूची इसी अभिप्राय से प्रस्तुत है कि यह तथ्य प्रमाणित हो सके कि अन्य विदेशी धर्मों की भाँति हिंदू धर्म के कोई एक पुरोधा अथवा मसीहा नहीं थे बल्कि उनकी संख्या अत्यधिक थी। महर्षि वाल्मीकि, महर्षि व्यास, ब्रह्मर्षि वशिष्ठ, ऋषि गौतम, जमदग्नि, परशुराम, दुर्वासा, देवभक्त कण्व, याज्ञवल्क्य, मनु,

---

1. रामायण 13/37/17 तथा महाभारत-शांतिपर्व, 270/10/11
2. महाभारत, 33 178-79

अत्रि, भृगु, कहोड़, विभांडक, ऋक्ष, ऋष्यशृंग, शुकदेव, पराशर, गोंडपाल, गोविंदपाद, भगवदपाद, आदि शंकराचार्य इत्यादि प्रमुख पुरोधा थे। इतना ही नहीं, कुछ अन्य अत्यंत प्राचीन ऋषि थे, जैसे—महर्षि जावाली, महर्षि मातंग, महर्षि शबर, महर्षि यास्क इत्यादि। इनमें से सभी ने केवल हिंदू धर्म के दस तत्त्वों (सत्य, अहिंसा, शौच, इंद्रियनिग्रह, अस्तेय, अध्यात्म, दम, अक्रोध, क्षमा, ज्ञान) पर ही अपने विचार व्यक्त नहीं किए बल्कि हिंदू लोकजीवन एवं हिंदू जीवन-पद्धति के प्रकृतिपरक आवश्यकताओं के बारे में भी संदेश दिए। ऋषि मतंग को महाराष्ट्र के मातंग जाति के लोग उन्हें अपना पूर्वज मानते हैं एवं उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। शवर ऋषि ने अत्यंत पराक्रमी एवं बलशाली बालि को आदेश दिया था कि वह उनके आश्रम में ही नहीं बल्कि ऋष्यमूक पर्वत पर कभी न आए अन्यथा वे उसे नष्ट कर देंगे। ऋषि विभांडक एक मादा हिरन के डिंब में अपना प्रस्वेद यानी पसीना स्थापित करके एक बालक को उत्पन्न किए थे। आज की क्लोनिंग-पद्धति का यह एक उदाहरण है और यह प्राचीन काल में हिंदू धर्म में अन्वेषित थी। रामायणकालीन पुष्पक विमान का उदाहरण विख्यात है कि किंतु महाभारत काल में भी विविध प्रकार के विमानों का उदाहरण है, जैसे—अलवर (राजस्थान) के अधिपति शाल्व के पास सौभ नामक एक अद्‌भुत नगराकार विमान था जिसकी सहायता से उसने श्रीकृष्ण की द्वारका पर आक्रमण किया था।[1] यह भी सनातन किंतु आज का हिंदू धर्म एवं ज्ञान के पुरोधाओं द्वारा ही निर्मित था। कुछ लोग शाल्व को भी वैदिक वंश परंपरा का 'खट्टिक' कहते हैं। तत्कालीन काशीराज की ज्येष्ठा पुत्री अंबा इसी शाल्व से प्रेम करती थी और भीष्म द्वारा अपहृत होने तथा शाल्व द्वारा विजित वस्तु कहकर अपनाने से अस्वीकार करने का स्वभाव आज के स्वाभिमानी और जिद्‌दी खटिक जाति से मेल खाता है।

हिंदू धर्म एवं ज्ञान के पुरोधाओं की जितनी संख्या ऊपर बतलाई गई है, उनके सापेक्ष यदि वैदिक और पौराणिक ऋषियों के विषय में अध्ययन किया जाए तो सप्तर्षियों का उल्लेख मिलता है। सप्तर्षियों के सात मंडल होते हैं। प्रत्येक मंडल में सात ऋषि हैं। इस प्रकार 49 ऋषि प्रमुख रूप से हुए जिनके वर्ण निर्धारित नहीं हैं। परंतु उत्तर वैदिक काल के उपरांत इन्हीं ऋषियों के वंश में सभी प्रकार के ऋषि उत्पन्न हुए। अनेक ब्रह्मर्षि और राजर्षियों के साथ-साथ हजारों महर्षियों (इतरवर्ण के ऋषि) का वर्ण स्वतः निर्धारित है।[2]

खटिक जाति के लोग हिंदू धर्म एवं ज्ञान के प्रति जिज्ञासु पाए जाते हैं, हिंदू धर्म

---

1. महाभारत, वनपर्व, अध्याय-14 से 22
2. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-6

का आधार शाश्वत वेद हैं, हिंदू धर्म में समाज की अवधारणा की जगह लोकजीवन का सिद्धांत है। हिंदू अर्थ चिंतन की पूर्णता धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थ में अवस्थित हैं, हिंदू धर्म का लक्ष्य है परम चैतन्य में प्रवेश और उस चेतना में प्रवेश करके जीवन के प्रति स्वयं को समग्रता से समझना, जानना और उसका निर्वहन करना। हिंदू धर्म में व्यक्तिगत एवं सामाजिक उत्कर्ष की पूरी संभावना, हिंदू धर्म में ईश्वर प्राप्ति अवरोधरहित और हिंदू धर्म में सर्वकल्याण एवं वसुधैव कुटुंबकम् की भावना निहित है।[1]

## 2.3 हिंदू धर्म में खटिक जाति का प्रमुख स्थान

हिंदू धर्म वैदिक काल में ऋषियों और मुनियों के ज्ञान-विज्ञान के शोधपरक (प्रयोगों एवं परीक्षणों द्वारा सत्यापित) आध्यात्मिक चिंतन और व्यवहारपरक भौतिक अनुशीलन का प्रतिरूप है। इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं—भृगु ऋषि का वैमानिक शास्त्र (पुष्पक विमान इत्यादि), वैदिक अंकगणित, शून्य का गूढ़ ज्ञान, ज्योतिष एवं खगोल शास्त्र में ग्रहों-नक्षत्रों की हजारों वर्षों पहले वर्णित दूरियाँ, भ्रूण प्रत्यारोपण के उदाहरणस्वरूप अत्रि ऋषि का चमड़े के पात्र में उत्पत्ति, ऋषि विभांडक की क्लोनिंग-पद्धति जिसमें अपने पसीने को उन्होंने मादा हिरन के गर्भ में स्थापित किया था इत्यादि कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण का उल्लेख विश्व के लिए आश्चर्य का विषय है। इसमें हिंदू धर्म के आध्यात्मिक और भौतिक अनुशीलन का स्पष्ट दिग्दर्शन होता है।

भारत वर्ष में ब्राह्मण एवं खटिक जाति ही ऐसी दो जातियाँ हैं जो संपूर्ण देश में एक नाम और एक पेशे से चिह्नित हैं। इन दो जातियों के अलावा अन्यान्य जातियाँ या तो देश भर में नहीं हैं, अथवा उनक़ी देश भर में एक नाम से पहचान नहीं है। ज़िस प्रकार ब्राह्मण जाति पूरे देश में ब्राह्मण एवं पेशा पूजा-पाठ तथा कर्मकांड से प्रसिद्ध है, ठीक उसी प्रकार खटिक जाति पूरे देश में खटिक नाम एवं मांस के व्यवसाय से जानी जाती है।

खटिक जाति के लोग आज भी अपने को शाश्वत धर्म वेदों से ही अनुप्राणित मानते हैं, जैसा कि हिंदू धर्म के लिए मूल मान्यताओं में स्थापित किया गया है। हिंदू धर्म में जहाँ धर्म का अभिप्राय वस्तु के स्वभाव से लगाया गया है, वहीं पर खटिक जाति के स्वभाव में धर्म कूट-कूटकर भरा हुआ पाया जाता है। हिंदू धर्म में धृति (धैर्य), क्षमा, दम (तपस्या), अस्तेय (चोरी न करना), शौच यानी पवित्रता, इंद्रिय निग्रह, ज्ञान, विद्या, सत्य तथा अक्रोध (अहिंसा) जैसे दस कारकों[2] को धर्म के लक्षण स्वरूप व्यवस्थित

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, हिंदू वैचारिकी : एक अनुमोदन पृष्ठ-183
2. मनुस्मृति 6/92

किया गया है। इसका पूर्णतः अनुपालन करने में खटिक जाति अन्य किसी भी जाति से आगे पाई जाती है।

हिंदू धर्म का सत् (प्रकृति), ऋत (प्रकृति के नियम) और इन दोनों की नियमन सत्ता ब्रह्म में आस्था है। खटिक जाति आज भी हिंदू धर्म को मानते हुए सत् (प्रकृति) के साथ सामंजस्य रखती है, प्रकृति के विरुद्ध कभी आचरण नहीं करती है और प्रकृति के नियंता के रूप में परमब्रह्म की सत्ता में विश्वास करती है।

हिंदू धर्म में हिंदू जीवन-पद्धति की विधि प्रतिपादित है जिसको आत्मसात् करने में खटिक जाति किसी से पीछे नहीं है। यह जाति हिंदू धर्म के अनुसार ही सत्यनिष्ठ व्यवहार एवं मर्यादित आचरण (लोकाचार) का पालन करती है। हिंदू आचार-व्यवहार संहिता को जीवन-विधि मानती है एवं हिंदू खटिक जाति हिंदू देश, राज्य एवं राष्ट्र के लिए समर्पित भाव प्रदर्शित करती है। हिंदू धर्म में 'वसुधैव कुटुंबकम्' एवं 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामयाः' का चिंतन यह जाति कभी नहीं भूलती। हिंदू धर्म में प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार प्राप्त है, इसको ध्यान में रखते हुए खटिक जाति के लोग कभी भी ऊँच-नीच अथवा भेदभाव की बात नहीं करते हैं और विश्वबंधुत्व भाव को ही प्रदर्शित करते हैं।

हिंदू धर्म अपने ऋषियों और मुनियों के प्रति अनुगृहीत है तो खटिक जाति भी सदैव ऋषियों एवं मुनियों के प्रति नतमस्तक रहती है। आज भी किसी खटिक जाति के दरवाजे से कोई याचक खाली हाथ नहीं वापस जाता है। इस जाति के लोग अपने आदि-पुरुष महर्षि व्याघ्र के हिंदू धर्म विषयक उपदेशों यथा—वृत्ति नहीं बल्कि आत्मस्मृति ही जीवन का लक्ष्य है, को सदैव आत्मसात् किया है।

हिंदू धर्म में खटिक जाति का प्रमुख स्थान आदिकाल से ही रहा है। इसका स्पष्ट प्रमाण है—खटिक जाति के धर्म व्याघ्र जी की रचना व्याघ्र गीत में विवेचित हिंदू धर्म से संबंधित अनेक विषयों पर असाधारण विचार। हिंदू धर्म में स्वधर्म को अपनाए रखने का निर्देश है। इसका स्पष्ट अनुमोदन व्याघ्र-गीता में है। मनुष्य के लिए आरंभ से नियत किए गए धर्म का प्रतिपालन ही स्वधर्म का संपादन है। स्वधर्म व्यक्ति के लिए नियत स्वकर्म से संबंधित है।

हिंदू धर्म में वेद को धर्म का प्राण एवं प्रमाण माना गया है। इसे खटिक वंश के पुरोधा धर्म व्याघ्र ने सहज भाव से स्वीकार करते हुए लिखा भी है कि वेद धर्म का प्रमाण है—धर्म की गति अति सूक्ष्म होती है और उसकी अनंत शाखाएँ हैं। जिससे प्राणियों का बहुत हित हो, वही धर्म है और वही सत्य भी है। प्राण संकट में होने पर असत्य बोलना भी सत्य यानी उचित है।

हिंदू धर्म में जीव एवं शरीर के विषय में बतलाया गया है कि आत्मा अथवा जीव

अमर है, जबकि शरीर नश्वर है। मृत्यु के उपरांत शरीर नष्ट हो जाता है, परंतु जीव कर्म बंधन मृत शरीर छोड़कर अन्यत्र चला जाता है और नश्वर शरीर पाँचों तत्त्वों में विलीन हो जाता है।

हिंदू धर्म में पाप और पुण्य की विवेचना करते हुए ज्ञानियों ने लोगों से कहा है कि वे अपने जीवन में अधिकाधिक पुण्य अर्जित करें और पाप (हिंसा) न करें। खटिक जाति के प्रतिनिधि महर्षि व्याघ्र ने इसको स्वीकार किया है और इसीलिए वह लोगों से सदैव कहते थे कि पाप-विहीन कार्य करो, जैसे वह स्वयं करते हैं, अर्थात् वह किसी पशु की हिंसा नहीं करते हैं, परंतु स्वधर्म (स्वकर्म) का पालन करते हुए मांस का व्यापार भी कर लेते हैं।

अपने कर्म-बंधनों को न काट पाने के कारण जीव नरक भोगता है और दुःख उठाता है। अच्छे कर्म करने पर वह सुख पाता है और उत्तम लोक प्राप्त करता है। इस मान्यता को भी खटिक जाति के लोग प्रमुखता के साथ अपनाए हुए हैं और इसीलिए अपने व्यवसाय आदि में यह बराबर ध्यान रखते हैं कि किसी के विरुद्ध वे कष्टदायक कार्य न करें, ताकि उनको कर्म-बंधनों में न पड़ना पड़े।

वर्तमान समय में यदि देखा जाए तो हिंदू धर्म से संबंधित जितने भी आयोजन होते हैं उनमें खटिक जाति के लोग बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं। देवी पूजा के समय नवरात्र में इस जाति के लोग अपने पास से अधिकाधिक पैसा एकत्रित करके दुर्गा-पूजा कार्य संपन्न करते हैं। मंदिरों के निर्माण अथवा प्रतिमाओं की प्राण-प्रतिष्ठा के समय में भी खटिक जाति के लोग भाग लेने में किसी से पीछे नहीं रहते। खटिक वंश की दीन-धर्म परंपरा का निर्वाह आज भी इस कुल के अनेक लोग करते हैं—धर्मशालाएँ बनवाई हैं, मंदिर बनवाए हैं, अस्पताल और अनाथाश्रम बनवाए हैं। गरीब कन्याओं की शादी और गरीब छात्रों की पढ़ाई में भी आर्थिक सहयोग प्रदान करते हैं। इस प्रकार परोपकार परम धर्म की हिंदू वैचारिकी सदैव खटिक जाति द्वारा अनुमोदित रही है। इसी तरह से अनेक दर्शनीय क्षण आते हैं जब यह देखा जा सकता है कि खटिक जाति के लोग हिंदू धर्म के प्रतिपालन में अपना प्रमुख स्थान रखते हैं।

## 2.4 खटिक वंश में ज्ञानी एवं धर्म पुरोधा

प्राचीन हिंदू धर्म एवं ज्ञान के पुरोधाओं की जो लंबी सूची प्राप्त होती है उसमें किसी की जाति का उल्लेख नहीं मिलता है। केवल कुछ स्थानों पर प्रसंगवश यह उल्लेख मिलता है कि ऋषि मतंग, शवर, जाबालि, शंबूक, वाल्मीकि, व्यास, व्याघ्र, कहोड़, विभांडक, कठ आदि ब्राह्मण या क्षत्रिय अथवा उच्च वर्ण यानी तथाकथित उच्च सामाजिक परिस्थिति (हायर सोशल स्टेटस) के नहीं थे। परंतु विभांडक ऋषि शरीर विज्ञान में, जाबालि ऋषि

न्याय अथवा विधि विज्ञान में, वाल्मीकि रामायण की रचना और व्यास महाभारत की रचना करने में, ऋषि कठ उपनिषद् की रचना करने में जो सामाजिक ख्याति अर्जित किए हुए थे उसी के कारण उनको ऋषि-परंपरा में स्थान दिया गया था। अन्य लोग योग, तप, ध्यान, साधना आदि के क्षेत्रों में अपनी प्रतिष्ठा स्थापित कर चुके थे। बीसवीं एवं इक्कीसवीं सदी के विद्वानों एवं चिंतकों ने कठ, व्याघ्र, दोनों को स्पष्ट रूप से खटिक जाति का पूर्वज एवं उनके वंश का माना है। उनका चिंतन है कि कठोपनिषद् की रचना करनेवाले ऋषि कठ निश्चित रूप से वैदिक खट्टिक जाति यानी ब्राह्मण वर्ण के थे और मांस का व्यापार (जीविका) करनेवाले ऋषि व्याघ्र भी खटिक जाति से ही संबंधित थे। ऋषि जाबालि और कहोड़ की जाति का निर्धारण किया जा रहा है। तथ्य उपलब्ध होने पर संभव होगा कि इनको भी वैदिक खटिक वंश का माना जाए। ऋषि विजयमान मतंग के पुत्र महात्मा प्रसन्न का विवाह धर्म व्याघ्र की पुत्री अर्जुनी से हुआ था। इस आधार पर माना जाता है कि ऋषि मतंग की जाति वैदिक खट्टिक थी।

खटिक वंश में उपरोक्त ऋषियों के अतिरिक्त मध्यकाल एवं उसके बाद भी अनेक ज्ञानी एवं धर्म पुरोधा हुए हैं, जिनमें वराहपुराण में उल्लिखित सत्यतपस, धर्म व्याघ्र, सदन खटिक, दुर्बलनाथ, संत उपासराव, संत सज्जन, कन्नप्पन नयनार, राजा भंवरपाल, सतनाम देव (कुशावर्त तीर्थवाले), महात्मा पूर्णनाथ इत्यादि का नाम उल्लेखनीय है। ये सभी लोग खटिक वंश के थे, ज्ञानी और हिंदू धर्म के प्रति पूर्ण निष्ठावान एवं समर्पित थे।

खटिक जाति के बहुत से लोग अपने-अपने भिन्न-भिन्न नामों एवं उपनामों के साथ हिंदू धर्म एवं हिंदू ज्ञान का लाभ समाज में वितरित कर रहे हैं, किंतु उनके विषय में लोगों को पता नहीं चल पाता है कि वे खटिक जाति के हैं। गाँवों एवं नगरों में अभी भी तंत्र एवं सामान्य अनुष्ठान का काम खटिक जाति के लोग करते हैं और अपने तांत्रिक-शक्ति के लिए प्रशंसा पाते हैं। अतएव यह कहा जा सकता है कि अन्य जातियों की भी भाँति खटिक जाति में भी कई एक ज्ञानी महात्मा और धर्म पुरोधा हुए हैं और आज भी पाए जाते हैं। कुछ प्रसिद्ध धर्म पुराधाओं का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है।

वैदिक यज्ञों में बलि-कर्म संपादित करनेवाले खट्टिक ब्राह्मण बलि-मंत्र के ज्ञाता और हिंदू-धर्म के पुरोधा थे। इस जाति के लोग आदिकाल से दुग्ध के लिए गोपालन और मांस के लिए बकरा-बकरी पालने का कार्य करते थे। हिंदू राजा खटिक असंख्य गायें रखते थे और निर्योग्य गाय भी दान कर देते थे। ब्राह्मण बूढ़ी गायों का दान लेना नहीं चाहते थे इसलिए राजा उन गायों के सींग में कुछ सोना-चाँदी लगा देते थे। यही कार्य बाजश्रवा ने किया था और दान-कार्य में व्यवधान उत्पन्न करनेवाले अपने पुत्र नचिकेता को क्रोध से यमराज को देने के लिए कह डाला था। बाजश्रवा की कथा जो

विशेषत: खटिक जाति में प्रचलित पाई जाती है, इस आधार पर ऐसा माना जाता है कि इस कथा का उल्लेख कठोपनिषद् में इसलिए हुआ है कि उसकी रचना किसी कठ नामक बलि देनेवाले खट्टिक श्रेणी के ऋषि ने की है। इससे पता चलता है कि उपनिषद् काल में भी कालांतर की तथा कथित वर्तमान खटिक जाति के अनेक लोग तत्त्व ज्ञानी एवं धर्म पुरोधा थे।

महाभारत में महान् ज्ञानी एवं धर्मात्मा और उनके धर्मोपदेशों के संकलन ही 'व्याघ्र गीता' है। सदन खटिक की कथा धर्म व्याघ्र से मिलती-जुलती पाई जाती है। इसी प्रकार से वराहपुराण में धर्म व्याघ्र के साथ ही सत्यतपस की भी कथा दी गई है।[1] वह जीवों का शिकार करके जीविका चलाते थे। बाद में यह कार्य बंद कर दिया और तप करके सदाचारी बन गए। उनकी कथा स्वयं वराहअवतार भगवान् ने पृथ्वी को बचाया था और कहा था कि प्राचीन काल में महाराजा खट्वांग (खटिक) को दो पुत्र थे—दीर्घायु और महाप्रख्यात्। दीर्घायु पुत्र रघु और महाप्रख्यात का पुत्र खाश (खश) हुआ। ब्राह्मणों की उपेक्षा करने पर दीर्घवाहु बाघ बन गए थे। उन्होंने नदी तट पर बैठे ब्रह्मा के पुत्र आरुणि पर आक्रमण किया और आरुणि जब नदी में कूद गए तो उसने वहाँ से भी उनको खींचने का प्रयास किया। इसी बीच स्वयं ब्रह्म-हत्यारा एक व्याघ (सत्यतपस) उस बाघ को अपना निशाना बना दिया। ऋषि ने 'नारायण की जय' कहा जिसे सुनकर वह मृतप्राय बाघ मनुष्य बन गया। व्याघ को आरुणि सत्यतपस बोलने और तप करने का सुझाव दिया। तभी से वह सत्यतपस नाम से ख्यात हुए। इसी व्याघ्र से संदर्भित होने के कारण सत्यतपस से ही जो वंश अग्रसरित हुआ, उसे ही कालांतर में खट् अथवा खटिक वंश का पूर्वज माना गया।

इसी प्रकार से संत उपासराव महाराज भी खटिक थे और नागपुर के राजा रघुजी भौसे के दरबार में भक्ति गीतों से कीर्तन-भजन गाते थे।[2] इसी तरह से परमानंदजी महाराज बागैरन जिला भरतपुर (राजस्थान) में श्री श्री 108 श्री देवगिरि महाराज जी संन्यासी हैं। जयपुर (राजस्थान) के पद्मपुरा में सतश्रेणी के रामप्रसाद परेवाजी बाड़ा मदनपुरा में विशाल मंदिर बनवाए हैं, जहाँ सत्संग होता है और सर्व धर्म समभाव की बातें होती हैं। ऐसे ही सतनाम देव (कुशावर्त तीर्थ) का भी नाम खटिक पुरोधाओं में पाया जाता है।

कण्यप्पन नायनार (कन्नप्पन नयननार)[3] दक्षिण भारतीय संत खटिक थे। इनका उल्लेख 'पेरियपुराणम्' में हुआ है। ये 63 तमिल शिवभक्तों में से एक थे। बचपन में

---

1. महाभारत वनपर्व पृष्ठ-7-21, 197-07
2. मानपुर उक्त खटिक पत्रिका 1988
3. पेरिय पुराणम्, शेक्खीजार

इनको 'चिन्नन' कहते थे। उनके पिता का नाम नागन और माता का नाम दंता था। 16 वर्ष की आयु में उन्हें शिकारी जीवन की दीक्षा दी गई। एक दिन एक सुअर का वध किया। एक जलधारा में प्यास बुझाई और समीपस्थ शिवालय में जाकर श्रद्धापूर्वक शिवलिंग का आलिंगन किया। एक दिन शिव की आँख से रक्त बह रहा था। कन्नपन्न ने अपनी आँख निकालकर अर्पित कर दी। शिवलिंग से रक्त बहना बंद हो गया। कन्नपन्न की भी आँख ठीक हो गई।

## 2.5 महर्षि व्याघ्र एवं उनकी रचना व्याघ्र गीता

महर्षि व्याघ्र अथवा धर्म व्याघ्र का उल्लेख महाभारत[1] एवं पुराण[2] ग्रंथ में पाया जाता है। दोनों ही ग्रंथों में महर्षि व्याघ्र को मांस का व्यापार करनेवाला धर्मात्मा संत बतलाया गया है। अंतर केवल यह है कि वराहपुराण के धर्म व्याघ्र एक मृग प्रतिदिन स्वयं मारते थे और उसका मांस बेचकर अपनी आजीविका चलाते थे। महाभारत के महर्षि व्याघ्र स्वयं कोई जीव नहीं मारते थे, बल्कि बधिकों से मारे गए एक पशु रोज खरीदकर उसका मांस बेचते थे। वराहपुराण में उल्लिखित सदन खटिक जिस प्रकार से एक ही शिवलिंग (शिव की बटिया) से सभी वजन का मांस तौलता था और आवश्यकतानुसार एक ही बटिया (बाँट) भिन्न-भिन्न वजन की हो जाया करती थी, उसी प्रकार से धर्म व्याघ्र भी शिव बटिया (पिंडी) से मांस तौलते थे। उनके पास भिन्न-भिन्न वजन की बटिया नहीं थी।

महर्षि व्याघ्र पूर्व जन्म में राजा बसु थे। भूल से पशु समझकर वह राजा रैम्य के रूप में एक ब्राह्मण प्रेतात्मा की हत्या कर दिए थे, उसी के प्रायश्चित्त स्वरूप व्याघ्र का जन्म लिए थे। वह मिथिला के निवासी थे और राजा जनक के समकालीन थे। उनके पुत्र और पुत्री का नाम क्रमशः अर्जुनक और अर्जुनका था। पुत्री को वह प्यार से अर्जुनी पुकारते थे। उसका विवाह ऋषि मतंग के पुत्र प्रसन्न (विजयमान मतंग) के साथ हुआ था। एक दिन अर्जुनी की सास ने एक व्यंग्य किया कि उसका पिता बधिक है, इसलिए अर्जुनी को कोई कार्य करने का ज्ञान नहीं है। अर्जुनी ने अपने पिता से इसकी शिकायत की तो धर्म व्याघ्र उसके श्वसुर के घर पहुँच गए तथा आहार दिए जाने पर अस्वीकार कर दिए। वह बोले कि जीवनरहित आहार मिलेगा तो वह खा लेंगे। चूँकि चावल, गेहूँ आदि सभी प्रकार का अन्नाहार भी जीवनरहित न था (अन्न स्वयं जीव है) इसलिए भोजन नहीं किए और बोले कि वह तो एक जीव की हत्या करके परिवार चलाते हैं,

---

1. महाभारत, वनपर्व, अध्याय 197-206 (7-21)
2. वराहपुराण, भाग-1

जबकि मतंग के परिवार में लाखों जीव (अन्न वर्ग के जीव) प्रतिदिन मारकर खाए जाते हैं। उसी समय कुपित हो महर्षि व्याघ्र ने स्त्रियों को भी यह शाप दिया कि सास-बहू में कभी नहीं बनेगी।

महाभारत में यही कथा मार्कण्डेय मुनि धर्मराज युधिष्ठिर को सुनाते हैं। उन्होंने यह भी बतलाया कि माता-पिता की सेवा-भक्ति महर्षि व्याघ्रजी ईश्वर की भाँति समझकर करते थे। इसलिए वह पूर्व जन्म के विद्वान् ब्राह्मण थे। एक ब्राह्मण को धर्म व्याघ्र ने धर्मोपदेश दिया था और धर्म-संबंधी अनेक बातों की जानकारी कराई थी। इन्हीं धर्मोपदेशों की सुंदर अभिव्यक्ति को व्याघ्र गीता कहा गया है।

व्याघ्र गीता में सर्वप्रथम कौशिक द्वारा अपने माता-पिता को नाराज करके शिक्षा प्राप्त करने की घटना का उल्लेख है। अपने ऊपर बीट करनेवाली बगुली को कौशिक ने क्रोध से देखा तो वह भस्म हो गई। कौशिक ने सोचा कि वह किसी को भी क्रोध से देखें तो वह जल जाएगा। इसीलिए जब एक पतिव्रता स्त्री अपने पति की सेवा करने के बाद उनको भोजन लेकर आई तो वह उस पर उबल पड़े। उस पतिव्रता ने कौशिक को निर्भीक होकर कहा कि वह कोई बगुली नहीं है जो उनके तेज से भस्म हो जाएगी। पतिव्रता धर्म की चुनौती के आगे ब्राह्मण कौशिक नतमस्तक हो गए। स्त्री ने कौशिक को मिथिला नगरी जाकर धर्म व्याघ्र से ज्ञानार्जन हेतु उपदेश दिया। कौशिक मिथिला गए भी। धर्म व्याघ्र ने उनको स्वधर्म का अभिप्राय समझाया कि जो कुल धर्म है वही स्वधर्म है। शिष्टाचार के बारे में बतलाया कि उसके पाँच पवित्र कर्म हैं—यज्ञ, ज्ञान, तप, वेदाध्ययन और सत्य भाषण। उसके चार प्रमुख अंग हैं—गुरुसेवा, सत्य-भाषण, क्रोध न करना (अक्रोध) और दान देना। यह भी कहा कि वेदों का सार उपनिषद् है, सत्य का सार दम (तपस्या) है और दम का सार त्याग है। कुमतिवालों का साथ नहीं करना चाहिए। पाँचों इंद्रियाँ नदी हैं। काम और क्रोध दो घड़ियाल हैं। धैर्य की नौका बेड़ापार लगाती है। न्याययुक्त कर्म ही धर्म है और अनाचार अधर्म। धर्म के तीन लक्षण हैं—(1) वेद में कहा गया व्यवहार ही धर्म है, (2) धर्मशास्त्रों में कहा गया धर्म के दस तत्त्वात्मक भाव ही धर्म है और (3) शिष्टजनों द्वारा किया गया व्यवहार ही धर्म है। शिष्टाचार के उदाहरण ये हैं—विद्या, तीर्थस्थान, क्षमा, सत्य, शौच से आजब कहे गए हैं। संतों के गुण हैं—सत्य, अहिंसा, दया, सरलता, अद्रोह, अहंकारहीनता, लज्जा, क्षमा, दम, शम। पशुवध का उद्देश्य मांस भक्षण होता है, क्योंकि देवता, अतिथि, सेवक और पितरों को मांस चढ़ाना पड़ता है। राजा रंतिदेव के घर में प्रतिदिन हजारों पशुओं की हत्या होती थी। स्वयं अग्नि देवता मांस चाहते हैं। यदि उनकी यह इच्छा न होती तो कदाचित मांस किसी के लिए भी भक्ष्य न होता। धर्म व्याघ्र ने बताया कि न तो वे पशु-वध करते हैं और न ही मांस खाते हैं, फिर भी स्वधर्म के कारण मांस का व्यापार करते हैं।

हिंसा के बारे में धर्म व्याघ्र ने बतलाया कि कोई भी कार्य हिंसाहीन नहीं है। संसार में सभी हिंसा करते हैं—कुछ जाने और कुछ अनजाने में। वेद धर्म का प्रमाण है—धर्म की गति अति सूक्ष्म होती है। उसकी शाखाएँ अनंत हैं। धर्म वही है जिससे प्राणियों का बहुत हित हो। इसके विपरीत जो हो—वह अधर्म और असत्य है। प्राणों के संकट के समय झूठ बोलना सत्य कहा जाता है। मनुष्य इच्छावान है किंतु केवल इच्छा करने से यथेष्ट प्राप्त नहीं होता। पूर्वजन्म के कर्मफल भोगने पड़ते हैं। जीव (आत्मा) अमर है और प्राणियों का शरीर नश्वर है। अपने कर्म-बंधनों को न काट पाने पर जीव निरंतर दु:ख उठाता है। अच्छे कर्म से सुख और शुभलोक प्राप्त होते हैं।

इंद्रिय-विज्ञान के अंतर्गत धर्म व्याघ्र ने बतलाया कि मनुष्य जन्म लेने के पूर्व ही ज्ञान प्राप्त करना चाहता है और ज्ञान-प्राप्ति के बाद काम और क्रोध करने लगता है। फिर, विषय-प्राप्ति हेतु रूप एवं गंध का भोग करता है जिससे राग पैदा होता है। उसके बाद द्वेष, लोभ, मोह में पड़कर बुद्धिहीन और स्वार्थी हो जाता है, पापकर्म करता है, अधर्म पर चलता है, परलोक बिगाड़ता है, पापी हो जाता है। संतों की सेवा से पाप नष्ट हो जाते हैं।

**ब्रह्मांड पाँच महाभूतों से निर्मित है**—वायु, आकाश, अग्नि, जल और पृथ्वी। इन पाँचों के गुण क्रमश: ये हैं—स्पर्श, शब्द, रूप, रस, गंध। इन पंच तत्त्वों के अतिरिक्त छहवाँ तत्त्व है चेतना (मन), सातवाँ बुद्धि, आठवाँ अहंकार, साथ ही 5 इंद्रियाँ और सत्व, रज, तम नामक तीन गुण हैं और 17 राशियाँ। इन 17 से प्रकृति बनी है जिसे अव्यक्त कहते हैं। व्यक्त और अव्यक्त से बने 24 गुण हैं। पाँच महाभूतों के 15 गुण इस प्रकार हैं—(1) पृथ्वी के सर्वाधिक 5 गुण (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) (2) जल के 4 गुण (शब्द, स्पर्श, रूप, रस) (3) अग्नि के 3 गुण (शब्द, स्पर्श, रूप), (4) वायु के दो गुण (शब्द, स्पर्श), (5) आकाश का 1 गुण (केवल शब्द)। ये 15 गुण इस लोक की सभी वस्तुओं में विद्यमान हैं। इन गुणों की साम्यावस्था में जीवन है और विषम अवस्था में मृत्यु।

धर्म व्याघ्र ने बतलाया कि दु:ख का आधार ज्ञान है, जो अतिक्रमण करनेवाले के मोह से पैदा होता है और बुद्धिमान लोग उसे ज्ञेय विषयों के द्वारा जान लेते हैं। दुख से त्राण हेतु इंद्रियों पर नियंत्रण आवश्यक है। क्योंकि शरीर रथ और इंद्रिया रथ के अश्व हैं। विकार 11 हैं। संतोष ही आनंद का सबसे बड़ा लक्षण है। दया परम धर्म है, क्षमा परम बल, आत्मज्ञान परमज्ञान है और सत्यव्रत परमव्रत है। सत्य-भाषण श्रेय है, सत्य ही ज्ञान और हित है। जिससे सभी प्राणियों का हित हो उसे ही सत्य कहते हैं, अत: सदैव सत्य मार्ग पर चलना चाहिए। लोकहित में अपना सर्वस्व त्यागकर नि:स्वार्थ भाव से काम करनेवाले को त्यागी एवं बुद्धिमान पुरुष कहते हैं। वह ब्रह्मलीन कहा जाता है

जिसे इस मार्ग से गुरुजन भी न हटा सके।

धर्म व्याघ्र ने कहा कि किसी की हिंसा न करो, क्लेश न दो, सभी को मित्र समझो, किसी से वैर-भाव न रखो, चंचल न बनो, सभी का सम्मान करो, परिग्रह (ग्रहण, संचय) का त्याग करो। तप करो, दम और संयम करो, विषयों-विकारों से दूर रहो, माता-पिता की पूजा करो, क्योंकि इसी से सबकुछ सुलभ होता है।

धर्म व्याघ्र ने बताया कि कोई भी जन्म से नहीं बल्कि कर्म से श्रेष्ठ (ब्राह्मण) होता है। यही धर्म व्याघ्र के व्याघ्र गीता का उपदेश-सार है। यह सोचने की बात है कि जिस खटिक जाति के महर्षि ने कभी विद्यालय (गुरुकुल) का आश्रय नहीं प्राप्त किया और निरंतर मांस बेचा, उसको केवल अपने माता-पिता की सेवा के आशीर्वाद से ही उच्चतम् एवं सिद्धि प्राप्त हुई। खटिक जाति में यही विशेषता आज तक पाई जाती है। प्रातः स्नानादि के बाद प्रत्येक स्त्री-पुरुष सर्वप्रथम अपने माता-पिता की पूजा करते हैं। कार्य व्यवसाय में जाने के पूर्व माता-पिता का पाँव छूकर अनुमति (आशीर्वाद) लेते हैं। आने के बाद भी उनको प्रणाम करके ही बैठते हैं। माता-पिता के न होने पर उनकी प्रतिमाओं के प्रति उनके ये व्यवहार निवेदित होते हैं। खटिक जाति एक आस्थावान और धर्मयुक्त आचरण करनेवाली एवं धर्म संरक्षण की दिशा में तत्पर तथा धर्मयुद्ध के लिए सर्वदा उद्धृत रहनेवाली जाति है।

## 2.6 महात्मा सदन खटिक का मांस-व्यवसाय

महाभारत (वनपर्व) एवं वराहपुराण (प्रथम भाग) में उल्लिखित धर्म व्याघ्र की ही भाँति महात्मा सदन खटिक को भी विभिन्न कथानकों में स्वधर्म का पालन करते हुए मांस व्यापार में संलग्न बताया गया है। उनकी कर्मस्थली काशी थी। वह ललितपुर (जनपद-झाँसी) के मूल निवासी थे और वहीं उनका देहावसान भी हुआ था। वहीं उनकी समाधि बनी हुई है। सिक्ख लोग यह मानते हैं कि किसी समय में गुरु नानकदेव सदन खटिक के आश्रम पर ठहरे थे। इससे स्पष्ट होता है कि महात्मा सदन खटिक गुरु नानक के समकालीन थे। इनकी कथा भक्त चरित्रांक एवं भक्तमाल[1] में उल्लिखित है। अन्य लेखकों ने भी इस कथा को अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत किया है।[2]

सदन खटिक बधिकों द्वारा हत एक पशु प्रतिदिन क्रय करके, उसके मांस का व्यापार करते थे। एक ही बाँट से तौलते थे। वह बाँट शालिग्राम की प्रतिमा (पिंडी) होती

---

1. भक्तमाल, पृष्ठ-602
2. भदौरिया, डॉ. श्यामलाल भदौरिया, 360 गोत्रीय क्षत्रियाँ वंशावली, पृष्ठ-59-51 सोनकर, आर.डी. : भारत की व्याघ्र जातियाँ, पृष्ठ-29-32 तथा श्री लक्ष्मण सिंह गूंगरी का लेख भक्त सदन महाराज की महिमा (आखेटक खटिक संदेश, पत्रिका, जुलाई, 1981)।

थी। लोग जितना मांस माँगते वह बटिया स्वत: उतने वजन की हो जाया करती थी। उसका चमत्कार सुनकर एक दिन एक ब्राह्मण ने उस बटिया को सदन से दान में माँग लिया और अपने घर ले जाकर स्वच्छ जल से धोकर पवित्र किया तथा आसन पर रखकर पूजा की।

बटिया दे देने के बाद सदन खटिक ने दुकान बंद कर दी और अत्यंत दु:खी रहने लगे। अत: भगवान् शालिग्राम ने ब्राह्मण को स्वप्न दिया कि वह बटिया सदन को वापस कर आए। ब्राह्मण ने वैसा ही किया। सदन ने उस बटिया को लेकर पुन: दुकान नहीं खोली बल्कि अपने आराध्यदेव भगवान् जगन्नाथजी के दर्शन हेतु पुरीधाम को चल पड़े। रास्ते में एक शेर मिला। उसे सदन ने ईश्वर-भक्ति का उपदेश दिया। शेर ने पशुओं की हत्या करना बंद कर दिया। एक दुकानदार से एक लाठी माँगी तो दुकानदार ने उनको वन से लाठी काट लेने को कहा। चमत्कारस्वरूप उसकी दुकान की सभी लाठियाँ हरी-भरी हो गईं और दुकान में जंगल का दृश्य उपस्थित हो गया। तब सदन एक लाठी लेकर आगे चले।

आगे चलने पर महात्मा सदन को एक नगर में एक दुश्चरित्रा स्त्री मिली और उस स्त्री ने उनके साथ चलने की इच्छा व्यक्त की और पति से उनको अपने साथ ले चलने के लिए कहा। सदन तैयार नहीं हुए तो स्त्री ने अपने पति का ही वध कर दिया। सदन ने फिर भी उसे ले जाने से इनकार कर दिया। तब उस स्त्री ने ढोंग रचा और कहा कि सदन ही उसके पति के हत्यारे हैं और उसके अपहर्ता बन रहे थे। राजा ने सदन के दोनों हाथ कटवा दिए। सदन उसी तरह जगन्नाथजी गए। उनके कटे हाथ यथावत हो गए।

जगन्नाथजी का आशीर्वाद प्राप्त कर महात्मा सदन खटिक ललितपुर आए और निरंतर धर्मगत रहते हुए समाधिस्थ हुए। समाधि-स्थल पर एक वृक्ष उत्पन्न हुआ। कहा जाता है कि बुंदेलखंड में अन्यत्र उस प्रकार के वृक्ष मिलते भी नहीं हैं। लोग उनका नाम 'कर' वृक्ष बतलाते हैं। उसमें लाल फूल लगते हैं और उसके फल खटमिट्ठे होते हैं।

समाधि-स्थल से थोड़ी दूर एक बावड़ी है, जिसमें पानी भरा रहता है। कहते हैं कि महात्मा सदन अपने अतिथियों के लिए उसी बावड़ी से सोने की थाली में भोजन मँगाया करते थे। एक दिन एक दुष्ट साधु ने थाली चुरा ली। तभी से बावड़ी से भोजन आना बंद हो गया। उसी में सदन का तराजू और बटिया भी समा गई।

यहाँ उल्लेखनीय है कि डॉ. श्यामलाल भदकारिया (भदौरिया) ने अपनी पुस्तक में महात्मा सदन को सजन कसाई लिखा है और के. देवाजीराव मदने (नागपुर) ने महाराष्ट्र खटिक समाज विकास संगठन की 1998 ई. में प्रकाशित पत्रिका में भी सदन को 'संत सज्जन' लिखा है। यहाँ स्पष्ट करना है कि वह एक सज्जन संत थे, इसलिए उनको सदन, सजन, सज्जन लिखा जाना औचित्यपूर्ण है, परंतु महात्मा सदन को सजन

कसाई या सदन कसाई लिखा जाना युक्तिसंगत नहीं है। चूँकि एक नाम के दो व्यक्तियों का होना स्वाभाविक है, इसलिए संत रैदास ने जिस सदन कसाई को काशी में शास्त्रार्थ करके पराजित किया था, वह मुसलमान था और जिस महात्मा सदन का उल्लेख अहिल्याबाई, मीरा, गणिका आदि के नाम के साथ हुआ है, वह खटिक जाति के थे।

## 2.7 संत शिरोमणि दुर्बलनाथ

खटिक वंश में अवतरित संत शिरोमणि दुर्बलनाथजी का जन्म 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ था। कुछ लोग भाद्रपद सुदी एकादशी तिथि बतलाते हुए कहते हैं कि उस दिन यशोदा-कृष्ण-जन्मोत्सव धूमधाम से मनाया जा रहा था। कुछ लोग झलझुलनी ग्यारस के पर्व पर उनका जन्म अलवर एवं भरतपुर जिलों की सीमा पर अवस्थित विचगाँव में होना मानते हैं। उस समय एकादशी के एक दिन पूर्व से ही भारी वर्षा हो रही थी और समीपस्थ रामदेई नदी में बाढ़ भी आई हुई थी। इस संदर्भ में यह भी कहा जाता है कि भाद्रपद राधाष्टमी की रात के तीसरे पहर से प्रसव-पीड़ा हुई और तदुपरांत उषाकाल में उनका जन्म हुआ। इन्हीं मान्यताओं के सापेक्ष झलझुलनी ग्यारसे को माननेवाले सन् 1668 को राजस्थान के जिला अलवर में होना मानते हैं और अन्य लोग विक्रमी संवत् 1918 (सन् 1861 ई.) को मानते हैं।[1] दो-एक दिन के अंतर को विवाद का विषय बनाना अनुचित है। स्थान के बारे में स्थिति स्पष्ट है—राजस्थान प्रदेश के उत्तर-पूर्वी जिले भरतपुर और अलवर की मध्य सीमा से लगते हुए एक छोटा सा गाँव है 'विचगाँव', जिसकी आबादी उस समय लगभग 800 थी, उसी गाँव की बस्ती से अलग 'खटिकबाड़ी' में इनका जन्म हुआ था।

संत दुर्बलनाथजी के पिता फत्तूराम खटिक (गोत्र—मलावालिया) उन दिनों खटिक समाज के अति सम्मानित चौधरी थे। माँ रूपा देवी धार्मिक प्रवृत्ति की थीं। स्नान-पूजा के बाद ही जल ग्रहण करती थीं। एक दिन ईश्वर का दर्शन करने हेतु रूपा देवी अधीर हो उठीं, तब उन्होंने कुछ दिनों उपरांत उपस्थित कृष्ण जन्माष्टमी के दिन से अन्न त्यागकर शाकाहारी, फलाहारी हो गई और उन्होंने उसके आठ दिन बाद जल भी त्याग दिया। निर्बल शरीर से हाथ में एक लोटा जल लेकर पास के मंदिर में अपने आराध्य देव को अर्पित करने गईं, परंतु पुजारी ने उनको अपमानित करके वहाँ से भगा दिया। दुःखी मन वह घर में ही पड़ी थीं। उसी समय एक ब्राह्मण द्वार पर आया और उनसे पानी माँगा। रूपा देवी

---

1. रिवाड़िया, मामचंद : महात्मा दुर्बलनाथजी का जीवन चरित्र (रिवाड़िया साहित्य प्रकाशन, टैगोर गार्डेन, नई दिल्ली-27), 1963 एवं सोनकर आर.डी. : भारत की व्याघ्र जातियाँ, पृष्ठ-33-49

ने अपने को अस्पृश्य बतलाते हुए जल न दे सकने की असमर्थता व्यक्त की, परंतु वह ब्राह्मण बिना पानी पिए न जाने की हठ करने लगा। अंत में रूपा देवी ने प्रसन्न होकर उसे जल दिया। कहते हैं कि वह ब्राह्मण कोई दैवी पुरुष थे। उनके जाने के एक वर्ष के अंदर रूपा देवी ने एक सुंदर पुत्र को जन्म दिया।

लेखकों ने रूपा देवी के अन्न-जल त्यागने, देवालय में जलाभिषेक से रोके जाने और देव-ब्रह्म को जल पिलाने का वर्ष 1861 ई. लिखा है। यदि संत दुर्बलनाथ के जन्म का वर्ष 1861 ई. माना जाए तो गर्भाधान का समय 1860 ई. उचित प्रतीत होता है। लगता है कि रूपा देवी जब गर्भवती थी उसी समय उत्तम संतान के लिए अनुष्ठान की होगी, जलाभिषेक और जल-दान की होगी और उसके कुछ दिनों बाद राधाष्टमी को प्रसव-पीड़ा के बाद एकादशी को संत दुर्बलनाथजी का जन्म हुआ होगा।

एक साधु ने शिशु दुर्बलनाथ को देखा और शिशु जोर से हँस पड़ा तो साधु ने कहा कि वह जगत् का कल्याण करेगा। तभी से उनको लोग कल्याण अथवा कल्या कहकर पुकारने लगे। बड़ा होने पर कल्याण अपने पिता के साथ गाय-बकरी चराने जंगल में जाते और वहीं कदम के वृक्ष के नीचे आसन लगाकर सोचते थे—'प्रकृति क्या है? इसका विधान क्या है? इसका नियंता कौन है?' इसी आत्मानुभूति के साथ वह बालयोगी बन गए। उस समय गाँव के पास संत ब्रह्मनाथ रहते थे, जिनके पास जाकर कल्या सत्संग करते थे

गृहस्थाश्रम-धर्म का पालन करने पर दुर्बलनाथ की असहमति से क्षुब्ध माँ रूपा देवी ने प्राण त्याग देने की धमकी दी और अलवर की ही सजातीय कन्या (कहीं 15 वर्ष तो कहीं 18 वर्ष आयु का उल्लेख है) ने उनसे पाणिग्रहण न करने पर जान देने की बात कही तो दुर्बलनाथजी सचमुच में भावनाओं से दुर्बल पड़ गए और विव़ाह किया। उनको तीन पुत्र और तीन पुत्रियाँ भी हुईं, परंतु युगपुरुष को गृहस्थाश्रम का मोह संन्यासी बनने से रोक नहीं पाया। एक महात्मा ने उनका ध्यान लगवाया और 'केवल पुरुष' बना दिया। कल्याण यानी कल्या अब उत्तम गुरु की शरण में चले। अलवर में ही ग्राम श्यामदा में उन दिनों बहुत पहुँचे हुए एक महात्मा रहते थे—संत गरीबनाथ। उन्होंने गुरु-मंत्र दिया और दुर्बलों, असहायों अर्थात् सामान्य लोगों के नाथ यानी दुर्बलनाथ नाम रखा। घर से भिक्षा माँग लाने का आदेश पाकर दुर्बलनाथ अपने गाँव पहुँचे। वहाँ कदम के वृक्ष के नीचे विक्रमी संवत् 1948 की कार्तिक सुदी पूर्णिमा के दिन उनको पूर्णज्ञान प्राप्त हो गया। दुर्बलनाथ ने उसे 'ज्ञाना' नाम दिया और अनुयायियों ने उसे 'केवल्य ज्ञान' नाम से पुकारा।

गुरु गरीबनाथ ने उनको जनेऊ पहनाकर देशाटन और धर्म-ज्ञान प्रचार हेतु आदेश दिया। दुर्बलनाथजी गाँव में कुछ समय कुटी बनाकर रहे। तदुपरांत राजस्थान के जयपुर

स्थित अनेक स्थानों पर कुटी बनाकर निवास किए और अपने द्वारा स्वयं की मृत्यु के लिए घोषित तिथि को स्वर्गवासी हो गए। चैत सुदी पूर्णिमा विक्रमी संवत् 1989 को 67 वर्ष, 7 माह, 5 दिन की आयु में उन्होंने समाधि ली। अपनी समाधि के बारे में उन्होंने बांदीकुई में वाणियों की बगीची के सामने टीले पर शहतूत के पेड़ के नीचे बनाने को पहले ही कह दिया था। उस स्थान के सामने मंदिर था इसलिए अन्य लोग वहाँ तथाकथित अछूत संत की समाधि बनाने से खटिक समाज के लोगों को रोक रहे थे। ऐसा लगा कि भारी रक्तपात होगा। इसे रोकने एवं खटिक समाज के आक्रोशित लोगों को समझाने हेतु चौधरी गूजरमल को भेजा। किंतु वार्ता असफल होने पर ठाकुर संत कल्लूनाथ भेजे गए। उसी समय दुर्बलनाथजी की आँखें तीन बार खुलीं और बंद हुईं। यह दृश्य देखकर सभी डर गए और उनके बताए स्थान पर ही समाधि बनाई गई। खटिक जाति का हठ तो रह गया परंतु किसी ने थाने में यह रिपोर्ट लिखवा दी कि खटिक जाति के लोग किसी व्यापारी को मारकर उनका धन हड़प लिए हैं और उसको जमीन में गाड़कर वहाँ भजन-कीर्तन का ढोंग कर रहे हैं। तत्पश्चात् पुलिस आई और रिपोर्ट गलत पाने पर चली गई। आज वहाँ एक गुरुद्वारा बनाया जा चुका है, जहाँ प्रत्येक वर्ष कार्तिक सुदी पूर्णिमा को मेला लगता है।

दुर्बलनाथजी की शिष्य परंपरा में पुरुषों के साथ एक महिला का भी नाम आता है। संत रैदास ने भी मीराबाई को शिष्या बनाया था। संत शिरोमणि श्री श्री दुर्बलनाथजी महाराज के प्रथम शिष्य अधीननाथ थे। शीतलनाथ और राधाबाई के अतिरिक्त रामदास, गोपालनाथ (बिच्छूनाथ), गुलाबनाथ, पूर्णनाथ, शंकरनाथ, बालकनाथ इत्यादि लोग उनकी शिष्य परंपरा में अभी भी विद्यमान हैं और क्षेत्रीय आधार पर इस महान् खटिक संत का जन्मदिवस और पुण्यतिथि आयोजित करते हैं।

शिष्य पूर्णनाथ का जन्म गाँव जिंदौसी, जिला अलवर में 1932 ई. में हुआ। उनके पिता मामचंद्र चौहान और माँ रूढ़ी देवी खटिक वंश के होकर भी ईश्वर भक्त थे। पूर्णनाथ बचपन में पिता के साथ भेड़-बकरी चराते समय हनुमान मंदिर के पास बैठकर ध्यान लगाते थे। स्वप्न में गरीबनाथ और दुर्बलनाथ के दर्शन करते थे। 1944 ई. में रामप्यारी देवी से उनका विवाह हुआ। दो पुत्र हुए। 1963 ई. में महात्मा संतोखनाथ से गुरु-मंत्र लिया। 1967-68 ई. में जयपुर के थली स्थान पर और बाद में हरियाणा प्रदेश के जिला गुड़गाँव स्थित नूंह स्थान पर आश्रम बनाकर दुर्बलनाथजी की वाणियों का प्रचार करते रहे।

लगभग दो हजार से अधिक उपजाति एवं उपनामोंवाले खटिक जाति के लोग भारतवर्ष में यत्र-तत्र और सर्वत्र पाए जाते हैं, परंतु जिस प्रकार से चमार-जाति के लोग संत रैदासजी का जन्मोत्सव और पुण्यतिथियाँ मनाते हैं, उस तरह खटिक संत दुर्बलनाथजी की जयंती और पुण्यतिथि मनानी चाहिए।

संत दुर्बलनाथजी ने अनेक चमत्कार भी दिखलाए थे। एक बार एक नंबरदार ठाकुर भूर सिंह चंद ने दुर्बलनाथजी को एक सामान्य व्यक्ति समझकर इनसे बेगार लेनी चाही थी। दुर्बलनाथजी का पैर फावड़ा से कट गया। उसमें रक्त के स्थान पर दूध बहने लगा। नंबरदार ने उनके पैरों पर गिरकर क्षमा माँगी और फिर कभी उनसे बेगार नहीं ली।

विचगाँव से कुछ दूर लीलीटोंडा नामक पहाड़ी पर कल्लूदास नामक राजपूत साधु रहता था। दुर्बलनाथ एक दिन केशोराम किराड़ (खटिक) के साथ वहाँ गए और उनसे ज्ञान की बातें होने लगीं तो उस ठाकुर से दुर्बलनाथजी वाणी का अर्थ पूछ बैठे। ठाकुर ने उनको थप्पड़ मार दिया और कहा कि बहुत ज्ञानी बनता है तो इस सफेद चादर को भगवा रंग में रंग दे। धैर्य के साथ दुर्बलनाथ ने उसे मुसकराते हुए उत्तर दिया। दुर्बलनाथजी ने बिना रंग की सहायता से केवल वस्त्र को हाथ में मलते-मलते भगवा रंग का कर दिया।

इसी तरह उन्होंने अनेक समय में पानी पर पत्थर तैराकर दिखलाया। मरी हुई गाय और एक नवयुवक को जिंदा किया। बाँझ स्त्रियों को संतानें दीं। लोगों को श्रीकृष्ण का दर्शन कराया। ज्ञान और आत्मबल द्वारा मोक्ष-मार्ग की प्राप्ति हेतु उपदेश दिए। अनुभव एवं आत्मप्रकाश में उनकी 1396 वाणियाँ पठनीय, स्मरणीय और अनुकरणीय हैं। उनके उपदेशों का सार उनके इस संबोधन में मिल जाता है—'भवसागर से मुक्ति हेतु मानव को दयाधर्म, क्षमता, शील और संतों की सेवा भाव को धारण करना होगा।' उनके इन्हीं उपदेशों का प्रचार एवं प्रसार आज भी 'प्रचार समिति, आश्रम दुर्बलनाथ बांदीकुई' द्वारा किया जा रहा है।

## 2.8 खटिक जाति की जीवन-वृत्ति

हिंदू धर्म के प्रति अटूट आस्था रखनेवाले खटिक जाति के लोग वर्तमान समय में अन्य जातियों की भाँति विभिन्न प्रकार के व्यवसायी (जीवन-वृत्तियों) में संलग्न हो चुके हैं, फिर भी उनका राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य व्यवसाय मांस बेचना है। किंतु पूर्वी उत्तर प्रदेश में फल बेचना भी खटिक जाति के व्यवसाय के रूप में स्थापित है। आधुनिक ग्रामीण अंचल में खटिक जाति बागवानी और कृषि कार्य में संलग्न है। प्राचीन काल में वे केवल मांस बेचते थे। मध्यकाल में मुसलिम जनसंख्या की अधिकता और उनके द्वारा झटका-मांस का परित्याग इनके व्यवसाय के लिए अभिशाप बन गया। ऐसी स्थिति में विशेष रूप से पूर्वी उत्तर प्रदेश में खटिक जाति के लोग फल का व्यापार करने लगे। वर्तमान समय में सब्जी का व्यवसाय भी इनके हाथ में आया है।

जहाँ तक मांस व्यवसाय की बात है, इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि खटिक जाति द्वारा अपनाया गया मांस व्यवसाय प्राचीन काल से ही पैतृक व्यवसाय के

रूप में स्थापित है। खटिक जाति और उनके पूर्वजों द्वारा एकमात्र व्यवसाय के रूप में यह कार्य प्रारंभ किया था। सच तो यह है कि भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में वाणिज्य (व्यापार) प्रक्रिया का जन्म मांस-व्यापार से ही आरंभ हुआ था। आदि मानव का प्रथम आहार वनस्पतियों, वन्य उपज, फल-फूल के साथ मांस भी रहा था। जब वह समूहों में रहने लगा तो अपने साथ-साथ अन्य लोगों के लिए भी मांस आहरित करता था और आपस में मिल-बाँटकर खा लिया करता था। मांस से मांस की अदला-बदली (बार्टर सिस्टम) वाणिज्य की प्रथम कड़ी थी।

वैदिक काल में खटिक ब्राह्मण यज्ञ पशुओं की बलि का कार्य करता था और जब यज्ञ नहीं होते थे फिर भी मांसाहार की आवश्यकता होती थी, तो वह आखेट क्रिया से अथवा अपने पालतू पशुओं (भेड़, बकरा आदि) का वध करके इच्छुक लोगों को मांस उपलब्ध कराता था। कालांतर में प्राचीन खट्टिक का यह कार्य अंत में वर्तमान खटिक जाति का व्यवसाय भी बन गया। उत्तर वैदिक काल में यज्ञों में पशु-बलि को अप्रासंगिक कार्य माना गया एवं खट्टिक जाति के लोगों को ब्राह्मण-वर्ग से सामाजिक सुरक्षा के दायित्व वहन हेतु सुरक्षा के कार्यों में लगा दिया गया। इस प्रकार खट्टिक ब्राह्मण से ही क्षत्रिय वर्ण का उदय हुआ। खट्टिक क्षत्रिय के शौर्य-पराक्रम क्षत्रियों जैसे होते थे, इसलिए क्षत्रिय वर्ग में खटिक जाति का स्थानांतरण होता चला गया एवं खटिक जाति को प्रवेश मिल जाने का मार्ग खुला हुआ था। ऐसा इसलिए कि उस समय ब्राह्मणों ने जीव-हत्या से अपने को परे कर लिया था और इस कार्य के लिए क्षत्रिय को नियुक्त कर लिया था। यद्यपि ब्राह्मण पुरोहित उस समय भी राजघरानों में मांस पकवाते थे और उसे 'महाप्रसाद' के रूप में स्वयं खाते थे।

यवन शासक सिकंदर, मिलिंद, महमूद गजनबी, मुहम्मद गौरी, तैमूरलंग आदि से सीमा पर डटकर युद्ध करनेवाले खटिक जाति से विदेशी अरब के मुसलमान बहुत चिढ़ते थे परंतु राणा सांगा, राणा प्रताप जैसे क्षत्रिय राजवंशी राजागण उनका सम्मान करते और अपनी सेना में महत्त्वपूर्ण पद देते थे। खटिक क्षत्रिय की परिस्थिति में उसी समय से परिवर्तन हुआ। मध्यकाल की विडंबना यह थी कि विदेशी आक्रांताओं ने खटिक जाति को आतंकवादी, लुटेरा, विद्रोही, अपराधी और अभारतीय घोषित करते हुए इसलाम न स्वीकारने का दंड दिया और आदेश जारी किया कि जो भी क्षत्रिय यदि खटिक जाति के साथ समानता का व्यवहार रखेगा, उसका राज्य छीन लिया जाएगा और उसे कठोर दंड दिया जाएगा। यही कारण था कि खटिक जाति के लोग न तो अपना राज्य स्थापित कर सके और न ही हिंदू राजाओं की सेना में सेवा पा सके। उनको मुसलिम विरोधी हिंदू राजाओं की सेना में ही स्थान मिल पाया। इसलिए राणा सांगा और महाराणा प्रताप की सेना में उनकी संख्या अधिक पाई जाती है।

क्षत्रिय जाति वर्ग से उपेक्षित एवं बहिष्कृत होने के बाद भी खटिक जाति के लोगों ने अपना मांस विक्रय का काम बंद नहीं किया, बल्कि कुछ परिवर्तन के साथ उसे अनवरत जारी रखा। परिवर्तन उन्होंने यह किया कि मुसलमानों को मांस बेचना बंद कर दिया। उनकी दुकानें केवल हिंदुओं के लिए ही खुली थीं। अपनी दुकानों पर उन्होंने एक लेख-पट्टी लगा रखी थी जिस पर लिखा होता था—'खटिक झटका मीट की दुकान।' झटका शब्द से मुसलिम वर्ग ने स्वत: उनकी दुकानों से मांस लेना बंद कर दिया और हिंदू लोग शाकाहारी भोजन की ओर झुके। ऐसी स्थिति में केवल मांसाहारी हिंदुओं के लिए मांस का व्यापार चलाए रखना उनके लिए कठिन हो गया। उस अवस्था में उनका मांस व्यवसाय कुछ प्रभावित हुआ और उन्होंने मांस के साथ-साथ अलग से अन्यान्य व्यवसाय आरंभ किया। इस प्रकार से खटिक जाति में दो वर्ग हो गए—एक, मांस का व्यापारी और दूसरा, फल, सब्जी इत्यादि का व्यापारी। कालांतर में मांस का व्यापारी भी दो भागों में बँटा—एक, बकरा मांस का व्यापारी और दूसरा था सुअर मांस का व्यापारी।

वर्तमान खटिक जाति अपना पैतृक मांस व्यापार आज तक करती आई है। आज खटिक जाति पशु-बलि की धार्मिक क्रियाओं से विरत होने लगी है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार के साथ ही अब उनका झुकाव शाकाहार की ओर भी हुआ है। दूसरी ओर मांस व्यापार का कार्य भारी संख्या में मुसलिम कसाई करने लगे हैं। उनका मांस हिंदू-मुसलिम दोनों इसलिए क्रय करते हैं कि वे हलाल का मांस बेचते हैं, झटका का नहीं। मुसलिम केवल हलाल का मांस खाते हैं, परंतु हिंदू झटका तथा हलाल दोनों उपभोग कर लेता है। इस तरह बकरा मांस व्यापार खटिक जाति के हाथ से निकल सा चुका है, परंतु सुअर का मांस-व्यवसाय वे आज चलाते हैं। चूँकि सुअर मांस के क्रेता बहुत कम हैं इसलिए वह मांस व्यवसाय भी उन्नत और लाभदायक अवस्था में नहीं है। वे स्वयं भी अपने पालतू सुअरों को बेच देते हैं जिनकी आपूर्ति विदेशों में और सेनाओं में होती है।

खटिक जाति के लोग अपने घटते हुए मांस व्यापार की ओर से अब ध्यान हटाने लगे हैं। पशु-वध को पाप समझने लगे हैं और फलों के साथ-साथ शाक-सब्जियों की भी दुकानें लगाने लगे हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी मांस की दुकान देखकर यह गारंटी से नहीं कहा जा सकता है कि वह दुकान किसी खटिक समाज के व्यक्ति की होगी, परंतु किसी सुअर मांस की दुकान देखकर यह गारंटी के साथ कहा जा सकता है कि वह किसी खटिक जाति के सदस्य की ही दुकान होगी। परंतु फल और सब्जी की दुकान देखकर भी यह कहा जा सकता है कि वह किसी खटिक की ही दुकान होगी। फल-सब्जी की दुकान के बारे में अनुमान कदाचित् गलत भी इसलिए हो सकता है कि अब अन्य जाति (कुशवाहा, चमार, राजभर आदि) के लोग भी सब्जी एवं फल का व्यवसाय करने लगे हैं। दूसरी ओर खटिक जाति के लोग अब वस्त्रालय, स्टेशनरी,

जनरल स्टोर्स, जलपान-गृह आदि की दुकानें भी खोलने लगे हैं। इस प्रकार मांस व्यापार पर खटिक जाति का आधिपत्य एवं एकाधिकार समाप्त हो रहा है।

कुछ प्रांतों में खटिक जाति के लोग बागवानी एवं कृषि-कार्य में अत्यंत तल्लीनता के साथ जुड़े हुए हैं और अपने बृहद् कृषि-फार्मों के बलबूते समृद्धि के उच्च शिखर पर पहुँच गए हैं। इसे देखकर यह कहा जा सकता है कि खटिक जाति के लोग देश की अरबों की जनसंख्या को आहार-उपलब्ध कराने की राष्ट्रीय समस्या में भागीदारी निभाने में भी जुट चुके हैं और कृषि-व्यवसाय पर भी ध्यान देकर कृषि-प्रधान हिंदुस्थान की कृषि-परंपरा को आगे बढ़ाने में संलग्न हैं। इस दृष्टि से उनके एवं अन्य सभी भारतीय कृषकों के लिए भारतीय कृषि-परंपरा पर विचाराभिव्यक्ति आवश्यक है।

आर्थिक आधार पर मानव-विकास-क्रम की ओर चार अवस्थाएँ बतलाई गई हैं, उनमें शिकारयुगीन अवस्था के बाद पशुपालनयुगीन अवस्था, कृषियुगीन अवस्था और औद्योगिकयुगीन अवस्थाएँ मान्य हैं। बर्बरावस्था के बाद क्रमशः पशुचारण-युग और हल युग था। हल का आविष्कार होने के पूर्व धरती हाथ से ही बने किसी औजार के द्वारा खोदकर तैयार की जाती थी। हल का प्रयोग होने पर अधिक क्षेत्र कम समय में जुताई किए जाने और बोए जाने लगे। इस कार्य में मनुष्य के यायावरी जीवन को बस्तियों में रहने हेतु प्रेरित किया। वैदिक काल में कृषि-कार्य समुन्नत अवस्था को प्राप्त था। जुताई, बोआई, सिंचाई, कटाई आदि से संबंधित अनेक संदर्भ हमें देखने को मिलते हैं।[1] कृषि-सहयोगी पशुओं को पाला जाता था।[2] मांसाहार के लिए भी लोग पशु पालते थे।[3] कृषि-योग्य पशु (बैल) उत्पन्न करनेवाली तथा अमृततुल्य दुग्ध देनेवाली गायों का अत्यधिक महत्त्व था।

खटिक जाति के व्यवसायपरक होने के साथ ही यह कहना कदाचित अनुचित न होगा कि ग्रामीण हिंदू खटिक जाति का जीवन कृषिपरक था। वे मांस और फल का व्यापार अधिक करते थे और यहाँ तक कि उक्त दोनों ही व्यापार-प्रबंधन पर उनका एकाधिकार भी था, किंतु इनके उत्पादन वे गाँवों से ही करते थे—वध योग्य बकरा, भेड़ आदि गाँवों में पालते थे और उनके लिए आहार की व्यवस्था भी गाँवों में ही संभव थीं। फल-उत्पादन कार्य भी गाँवों में ही बाग-बगीचों की कृषिपरक व्यवस्था के अंतर्गत किया जाता था। खाने के लिए वे लोग अन्न का उत्पादन भी कृषि-कार्य द्वारा ही करते थे। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि व्यापार कार्य में संलग्न रहने के बाद भी खटिक

---

1. यजुर्वेद, अध्याय 23/31-38, ऋग्वेद 10/9/102, 4/57 और यजुर्वेद, पृष्ठ-अ. 12, 68-70
2. ऋग्वेद 10/19/10
3. सिंह, परमानंद : बौद्ध साहित्य में भारतीय समाज, पृष्ठ-134

जाति के लोग कृषि परंपरा का निर्वाह करते थे। हिंदुस्थान में एकमात्र खटिक जाति ही ऐसी जाति थी जो नगरों में व्यापारी यानी मांस व्यवसायी एवं ग्रामीण अंचल में एक कृषक की भूमिका में थी।

हिंदू कृषि-परंपरा संसार के अन्य सभी देशों से पूर्णरूपेण विकसित थी। अन्न का उत्पादन इतना अधिक होता था कि कदाचित् दुर्भिक्ष (अकाल) के समय में यह देश अन्य देशों को रोटी-दाल सहयोग अथवा उपहार में दे सकता था। अन्न, फल, दूध-घी, मांस-मछली इत्यादि सभी दृष्टि से संपन्न होने के कारण ही यहाँ के लोग विदेशों में व्यापार करने जाते, महीनों-वर्षों विदेशों में रहकर व्यापार करते, घर की चिंता से मुक्त रहते और विदेशों से सोना-चाँदी बैलगाड़ियों, नावों, जहाजों में लादकर हिंदुस्थान वापस आते थे।

कृषि-व्यापार, दोनों से तदयुगीन खटिक जाति के लोग भी संपन्न थे। इसका सशक्त साक्ष्य यही है कि वर्तमान समय में खटिक जाति के पास यदि मांस और फल का उन्नत एवं लाभप्रद व्यापार है तो अनेक लोगों के पास भूमि की बड़ी-बड़ी जोतें भी हैं। इनकी इसी कृषि-संपदा ने इनको कई प्रदेशों में अनुसूचित जाति का लाभ पाने से रोक रखा है। इनकी एक भ्रामक सोच यह है कि अनुसूचित जाति में जाने से ये निम्न स्तर के माने जाएँगे।

प्राचीन काल में हिंदुस्थान की कृषि-परंपरा में कुल जनसंख्या का लगभग 80 प्रतिशत भाग लगा हुआ था। देश में लोगों की जीविका का मुख्य साधन कृषि ही थी। उसके समुन्नत होने का मुख्य कारण यह था कि उसमें लागत-व्यय कम और लाभ अधिक था। लागत-व्यय और लाभ का सह-संबंध 5:95 का था, अर्थात् लागत यदि पाँच रुपए की थी तो लाभ 95 रुपयों का था, इसीलिए लोग कृषि कार्य अधिक पसंद करते थे और देश में बेरोजगारी की समस्या नहीं थी। खेती हल-बैलों से होती थी इसलिए पशु-पालन और कुटीर उद्योग-धंधों को विकसित होना ही था। पशुओं के गोबर-मूत्र एवं घास-फूस से तैयार कंपोस्ट खाद का प्रयोग बिना किसी लागत के किया जाता था। रहट-पुरवों से पानी निकालकर सिंचाई संभव थीं खेत की जुताई, बोआई, निराई-गुड़ाई, कटाई-दवाई आदि में घर-परिवार के सदस्य कम पड़ जाते थे। अगली फसल के लिए बीज भी स्वयं तैयार किए जाते थे—अर्थात् खाने-पीने के बाद जो बच जाता था उसकी ही बुआई कर देते थे। यह सच है कि उत्पादन की मात्रा कम थी किंतु लागत-व्यय भी नाममात्र का होता था। अतएव किसी भी स्तर का भारतीय परिवार भूखों नहीं मरता था।

आज के वैश्विक बाजारवाद की कृषि-परंपरा में उत्पादन पर्याप्त बढ़ा है और उसी अनुपात में लागत-व्यय में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। जुताई, बुआई, कटाई, मड़ाई

आदि मशीनों से होने लगा है, इसलिए ग्रामीण जनसंख्या के लघु कुटीर उद्योग भी बंद हो गए हैं। कृषक परिवार के अधिकांश लोग बेरोजगार हो गए हैं। कृषि-उपजों का मूल्य कृषि उत्पादन के संसाधनों के लागत-व्यय की तुलना में बहुत कम मिल पाता है। जैसे—ट्रैक्टर और डीजल-मोबिल का व्यय, सिंचाई में लगे पंपिंग सेट में मोबिल-डीजल का व्यय, विद्युत व्यय, बाजारों से क्रीत बीज, खाद इत्यादि का व्यय। संपूर्ण व्यय जोड़े जाने पर लागत-व्यय और लाभ का सह-संबंध 95:5 का आने लगा है। यह सोचने की बात है कि 5 प्रतिशत लाभ द्वारा किसान एक परिवार के अपने कितने परिवार के सदस्यों को रोटी दे सकेगा?

वैश्वीकरण से प्रभावित भारतीय कृषि-व्यवस्था दम तोड़ रही है। खाद और बीज की तो यह स्थिति है कि जिस कंपनी का बीज खेत में डाला जाता है उसी कंपनी का खाद भी डालना आवश्यक होता है। दोनों यदि भिन्न कंपनी के हुए तो उत्पादन शून्य होना सुनिश्चित है। दूसरी बात यह कि एक बार जो बीज खेत में बो दिया जाता है और उसका उत्पादन ले लिया जाता है, पुनः उसी को बीज के रूप में प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है, क्योंकि वैश्विक बीज को निरवंश बीज कहा जाता है। अतएव प्रत्येक बार नया बीज और तद्नुसार ही खाद देनी होती है। यह भी विचारणीय है कि जिस खेत में एक बार इस तरह से खेती कर ली जाती है, पुनः दूसरी बार भारतीय परंपरा से उसमें खेती नहीं की जा सकती और यदि कोई करता भी है तो उत्पादन अत्यंत अल्प होता है। यह एक प्रकार से भारतीय कृषि-भूमि को बंजर बनाने की साजिश है। खटिक जाति के जो भी लोग कृषि व्यवसाय से जुड़े हुए हैं उनके लिए यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि उनके लिए हिंदुस्थान की पूर्व कृषि-परंपरा ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है। कृषि-कार्य वाले खटिक जाति के लोग इस विषय में अब विशेष रूप से गंभीरतापूर्वक विचार भी करने लगे हैं और यही कारण है कि वे रासायनिक खादों की अपेक्षा जैविक खादों का प्रयोग करने लगे हैं, ताकि अन्नोत्पादन तो बढ़े ही, साथ ही अन्न-प्रदूषण को भी रोका जाए, अन्यथा वैश्विक कृषि से उत्पन्न अन्न खाते लोग निरंतर अस्वस्थ रहेंगे और अल्पायु में ही दम तोड़ देंगे।

अतः यह कहा जा सकता है कि हिंदुस्थान में पाई जानेवाली कृषि-परंपरा में अनेक खटिक ऋषियों का भी नाम पाया जाता है जिन्होंने हिंदू जीवन-पद्धति के लिए अनेक नियमों का प्रतिपादन किया और उन नियमों को आध्यात्मिक एवं भौतिक आधारों पर परीक्षित भी किया। प्राचीन हिंदू धर्म में इस प्रकार के अनेक धर्म एवं ज्ञान के पुरोधा पाए जाते हैं।

एक अध्ययन में हमने यह भी पाया कि अनेक आधारों पर खटिक जाति का हिंदू धर्म में प्रमुख स्थान रहा है। आज भी इस जाति के लोग सदैव धार्मिक पाए जाते हैं और

हिंदू धर्म से संबंधित किसी प्रकार के आयोजनों में बहुत बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं। ऐसा इस जाति में वंश-परंपरा से होता आया है। संभवतः इसीलिए क्योंकि इस जाति में प्राचीनकाल और उसके बाद के सभी समयों में ज्ञानी एवं धर्म पुराधाओं की उपस्थिति पाई जाती है।

खटिक जाति में अनेक संत, महात्मा और धर्मात्मा हुए हैं। महर्षि व्याघ्र और उनके द्वारा प्रणीत 'व्याघ्र गीता' को हिंदू धर्म की सुदृढ़ पीठिका होने के कारण ही महाभारत जैसे महाग्रंथ में स्थान दिया गया जो खटिक जाति के लिए सम्मान की बात है। इसके पूर्व कठोपनिषद् की रचना में इस जाति की भागीदारी और भी गौरवान्वित करती है। मांस विक्रेता सदन खटिक का शालिग्राम प्रेम जगजाहिर है। संत शिरोमणि दुर्बलनाथजी को खटिक जाति का महान् संत होने की परिस्थिति प्राप्त धर्म और कर्म, दोनों में अग्रणी यह खटिक जाति अपने मांस व्यवसाय, फल व्यवसाय और कृषि व्यवसाय के साथ आज समुन्नत अवस्था में है, फिर भी अधिकांश लोगों के पास शिक्षा का लाभ पूरी तरह से न मिलने के कारण तथा अर्थाभाव के चलते विकास की दौड़ में पीछे रह जाने की विवशता है, जिसके लिए न केवल शासन और सरकार को अपितु हजारों हजार की संख्या में बँटे हुए खटिक समुदाय को भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

□

*अध्याय-3*

# विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से खटिक वंश का ऐतिहासिक युद्ध

युद्ध मनुष्य के यायावर जीवन से लेकर आज तक की नियति है। युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार करती है ऐहिक कामनाएँ—धर्म, अर्थ और काम। हिंदू जीवन-पद्धति में पुरुषार्थ चतुष्टय के सापेक्ष ये तीनों ही युद्ध के कारण हैं। मोक्ष युद्ध से विरति का दूसरा नाम है, परंतु इसके लिए ऐहिक कामनाओं से युद्ध करना पड़ता है। हिंदू संस्कृति में ऐहिक कामनाओं की सक्रियता-शिथिलता जब भौतिक से आध्यात्मिक क्षेत्र में पहुँचती है तब मोक्ष की प्राप्ति होती है। मोक्ष शांति अथवा विश्वशांति की दिशा है, यही कारण है कि विश्वशांति चाहनेवाले युद्ध न होने देने का प्रयास करते हैं।

हिंदुस्थान में यायावर जीवन किसी वस्तु-विशेष के लिए अपनी यूथाचारिता तक ही सीमित रहा। इसे जन्म दिया विदेशी अरब के आक्रांताओं ने पूर्व काल में और बाद के समय में भी। वे हिंदुस्थान की शस्यश्यामला धरती पर ललचाए थे। उनको रोका गया तो वे क्रुद्ध हुए और युद्ध कर बैठे। इसका अभिप्राय है कि इस देश ने कभी युद्ध आरंभ नहीं किया, दूसरों पर आक्रमण नहीं किया और सदैव प्रत्युत्तर में युद्ध का मुँहतोड़ जवाब दिया, क्योंकि हिंदुस्थान के हिंदू युद्ध नहीं बल्कि शांति के पुजारी थे। अतएव उन्होंने आक्रामक नहीं बल्कि रक्षात्मक युद्ध किया। संभवत: यही हिंदुस्थान की भूल थी। हिंदुस्थान ने आक्रामकों को लगातर क्षमा किया।

कटु अनुभवों के बाद आज भी हिंदुस्थान के अंतरराष्ट्रीय संबंधों के संदर्भ एवं प्रवृत्ति में कोई परिवर्तन नहीं आया है। परिणामस्वरूप आतंकवाद, अतिक्रमणवाद और अशांतिवाद को देश झेल रहा है और अभी तक हम उसकी परिभाषा जानने में लगे हैं।

आज देश आक्रमण के प्रत्यक्ष कारणों की अनदेखी कर रहा है ताकि जितना टाला जा सके, युद्ध को उतना ही टाला जाए। ऐसी स्थिति शासन और सत्ता-प्रबंधन की मनोदशा एवं कार्यशैली की उपेक्षा से उत्पन्न होती है, पूर्व में जब तक भारतवर्ष में केंद्रीय शासन व्यवस्था विद्यमान थी और संपूर्ण हिंदू शक्ति एकजुट थीं, किसी की हिम्मत न थी कि देश पर आँख उठाकर देख सकता।

प्राचीन काल में अरबी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा हिंदुस्थान 'सोने की चिड़िया' कहलाता एवं अपनी समृद्धि से विश्व समुदाय की सेवा करता था। हिंदुस्थान की भव्यता एवं समृद्धि से आकर्षित होकर सिकंदर, मिनिंडर (हिंदू नामकरण मिलिंद), अरबी खलीफाओं के सैनिक (जो कभी हिंदुस्थान के पश्चिमी तटों पर किसी भी हिंदू की एक रोटी के लिए अपने बीबी एवं बच्चों सहित कटोरा लिए पंक्तिबद्ध जमीन पर बैठे रहते थे), महमूद गजनबी, मुहम्मद गौरी, तुर्क सुल्तान, मंगोलियाई मुगल, पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी, अंग्रेज आदि सभी आए और सभी ने हिंदुस्थान को भरपूर लूटा। लूट का माल ले जाने हेतु वाहन कम पड़ गए तो शेष संपदा सैनिकों में बाँट दी जाती थी। इस लूट का कारण हिंदुओं की विकेंद्रित सैन्य-व्यवस्था था। आंतरिक कलह के कारण भी हिंदू कई बार हार गए थे। इन्हीं लोगों में खटिक वंश के योद्धा थे जिन्होंने बहादुरी के साथ ऐतिहासिक युद्ध लड़ा और विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के दाँत खट्टे कर दिए। इन्हीं सत्य तथ्यों को प्रस्तुत अध्याय में चिह्नित किया गया है।

## 3.1 'सोने की चिड़िया'—हिंदुस्थान की समृद्धि

हिंदुस्थान की पावन धरती पर विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के साथ खटिक वंश के ऐतिहासिक युद्ध अकारण नहीं हुए थे। आक्रांताओं द्वारा इस देश की विपुल संपदा एवं समृद्धि को लूटने और नष्ट करने से बचाने के लिए बहादुर जाति के योद्धाओं ने अनेक बार युद्ध किया था। उस समय यह देश अपने वैभव एवं ऐश्वर्य के लिए अरब के मुसलिम आक्रांता, लुटेरों एवं आततायियों द्वारा 'सोने की चिड़िया' कहलाता था। उनका चिड़िया कहने का तात्पर्य हिंदुस्थान की प्रशंसा नहीं अपितु शिकार का भाव था ताकि चिड़िया का शिकार सरलता से कर सकें। कृषि, पशु-पालन, उद्योग एवं व्यापार—इन सभी दृष्टियों से हमारा देश पूर्णरूपेण विकसित था। विदेशी यात्रियों की आत्मकथाओं में इसका उल्लेख मिलता है। 'सोने की चिड़िया' रूपी इस देश के दर्शन हेतु कोलंबस तथा वास्कोडिगामा जैसे अनेक दुस्साहसिक समुद्री यात्रियों ने बेचैन हो भारत की खोज में निकले। भारत की खोज में ही निकले कोलंबस ने अमेरिका को खोज लिया। भारत दर्शन का प्रतिफल आज अमेरिका है। यदि ऐसा नहीं होता तो अमेरिका भी आज का विकसित अमेरिका नहीं अपितु झाबुआ एवं बस्तर की तरह कहीं अविकसित तथा

पिछड़ा हुआ ही पड़ा होता।

प्राचीन काल से ही कृषि हिंदुस्थान का मुख्य संसाधन एवं पहचान थी। अधिकांश जनता कृषि पर ही निर्भर थीं, हल-बैलों से खेत जोते जाते थे।[1] नहरों से सिंचाई होती थी।[2] लोग वर्षा पर अधिक निर्भर रहते थे।[3] अनेक प्रकार के खाद्यान्न उत्पादित होते थे।[4] राजा का प्रयास सदैव उत्पादन वृद्धि के लिए होता था।[5] राष्ट्र की समृद्धि कृषि पर निर्भर होती थी।[6] इसीलिए कृषि गोरक्षा हेतु श्रीराम ने भरत को सलाह दी थी।[7] कृषि हेतु भूमि भी लोगों के पास पर्याप्त मात्रा में थीं। कृषि-योग्य भूमि लोग मंदिरों को दान दे दिया करते थे।[8]

हिंदुस्थान में दूध की नदियाँ बहती थीं, क्योंकि यहाँ का पशुपालन कार्य भी समुन्नत अवस्था में था।[9] बैल कृषि के कार्य में आता था। गाय दूध देती थी इसीलिए उसे माँ की तरह पूजा जाता था। रामायण में गोरक्षा हेतु सलाह दी गई है।[10] पशुपालन को प्रोत्साहित किया गया था और पशुओं के लिए चरागाह सुरक्षित भूमि किसी के लिए भी प्रतिबंधित नहीं थे। जो भी चारागाहों पर पशुओं को चरने से रोकता था उसे दंडित किया जाता था।[11]

उस समय लोग परंपरागत विधि से खेती करते थे।[12] अपनी उपज से जो बीज निर्मित किए जाते थे उनसे पुनः दूसरी और अच्छी उपज ली जा सकती थीं। जुताई, बुआई, सिंचाई, कटाई आदि किसी में भी अतिरिक्त पूँजी नहीं लगानी होती थी। खाद के लिए भी पैसे व्यय नहीं करने होते थे इसलिए जितनी पूँजी लगाई जाती थी, उसका लगभग 95 प्रतिशत भाग लाभ में प्राप्त होता था। यदि उपज कम थी तो लागत मूल्य शून्य प्रतिशत थी, इसलिए लागत-व्यय कम और लाभ सौ प्रतिशत था। जनसंख्या कम होने के कारण इस देश का अन्न अरब के भूख से मरते लोगों और इंगलैंड के लोगों को

---

1. ऋग्वेद 8/6/48, 8/78/7, अथर्ववेद 3/17/3, महाभारत 3/255/28, रामायण, अयोध्या 103
2. ऋग्वेद 3/45/3, 10/99/4
3. कालिदास : मेघदूत 16
4. रामायण अयोध्या 68, व्यवहार भाष्य 10/557-60
5. महाभारत 12/38/12
6. वही, शांति. 5/77/80
7. रामायण अयोध्या 103
8. इपिक इंडिया 1, पृष्ठ-154, 162
9. ऋग्वेद 4/15/6, 8/22/2
10. रामायण अयोध्या. 103
11. नौ.ध.सू. 12/19/20
12. श.प्रा. 1/6/3, 1/6/1/3

निःशुल्क बाँट दिया जाता था। इसी तरह 'दूधो नहाओ, पूतो फलो' की कहावत सिद्ध करती है कि इस देश में लोगों को दूध, घी, मक्खन आदि की कोई कमी नहीं थी। कृषि-कर एवं बलि (राजा हेतु उपहार) दिए जाते थे।[1] परंतु उसके लिए लोगों का शोषण नहीं होता था।

उद्योग-धंधों की दृष्टि से भी हिंदुस्थान पर्याप्त विकसित था। यहाँ का प्रत्येक क्षेत्र एवं राज्य अपनी विभिन्न वस्तुओं के निर्माण के लिए प्रसिद्ध था। काशी का सिल्क, ढाका का मलमल, कश्मीर का पशमीना (साल, कंबल) विश्व के लिए अद्‌भुत आश्चर्य थे। ढाका मलमल का एक थान ही अँगूठी में निकाल दिया गया था। यहाँ एक से बढ़कर एक शिल्पकार थे। बढ़ई (तक्षा), धातुकर्मी (कर्मार), आभूषण निर्माता (हिरण्यकार), कुम्हार (कुलाल) महत्त्व रखनेवाले शिल्पी थे। एक हिरण्यकार ने अवर्णनीय आभूषण बनाया था,[2] जिस पर रोम की साम्राज्ञी तक आशक्त हो गई थी। एक बुनकर ने ऐसा वस्त्र तैयार किया जो फूँक देने से उड़ जाता था।[3] उस समय के वस्त्र-निर्माण प्रविधि की प्रशंसा विदेशों में भी होती थी।[4] कर्मार अस्त्र-शस्त्र बनाते थे।[5] हिंदुस्थान में अद्‌भुत मूर्तिया भी बनती थीं। नालंदा में पूर्णवर्मा ने ताँबे की बुद्धिभूमि 80 फुट ऊँची बनवाई थी और 100 फुट ऊँचा मंदिर बनवाया था।[6] एक बढ़ई ने कोई भूल कर दी थी जिसके कारण उसे अपने राजा से दंड मिलने का भय था। उसने रात में ही एक काष्ठ-गरुड़ बनाया और उसमें यंत्र लगाया तथा उस पर अपने परिवार को लेकर रात में उड़ गया।[7] उन दिनों देश में सिंधु नदी से तथा भूमि से भी सोना पर्याप्त मात्रा में मिलता था[8] इसलिए उसके तार वस्त्रों में भी लगाए जाते थे।

वाणिज्य के क्षेत्र में हिंदुस्थान की प्रतिस्पर्द्धा न थी। विश्व के प्रत्येक देश यहाँ के विकसित व्यापार-स्वरूप के आगे नतमस्तक थे। यहाँ के व्यापारी अरबों के स्वामी थे। अनाथपिंडक ने बुद्ध को जो आम्रवन भेंट किया था उसकी भूमि पर सटा-सटाकर स्वर्ण मुद्राओं को भी जड़वा दिया था। यहाँ की गणिकाएँ तक करोड़पति होती थीं। आंतरिक

---

1. कृसकल्पतरु, राजधर्म पृष्ठ-88/-92 मनु. 7/13
2. जातक, 5, 282
3. रघुवंश, 16/43
4. बुद्धिस्ट लीजेंट्स, 30, 3, पृष्ठ-14
5. शद्धानुशासन, 3/2/32
6. वाटर्स 1, 171, 178 बील, 119
7. बुद्धिस्ट लीजेंट्स 28, 1 पृष्ठ-270 एवं 29, 2 पृष्ठ-350
8. ऋग्वेद, 10/75/8, 1/17/5,

व्यापार में उत्तरापथ और दक्षिणापथ जुड़े थे।[1] व्यापारी दूसरे देशों तक जाते थे।[2] विश्व की सभी दुर्लभ वस्तुएँ कान्यकुब्ज जनपद में मिल जाती थीं।[3] यहाँ के कौआ पक्षी को 500 और मोर को 1000 में बेचा जाता था।[4] व्यापारी राजा द्वारा सम्मानित थे।[5] इस देश से केवल रोम के साथ प्रतिवर्ष साढ़े पाँच करोड़ तक का व्यापार था।[6] यहाँ की विलासितावर्द्धक सौंदर्य प्रसाधन की वस्तुएँ इतनी उत्तम थी कि जिसका उपयोग करके रोम की स्त्रियाँ दिन भर भोग-विलास में लिप्त रहती थीं, जिसके कारण उन पर प्रतिबंध लगाया गया था। उद्योग-व्यापार में खटिक जातियों के लोग भी भाग लेते थे परंतु वे मांस, फल, सब्जी आदि का व्यापार स्थानीय स्तर पर ही करते थे। अष्टाध्यायी में उल्लिखित है कि काठिनिक व्यापारी बाँस, बबई (बल्बज), बाघ (बघ) का भी व्यापार करते थे।

## 3.2 मिलिंद को पढ़ाया अहिंसा का पाठ और सिकंदर के स्वप्न को किया भंग

हिंदू राष्ट्र के सुदृढ़ दुर्ग को भारी क्षति दुर्भाग्यवश बौद्धकाल में अपनों द्वारा ही पहुँचाई गई थी। बौद्धों ने धर्म-रक्षा को इतना महत्त्व दिया कि देश-रक्षा की बात ही उनके मन में गौण हो गई। अहिंसा की त्रुटिपूर्ण सोच के ही कारण उन लोगों ने विदेशी आक्रमणों के समय भी ब्राह्मण और क्षत्रियों का सहयोग विदेशियों से लड़ने में नहीं किया। परिणामस्वरूप वे स्वयं भी मारे गए और देश तो आक्रांत हुआ ही।[7]

बुद्ध के परिनिर्वाण के लगभग 500 वर्षों बाद (प्रथम शताब्दी ईस्वी पूर्व या उसके आसपास) ग्रीक राजा मिनांदर (मिलिंद) ने साँकल में अपना राज्य स्थापित कर लिया था। उस युग के प्राय: 30 शासक हुए थे परंतु एकमात्र मिलिंद ने ही बौद्ध धर्म स्वीकार किया और अहिंसा-व्रत को अपनाया था।[8] उसका जन्म अलसंद (कांधार) के द्वीप (दोआब) में कलसि नामक ग्राम में हुआ था। उसकी राजधानी सागल (स्यालकोट) थी। उसके राज्य में काठियावाड़ भी शामिल था जहाँ कठ अथवा काठिक जाति के लोग रहते

---

1. कुवलयमाला, अप्रकाव्य, भूमिका, पृष्ठ-91
2. कथासरितसागर, पृष्ठ-85
3. वाटर्स, पृष्ठ-314
4. जातक 2, 365, महावग्ग 8/1/16
5. इंटरकोर्स विट्वीन इंडिया ऐंड वेस्टर्न वर्ल्ड, पृष्ठ-109-110
6. मिश्र, जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ-625
7. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-152
8. सिंह, परमानंद : बौद्ध साहित्य में भारतीय समाज (भूमिका, पृष्ठ-11-12)

थे।[1] मिलिंद बौद्ध बाद में बना, पहले वह केवल यूनानी ही था। युद्ध उसकी प्रवृत्ति और राज्य-विस्तार उसकी लिप्सा थीं। काठियावाड़ विजय के समय उसे कठ एवं कठिकों से घोर प्रतिरोध मिला था और उसके बहुत से सैनिक मारे गए थे। कठ एवं कठिक जो तत्कालीन समय में ब्राह्मण वर्ण के योद्धाओं के रूप में चिह्नित थे इसलिए मिलिंद ब्राह्मणों से क्षुब्ध था और अपनी अंतरपीड़ा को शांत करने के लिए अपने राज्य में अधिक संख्या में निवास करनेवाले बौद्धों को अपने पक्ष में मिंलाने के लिए उसने नागसेन को बुलाया और बौद्ध धर्म ग्रहण किया। इस प्रकार अनावश्यक रूप से बौद्धों एवं ब्राह्मणों का लंबे काल तक मतभेद चलता था।

बौद्ध धर्म का प्रचार बहुत पहले से हो चुका था और उन लोगों के कारण ही विदेशी आक्रांताओं से सदैव ब्राह्मण-क्षत्रिय युद्धों में पराजित हुआ करते थे। बौद्ध अहिंसा के नाम पर अपनी गरदन पहले ही झुका देते थे। अधिक संख्या में बौद्धों के समर्पण पर हिंदू ब्राह्मणों का मनोबल स्वतः टूट जाता था, फिर भी वे युद्ध करते थे। बौद्ध चाहते थे कि हिंदुस्थान से ब्राह्मणों का अस्तित्व ही समाप्त हो जाए और उनका राज्य स्थापित हो जाए, इसलिए वे आक्रांताओं के साथ मिलकर गोपनीय बातें भी बतलाया करते थे।

राजा होने के कारण मिलिंद का यश इसलिए इतिहासकारों ने बढ़ाया कि उसने हिंदू धर्म के ही एक पंथ (बौद्ध पंथ) को अपनाया था जिसमें ईश्वर को नहीं माना गया था, मूर्ति-पूजा को आडंबर बतलाया गया था और आत्मा (स्वयं) की अवस्थिति को अस्वीकार करते हुए पुनर्जन्म को मान्य किया गया था। आक्रोश (अहिंसा), आत्मा और पुनर्जन्म हिंदू धर्म की ही व्युत्पत्ति है। सच यह है कि कड़ा प्रतिरोध करने के कारण मिलिंद कठ जातियों से त्रस्त था[2] इसलिए अपने पक्ष में बहुमत स्थापित करने हेतु उसने बौद्धों को दिखलाने के लिए बौद्ध धर्म के लिए समर्पित भाव से कार्य किया था। उसके इस प्रयास के मूल में जो भय था वह कठ तथा कठिक जातियों के विद्रोह का पाठ था। यदि ऐसा न करता तो उसकी स्थिति सिकंदर जैसी ही होती, जो उसके ही देश का निवासी था और विश्वविजय का स्वप्न लेकर हिंदुस्थान पर आक्रमण किया था।

मिलिंद प्रजाति का सिकंदर भी विश्वविजय हेतु कुछ देशों को जीतता हिंदुस्थान पर भी चढ़ आया था। उसने बैक्ट्रिया को जीतने के बाद 327 ई.पू. में हिंदुकुश को पार करके कोही दामन की घाटी में प्रवेश किया और अपने सेनानायक पर्डिकस को खैबर दर्रे से सिंधु नदी पर सीधे पहुँचने को कहा।

---

1. मिलिंदपूर्व योगकथा।
2. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, दलित हिंदू की अग्नि-परीक्षा पृष्ठ-152

जिस समय सिकंदर ने भारत पर आक्रमण किया, उस समय यहाँ कुछ तो क्षत्रिय वंश के राजाओं का राज्य था, परंतु अधिकांशतः गैर-क्षत्रियों के राजा शासक थे। ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार ही उन दिनों के कुल 23 गणराज्यों का नामोल्लेख मिलता है।[1] सिकंदर की पहली मुठभेड़ पुष्कलावती के राजा हस्ती से हुई, जिससे तक्षशिला के राजा आंभी की अनबन थी। आंभी के सहयोग से ही सिकंदर 30 दिनों तक के भयानक युद्ध के बाद किसी तरह राजा हस्ती पर विजय पा सका था। इसी तरह उसने पोरस को हराया और उसकी बहादुरी के आगे आंभी सहित खुद को भी शर्मिंदा किया।

रावी नदी को पार करने के बाद सिकंदर का मुकाबला खटिक जाति के योद्धाओं से हुआ। इनकी तत्कालीन पहचान 'कथ्यान जाति' के रूप में थीं। इनकी राजधानी साकल अथवा सकल, संकला थी। नदी पार करके वह तीन दिनों की यात्रा के बाद वहाँ पहुँचा था। नगर एक परकोटे के अंदर स्थित था। यहाँ कठ जाति के लोगों ने सिकंदर के दाँत खट्टे कर दिए थे। सिकंदर ने कूटनीति करके किसी तरह भी कुछ और हिंदू राज्यों का सहयोग पा लेने से उनकी सहायता से सिकंदर को विजयश्री प्राप्त हुई, किंतु उसका धैर्य एवं साहस उस युद्ध के बाद बिलकुल समाप्त हो गया था। सिकंदर स्वयं भी बुरी तरह से घायल हो गया था। कुछ समय विश्राम करने के बाद उसने अपने सैनिकों को आगे बढ़ने का आदेश दिया, परंतु कठ एवं कठिक योद्धाओं के भय के कारण सैनिकों ने भी उसके आदेश का पालन नहीं किया। सैन्य-इतिहास में इस प्रकार की यह पहली घटना रही है और इस घटना को जन्म देनेवाले कठिक अथवा खटिक जाति के लोग रहे हैं। सिकंदर से प्रचंड युद्ध के लिए तत्कालीन कठिक यानी खटिकों को भी भारी संख्या में कुर्बानी देनी पड़ी थीं परंतु इतिहास के पृष्ठों में वे अमर हो चुके हैं। आज देश खटिक जाति के लोगों पर गर्व करता है।

## 3.3 अरब-आक्रमण का दिया मुँहतोड़ जवाब

हिंदुस्थान पर लगभग दो हजार साल से भी अधिक समय से लगातार विदेशी आक्रमण होते रहे। प्रारंभकाल के आक्रमणों का उद्‍देश्य इस देश की समृद्धि को लूटना था, किंतु बाद के आक्रमणों में इस देश पर शासन करने की कुत्सित मानसिकता का पुट था। इन दोनों ही उद्‍देश्यों की पूर्ति में विदेशी आक्रांताओं की एक प्रकार से असफलता का रहस्य था कि देश में एक केंद्रीय सुदृढ़ शासन-व्यवस्था थी। दूसरी ओर उनकी सफलता का कारण था कि हिंदुस्थान छोटे-छोटे राज्यों में बँटा था और वे आपस में बैर-भाव रखते थे, इसलिए विदेशी आक्रमणों के समय तटस्थ रहते थे अथवा विदेशी आक्रांताओं

---

1. शास्त्री राजनाथ सोनकर, खटिक जाति की उत्पत्ति और विकास, पृष्ठ-143

से मिलकर उनका ही सहयोग कर देते थे। राज्यों के विखंडन की अवस्था 648 ई. में हर्ष के निधनोपरांत खुलकर आ गई, किसी भी हिंदू राज्य की सामरिक शक्ति कुछ बहादुर एवं साहसी जातियों के हाथों में आ गई, जो उस समय योद्धा प्रंवृत्ति की थी और जिनका वंश परंपरागत कार्य ही युद्ध करना था। कठ अथवा काठिक जातियों का नाम इस संदर्भ में लिया जा सकता है। यह वही जाति थी जिसने मिलिंद को अंततोगत्वा अहिंसा का व्रत लेने पर विवश किया और विश्वविजय के लिए घर से निकले सिकंदर को उसके देश लौट जाने का मार्ग दिखलाया। भारत की सीमा में ही उसे समाप्त किया। बौद्ध एवं ब्राह्मणों के मतभेद और बौद्ध राजाओं द्वारा किए गए विश्वासघात एवं वर्चस्व को लेकर उत्पन्न आपसी वैमनस्यता, यदि यह सब कारण न होता तो यह जाति अपना पहलेवाला शौर्य प्रदर्शित करके अरब के लुटेरों को हिंदुस्थान में पाँव रखने नहीं दिए होते। अरबी लुटेरों ने इसी प्रकार के दुर्भाग्यों का लाभ उठाया। इसलाम स्वीकारने के पूर्व तक हिंदुस्थान के पश्चिमी तटों पर हिंदुस्थान की रोटी[1] पाने के लिए अरब एवं खाड़ी के देशों के लोग दीनहीन बने हुए थे। परंतु सीरिया, फिलिस्तीन, मिस्र, अफ्रीका का उत्तरी भाग, स्पेन और फारस आदि देशों पर इसलामिक शासन स्थापित करते हुए नृशंस अरबी शैतानों ने जब इसलाम की सीमाएँ विस्के की खाड़ी से लेकर सिंध नदी और चीन की सीमाओं तक एवं अरब सागर तथा नील नदी के उत्तरी झरने तक फैला लिया[2] तो वे आस्तीन के साँप तुरंत इसलाम स्वीकार करके उनके साथ हो गए तथा हिंदुस्थान के एहसान को भूल गए।

पैगंबर मुहम्मद (570-644 ई.) और उनके उत्तराधिकारी अबूवक्र (632-634 ई.) की मृत्यु के बाद हजरत उमर (634-644 ई.) खलीफा बने। उसी समय 636 ई. में पहली बार अरबी फौजों ने समुद्री मार्ग से अपने सेनापति मुधिरात देवल के नेतृत्व में हिंदुस्थान के पश्चिमी तीन प्रमुख नगरों (बंबई के निकट थाना तथा वर्तमान पाकिस्तान स्थित भरौच एवं देवल) पर एक साथ आक्रमण कर दिया। मुधिरात देवल पहले देवल का हिंदू क्षत्रिय सैनिक था और लालच में इसलाम स्वीकार करके विदेशी आक्रांता एवं लुटेरों का साथ देते हुए उनके द्वारा आक्रमण का नेतृत्व किया था। युद्ध में कठयानी खटिक जाति के सैनिकों ने भारी संख्या में भाग लिया था। वे बहादुरी से लड़े और हिंदू सैनिकों का सहयोग करते हुए मुधिरात देवल को मातृभूमि के साथ धोखा देने की सजास्वरूप उसे भयंकर यातना देते हुए मार डाला।

---

1. अरबवासियों के लिए रोटी ऐश्वर्य की वस्तु थी—प्रो. अशोक श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत का उत्थान एवं पतन, पूर्वांचल प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ठ-2
2. हिट्टी, फिलिप के, : ए शाट हिस्ट्री ऑफ दी अरब्स, हिंदी अनुवाद-अरब का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ-9

खलीफा उमर के ही समय में सेनापति अब्दुल्ला के नेतृत्व में 643-644 ई. में अरबों ने स्थल मार्ग से किरमान, सिसमान मेकरान आदि को जीतने के बाद सिंध पर आक्रमण की इच्छा व्यक्त की, परंतु पूर्वकाल के अनुभवों से भयभीत खलीफा उमर ने अनुमति नहीं दी और अब्दुल्ला वापस चला गया।

खलीफा उस्मान (644-656) के समय सौदागरों एवं गुप्तचरों द्वारा हिंदुस्थान की परिस्थितियों का पता लगाने का कार्य किया गया। खलीफा अली (656-661 ई.) के समय में अरबी सेना सिंध विजय के लिए चली परंतु कठ एवं अन्य हिंदू सैनिकों ने उसे कैकान में ही पराजित करके वापस भेज दिया। तदुपरांत वर्षों तक और बार-बार अरबी फौजें मेकरान और कैकान के मार्ग से भारत में प्रवेश करने का प्रयत्न करती रही, किंतु 8वीं शताब्दी के प्रथम दशक तक लगभग 75 वर्षों तक उसे भारत में सुई के अग्रभाग के बराबर भी भूमि पर पाँव रखने का अवसर नहीं प्राप्त हुआ।

खलीफा वालिद प्रथम (705-715 ई.) के समय में इराक का प्रांतपति अलहज्जाज था। इस पद पर उसकी नियुक्ति खलीफा मलिक (685-705 ई.) के समय में ही सन् 695 ई. में हो चुकी थी। उसने नए खलीफा वालिद प्रथम से भारत पर आक्रमण हेतु अनुमति लेकर उबैदुल्ला के नेतृत्त्व में सिंध पर आक्रमण कराया। उबैदुल्ला मारा गया। पुनः दूसरे सेनापति बुंदेल को भेजा गया। यह भी लालची हिंदू राजा था और सिंधपति दाहिर से जलता था। परंतु देवल में उसे भी मार डाला गया। इतिहासकारों ने दो युद्धों में दो सेनापितयों के मारे जाने की प्रशंसा में अपनी लेखनी बंद रखकर न्याय नहीं किया है। वैसे इन दोनों निर्णायक युद्धों में कठों यानी वर्तमान खटिक एवं पार्श्विवों यानी वर्तमान पासी अथवा पासवान जाति की संख्या अधिक थी और आक्रांताओं को बुरी तरह रौंदने का साहस उन्हीं ने दिखलाया था।

अलहज्जाज ने तीसरी बार एक साधारण से बालक को सेनापति बनाकर भेजा, जिसकी आयु मात्र 17 साल की थी। हिंदू सैनिक अभी तक अपनी बराबरीवालों से युद्ध करते आए थे, इसलिए उस बालक को देखकर उसे मार देने से विरत रहे। इसका परिणाम गंभीर हुआ। वह बालक मुहम्मद बिन कासिम अपने साथ 50 हजार सैनिकों को लाया था और उसकी तुलना में दाहिर के पास बहुत कम सैनिक थे। दूसरी बात यह थी कि इस आक्रमण के समय वह देवल से 150 मील दूर अपनी राजधानी आलोर में पड़ा रहा। उसने सोचा कि जिस तरह से पिछले दो युद्धों में उसकी ही विजय हुई थी, उसी प्रकार से इस बार भी वही जीतेगा। उसका सोचना सही था, और देवल के लोग पूरी ताकत से आक्रांताओं का मुकाबला भी कर रहे थे किंतु उसी समय छल-कपट करके देवल मंदिर का ध्वज किसी देशद्रोही ने गिरवा दिया और देवलवासी अपनी पराजय को ईश्वर की इच्छा मान लिए। देवल के बाद अन्य राज्यों को जीतते हुए

मुहम्मद बिन कासिम दाहिर से युद्ध के लिए बढ़ा। युद्ध में अपनों ने भी साथ नहीं दिया और दाहिर मारा गया। उसकी पत्नी और पुत्रियाँ छीन ली गईं और दुःख इस बात का था कि देश के अन्य भागों के हिंदू राजा (उत्तर भारत के प्रतिहार तक) मूकदर्शक बने रहे। मुल्तान विजय के बाद मुहम्मद बिन कासिम को वापस बुलाकर उसके सम्मान की जगह उससे भयभीत होकर उसे कैद कर लिया गया और मेसेपोटामिया भेज दिया गया, जहाँ 715-716 ई. में उसकी मृत्यु हो गई।

देवल, मुल्तान, सिंध आदि नगरों पर अरबों का शासन चलने लगा। हिंदुओं के साथ उत्पीड़न की काररवाहियाँ की जाने लगीं। तदुपरांत एक नई तुर्क शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। अब्बासी खलीफाओं का अंत हुआ। तुर्क इस्माइल ने अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया। उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र अहमद और अहमद के बाद अल्पतिगीन तथा उसका पुत्र इब्राहीम शासन किए। पिरस्तगीन के स्थान पर अल्पतिगीन का दामाद सुबुक्तिगीन 20 अप्रैल, 970 को गजनी का शासक हुआ। हिंदू राजा जयपाल से उसका युद्ध हुआ। जयपाल पराजित हुए और संधि को विवश हुए। 999 ई. तक सुबुक्तिगीन गजनी का शासक रहा। भारत में भी उसका कुछ क्षेत्रों पर अधिकार रहा। परंतु देश में विदेशी आक्रांताओं के स्थायी शासन की नींव तब तक नहीं पड़ सकी थी। सुबुक्तिगीन के बाद उसका पुत्र मदमूद गजनबी गजनी का शासक हुआ, जिसने लूट के अभिप्राय से हिंदुस्थान पर अनेक आक्रमण किए।

जहाँ तक अरब आक्रमणकारियों की बात है, उन पर हिंदू सेनाएँ सदैव भारी पड़ती रही, और हिंदू जो युद्ध हार गए उसके कारण बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण थे। एक क्षेत्र पर आक्रमण होने पर किसी हिंदू राजा की आँख भले नहीं खुलती थी, परंतु कठ जाति के सैनिक हिंदू राष्ट्र की रक्षा के लिए सदैव आगे चल देते थे और आक्रांताओं को मुँहतोड़ उत्तर दिया करते थे।

## 3.4 महमूद गजनबी के साथ लगातार युद्ध

महमूद गजनबी ने खटिक वंश के ऐतिहासिक युद्धों की गौरवशाली गाथाओं को अनेक लोगों से सुन रखा था। उसे पता था कि इस जाति के बहादुर सिपाहियों ने विश्वविजय का स्वप्न लेकर भारत के सिंध में आ पहुँचे सिकंदर के सैनिकों को इतनी बुरी तरह से परास्त किया था कि वे सिकंदर के लाख लालच देने पर भी सिंध के पार के राज्यों (जिनमें खटिक वंश का कठोर राज्य भी शामिल था) पर पुनः आक्रमण का साहस नहीं कर सके और सिकंदर को भाग चलने को विवश कर दिया।

महमूद गजनबी ने यह भी सुन रखा था कि हिंदू सेनाओं में जब तक कठ (खटिक) और पार्श्वी (पासी) जाति के सैनिक भारी संख्या में रहेंगे तब तक हिंदुस्थान की धरती

का सूई के अग्रभाग तक का क्षेत्र जीत पाना असंभव है। महान् विजेता मिलिंद को शस्त्र रखकर अंततोगत्वा 'अहिंसा परमोधर्मः' कहकर हिंदू धर्म के एक पंथ यानी बौद्ध पंथ का अनुमोदन करना पड़ा था।

महमूद गजनबी ने यह भी देखा था कि अरबों के प्राथमिक आक्रमणों को सदियों तक के लिए कुचलकर रख देने का कार्य कठोर राज्य के कठ, कठिक अथवा खटिक वंश में उत्पन्न सैनिकों ने जिस प्रकार से कर दिखलाया था वह कोई साधारण बात नहीं थी। उन्होंने अरबों के न जाने कितने ही महत्त्वपूर्ण सैनिकों और सेनापतियों को मौत के घाट उतार दिया था।

इन्हीं कारणों से उसने भारत की समृद्धि और संपदा को लूटने की योजना को अत्यंत सावधानीपूर्वक बनाया था। उसका पूरा प्रयास यही था कि रास्ते में और किसी लूट-पाट के समय उसके सैनिकों का सामना खटिकवंशीय योद्धा सैनिकों से न हो सके। इसके लिए उसने गुप्तचर एवं व्यापारी लोगों को भी गुप्त रूप से लगा रखा था। इतिहासकारों ने पाश्चात्य पद्धति पर महमूद के कुकृत्यों का जो जीवंत वर्णन किया है, उसका संक्षेप इस प्रकार है—

सुबुक्तिगीन के पुत्र सुल्तान महमूद ने भी गजनी का शासक बनने के बाद भारत पर आक्रमण किया और यहाँ की अपार संपदा को लूटा। उसने भी सर्वप्रथम जयपाल पर ही आक्रमण किया। 27 नवंबर, 1001 ई. को उसने जयपाल को बंदी बना लिया। लगभग पाँच लाख स्त्री-पुरुष भी बंदी एवं गुलाम बना लिए गए। अपार संपदा लूटी गई। जयपाल से हरजाना वसूला गया। अपमान सहन न करने के कारण जयपाल ने आत्मदाह कर लिया। उसके स्थान पर उसका पुत्र आनंदपाल राजा बना। सुल्तान महमूद ने दूसरी ओर बीजाराय के भटिंडा एवं सूर्यमंदिर को नष्ट किया और अपार संपदा प्राप्त की। उसने पुनः मुल्तान, नगरकोट, थानेश्वर, नंदना आदि को जीता एवं लूटा। कश्मीर पर असफल आक्रमण करने के बाद उसने दोआब तथा मध्य भारत पर भी आक्रमण किया। उसने कालिंजर पर आक्रमण किया तथा सोमनाथ को लूटा।

सुल्तान महमूद के बाद उसका पुत्र मुहम्मद गद्दी पर बैठा परंतु उसे अपदस्थ करके महमूद का भाई मसूद प्रथम गजनी का शासक बना। उसने नियाल्तगीन के नेतृत्व में बनारस पर आक्रमण करके इस नगर को लूटा। पंजाब पर अधिकार किया और सोनीपत को भी लूटा। दुबारा भारत की ओर उन्मुख होने पर उसे अपनी जान गँवानी पड़ी। उसके प्रतिनिधि शासक हिंदू राजा परमार भोज और कलचुरी कर्ण से इतने भयभीत रहे कि पंजाब से बाहर किसी अन्य प्रांतों पर आक्रमण करने का साहस न कर सके। गजनबी वंश के अंतिम शासक खुसरू मलिक के समय तक भारत पर तुर्कों द्वारा छिटपुट आक्रमण एवं लूटपाट होते रहे। तदुपरांत मुहम्मद गौरी ने गजनी की गद्दी पर अधिकार कर लिया।

जयपाल को जीतने के बाद महमूद ने लगभग 5 लाख स्त्री-पुरुषों को बंदी बनाया था, परंतु उनमें हिंदू लोगों की संख्या अत्यल्प थी। वे सारे बंदी बौद्ध थे जिन्होंने रणनीतिवश स्वत: आत्मसमर्पण कर दिया था और खूँखार आक्रांता महमूद का उत्साह बढ़ाया था। जयपाल हिंदू था और ब्राह्मणों को अधिक सम्मान देता था, इसलिए उसके राज्य में जीवन जीनेवाले बौद्ध-अनुयायी उसकी पराजय चाहते थे। इसका पश्चात्ताप उनको उस समय हुआ जब उनके स्त्री-बच्चे गुलाम बनाकर गजनी भेजे जाने लगे और उनको उनके परिवार के ही सामने मौत के घाट उतारा जाने लगा।

महमूद गजनबी ने बारी-बारी से जिन-जिन नगरों को लूटा और अपार संपदा लूटपाट कर ले गया, उसका मुख्य कारण हिंदू राजाओं के आपसी वैमनस्यतापूर्ण दुर्भावनाएँ ही थे। मुट्ठी भर विदेशी लुटेरों के लिए तो अकेला कठोर राज्य ही पर्याप्त था, परंतु लगभग सभी लुटेरों ने सर्वप्रथम कठोर राज्य पर कभी भी आक्रमण करने का साहस नहीं किया। पहले वे समीपस्थ राज्यों को अपने पक्ष में कर लेते तो उनके सहयोग से अन्य नगरों को जीतते और लूटते थे। पड़ोसी हिंदू राज्य जो पराजित राज्यों से वैरभाव रखते थे, लूट का अधिकांश भाग लुटेरों को देकर कुछ अंश स्वयं भी प्राप्त करते थे। गुप्तचरों और व्यापारियों के रूप में विदेशी आक्रांताओं के सहयोगी पहले से ही भेजे जाते थे और वे समय पड़ने पर हिंदू राज्यों की जानकारी तो देते ही थे, दुर्ग आदि के द्वार भी खोल देते थे।

खटिक जाति की संख्या कम थी और यह संभव नहीं था कि अकेले यह जाति पूरे पश्चिम और उत्तर की सीमा पर भारी संख्या में चौकन्ना रहकर देश की आंतरिक सुरक्षा के कार्य को देख सके। पास-पास में ही दूसरे राज्यों की सीमा थी जो ऐसा किया जाना पसंद भी नहीं करते थे। यही कारण था कि जिस युद्ध में कठ जाति ने भाग लिया उसमें विदेशी आक्रांताओं को भारी क्षति उठानी पड़ी और जिसमें किन्हीं कारणों से नहीं पहुँच पाए उनमें उनको लूट-पाट करने में कोई व्यवधान नहीं आया। यदि खटिक जाति के राष्ट्र-रक्षा और देश-प्रेम का सौवाँ हिस्सा भी हिंदू राजाओं में होता तो वे विदेशी मुसलिम आक्रांता को मार भगाने के लिए सक्षम होते।

बौद्धों के देश-द्रोह और हिंदू राजाओं की आपसी फूट का ही परिणाम था कि महमूद ने जयपाल का राज्य लूटने के साथ ही उससे 250,000 दीनार और 50 हाथी भी हरजाने में लिया। इसी धन से उसने लालची बौद्धों, शत्रु राजाओं और अपने सैनिकों को खरीदा तथा अगली विजय के लिए साहस किया। लूटपाट का उसका मुख्य उद्देश्य यही था कि किसी तरह धन प्राप्त हो ताकि वह युद्ध और विजय सुनिश्चित कर सके। मुल्तान में उसे 20,000,000 दिरहम मिले थे। वहाँ सुखपाल के खजाने से 400,000 दिरहम अलग से पाया था। नगरकोट से 70,000,000 शाही दिरहम, 700,400 मन सोना

और चाँदी की ईंटें, 30 गज लंबा और 15 गज चौड़ा चाँदी का एक कमरा, सोने-चाँदी के खंभों पर टिकी लीनेन की छतरी, जिसकी लंबाई 40 गज और चौड़ाई 20 गज थी। एक बहुमूल्य सिंहासन भी उसके हाथ लगा। थानेश्वर से लूटपाट के अतिरिक्त दो लाख बौद्धों को भी इसलाम धर्म में परिवर्तित करके अपने साथ ले गया, ताकि उनको गुलाम बनाकर बेच सके। सिरसा में उसे 30 हाथी तथा 1,000,000 दिरहम मिला, वरन से भी 30 हाथी तथा 250,000 चाँदी के दीनारें लीं और मथुरा में भी अपार संपत्ति मिली। इसी तरह कन्नौज, दोआब, कालिंजर और सोमनाथ मंदिर से भी उसे लूट का पर्याप्त धन मिला। सोमनाथ मंदिर में एक सिकड़ी 200 मन सोने की थी और 14 गुंबज भी सोने के थे। कठिक प्रतिरोधी राज्यों में जाने का उसे साहस नहीं हुआ।

## 3.5 इसलामिक आक्रांता मुहम्मद गौरी एवं तत्कालीन खटिक वंश

परंपरागत इतिहास पढ़नेवालों को ऐसा अवश्य लगेगा कि विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के सापेक्ष खटिक जाति को अधिक महत्त्व दिया गया है, परंतु ऐसा नहीं है। लेखक का आशय मात्र यही है कि किसी भी विदेशी आक्रांताओं की सफलता का रहस्य यही है कि इस देश पर आक्रमण करने से पूर्व वे अपने अधिकाधिक सैनिकों को छद्म वेष में (व्यापारी बनाकर) भेज देते थे और उनके ही माध्यम से पड़ोसी राज्यों को लालच देकर मिला लेते थे और दुर्भाग्यवश पंथ विभाजन की भ्रमित मानसिकता के कारण हिंदू समाज से अलग-थलग रह रहे बौद्धों को भी खरीद लेते थे। युद्ध जीतने के बाद वे सबसे अधिक बौद्धों को ही ले गए थे और जो धन उनको लालच में फँसाने के लिए दिया वह धन उनको गुलाम के रूप में बेचकर वापस पा लिए थे। हिंदू सदैव शहीद हुआ अथवा किन्हीं कारणों से युद्ध में भाग नहीं लिया। विदेशी तुर्कों एवं मुसलमान आक्रांताओं ने अनेक फतह तो राजा के हाथी को मादक द्रव्य पिलाकर की। आनंदपाल का हाथी इसी कुप्रयास से युद्ध क्षेत्र में भाग गया था, क्योंकि वह पागल हो गया था।

महमूद गजनबी के बाद मुहम्मद गौरी ने भी वही नीति अपनाई और इस देश को अनेक बार लूटपाट का शिकार बनाया। उसका पहला आक्रमण 1175 ई. में मुल्तान पर हुआ। वहाँ शिया संप्रदाय के करामथियों का शासन था जो इसलाम-द्रोही माने जाते थे। करामथियों ने गौरी के आक्रमण के समय कठों से सहयोग माँगा, परंतु उन लोगों ने उसका सहयोग इसलिए नहीं किया कि वह भी विदेशी मुसलमान था और कठ जाति का स्वभाव से ही प्रत्येक विदेशी आक्रांताओं से बैर था। परिणामतः करामथियों की पराजय हुई, उनके हाथ से उच्च (ऊपरी सिंध में स्थित भाग) भी निकल गया और उसी मार्ग से नहरवाला जाने का रास्ता गौरी को मिल गया। उस समय नहरवाला में चालुक्य राजा मूलराज द्वितीय अवयस्क होने से अपनी माता नाइकी देवी के संरक्षकत्व में राज्य

कर रहा था। उसकी सेना में भारी मात्रा में प्रशिक्षित कठ सैनिक थे। 1178 ई. में मुहम्मद गौरी को किशदू के निकट गदरघाट पर कठिक (खटिक) प्रधान मूलराज द्वितीय की सेना ने इतना कहर ढाया कि स्वयं गौरी भी घायल हो गया। किसी तरह भागकर एवं कुछ दिनों तक छिपकर उसने अपनी जान बचाई। कठ सैनिकों ने उनका पीछा किया और अंत कर देना चाहा, परंतु चालुक्यों की मूर्खता ही कही जाएगी कि उन्होंने इसके लिए मना कर दिया और विजय-उत्सव मनाने में लग गए। इतिहासकार महसूस करते हैं कि गौरी को यदि राजस्थान की पहाड़ियों में घेरकर मार दिया गया होता तो हिंदुस्थान का राजनैतिक इतिहास आज कुछ और ही होता।[1] फिर भी गौरी सेना पर कठों का जो कठोर प्रहार हुआ था, उसको वे 20 वर्षों तक भूल नहीं सके थे।

गौरी ने 1179 ई. में गजनी के अधीन पेशावर को भी उससे छीन लिया और बाद में लाहौर, देवल, स्यालकोट, पंजाब आदि जीतकर पृथ्वीराज तृतीय के राज्य-सीमा तक पहुँच गया। पृथ्वीराज उत्तर भारत का महान् राजा था। उसकी सेना में सजातीय कठ जाति के लोग अधिक थे इसलिए उसने अनेक बार मुहम्मद गौरी को हराया, और पकड़े जाने पर कुल 20 बार क्षमा कर दिया।[2] पृथ्वीराज का वह अजेय सेनापति स्कंद खटिक जाति का था जिसने तुर्कों का भारी रक्तपात किया था।

तराइन के प्रथम युद्ध (1191 ई.) में पृथ्वीराज के सहायक कठ जाँबाज गोबिंदराय ने मुहम्मद गौरी पर प्राणघातक हमला किया। गौरी गिरने ही वाला था कि एक खल्जी मुसलिम ने उसे मैदान से सहारा देकर भगा ले गया। खटिक जाति के इस पराक्रम को स्वयं मुसलिम इतिहासकारों ने भी स्वीकार किया है।[3] भागे हुए आक्रांताओं का पीछा केवल 40 मील तक किया गया, परंतु उनको लाहौर के दुर्ग तक पहुँचने से रोका नहीं गया। पृथ्वीराज चौहान ने गोबिंदराय का सुझाव नहीं माना अन्यथा गौरी सहित सभी तुर्क लाहौर पहुँचने के पूर्व मार दिए गए होते। यह भूल काफी महँगी पड़ी।[4]

एक वर्ष बाद आक्रांता मुहम्मद गौरी ने पुनः तराइन के द्वितीय युद्ध हेतु बिगुल बजाया। उस समय पृथ्वीराज चौहान से चालुक्य, चंदेल और गहड़वाल शासक जयचंद का युद्ध चल रहा था। कठ योद्धा स्कंद, जो पृथ्वीराज का सेनापति था, वह भी आंतरिक युद्ध में गया हुआ था। ऐसे समय में आक्रमण करने का आमंत्रण देशद्रोही जयचंद्र ने मुहम्मद गौरी को दे तो दिया, परंतु उसने यह नहीं सोचा कि आक्रांता गौरी कभी उसके

---

1. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पृष्ठ-74
2. चंदबरदाया : पृथ्वीराजरासो (ना. प्र. सभा, वाराणसी)। सुरजनचरित, 10/129.32 (ना.प्र. सभा पत्रिका, खंड 46, पृष्ठ-214, प्रबंध चिंतामणि पृष्ठ-189-91 में 23 विजया का उल्लेख है।
3. तबकात-ए-नासिरी, खंड-1, पृष्ठ-460
4. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : डिस्टीग्रेशन ऑफ नार्थ इंडियन हिंदू स्टेट्स, वाल्यूम-1, पृष्ठ-65

साथ भी वही व्यवहार करेगा। अत: गौरी के आक्रमण के समय खटिक सैनिकों एवं सेनापति के अभाव में पृथ्वीराज का पराजित होना स्वाभाविक था। उसके पास गौरी की तुलना में बहुत कम सैनिक थे। गौरी ने युद्ध में छल-कपट की नीति अपनाई थी जिसे मुसलिम इतिहासकार मुहम्मद ऊफी और बाद के इतिहासकार फरिश्ता ने भी स्वीकार किया है।[1] यह भी स्वीकारने योग्य है कि यदि पूर्व की भाँति तराइन के इस द्वितीय युद्ध में भी खटिक सेनापति स्कंद और बहादुर योद्धा साथ रहकर युद्ध किए होते तो इस बार भी मुहम्मद गौरी को भागना अथवा जान गँवाना पड़ता। यहाँ फतेहपुर सिकरी के औलिया सलीम चिश्ती की भूमिका का अवलोकन आवश्यक है जो इतिहासकारों द्वारा या तो छोड़ दिया जाता है या पृथ्वीराज चौहान एवं मुहम्मद गौरी के बीच जयचंद की आवश्यकता से अधिक उल्लेख करके इतिहास की दिशा बदलने की बुद्धिमानी भरा प्रयास बहुत ही स्वाभाविक रूप से कर दिया जाता है।

पृथ्वीराज चौहान एवं मुहम्मद गौरी का युद्ध जब निर्णायक परिस्थिति में था उस समय औलिया अपनी मजार से निकलकर पृथ्वीराज चौहान के ऊँटों की सेना के मध्य जाकर बैठ गया। लोगों के लाख प्रयास पर भी जब औलिया चिश्ती वहाँ से नहीं उठा तो पृथ्वीराज ने यह कहकर इस बात की उपेक्षा कर दी कि सूफी संत हैं, वह वहाँ कर ही क्या सकता है? औलिया तो रात भर वहाँ रहकर प्रात: उठकर वापस हो गया किंतु पृथ्वीराज चौहान की सेना का एक भी ऊँट प्रात: युद्ध के लिए उठ नहीं सका। औलिया से पूछताछ के लिए भी समय नहीं बचा था। प्रात:काल मुहम्मद गौरी के आक्रमण के साथ ही पृथ्वीराज चौहान की पराजय की गाथा भी औलिया द्वारा रात्रि में ही लिख दी गई थी।

## 3.6 तैमूरलंग से अपने दम पर लिया लोहा

हिंदुस्थान में जिस समय विदेशी आक्रांताओं का तुगलक-वंश के नाम से शासन चल रहा था वह चौदहवीं शताब्दी का अंतिम चरण था और उत्तर भारत में राजनैतिक उथल-पुथल का समय था। तैमूरलंग ने उसी समय अपने 15 वर्षीय पौत्र पीर मुहम्मद को भारत के द्वार क्षेत्र पर पड़नेवाले सभी प्रमुख स्थानों (कंधार, काबुल, गजनी आदि) का शासक नियुक्त कर दिया और भारत पर आक्रमण के लिए प्रेरित किया। पीर मुहम्मद ने 1397 ई. में तैमूरी सेना के साथ भारत में प्रवेश किया और सिंध को पार करके कच्छ को जीतने के बाद मुल्तान का घेरा डाल दिया। घेरा 6 महीने तक चला। मुल्तान की रक्षा का भार उस समय कठ जाति के सारंगदेव पर था। सफलता के लिए पीर मुहम्मद ने अपने

1. श्री वास्तव, प्रो. अशोक, दिल्ली सल्तनत का उत्थान एवं पतन, पृष्ठ-83

दादा तैमूरलंग को सूचित किया। सूचना मिलते ही तैमूरलंग ने भारत की ओर प्रस्थान किया।

स्पष्ट है कि तैमूर का हिंदुस्थान की ओर प्रस्थान अपने पौत्र की जान बचाने के लिए था, जिसे मुल्तान की रक्षा में संलग्न खटिक जाति के रणबांकुरों ने विवश एवं हतोत्साहित कर रखा था। इस सत्य को छिपाते हुए विदेशी मुसलिम इतिहासकार एवं अंग्रेज लेखक़ों ने यह लिखा है कि तैमूरलंग का हिंदुस्थान की ओर आरंभ किया गया प्रस्थान धार्मिक कारणों से था और वह हिंदुस्थान में हिंदुओं का कत्ल करके इसलाम का प्रसार करने के साथ ही गाजी की उपाधि धारण करना चाहता था।[1] धर्म-प्रसार का यह कार्य तो उसके पूर्व से ही आक्रांता शासक कर रहे थे। इसलिए निश्चित रूप से वह अपने पौत्र की जान बचाने के लिए ही यहाँ आया था।[2]

तैमूर ने अपने 92 हजार सवारों के साथ मार्च 1398 ई. में समरकंद से भारत की ओर प्रस्थान किया तथा तिरमिज होकर उसने झेलम नदी पार करते हुए और काबुल पहुँचकर अमीर सुलेमान के नेतृत्व में एक सेना पीर मुहम्मद के सहयोग के लिए मुल्तान भेजी और स्वयं 20 सितंबर, 1398 को सिंध नदी के तट पर पहुँच गया। धानकोट के निकट उसने सिंध पार किया। निकटवर्ती लोगों को डरा-धमका कर पैसा माँगा। तुलंबा नगरवासियों से दो लाख लेने के बाद भी उनको बुरी तरह से लूटा। वहाँ से शाहपुर होकर लाहौर गया। वहाँ का शासक खोखर उस समय सारंगदेव[3] से वैमनस्य रखता था, इसलिए तैमूरलंग के लालच में आ गया और उसका साथ देना मंजूर कर लिया।

रावी के तट के एक अनजान स्थान पर तैमूर और पीर मुहम्मद की 26 अक्तूबर, 1398 को भेंट हुई। उसके चार दिन बाद तैमूर ने दीपालपुर को लूटा और सारंगदेव पराजित हुआ। वहाँ के लोग भागकर भटनीर दुर्ग चले गए। भटनीर (हनुमानगढ़) का शासक राव दलजीत हिंदू राजपूत था। उसकी सेना में खटिक जाति के लोग भारी संख्या में थे। उन्होंने भयंकर लड़ाई लड़ी और तैमूर के हौसले पस्त कर दिए। इसमें तैमूर को संधि करनी पड़ी, यद्यपि उसने संधि के बाद भी छल करके भटनीर दुर्ग के लाखों शरणार्थियों को कत्ल करवा दिया और दुर्ग पर अधिकार किया।

भटनीर से उसने दिल्ली की ओर कूच किया। रास्ते में उसको कठ-पार्श्वी सैनिकों ने बहुत परेशान किया। उन्होंने अपने छापामार युद्ध में तैमूर के दाँत खट्टे कर दिए। बदले में तैमूर ने लोनी में लाखों लोगों की निर्मम हत्या करा दी, जिसमें से 75 प्रतिशत लोग बौद्ध, 15 प्रतिशत मुसलिम और 10 प्रतिशत कठ (खटिक) एवं अन्य जाति के हिंदू

---

1. इलियट, एच.एम. हिस्ट्री ऑफ इंडिया ऐज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स, भाग-3, पृष्ठ-394, 480
2. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान एवं पतन, पृष्ठ-589
3. सारंगदेव कठ जाति का था, अतएव सारंग खाँ का अर्थ उसका मुसलमान होना नहीं है।

थे। इसी को इतिहासकारों ने बढ़ा-चढ़ाकर यह लिखा कि कठों (खटिक) ने तैमूर को बहुत परेशान किया था, इसलिए उसने एक लाख कठों को मारकर उनकी खोपड़ियों की ढेर लगाकर उस पर नमाज अदा की थी। सोचने की बात है कि गुरिल्ला युद्ध में दक्ष कठ जाति के हजार-दो हजार लोग तैमूर के छक्के छुड़ा दिए तो एक लाख युद्धबंदी लोगों का कत्ल वह भला कैसे कर सका था?

कठों से परेशान होकर लोनी में किए नि:शस्त्र बंदियों की हत्या के बाद तैमूर अच्छी तरह समझ गया था कि इसका गंभीर परिणाम उसे कभी भी भुगतना पड़ सकता है। अतएव वह जल्दी से दिल्ली एवं अन्य स्थानों को लूटकर अपने देश वापस भाग जाना चाहता था। उसकी सेना में उसके मूलदेश के बहुत कम सैनिक बच पाए थे और जो भी थे हिंदुस्थान के ही लालची एवं देशद्रोही लोग उसके साथ थे। उनके भरोसे तैमूर ने हिंदुस्थान का दिल्लीवाला तख्त पाने के बाद भी वहाँ रुकने का साहस नहीं किया। उसकी स्थिति सिकंदर से थोड़ी ही भिन्न थी। सिकंदर युद्ध करना चाहता था तो उसके सैनिक भाग खड़े हुए, जबकि तैमूर के क्रीत अथवा भाड़े के सैनिक लूटपाट जारी रखना चाहते थे, जबकि तैमूर ने ही वापस लौटने का निर्णय लिया था।

तैमूर को मेरठ में भी हिंदू खटिक जाति के तितोरिया लोगों का कड़ा प्रतिरोध सहन करना पड़ा था। वह फीरोजपुर, तुगलकपुर होते हुए हरिद्वार पहुँचा और वहाँ जाकर 12 जनवरी, 1399 ई. को उसने पुन: भारी नरसंहार किया। इससे हिंदू और विशेषकर खटिक हिंदू तमतमा उठे। उन्होंने आर-पार की लड़ाई का मन बनाया। तैमूर की सेना में लड़ रहे हिंदुओं को माँ की शपथ दिलाई गई कि वे अपने देश के लिए युद्ध करेंगे अथवा तैमूर को छोड़कर अपने घरों को लौट जाएँगे। गुप्तचरों ने इसकी सूचना तैमूर को दे दी। अतएव वह भयभीत हो उठा। अपने ऊपर मँडराता संकट देखकर उसने भी तुरंत समरकंद लौटने का निर्णय लिया।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि खटिक जाति ने पूर्व मध्यकाल और मध्यकाल में अपने बहादुरी के इतिहास रचे थे। मिलिंद, सिकंदर, महमूद गजनबी, मुहम्मद गौरी, तैमूरलंग आदि के साथ खटिकवंशियों की चुनौती, उसका पंगा लेना उनकी असीम ताकत का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।[1] इस जाति के लोगों ने सल्तनतकाल, मुगलकाल और ब्रिटिशकाल इत्यादि में अपनी शौर्यता और ज्ञान का परिचय तथा हिंदुस्थान के प्रति अपनी निष्ठा एवं ईमानदारी का साक्ष्य उपस्थित किया।

---

1. शास्त्री, राजनाथ सोनकर: खटिक जाति की उत्पत्ति और विकास, तृ. सं. 2005, पृष्ठ-152-172

## 3.7 आंतरिक कलह एवं आक्रांताओं के षड्यंत्र से हिंदू हुए पराजित

युद्ध में विजय और पराजय के आंतरिक और बाह्य, दोनों कारण होते हैं। हिंदू किसी भी युद्ध में इन दोनों परिस्थितियों के अनुकूल होने पर विजयी हुए।

विदेशी आक्रांताओं एवं महत्त्वपूर्ण लुटेरों के साथ उनके जब भी युद्ध हुए उसमें वे निरंतर विजयी होते रहे। किंतु हिंदुओं की जहाँ भी पराजय हुई उसमें मुख्यत: आंतरिक कारण अधिक प्रभावी रहे। खटिक जाति के विषय में भी यही कहा जाना उचित होगा। कहीं तो उसे नेतृत्व में अक्षम राजा मिले और कहीं उनकी भरती कम की गई। उन्होंने जिस भी हिंदू राजा की ओर से युद्ध किया, पूरी निष्ठा, ईमानदारी और राष्ट्र-भक्ति की भावना में ओत-प्रोत होकर युद्ध किया।

हिंदू राजाओं में आंतरिक कलह भी व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति को लेकर था। उन्होंने भी सही समय पर ध्यान नहीं दिया कि राष्ट्रीय समस्या के समय व्यक्तिगत समस्याओं को अलग करके सर्वप्रथम देशहित पर सोचना चाहिए। जब तक लोगों ने देशहित को सर्वोपरि माना, देश की सूई के अग्रभाग के बराबर भूमि भी पाने से विदेशी आक्रांता वंचित रहे। विदेशी मुसलिम आक्रांता गजनबी और गौरी भी भयंकर लूटपाट में इसी आंतरिक कलह के कारण ही सफल हो सके थे। कायर राजा आंभी और चुगलखोर जयचंद को इतिहास कभी क्षमा नहीं करता है। मानसिंह को सेनापति का पद भले मिल गया था किंतु उसके साथ राणा प्रताप ने भोजन और वार्ता से तो साफ इनकार कर ही दिया था।

हिंदुस्थान में आंतरिक कलह से एकता समाप्त हुई और देश में सभी राजा अपने को सर्वोच्च शासक मानने लगे। विदेशी आक्रमण यदि एक पर होते तो दूसरा दर्शक बना रहता था, बल्कि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से आक्रांताओं का हर प्रकार से सहयोग भी करते थे। विदेशी तुर्क आक्रांता जब देशद्रोहियों के सहयोग का बदला उनको भी मिटाकर देते थे, तो मात्र पश्चात्ताप के लिए कुछ भी उनके पास शेष नहीं होता था।

विदेशी मुसलिम आक्रांता तुर्क एवं मुगल अनेक प्रकार के षड्यंत्र करने में हिंदू राजाओं से आगे थे। जब वे पराजित होकर भागते थे तो हिंदू राजा उनका पीछा नहीं करते थे। इसलिए उनको पुन: आकर तैयारी के साथ युद्ध करने का अवसर मिल जाया करता था। राजाज्ञा के अनुपालन में खटिक योद्धा सैनिकों ने अनेक बार ऐसे लोगों को छोड़ दिया था, जो बाद में पुन: कहर बनकर आए थे।

विदेशी मुसलिम आक्रांता अपने आक्रमण के पूर्व व्यापारियों और गुप्तचरों के माध्यम से उस स्थान की विधिवत जानकारी कर लिया करते थे और किसी-न-किसी रूप में अपने सैनिकों को हिंदू दुर्गों में प्रवेश दिला देते थे। आक्रमण के समय वे पूर्व उपस्थित विदेशी सैनिक दुर्गों के द्वार खोल देते अथवा दीवारें तोड़ देते थे।

किसी भी सामरिक शक्ति के संवर्द्धन में धन आवश्यक होता है। विदेशी मुसलिम

आक्रांताओं का पहला प्रयास लोगों को घेरकर अन्न-जल की व्यवस्था को अवरुद्ध करना था ताकि बिना युद्ध किए ही उनको बंदी बनाकर भय का वातावरण उत्पन्न किया जाए। अन्यान्य राज्यों पर आक्रमण के मध्य रास्ते में वे हल्ला करते, चिल्लाते, आग लगाते हुए चलते थे ताकि लोग उनके आगमन को विकराल समस्या मान लें और घरों में छिप जाएँ एवं उनसे लड़ने का साहस न कर सकें तथा आत्मसमर्पण कर दें।

विदेशी अरेबियन मुसलिम आक्रांता यहीं के धन से भाड़े के सैनिक खरीदते और अपनी संख्या बढ़ाते थे। उन सभी सैनिकों को लूट के माल में हिस्सा दिया जाता था। इससे अनेक लोभी हिंदू सैनिकों को भी उन्होंने अपनी सेना में रख दिया था। युद्धभूमि में वे सर्वप्रथम उन्हीं सैनिकों को प्रस्तुत करते थे और लड़कर भाग आने, फिर लड़ने और भाग आने का क्रम जारी रखने का निर्देश देते थे, ताकि हिंदू सैनिक थक जाएँ। थकने के बाद वे अंतिम समय में हजारों शस्त्र सज्जित घुड़सवारों की सेना मैदान में उतार देते थे और हारी हुई बाजी जीत लेते थे। उनके युद्धों में विदेशी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा संधि की जाती थी और जब कुछ व्यवस्थित हो जाते थे तो रात में घात लगाकर संधि तोड़ते हुए मार-काट और लूट-पाट किया करते थे। सोए हुए हिंदू सैनिकों को बंदी बनाकर मार डालते थे।

इसी तरह वे अनेक प्रकार के षड्यंत्र युद्ध नियमों के विरुद्ध करते थे। उस समय हिंदू सेनाएँ धर्म-युद्ध के नियमों के अंतर्गत युद्ध लड़ती थी, जबकि विदेशी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा केवल अवसर का लाभ उठाया जाता था और युद्ध के किसी भी नियम को अपने स्वार्थ एवं हित के लिए अनदेखी कर दिया जाता था। इससे सबसे अधिक खटिक योद्धा प्रभावित होते थे, क्योंकि देश की रक्षा को अभीष्ट मानते हुए भी वे कभी अधर्मपूर्वक युद्ध नहीं करते थे। मुसलिम स्त्रियाँ और अबोध बच्चों पर कभी शस्त्र नहीं उठाते थे, किसी भी मुसलिम को उन्हें अस्पृश्य मानकर उनको गुलाम नहीं बनाते थे, किसी को लूटते नहीं थे और न ही कायरों को पीछा करके मौत के घाट उतारते थे। उनकी अंततोगत्वा पराजय का मुख्य कारण यही था।

## 3.8 विदेशी आक्रांताओं के दमन-चक्र का निरंतर विरोध

कठोर झलुआ शस्त्र के एक ही वार से यज्ञ-पशुओं की गरदन धड़ से अलग कर देनेवाले वैदिककालिक खटिक ब्राह्मण जब धर्म-रक्षा के साथ-साथ देश-रक्षा का भी दायित्व सम्हालने लगे तो उन्होंने तीर-धनुष, तलवार-भाल-बरछा आदि की भी खोज एवं चलाने का अभ्यास किया था। थोड़े ही समय में वे युद्ध-विशारद बन गए थे। पशु-बलि का उन्माद उनकी रगों में भरा था इसलिए युद्ध उनके लिए नया नहीं था, जिसमें वे स्वाभाविक एवं उत्साह के साथ भाग लिया करते थे। मृत्यु से खट्टिकवंशियों को भय

नहीं था, इसलिए ही वे विदेशी आक्रमणों एवं युद्धबंदी होने पर आक्रांताओं के दमन-चक्र का निरंतर विरोध करते थे।

हिंदू सैनिकों की रक्षा-पंक्ति में सबसे आगे रहकर कठोर राज्य के सैनिकों ने सिकंदर को शिकस्त दी और उसे हिंदुस्थान से भाग जाने पर विवश किया। मिलिंद की हिंसा-वृत्ति का हौसला हिला उसे अहिंसा धर्म अपनाने के लिए प्रेरित किया। विदेशी अरबी मुसलिम आक्रांताओं को बार-बार मार भगाया और महमूद गजनबी तथा मुहम्मद गौरी ने भी यहाँ की समृद्धि को लूटने में तभी सफलता पाई जब इस देश के कुछ लोभी, कायर, दलाल एवं सट्टेबाज राजाओं को उन्होंने अपने साथ मिला लिया और उन राजाओं ने उत्साहित खटिक सैनिकों का साथ न देकर इसके विपरीत उनको धोखे से मरवाने का कार्य किया। हिंदुस्थान में सन् 1206 ई. से 1707 ई. तक विदेशी मुसलिम सुल्तानों और मुगलों का शासन रहा और उन्होंने विविध प्रकार से खटिक वंश के धर्माभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी योद्धा लोगों को उत्पीड़ित करने के साथ ही समूल नष्ट करने का प्रयास किया, किंतु वे सदैव असफल रहे। उनके प्रत्येक दमन-चक्र का खटिक जाति ने कड़ा प्रतिरोध प्रस्तुत किया।

खटिक जाति का मान-मर्दन करने के लिए विदेशी मुसलिम शासक आक्रांताओं ने बहुत प्रयास किया। उनके घरों पर धावा बोलकर उनका उत्पीड़न किया। इससे बचने के लिए हिंदू खटिक जाति के लोगों ने अपने घरों के चारों ओर सुअर पशु बाँधने का कार्य किया। चूँकि सुअर इसलाम का शत्रु पशु है, अतएव इसके बँधे होने पर खटिक जाति के लोगों के घर सुरक्षित हो गए और स्त्रियों का सतीत्व तथा बच्चों को असमय मृत्यु से बचाया जा सका था। अन्य जातियाँ उत्पीड़ित होकर भाग गईं और जंगलों में पलायन कर गईं, परंतु खटिक जाति के लोगों के साथ ऐसा नहीं हो पाया और वे आबादी क्षेत्र में डटकर धर्माभिमान के साथ रहे।

खटिक जाति के लोगों से कृषि-भूमि छीन ली गई और उनको इसलाम विरोधी होने के कारण अधिकाधिक करों एवं लगान पर खेती करने के लिए कहा गया। उस अवस्था में उन्होंने खेती करना छोड़ दिया और मांस का व्यापार मुख्य रूप से करने लगे। इसका प्रभाव आज भी देखा जाता है कि खटिक जाति के लोग कृषि कर्म कम करते हैं। कृषि को खटिक जाति ने इसलिए भी छोड़ दिया क्योंकि उन विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों के आदेश पर धर्मांतरित मुसलमान उनके लहलहाती फसलों को अपने पशुओं द्वारा चरा लेते थे, पके हुए अन्नों को काट लेते थे अथवा खड़ी फसलों में आग लगाकर उसे नष्ट कर देते थे ताकि हिंदू खटिक जाति कभी आर्थिक दृष्टि से मजबूत न हो सके और उन विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के विरुद्ध कभी विद्रोह न कर सके। अतएव कृषि के स्थान पर बागवानी को चयन कर खटिक जाति ने विशेष रूप से उत्तर

प्रदेश एवं आसपास के क्षेत्रों में फल व्यवसाय में रुचि दिखलाई।

विदेशी आक्रांता मुसलिम शासकों द्वारा मध्यकाल में लोगों से जो कर लिए जाते थे उसे सख्ती से वसूला जाता था। कर न दे सकनेवालों को मारकर उनके जमीन एवं घर को छीनकर उन्हें गाँव से भगा दिया जाता था और तब उसका लगान उसके पड़ोस के लोगों से लिया जाता था, इसका बहुत सुंदर उपाय खटिक जाति ने निकाल लिया था। सुअर पशु बाँधने के कारण कोई भी विदेशी मुसलिम आक्रांता अथवा उसके कारिंदे उसके घरों पर कुछ भी माँगने नहीं आते थे।

विदेशी आक्रांताओं ने हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति की रक्षा के लिए लड़नेवाले धर्माभिमानी, राष्ट्राभिमानी और स्वाभिमानी विशेषकर हिंदू खटिक कुल की प्रजातियों का सामाजिक शोषण एवं उत्पीड़न अधिक मात्रा में किया। इसलाम अस्वीकार करनेवाले हिंदुओं को कत्ल करना, स्त्रियों का शीलहरण और अबोध बच्चों की नृशंस हत्या उनके लिए नैतिक दिनचर्या बन गई थी। स्वाभिमानी एवं धर्माभिमानी हिंदुओं को निम्न, अपवित्र और अस्वच्छ कार्यों (मैला ढोना, सफाई कार्य एवं चर्म कर्म इत्यादि) में बलपूर्वक लगाकर उनकी सामाजिक परिस्थिति को घटाया गया और उनको अपवित्र कार्यों में लगाकर अस्पृश्य बना उनके ही हिंदू समाज में उन्हें भेदभावपरक निम्न स्थान दिलाया गया। हिंदू से मुसलमान बनाए गए लोगों को नव मुसलिम वर्ग में रखकर उनको भी अरबी-ईरानी मुसलमानों की चाकरी में लगाया गया। ऐसे धर्म परिवर्तित मुसलमानों को सदैव असंगठित रखा गया। बहादुरी के कारण यदि उनको कोई उच्च पद भूल से प्राप्त हो गया तो उसको एक अक्षम्य भूल माना गया और वह पद उनसे छीन लिया गया। विदेशी मुसलिम शासक इल्तुतमिश ने अपने वजीर सहित कुल 33 राज्यकर्मियों को इसलिए बरखास्त करके दंडित किया था, क्योंकि उनके पूर्वज हिंदू थे।[1]

विदेशी आक्रांताओं ने भारतीय मुसलमानों को हेय दृष्टि से देखा था इसलिए बलवनयुगीन इमादुद्दीन रैहान के साथ भेदभाव करके उसे पदच्युत कर मार दिया गया था।[2] यह देखकर बाद के भी कुछ मुसलमानों एवं पठानों ने हिंदू राजाओं की सेना में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई थी, परंतु निर्णायक युद्धों में वे भी शत्रु-पक्ष से मिलकर अपने ही लोगों को मारने लगते थे।[3]

विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने आरंभ से अंत तक हिंदुओं को केवल लूटने, लूट का माल अपने देश ले जाने तथा उसका उपयोग विषय-भोग में करने का ही कार्य

1. बरनी : तारीख-ए-फीरोजशाही, अनु. रिजवी, पृष्ठ-142-43 तथा रिजवी : आदि तुर्ककालीन भारत, पृष्ठ-151
2. त.ना. रैवर्टी, खंड-1, पृष्ठ-705
3. त.ना. रैवर्टी खंड-2, पृष्ठ-832-836

किया। हिंदुओं को उन लुटेरों द्वारा कंगाल बना दिया गया और दो जून की रोटी के लिए वे तरसने लगे। भूखे और नंगे यानी निर्धन लोगों पर तरह-तरह के कर लादे गए। हिंदुओं की संपदा बलपूर्वक धर्मांतरित मुसलमानों में निःशुल्क बाँट दी गई। ऐसी दयनीय स्थिति में शिक्षा प्राप्त करने के लिए उनके पास कोई अवसर तथा संसाधन शेष नहीं था। लोगों के घास-फूस के झोंपड़े भी उन आततायियों को रास नहीं आते थे। उनमें आग लगाई जाती और उनके परिवार तथा पशुओं को जिंदा जलने पर विवश किया जाता था। ऐसे उत्पीड़न से अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए हिंदुओं की एक विशाल जनसंख्या (खटिक जाति को छोड़कर) जब दुर्गम स्थानों एवं घने जंगलों में पलायन कर जाती तो उसे वहाँ भी ढूँढ़कर मार डाला जाता था। जंगलों में पलायित लोगों ने जहाँ-तहाँ भागकर अपने प्राणों की रक्षा की जिसके कारण उनका जीवन दर-ब-दर हुआ। जनजातियों का एक विशाल समूह आज भी जंगलों में रहकर जीवन-यापन करने पर विवश है, जबकि उनके ही संवर्ग के कुछ लोग मैदानी भागों में यत्र-तत्र रहकर अलग-थलग पड़े हुए हैं। आज उन अभागों के पूर्व इतिहास एवं उनके साथ घटी घटनाओं की अनदेखी करके उनके बीच के कुछ तनावग्रस्त भूखे-नंगे लोगों को नक्सलिस्ट कहकर मारा जा रहा है। आजादी मिलने के बाद भी इनको प्राथमिकता के आधार पर इनकी उत्पत्ति एवं दुभार्ग्यपूर्ण इतिहास को न समझने एवं इनको विकसित करने और राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने का शत-प्रतिशत प्रयास नहीं हो रहा है, यह पूर्णतः दुर्भाग्यपूर्ण है।

भौगोलिक और सामाजिक परिस्थितियों के स्वाभाविक प्रभाव मानव समाज पर अवश्यमेव पड़ते हैं। इसको आसानी से देखना और समझना हो तो मैदानी भाग और जंगलों में रहनेवाले लोगों को देखकर अनुमान एवं विश्वास किया जा सकता है। विदेशी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और अन्य सभी प्रकारों से दमन, दलन और उत्पीड़न का शिकार बनाए गए हिंदुओं को एक लंबे समय तक जंगलों में रहकर जीवन-यापन करना पड़ा था। धर्मांतरित मुसलिम समाज द्वारा वन-पशुओं की हत्या करके उनके मांस भक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया। अपने बहू-बेटियों एवं मासूम बच्चों के जीवन की सुरक्षा हेतु जंगलों में पलायित स्वाभिमानी हिंदुओं को मुसलमान बनाने के लिए जंगलों में तलाशने का व्यापक अभियान चलाया गया, उस समय घने से घने जंगलों को काटने का कार्य प्राथमिकता के आधार पर किया गया था।

राजवंशीय धर्माभिमानी, स्वाभिमानी एवं योद्धाओं ने गुहा-कंदराओं में रहकर उस समय अपने सैन्य संगठन को मजबूत बनाने का कार्य किया, जबकि बहुत से लोगों ने अपने को छिपाकर मैदानी भागों में भी स्थान बदलते रहकर दर-ब-दर का जीवन व्यतीत किया। मैदानी क्षेत्रों में उन दर-ब-दर जीवन जीनेवालों को बंजारा जातियों एवं

जंगलों में रहने के कारण वे राष्ट्राभिमानी ही वनवासी कहे जाने लगे। अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करने के कारण उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय हो गई और वे सभी संसाधनों के अभाव में विकास की धारा से बहुत अलग हो गए तथा विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों के दमन, दलन एवं उत्पीड़न के उपरांत वे दलित कहे जाने लगे। इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि जंगलों में रहनेवाले आज भी निर्भीक, ताकतवर और स्वाभिमानी होते हैं, क्योंकि वे पूर्वकाल के राजवंशी घरानों के राष्ट्राभिमानी थे और उनका स्वभाव एक योद्धा का था।

ऐसे क्षत्रिय राजवंशी और योद्धा लोगों का विदेशी आक्रांताओं द्वारा हर स्तर पर दलन किया गया, जिसके कारण उनकी स्थिति दयनीय बन गई और वे दलित के नाम से जाने गए। परिवर्तित परिवेश में पहचान बदलते लोगों के रूप में खरवार, गोंड़, नट, खटिक, वाल्मीकि, कोल, भील, चेरो, भुइया, संथाल, धीवर, धीमर, चमार इत्यादि जातियों को आज भी देखा जा सकता है, जिनके जाति नामों में प्राप्य अंतर स्थान भेद के अनुसार ही मिलता है। वे सभी किसी समय बहादुर योद्धा थे और देश के विभिन्न भू-भागों पर उनका राज्य स्थापित था, परंतु अरब के विदेशी आक्रांताओं के शोषण और उत्पीड़न के कारण आज उनकी पहचान परिवर्तित हो गई है और वे दलित के नाम से जाने जाते हैं।

अभावग्रस्त जीवन के लिए अर्थाभाव ही मुख्य कारण माना जाता है। विदेशी आक्रांता शासकों ने जब राजवंशी योद्धाओं का सबकुछ लूटकर और उनको अर्थविहीन एवं निर्धन बना दिया तब उस अवस्था में स्वाभिमानी हिंदू अभावग्रस्त जीवन जीने के लिए विवश हो गए। इसके पूर्व यहाँ के लोगों को किसी वस्तु की कमी नहीं थी। यहाँ अन्न का विशाल भंडार था। खाद्यान्न विदेशों की उदरपूर्ति के लिए दान या उपहार में भी दिए जाते थे। पंजाब प्रांत गेहूँ के अक्षुण्ण भंडारण के लिए प्रसिद्ध था। मध्य, पूर्व और दक्षिण भारत में चावल की उपज इतनी अच्छी थी कि लोग दूध-भात अतिथियों एवं भिक्षुकों की सेवा में निवेदित करते थे। प्रकृतिप्रदत्त फलों से वृक्ष लदे होते थे। पशुओं की हत्या नहीं होती थी, इसलिए यहाँ दूध की नदियाँ बहती थीं। वनों में आवासित गुरुकुलों के आचार्य और शिष्यगण कभी आहार के लिए चिंतित नहीं थे। विदेशी आक्रांताओं ने भी यहाँ के तटीय भागों में निवास करते समय कृपान्न पाकर जीवन निर्वाह किया था। उनको पता था कि भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जहाँ सोने-चाँदी के विपुल भंडार हैं। उन्हें प्रत्येक अवस्था में यहाँ की समृद्धि को लूटना था, इसलिए उन्होंने इसके लिए निरंतर आक्रमण किया।

मुल्तान के मंदिर से 1,32,000 मन सोना पहली बार मुहम्मद बिन कासिम ने लूटा था। सुबुक्तिगीन ने काबुल के हिंदूशाही शासक जयपाल की 1,000,000 शाहिदा दिरहम

तथा 250,00 दीनारें लूटी, जबकि महमूद गजनबी ने मुल्तान से 20,000,000 दिरहम, सुखपाल के खजाने से 400,000 दिरहम, नगरकोट (भीमनगर) से 70,000,000 शाही दिरहम, 700,400 मन सोना और चाँदी की ईंटें, 30 गज लंबा और 15 गज चौड़ा एक चाँदी का कमरा, 40 गज लंबा और 20 गज चौड़ा लीनेन की छतरी जो सोने एवं चाँदी के खंभों पर टिकी हुई थी और बहुमूल्य सिंहासन लूटा। वहाँ इतनी अधिक संपदा थी कि उसे ढोने के लिए साधन कम पड़ गए थे। उसने सोमनाथ मंदिर से भी अपार संपत्ति लूटी। वहाँ 14 सोने के गुंबज थे। वहाँ की सोने की एक सीकड़ कुल 200 मन की थी (जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, 1892, पृष्ठ-192)। मुहम्मद गौरी ने इस मंदिर को बार-बार लूटा तो भी मंदिर की समृद्धि बनी रही।[1]

विदेशी मुसलिम अरेबियन आक्रांताओं ने समय-समय पर अपने छिटपुट प्रयासों द्वारा हिंदुस्थान को कई बार लूटा था, किंतु जब वे यहाँ पर स्थायी रूप से अपना शासन जमा लिए तो उस समय भी यहाँ के हिंदुओं का घोर आर्थिक उत्पीड़न किया। हिंदू व्यापारियों पर आर्थिक अपराध का झूठा आरोप लगाकर उनकी संपदा छीन ली जाती थी। उन पर आयात-निर्यात के तरह-तरह के व्यापार कर लगाकर उनको जीविका कमाने से वंचित किया जाता रहा। उनके पास की बहुमूल्य और सुंदर वस्तुएँ सीमा-शुल्क के नाम पर छीनी गईं। संपत्ति की सुरक्षा के लिए उनको रक्षक रखने की अनुमति नहीं दी जाती थी, ताकि उनको लूटना आसान रहे। उनके उत्पादों का मूल्य वे शासक मनमाने ढंग से निर्धारित करते थे और सस्ती दर पर बलपूर्वक ले लेते थे। दूसरी तरफ मुसलिम व्यापारियों को तरह-तरह की रियायतें दी जाती थीं। विदेशी व्यापार में लगे हिंदू लोगों को मालवाहक गाड़ियाँ जंगलों में लूट ली जाती थी, और व्यापारियों को अक्सर जान से मार दिया जाता था। उसके बाद भी भारतीय हिंदू व्यापारी इतने संपन्न, व्यवहार कुशल एवं उदार थे कि वे मुसलमानों को ऋण दिया करते थे।[2]

मुसलिम शासनकाल में हिंदू किसानों की जमीनें खालसा भूमि घोषित करके छीन ली जाती और भूमिहीन धर्मांतरित मुसलमानों में बाँट दी जाती थी। हिंदू किसानों पर तरह-तरह के कृषि-कर लगाए जाते थे। अकाल, बाढ़ तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय वसूली और भी सख्त कर दी जाती थी, ताकि किसान खेती करना छोड़ दे और लगान चुकाने में असमर्थ हो जाए। ऐसे हिंदू किसानों का इतना उत्पीड़न होता था कि वे गाँव छोड़कर जंगलों में भाग जाते थे। उनके भाग जाने पर उनका कृषि-कर उनके पड़ोसी से वसूला जाता था और जब सभी लोग जंगलों में भाग जाते तो उनको ढूँढ़-

---

1. जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटिक ऑफ बंगाल, 1892, पृष्ठ-192
2. डॉ. सुमन शास्त्री, शोध प्रबंध, मध्यकालीन भारत की व्यापार व्यवस्था का ऐतिहासिक अनुशीलन, पृष्ठ-184

ढूँढ़कर वन्य पशुओं की भाँति मार दिया जाता था। उनको खोजने के लिए जंगलों में आग लगा दी जाती अथवा जंगल से मुसलमानों को नि:शुल्क लकड़ी उपलब्ध कराई जाती थी।[1]

उन दिनों लघु कुटीर उद्योग धंधों में संलग्न हिंदू शिल्पियों से बेगार लिए जाते थे। उनकी कला एवं कुशलता को मुसलमानों में स्थानांतरित करने का कुचक्र किया जाता था। शिल्प ज्ञान मुसलमानों को उपलब्ध कराने अथवा प्रशिक्षण देने के बाद हिंदू शिल्पियों के हाथ काट दिए जाते थे। समस्त कल-कारखाने राजकीय संपत्ति घोषित कर दिए गए थे। विदेशी आक्रांता मुसलिम शासकों द्वारा ही बेगार मजदूर एवं बंधुआ मजदूर-प्रथा प्रारंभ कर दी गई थी। संपूर्ण उत्पाद पहले राज्य का होता था। हिंदू समाज का आर्थिक दलन न केवल शासक वर्ग अपितु मुसलिम सैनिक भी करते थे। मुसलमान सैनिकों को खुली छूट थी कि वे किसी की भी फसल अपने घोड़ों और अन्य मवेशियों से चरा सकते थे। हिंदुओं को लूटकर उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय इसलिए बनाई जा रही थी, ताकि वे कभी अर्थसंपन्न न हो सकें और शासन के प्रति विद्रोह की स्थिति उत्पन्न न कर सकें। यह अवस्था अन्य मुसलिम शासक (जो विदेशों से आए थे अथवा उन्हीं विदेशी शासकों के वंश के थे) के शासनकाल में भी निरंतर बनी हुई थी।

प्रतीत होता है कि आक्रांताओं ने ये सारे कार्य योजनाबद्ध तरीके से किए थे। आक्रांताओं की शक्ति केवल सैनिक हुआ करते थे, इसलिए उन्होंने सैनिकों को उनका उत्साह एवं अपने शासकों के प्रति स्वामीभक्ति दिखाने हेतु भी खुली छूट दे रखी थी। सैनिक लूट के माल का कुछ अंश राजकोष में जमा करते और शेष को अपने पास रख लेते थे। इसके लिए उनको वैधानिक अधिकार प्रदान किए गए थे। सैनिकों ने अनेक युद्ध केवल लूट-पाट की शर्तों पर किए थे। नगरों को जीतने के बाद बहुमूल्य वस्तुएँ शासक वर्ग अपने पास रख लेते थे और शेष को अपने सैनिकों को लूट लेने देते थे। युद्धबंदियों एवं उनके परिवारों को दास बनाने के लिए भी शासक वर्ग के साथ ही सैनिक भी स्वतंत्रता प्राप्त कर चुके थे। आक्रांताओं की सफलता का एक कारण यह भी था कि उनके सैनिकों को लूटपाट करने की खुली छूट दी जाती थी।[2]

विदेशी मुसलिम आक्रांता लुटेरों ने हिंदुओं के पशुओं को भी लूटा था, क्योंकि वे मांसाहारी थे और सुअर को छोड़कर वे हर प्रकार के पशुओं को खाने के आदी थे। इस काल के पूर्व हिंदुस्थान में पशुओं की पूजा होती थी और वे मुद्रामान के साधन भी थे। भेड़ों के बाल से प्राप्त ऊन से गर्म वस्त्र तैयार किए जाते थे, परंतु उनके चमड़ों के वस्त्र

1. गोपाल, लल्लन, इकोनॉमिक लाईफ ऑफ नार्दन इंडिया, पृष्ठ-8
2. गोपाल, लल्लन, इकोनॉमिक लाईफ ऑफ नार्दन, पृष्ठ-8 एवं आर.एस. शर्मा, सम इकोनामिक...., पृष्ठ-310-315

हिंदू समाज में कभी भी प्रचलित न थे। इसका मुख्य कारण था कि हिंदुस्थान में वस्त्र संस्कृति का प्रादुर्भाव प्राचीन काल से ही था। यहाँ कपास की खेती होती थी। सेमर के वृक्षों से भी मुलायम रूई प्राप्त की जाती थी। रेशमी वस्त्रों का उत्पादन विश्व बाजार में अपना एकाधिकार रखता था। ढाका का मलमल, कश्मीर का पसमीना, सूरत के छापेदार सूती वस्त्र तथा बनारस का रेशम व्यवसाय विश्वप्रसिद्ध था। हिंदुस्थान में उत्तम श्रेणी का कपास, उत्तम श्रेणी का सिल्क उत्पादन था। यहाँ बुनकर जाति प्राचीन काल से थी। वेदों में बुनकर तकनीकी का उल्लेख प्राप्त है।[1] दूसरी तरफ रेगिस्तानी भूमि में रहनेवाले आक्रांताओं के पास न खाने को रोटी थी और न ही तन ढकने को वस्त्र थे। ऐसी अवस्था में अपने पालतू जानवरों को मारकर खाने और उनके चमड़ों से तन ढँकने के लिए वे विवश थे। हिंदुस्थान में उनको पर्याप्त मात्रा में गाय एवं उसकी हजारों प्रजातियाँ प्राप्त हुईं, जिनको भारतीय संस्कृति और हिंदू समाज में माँ कहा जाता था। यहाँ के लोगों को गाय अमृतमय दूध देती और उनके बैलों के सहयोग से खेती होती थी। म्लेच्छ मुसलिम आक्रांताओं को गाय का मांस अधिक प्रिय था और इनके मुलायम चमड़ों के वस्त्र भी उनके पसंद के होते थे। हिंदुओं से वैर-भाव रखने के कारण भी मुसलिम आक्रांताओं ने विशेषकर गाय और बैलों को ही अधिक काटना उचित समझा था। इससे उनका हिंदुओं के प्रति उत्पन्न प्रतिशोध भी पूरा होता था, जो इसलाम किसी भी मूल्य पर स्वीकार नहीं किए थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विदेशी आक्रांताओं ने खटिक एवं अन्य हिंदू जातियों पर अनेक प्रकार का दलन एवं दमन-चक्र चलाया था, परंतु इसका सतत विरोध खटिक जाति ने किया जो आज तक मुसलमानों से स्वाभाविक वैरभाव रखते हैं। मुसलमान भी खटिक जाति से इसलिए घृणा करता है, क्योंकि उत्तर भारत के खटिक उसके शत्रु-पशु सुअर को पालता है।

खटिक जाति के लोग सत्ता पक्ष से सीधी टक्कर लेते थे। औरंगजेब के विरुद्ध 1672 ई. में इस जाति ने सत्ता के विरुद्ध संघर्ष छेड़ा—खुशाल नाम का योद्धा, जो पहले औरंगजेब की सेना में सिपहसालार था, जीवन भर विद्रोही बना रहा, शहीद हो गया।

उपर्युक्त अध्ययन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि आज का अविकसित या अर्द्धविकसित हिंदुस्थान कभी आर्थिक दृष्टि से काफी समृद्धशाली एवं वैभवशाली था। हिंदुस्थान को विदेशी अरबी आक्रांता मुसलिम शासकों ने शिकार करने की दृष्टि से सोने की चिड़िया कहा जाता था। मिलिंद ने इसके वैभवशाली जीवन का इतिहास बहुत ठीक से जाना था इसीलिए वह यहाँ आकर यहीं का बनकर स्थायी रूप से रह

1. ऋग्वेद, अध्याय-2

गया। विश्वविजय का स्वप्न लेकर चल पड़े सिकंदर के सैनिकों ने कठिकों की मार खाने के बाद अपने घरों को उल्टे पाँव भाग जाना ही उचित समझा। खटिक जाति ने अरबों, तुर्कों, मुगलों का आक्रमण असफल किया और उनका मुँहतोड़ जवाब दिया। महमूद गजनबी से कई बार लोहा लिया और उसे बुरी तरह से हराया भी। तैमूरलंग से खटिक जाति ने अपने दम पर लोहा लिया था। वे अपने लोगों द्वारा आंतरिक कलहों और षड्यंत्र करने से पराजित हुए थे।

□

*अध्याय-4*

# खटिक जाति द्वारा हिंदू धर्म, संस्कृति एवं स्वाभिमान की रक्षा

खटिक जाति की विशेषता है कि यह जाति हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति एवं स्वाभिमान के प्रति सदैव सजग रही। खट्टिक ब्राह्मण के रूप में उसने हिंदू वैदिक धर्म के याज्ञिक कार्यों का संपादन बड़ी निष्ठा के साथ संपन्न किया। वैदिककाल में खटिक के लिए यज्ञ-पशुओं को बलि देने की वृत्ति सुनिश्चित की गई थी। कालांतर में वैदिक संस्कृति पर आधारित समाज का स्वरूप विस्तृत होता चला गया था। तत्कालीन मानवों के समुदाय में वैदिक सिद्धांतों की स्थापना के साथ अवधारणा का फैलाव हुआ। वैदिक समाज की रक्षा एवं बाह्य शक्तियों से टकराव हेतु वैदिक व्यवस्था में क्षात्र धर्म यानी रक्षा कार्य की संस्कृति विकसित हुई। शक्तिशाली योद्धा एवं धर्माभिमानी वैदिक-कालीन खट्टिक ही क्षात्र धर्म के लिए उद्यत हुए। यज्ञों में बलि-प्रथा जब धीरे-धीरे समाप्त होने लगी तथा वर्तमान खटिक जाति के पूर्वजों को मांस-व्यवसाय और धर्म-रक्षा के बाद देश-रक्षा यानी क्षात्र धर्म के कार्यों में समाहित किया गया। इस अवस्था में वह क्षत्रिय धर्म का संवाहक हो गया था। इस श्रेणी में उसके सामने पहला कार्य देश-रक्षा का था। उसने अनेक विदेशी आक्रांताओं का सामना किया और उनको भारत में आने से रोका। उसकी कठोरता को देखकर लोग उनको कठ, कठिक आदि कहने लगे। वह जहाँ निवास करता था उसे काठियावाड़ और उसके राज्य को कठोर राज्य कहा गया। देश में जब भी किसी विदेशी आक्रांता से युद्ध होता, खटिक सैनिकों को मोरचे पर लगा दिया जाता अथवा भेज दिया था। धीरे-धीरे इनका कार्य युद्ध करना हो गया और इनसे उत्पन्न अनेक गोत्र क्षात्र धर्म के पालन के कारण क्षत्रिय के रूप

में चिह्नित हुए। इतना महत्त्वपूर्ण दायित्व इस जाति को इसलिए सौंपा गया था कि इसमें हिंदू धर्म, संस्कृति एवं राष्ट्र के स्वाभिमान की रक्षा करने की आंतरिक और बाह्य, दोनों प्रकार की शक्तियाँ थीं। बलि कार्य के कारण खटिक जाति में योद्धा भाव अनुवांशिक एवं स्वाभाविक था।

प्रस्तुत अध्याय में उपरोक्त के सापेक्ष उत्तर भारत में हिंदू एवं विदेशी मुसलमानों के युद्धों को संक्षेप में बतलाया गया है। उन युद्धों में हिंदू खटिक जाति की क्या भूमिका थी, मुख्य रूप से इसके बारे में उल्लेख किया गया है। खटिक जाति ने इसलामिक जेहाद का प्रत्युत्तर दिया, विदेशी इसलामिक शासकों द्वारा धर्म परिवर्तन का चलाया गया अभियान हिंदू खटिक जाति के लोगों ने किस प्रकार से रोका और किस तरह से सुअर आदि पालकर हिंदू धर्म की रक्षा की। खटिक जाति ने हिंदू संस्कृति की रक्षा कैसे की, इसका भी विस्तृत उल्लेख प्रस्तुत अध्याय में किया गया है। अंत में यह भी उल्लेख किया गया है कि इसलामिक अत्याचारों से टक्कर लेती खटिक जाति किस प्रकार से आज हिंदू स्वाभिमान की रक्षक मानी जाती है।

## 4.1 उत्तर भारत में हिंदू एवं मुसलमानों का युद्ध

युद्ध के उद्देश्य से विदेशी मुसलिम आक्रांता सर्वप्रथम तो समुद्री मार्ग से ही पश्चिम की ओर से आए थे, क्योंकि वे पश्चिमी तट पर रहकर हिंदुस्थान के साथ व्यापारिक संबंधों के सापेक्ष रोटी प्राप्त करते थे। अतएव पश्चिम का अनुभव उनको था और उन्होंने उसी का लाभ उठाते हुए सर्वप्रथम थाना (बंबई), भरोच या भड़चि (पाकिस्तान) और देवल (पाकिस्तान) पर आक्रमण किए थे। उस युद्ध में उसका सेनापति धर्मांतरित मुसलमान मुकिरात देवल मारा गया और आक्रांता जान बचाकर भाग निकले थे।[1] तदुपरांत वे स्थल मार्ग से आक्रमण किए और मुख्यत: पास में पड़नेवाले पश्चिम भारत के राज्यों को ही पहले अपना निशाना बनाया। पश्चिम भारत में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के बाद अथवा उसी समय से विदेशी मुसलिम तुर्क आक्रांता उत्तर भारत के बलवान राजाओं से युद्ध करने लगे थे। आरंभ में उत्तर भारत के राजाओं से युद्ध करने का उन्होंने प्रयास नहीं किया, बल्कि पश्चिम प्रांतों के राजाओं पर आक्रमण के लिए उनसे अनुमति माँगी, उनका सहयोग प्राप्त किया और उनको तटस्थ रहने पर लूट के माल का हिस्सा देने का लालच भी दिया। उत्तर भारतीय नरेश उनके छल-कपट को नहीं समझ सके कि वही विदेशी मुसलिम मक्कार आक्रांता कालांतर में उनसे भी युद्ध लड़ेंगे। उन्होंने यह नहीं सोचा था कि विदेशी आक्रांता इस देश में शासन करने के अभिप्राय से भी स्थापित हो

1. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान एवं पतन, पृष्ठ-11

सकते हैं। उनकी सोच केवल यही थी कि वे लूट-मार करके लूटपाट का निर्धारित हिस्सा उन्हें देने के उपरांत भारत से चले जाएँगे।

विद्वान् इतिहासकारों ने इस प्रश्न पर अत्यंत गंभीरता से विचार करना चाहा है कि विदेशी आक्रांताओं ने पश्चिमोत्तर भारत पर आक्रमण के साथ विजय में सफलता उस समय प्राप्त की जब हिंदुस्थान में केंद्रीय सत्ता 648 ई. में हर्षवर्द्धन के निधन के साथ ही समाप्त हो गई थी। और दूसरी तरफ पश्चिमोत्तर भारत में मुसलमान आक्रांतों का केंद्रीय शासन उस समय सुदृढ़ हो पाया था जिस समय हिंदू राज्यों को वे अपने अधीन कर चुके थे और उत्तर भारत में भी कोई शक्तिशाली राजा नहीं रह गया था। इसी के सापेक्ष अपने उद्गार डॉ. रामधारी सिंह दिनकर ने इन शब्दों में व्यक्त किए हैं...

"इसलाम के आने से देश की राजनैतिक व्यवस्था में परिवर्तन एवं विदेशी शासन की स्थापना हुई। किंतु मुसलमानों ने जैसी शासन-व्यवस्था उत्तर भारत में स्थापित की, वैसी शासन-व्यवस्था का विधान वे दक्षिण भारत में नहीं कर सके। उत्तर में भी असम पूर्ण रूप से मुसलमान शासन के अधीन कभी नहीं आया। यह भी ध्यान देने की बात है कि औरंगजेब पर जब दक्षिण को अपने बस में लाने की धुन सवार हुई, तब मुगल साम्राज्य का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया।"[1]

दिनकरजी के कथन की समीक्षा करने पर यह पाया जाता है कि रेगिस्तानी भूमि के निवासी विदेशी आक्रांताओं को पहाड़ी क्षेत्रों में युद्ध का अच्छा अभ्यास नहीं था और वे कभी-कभी पर्वतीय जातियों से जिनकी संख्या बहुत ही कम होती थी, युद्ध करने में हार जाते थे या भागकर मैदानों में युद्ध की रणनीति बनाते थे। उनमें असम और दक्षिण के विंध्य शृंखला के प्रति जो विवशता पाई जाती थी उसका कारण यही था। कठ-जातियों से भी वे इसलिए घबराते थे क्योंकि कठ (खटिक) जाति का अभ्यास मैदानी भागों में युद्ध करने का तो था ही, वे पर्वतीय क्षेत्रों में भी अच्छी मोरचेबंदी कर लेते थे। खटिकों के रण-कौशल को देखते हुए ही उनको पश्चिम और उत्तर के हिंदू राजाओं की सेना में सदैव अच्छा स्थान दिया गया था।

खटिक जाति के सैनिक और सेनानायक हिंदू राजाओं को युद्ध का गुर भी बतलाया करते थे। राणा सांगा को उन्होंने सदैव यही कहा कि वह स्वयं ही दिल्ली के सुल्तान इब्राहिम लोदी से लोहा ले और दिल्ली छीन ले, परंतु किसी भी दशा में बाबर को आमंत्रित न करें अन्यथा वह भी अवसर का लाभ उठाकर हिंदुस्थान में अपने वंश का शासन स्थापित करने से बाज नहीं आएगा। राणा सांगा ने उस समय इन सुझावों पर ध्यान नहीं दिया और उसका बुरा परिणाम उनको स्वयं भुगतना पड़ा। उन्होंने तो लोहे से लोहे

1. दिनकर, डॉ. रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-307

को काटने की रणनीति अपनाई थी, परंतु लोगों ने उनको देशद्रोही इसलिए कहा क्योंकि उन्होंने बाबर को आमंत्रित किया था और वह भी हिंदुस्थान की धरती पर राज्य करने के लिए। यदि वह कोई रणनीति के अंतर्गत यह कार्य किए थे तो उनको इब्राहीम की पराजय के बाद, बाबर के थक चुके सैनिकों को बाबर सहित मारकर हिंदुस्थान में हिंदू राज्य को पुनर्स्थापित करना चाहिए था। खटिक जाति की यह इच्छा भी बहादुरी के साथ युद्ध करनेवाले राजपूत राजा राणा सांगा अपनी नासमझी के कारण नहीं कर सके थे जबकि इसके लिए उनको संपूर्ण खटिक सैनिक प्रोत्साहित करते थककर रह गए थे।

खटिक सैनिकों की युद्धनीति का स्वागत राणा प्रताप ने किया था। अकबर जैसे महान् विजेता के सामने उनके पास बहुत कम सेनाएँ थीं, परंतु उनके ही बल पर वे अपने कई एक छीने हुए दुर्गों को वापस प्राप्त करने में सफल रहे और हिंदू स्वाभिमान की रक्षा करके आज भी मर्यादित हैं। उन्होंने सदैव पर्वतीय भूमि में लोहा लिया और गुरिल्ला युद्ध नीति से अकबर की सेना को शिकस्त दी। अनेक युद्धों में उनके खटिक सैनिक निरंतर मारे जाते थे, जिसके फलस्वरूप उनकी संख्या कम हो गई। चित्तौड़ को वापस प्राप्त करने का उनका अधूरा स्वप्न इसलिए रह गया कि उस समय तक उनकी सेना में खटिक योद्धा प्राय: नहीं के बराबर रह गए थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्तर भारत और पश्चिम भारत, दोनों में ही खटिक सैनिकों ने विदेशी आक्रांताओं के साथ जूझने और उनका हौसला पस्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। सिकंदर, तैमूरलंग आदि को भगाने के साथ ही महमूद गजनबी और मुहम्मद गौरी के बार-बार के आक्रमणों को दृढ़ता से मुकाबला इन्हीं लोगों के वश की वात थी। उत्तर भारत के हिंदू राज्यों का पतन इनकी उपेक्षा करने से हुआ होगा, इसमें संदेह नहीं है।

मुहम्मद गौरी के आक्रमण के समय (बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में) उत्तर भारत की राजनैतिक दशा चिंतनीय थी।[1] उत्तर भारत में कन्नौज के प्रतिहार राजपूतों का विशाल राज्य जो पश्चिम में पंजाब से एवं पूर्व में बंगाल तक तथा उत्तर में हिमालय से एवं दक्षिण में नर्मदा तक फैला हुआ था और वे प्रतिहार राजपूत भारत के द्वार के रक्षक माने जाते थे। उस समय वे भी अवनति को प्राप्त हुए। प्रतिहार राजपूतों ने अरबों को भी पराजित किया था। इस वंश के पराभाव के बाद उत्तर भारत में जो राजपूत राज्य बन सके उनके नाम इस प्रकार थे—अजमेर के तहमान, बुंदेलखंड के चंदेल, मालवा के परमार, गुजरात के चौलुक्य, त्रिपुरी के कलचुरी तथा कन्नौज के गहढ़वाल इत्यादि। उस समय किसी भी राज्य की शक्ति का आकलन उनके सामंतों की संख्या से की जाती थी। राज्यों

1. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पृष्ठ-5

के पास कोई बड़ी सेना भी नहीं होती थी और युद्ध के समय सामंतों की एकत्रित सेनाएँ ही राज्य की सेना हुआ करती थी। स्पष्ट है कि युद्ध में विजय या पराजय सामंतों के हाथ में रहती थी। विदेशी अरेबियन आक्रांता तुर्क एवं मुसलमान शासकों ने हिंदू राज्यों पर विजय उनके लोभी एवं विश्वासघाती सामंतों को ही मिलाकर प्राप्त की थी। यद्यपि प्रत्येक युद्ध में हिंदू बहादुरी के साथ लड़े थे पर विजयी नहीं हो पाए थे। उनकी पराजय का कारण डॉ. रामधारी सिंह दिनकर ने इन शीर्षकों में बतलाया है—हिंदुओं का राजनैतिक जीवन मंद होना, उनमें राजनीतिक चेतना का अभाव, सर्वनाशी अंधविश्वास, धर्म की बाधा, जाति से बड़ी जात और ब्राह्मण-बौद्ध मतभेद विशेष थे।[1]

मालवा के परमारों को गुजरात के चौलुक्य, कलचुरी नरेशों और कल्याणी के चालुक्यों से एक साथ युद्ध करना पड़ा था, जिसके फलस्वरूप परमार टूट चुके थे। परंतु बाद में वे पुनः अपना राज्य प्राप्त किए। 1172-76 ई. तक वहाँ का राजा अजयपाल था।

बुंदेलखंड के चंदेल शासक धंग (945-1010 ई.) ने पंजाब के शासक जयपाल और आनंदपाल का सहयोग उन दिनों किया था जब पंजाब पर सुबुक्तिगीन और सुल्तान महमूह ने चढ़ाई की थी। धंग के पौत्र विद्याधर ने भी महमूद को दो बार हराया था। कलचुरियों ने चंदेलों का वैभव नष्ट किया किंतु पुनः चंदेल उन्नत हो गए थे। उनको पृथ्वीराज चौहान और कुतुबुद्दीन ऐबक के आक्रमणों का शिकार होना पड़ा था।

उत्तरी बंगाल के पाल शासकों में रामपाल ने राज्य की सीमा को बढ़ाया था, परंतु उसकी मृत्यु के बाद पालों का राज्य केवल उत्तरी बंगाल तक ही सीमित रह गया था। कुमारपाल और मदनपाल (1130-1150 ई.) दुर्बल शासक हुए। पालवंश के पतन का लाभ सेन वंश को मिला। विजयसेन ने इस राजवंश को विकसित किया था। इस वंश का अंतिम शासक लक्ष्मण सेन हुआ जिसने 1179 से 1205 ई. तक शासन किया था।

गुजरात के चौलुक्य राजा मूलराज के वंश में भीम प्रथम (1022-64 ई.) के समय में ही महमूद गजनबी ने सोमनाथ मंदिर को लूटा था। मूलराज द्वितीय के शासन-काल में जब राज्य का कार्यभार उसकी माता (नायकी देवी) देख रही थी, मुहम्मद गौरी ने चौलुक्य राज्य पर आक्रमण कर दिया। आबू पर्वत के निकट गदरघाट पर रक्तरंजित युद्ध हुआ, जिसमें मुहम्मद गौरी बुरी तरह घायल हो गया और अपने शेष बचे सैनिकों के साथ भाग गया।

कन्नौज के प्रतिहारों के पतन के बाद गहढ़वाल राजवंश का शासन स्थापित हुआ। राजा चंद्रदेव इस वंश का संस्थापक था। गोबिंदचंद्र और उसके पुत्र विजयचंद ने तुर्कों के आक्रमणों का निरंतर उत्तर दिया। अजमेर के चहमानों से पराजित होने के बाद इस

---

1. दिनकर, डॉ. रामधारी सिंह : पूर्वोद्धृत, पृष्ठ-257-267

राजवंश के हाथ से दिल्ली निकल गई परंतु मगध पर अधिकार बना रहा। जयचंद्र इस वंश का अंतिम शासक था जिसके सहयोग के कारण मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान पर विजय प्राप्त की और बाद में जयचंद को भी हराया।

अजमेर का चहमान राजवंश सपादलक्ष (जंगलदेश) में स्थापित हुआ। इस वंश के विग्रहराज चतुर्थ ने गजनी और लाहौर के शासक बहरामशाह (1117-1157 ई.) और उसके उत्तराधिकारी खुशरूशाह (1157-1164 ई.) को भी लगातार पराजित किया था। उसने मुसलिम राज्यों को भी जीता और 1152 ई. में दिल्ली पर भी अधिकार कर लिया था। परंतु उसे एक ओर हिंदू राजाओं से तो दूसरी ओर गजनी के यामिनी शासकों से निरंतर युद्ध करना पड़ा था।[1] इस वंश के पृथ्वीराज द्वितीय ने भी पंजाब की मुसलिम सेना को पराजित किया था। तदुपरांत पृथ्वीराज तृतीय जो मात्र 11 वर्ष का था, शासक बना। उसे पराजित करने हेतु मुहम्मद गौरी निरंतर सोचता रहता था। तराइन के द्वितीय युद्ध (1192 ई.) में मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज को हराया। उसके पूर्व वह हारता रहा था।

उपरोक्त के अतिरिक्त त्रिपुरी अथवा दाहल के कलचुरी, मेवाड़ के गुहिल राजपूत, नाडौल तथा जालौर के चाहमान राजपूत, असम और कामरूप के हिंदू शासक आदि ने भी विदेशी आक्रांता मुसलिम शासकों को मुँहतोड़ उत्तर दिया था। वल्लभदेव (1205 ई.) ने बख्तियार खिलजी को पराजित करके सल्तनतकाल को चुनौती दे डाली थी। दुःख का विषय यह था कि हिंदू राजाओं ने आपस में भी अधिक लड़कर अपनी शक्ति विनष्ट कर डाली थी और विदेशी तुर्क एवं मुसलिम आक्रांताओं के आक्रमणों का सामना हिंदू होने के नाम पर एकजुट होकर नहीं करते थे, यही कारण था कि वे बारी-बारी से सत्ताच्युत होते गए और भयंकर युद्ध करने के उपरांत भी पराजित होते रहे।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि 1192 से 1204 ई. तक संपूर्ण उत्तर भारत के हिंदू राज्यों का पतन हो चुका था और दिल्ली, झाँसी, मेरठ, बुलंदशहर, अजमेर, गहड़वाल राज्य, बयाना, ग्वालियर, गुजरात, उत्तरी दोआब, राजपूताना, बुंदेलखंड, बंगाल आदि सभी स्थानों पर अरब के विदेशी मुसलिम आक्रांताओं का शासन स्थापित हो चुका था। इसके अनेक कारण थे। परंतु उन सभी कारणों में एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी था कि हिंदू राजा अपने सैन्य प्रबंधन में मनमानी करते थे और योद्धा तथा पराक्रमी जाति के सैन्य सुझावों पर ध्यान नहीं देते थे। तत्कालीन खटिक सैनिकों एवं युद्ध में निपुण सेनानायकों के आवश्यक सुझावों पर भी कोई ध्यान नहीं दिया था, इसलिए उत्तर भारत में हिंदू तथा मुसलमानों के युद्ध का परिणाम अरेबियन विदेशी आक्रांता मुसलमानों के पक्ष में रहा।

---

1. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : डिसइन्टिग्रेशन ऑफ नॉर्थ इंडियन हिंदू स्टेट्स खंड-1, पृष्ठ-8

## 4.2 इसलामिक जेहाद का मुँहतोड़ जवाब

यद्यपि यह सिद्ध हो चुका है कि अरब के विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने सदैव हिंदुस्थान की समृद्धि को लूटने और यहाँ स्थायी रूप से राज्य करने के लिए ही निरंतर आक्रमण किए, परंतु यह मिथ्या प्रचारित किया जाता है कि उन्होंने अपने इसलाम धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए ही गैर-मुसलिम देशों पर आक्रमण किया था। उन्होंने अपने युद्ध की सफलताओं के लिए एक धार्मिक जेहाद छेड़ रखा था, ताकि विश्व के अन्य इसलाम शासित देश उनको आक्रमण करने से मना न करें। मुसलिम देशों में अब भी संकटकालीन परिस्थितियों में सभी मुसलिम देशों को एकत्रित एवं संगठित करने के लिए धार्मिक जेहाद की घोषणा की जाती है, ताकि इसलाम पर खतरा के नाम पर विश्व भर में रहनेवाले समस्त मुसलमानों की सहानुभूति एवं समर्थन प्राप्त की जा सके। युद्ध में मुसलिम सेनाएँ भागने न पाए और उनका मनोबल टूटने न पाए, इसके लिए जंग के मैदान में डटे रहने, मरते दम तक लड़ते रहने आदि के लिए सेनानायक अथवा सुल्तान इसलाम पर खतरा के नाम पर जेहाद का नारा लगाते थे।

इसलाम धर्म में नमाज, रोजा, जकात, हज और जिहाद को मूल रूप में मान्य किया गया है। जिहाद को राष्ट्रीय कर्तव्य की भी संज्ञा प्रदान की गई है। जिहाद का सामान्य अर्थ है इसलाम की रक्षा के लिए युद्ध अथवा धर्मयुद्ध। आरंभ में भी इसका अभिप्राय किसी भयानक अथवा पवित्र कार्य से नहीं था। इस शब्द का अभिप्राय अरब के देशों में ताकत, शक्ति या वर्चस्व से लगाया जाता था। क्लेन नामक विद्वान् ने जिहाद का अभिप्राय संघर्ष से लगाया है और इसके कुल तीन क्षेत्र भी बतलाए हैं—(1) दिखाई देनेवाले शत्रु के विरुद्ध संघर्ष, (2) न दिखाई देनेवाले शत्रु (जिन) के विरुद्ध संघर्ष और (3) इंद्रियों के विरुद्ध संघर्ष।

जिहाद के विषय में कुछ लोगों का यह मानना है कि इसलाम के प्रचार के लिए जो लड़ाइयाँ लड़ी गईं, उन्हें पवित्र विशेषण देने के लिए ही इन शब्द का प्रचलन किया गया। अन्यत्र भी कहा गया है कि जिहाद का अर्थ इसलाम के प्रचार के लिए युद्ध करना नहीं है। कुरान में जहाँ कहीं भी इस शब्द का उल्लेख हुआ वहाँ उसका अर्थ परिश्रम, उद्योग या सामान्य संघर्ष ही है।[1] इसी के सापेक्ष जिहाद के अंतर्गत हज का भी नाम लिया जाता है और कहा जाता है कि सबसे अच्छा जिहाद हज है। नबी ने भी जिहाद का अर्थ युद्ध से नहीं लगाया था। वह तलवार उठाने का मंतव्य केवल आत्मरक्षा से ही लगाते थे। परंतु जब अरेबियन मुल्ला और काजी सर्वेसर्वा बन बैठे तब से जिहाद का

---

1. अली, मुहम्मद : रिलीजन ऑफ इसलाम (दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-242

अर्थ भी बदल गया और उसका प्रयोग युद्धस्थल के आलोक में किया गया।

जिहाद के प्रति कठोर राज्य के निवासियों की एक अलग धारणा थी। उनका मानना था कि विदेशी आक्रांता लूट-पाट के लिए जो चेतावनी देना चाहते थे, उसी को वह जिहाद कहते थे, अर्थात् चोरी न करके डकैती डालने की चुनौती। अपने इस संकल्प को ही वे जिहाद कहते थे। उनके अनुसार जिहाद का अभिप्राय कभी भी धर्म-युद्ध से नहीं था, क्योंकि विदेशी आक्रांता कभी भी और कोई भी युद्ध धार्मिक नियमों के अनुसार नहीं किए थे। यही कारण है कि युद्ध में उनके चिल्लाने और ललकारने को ही कठ लोगों ने जिहाद माना और उसके प्रत्युत्तर में खटिक योद्धाओं ने भी सर्वप्रथम 'हर-हर महादेव' का नारा लगाया। इसका प्रमाण यह है कि जब भी सांप्रदायिक झगड़े होते हैं, इसलामिक मानसिकतावाले अल्लाहो-अकबर का नारा लगाते हैं तो हिंदू लोग 'हर-हर महादेव' कहते हैं। यह नारा खटिक जाति की हिंदुओं का देन हैं।

महमूद गजनबी, मुहम्मद गौरी और उसके बाद के सुल्तानों और मुगलों ने जब भी हिंदुओं से जिहाद का राग अलापते हुए आक्रमण किया तब-तब हिंदू लोगों ने भी उनका उत्तर ललकारते हुए दिया। इसलामिक जिहाद का मुँहतोड़ जवाब देने में खटिक जाति के लोग मध्यकाल से आज तक सबसे आगे देखे जाते हैं क्योंकि इसलामिक घातों के प्रति घातक प्रहार करने का साहस अभी भी खटिक जाति में देखा जा सकता है।

विदेशी मुसलिम आक्रांता जिहाद को अपने आक्रमणों की प्रतिष्ठा से जोड़ देते थे ताकि सभी सैनिक युद्ध को जीतने में ही अपना तन-मन-धन न्योछावर कर दे।

खटिक जाति के सैनिक भी अपने हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू राष्ट्र के सम्मान के लिए उसी उत्तेजना के साथ आक्रमणों का प्रत्युत्तर देते थे। आक्रांताओं के जिहाद अनेक बार असफल हुए थे और बुरी तरह रौंदे जाने के बाद उनको अपने जिहाद की याद तक भूल गई थी। कायरों की तरह भागते समय उनको सही रास्ता तक नजर नहीं आता था। इससे स्पष्ट होता है कि हिंदू के जयघोष हर-हर महादेव की तुलना में विदेशी आक्रांताओं के जिहाद में कोई दम नहीं था, क्योंकि इसका प्रयोग गलत उद्देश्यों की पूर्ति के लिए गलत तरीके से किया जाता था।

## 4.3 विदेशी इसलामिक शासकों द्वारा धर्मपरिवर्तन अभियान

विदेशी मुसलिम शासक इसलाम मजहब प्रचार एवं प्रसार के लिए अंधे हो चुके थे। मारना-काटना एवं स्व को स्थापित करते हुए अधिकतम भोग-विलास़ की वस्तुओं को प्राप्त करना ही उनका मुख्य लक्ष्य था। इसके लिए सबसे आवश्यक कार्य था समस्त लोगों को इसलाम पंथ में शक्ति के बल पर धर्मांतरित करना एवं तब उन पर वर्चस्व कायम करना। अनेक ईसाई देशों को उन्होंने मुसलिम देश के रूप में पूर्णरूपेण परिवर्तित

भी कर दिया, परंतु संपूर्ण हिंदू धर्मानुयायियों को मुसलमान बना देने का उनका प्रयास सदैव असफल रहा। इसके लिए मुसलिम आक्रांताओं ने योजनाबद्ध तरीके से काम किया और व्यापक अभियान भी चलाया।

सर्वप्रथम विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने सूफियों को इसलाम धर्म का प्रचार करने के लिए अपनी योजनानुसार हिंदुस्थान में भेजा। वे झाड़-फूँक और तंत्र-मंत्र का भी काम करते थे। औलिया एवं सूफी संतों के रूप में विदेशी आक्रांताओं के भेजे गए गुप्तचर हिंदुओं की गलियों में टहलते थे और विशेषकर आर्थिक दृष्टि से कमजोर लोगों को गोपनीय ढंग से स्वर्ण मुहरें देकर मुसलिम बनाने का प्रयास करते थे। कमजोर स्थिति वालों को वे अवसर देखकर डराते और धमकाते भी थे। उनका कहना था कि इसलाम स्वीकार कर लेने पर उनको न तो कर देना होगा और न ही जिंदगी से हाथ धोना पड़ेगा। उनको न तो गुलाम बनाया जाएगा और न ही उनकी स्त्रियों को उनसे छिनकर गुलाम बनाकर उन्हें अरब के देशों में भेजकर बेच दिया जाएगा। स्त्रियों को इसकी जानकारी अवश्य दी जाती थी, ताकि वे अपने पुरुषों को मुसलमान बनने हेतु प्रेरित करें।

दूसरा अभियान मुसलिम मदरसों के माध्यम से चलाया जाता था। हिंदू विद्यालयों के अध्यापकों को कहा जाता था कि वे गरीबों के बच्चों को अपने यहाँ न पढ़ने दें और उनको तिरस्कृत कर भगा दें ताकि वे मदरसों में पढ़ने के लिए विवश हो जाएँ। विदेशी मुसलिम क्रूर शासकों की दूरगामी सोच यह थी कि हिंदू बालक-बालिकाएँ यदि मदरसों में अध्ययन हेतु आएँगे तो उनको अनिवार्य रूप से फारसी पढ़ाई जाएगी और यही विशेषता बाद में उनको इसलाम स्वीकार करने में सहायक सिद्ध होगी। मुगलकाल के लोग आज नहीं हैं, किंतु उस अवस्था का वर्णन लोग आज भी करते हैं। हिंदुस्थान की शिक्षा-व्यवस्था को इन विदेशी आक्रांता मुसलमानों ने नष्ट कर दिया था। इस देश में शत-प्रतिशत साक्षरता थी। कोई अनपढ़ नहीं होता था। प्रत्येक ग्राम में एक विद्यालय था। उस विद्यालय का पोषण उसी विद्यालय के साथ अथवा निकट दस से पंद्रह एकड़ की सर्वोत्तम एवं उपजाऊ भूमि समाज द्वारा पोषित थी। जिससे विद्यालय, शिक्षक एवं गरीब छात्रों का पोषण चलता था। स्वपोषित यह व्यवस्था विद्यालयों के अवरोधरहित संवर्धन हेतु पर्याप्त था। किंतु मुसलमान शासकों ने इसे तहस-नहस कर दिया। विद्यालय की भूमि धर्मांतरित नए मुसलमानों में बाँटकर हिंदुस्थान से शिक्षा व्यवस्था को जड़मूल से नष्ट कर दिया। बचे-खुचे विद्यालयों में विदेशी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा बलपूर्वक दमन एवं दलन करके बनाई गई दलित जाति के बच्चों एवं निर्धनों का प्रवेश पर प्रतिबंध था।[1] भारत में हुए इस त्रासदी एवं इसलामिक आदेशों की चर्चा कोई समाज-सुधारक अथवा इतिहासकार नहीं करता बल्कि सारा दोष वर्तमान क्षत्रिय और ब्राह्मण अध्यापकों

1. धर्मपाल : रमणीय वृक्ष

पर डाला जाता है और यह कहा जाता है कि यदि आजादी नहीं मिली होती तो आज भी किसी दलित के घर के बच्चों को तथाकथित उच्च जाति के अध्यापक पढ़ने नहीं दिए होते। यह सोच पूर्णतः त्रुटिपूर्ण है। वस्तुतः इसके लिए तो मध्यकाल में ही विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों द्वारा नींव रखी गई थी और उस पर भेदभाव का महल बनाने का काम यूरोप के विदेशी शासक अंग्रेजों ने किया। वे भी चाहते थे कि सारे हिंदू बच्चे उनके चर्चों द्वारा चलाए जा रहे स्कूलों में ही पढ़ें इसलिए उन्होंने भी तत्कालीन अध्यापकों को यह आदेश दे रखे थे कि दलित वर्ग के बच्चों को शिक्षा का अवसर नहीं दिया जाए ताकि वे मिशनरियों द्वारा संचालित विद्यालयों में अध्ययन को विवश हो जाएँ। मध्ययुग में धर्म-परिवर्तन के लिए यह भी एक अभियान के अंतर्गत चलाया गया विदेशी शासकों का कुकृत्य था।

धर्म-परिवर्तन के लिए विदेशी इसलामिक शासकों द्वारा विविध प्रकार से आर्थिक उत्पीड़न का अभियान चलाया गया था। कृषि-उत्पादों का आधा भाग कृषि-कर के रूप में बलपूर्वक ले लिया जाता था। कर-वसूली करनेवाले को अलग से देना पड़ता था।[1] उसके बाद जजिया कर आदि भी इसी उत्पाद से दिए जाते थे। अकाल और बाढ़ के समय भी कर लिए जाते थे। कर न दे सकने पर उत्पीड़ित किया जाता था और इसलाम स्वीकार करने के लिए विवश किया जाता था। जो इसलाम स्वीकार कर लेते थे, उनसे कर नहीं लिए जाते थे और कर माफ भी कर दिया जाता था।

कृषि उत्पादों में आग लगाकर उसे राख कर देना, अपने घोड़ों और अन्य मवेशियों से हिंदू किसानों के खेतों को चरा लेना और पके हुए अन्नों को बलपूर्वक काटकर ले जाना मुसलिम सैनिकों के काम थे। त्रस्त होकर जो हिंदू लोग गाँव छोड़कर घर से भाग जाते थे, तो उनके कर उनके पड़ोस में रहनेवाले से वसूले जाते थे और जब सभी गाँव के लोग विदेशी आक्रांताओं से भयभीत होकर भाग जाते तो गाँव में आग लगाकर जला दिया जाता था और उनकी तलाश जंगलों में की जाती थी। इसके लिए जंगल काट दिए जाते, लकड़ियाँ बिना किसी लागत के मुसलमानों में बाँट दी जाती और जो भी हिंदू जंगलों में पाए जाते उनको जानवरों की तरह मार दिया जाता था।[2] मनोरंजन के लिए वनवासियों का आखेट किया जाता था। जो वनवासी आत्मसमर्पण कर देते और इसलाम स्वीकार पर राजी हो जाते उनको गाँवों में लाकर बसा दिया जाता था।

हिंदुओं की पशु-संपदा को इसलिए नष्ट कर दिया जाता था कि वे बलपूर्वक भी इसलाम स्वीकार नहीं करते थे। दूध देनेवाली गायें छीन ली जाती अथवा मनचाहे मूल्य देकर ले ली जाती थीं। भेड़-बकरियाँ रात के अँधेरे में चुरा ली जातीं अथवा शासकों

1. हबीब इरफान, दी एग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुगल इंडिया, पृष्ठ-181
2. ईश्वरी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ करौना टकर्स, पृष्ठ-67

द्वारा आदेशित किसी कर आदि के बदले में ले ली जाती और उन्हें तुरंत मारकर खा डाली जाती थीं। अपनी पसंद से पशुपालन करने हेतु स्वतंत्रता नहीं थी। जिस पशु की उपयोगिता अधिकतर मुसलिम सुल्तानों को रहती थी, उन्हीं जानवरों को पालने दिया जाता था। हिंदुओं से पशु कर और चरागाह कर भी वसूले जाते थे। धर्मांतरित मुसलमानों के परिवारों को इस प्रकार से उत्पीड़ित नहीं किया जाता था। धर्म-परिवर्तन का यह भी हिंदुओं के विरुद्ध एक क्रूरतापूर्ण अभियान था।

आंतरिक व्यापार बाजार निर्धारित स्थानों पर लगाए जाते थे। कोई भी मुसलिम किसी भी वस्तु को अपने इच्छित मूल्य पर बलपूर्वक ले लेता था। दुर्लभ वस्तुएँ जो कान्यकुब्ज के बाजारों से आती थीं उनको राज्यकर्मी सुल्तान के लिए निःशुल्क ले लेते थे। हिंदू व्यापारियों से ही मंडी-कर, व्यापार-कर, व्यवस्था-कर आदि वसूल किए जाते थे। हिंदू व्यापारियों की आर्थिक शक्ति कमजोर कर दी जाती थी, ताकि वह विवश होकर इसलाम स्वीकार कर ले। हिंदुओं को निर्धन बनाए रखने का नियम बनाया गया था।[1]

हिंदू घरेलू उद्योग-धंधों को नष्ट कर दिया जाता था। हिंदू शिल्पियों से बेगार जैसे कार्य लिए जाते थे। इनकार करने पर उनके हाथ काट दिए जाते थे। सुल्तानों की स्थिति यह थी कि वे अपने अद्‌भुत निर्माणों को अद्वितीय बनाए रखने के लिए काम करवाने के बाद हिंदू शिल्पियों के हाथ काट देते थे जिससे कि वे शिल्पी वैसा निर्माण कहीं अन्यत्र न कर सकें। हिंदुस्थान के लघु-कुटीर उद्योग धंधों को नष्ट किया गया। वैदिक-कालीन वस्त्र उद्योग को प्रभावित करने के लिए हिंदू संस्कृति में अपवित्र एवं हेय समझी जानेवाली चमड़े की वस्तुएँ एवं उनके उत्पादन हेतु चर्म उद्योग को प्रोत्साहित किया गया था।[2] अच्छी मजदूरी उन्हीं शिल्पियों को दी जाती थी जो मुसलिम होते थे और हिंदू शिल्पियों को उनके काम की कम मजदूरी दी जाती थी। इसका भी अभिप्राय यह था कि वे शिल्पी किसी प्रकार से इसलाम स्वीकार कर लें।

हिंदू युद्धबंदी पुरुषों के साथ अमानवीय व्यवहार किए जाते थे, ताकि वे विवश होकर इसलाम स्वीकार कर लें। उनको जिंदा कड़ाहे में डाला जाता, उनको जीवित अवस्था में ही खाल उतारते और उस पर नमक-मिर्च लगवाते थे। इसलाम ठुकराने पर उनको चौराहों पर फाँसी देते, शूली पर लटकाते और जिंदा जलाते थे। उनके ही सामने उनके बच्चों की निर्मम हत्या की जाती थी और स्त्रियों को गुलाम बनाकर बगदाद की सड़कों पर कौड़ियों के मोल नीलाम कर दिया जाता था। स्वाभिमानी, धर्माभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी हिंदुओं को अस्वच्छ एवं अपवित्र कार्यों में लगाकर उनकी सामाजिक परिस्थिति को निम्न किया जाता था। उनका सबकुछ छीनकर उनको दयनीय स्थिति में

1. जियाउद्दीन बर्नी, तारिख-ए-फिरोजशाही, पृष्ठ-165-166
2. डॉ. हमीदा खातून, अर्वनाईजेशन, पृष्ठ-50

पहुँचाया जाता और इतना ही नहीं, उनका हर प्रकार से यानी सामाजिक एवं आर्थिक दमन एवं दलन करके उन्हें दलित बनाया जाता था। ये सारे प्रयास एक अभियान की भाँति केवल इसलिए हिंदुओं के प्रति व्यवहृत किए जाते थे, ताकि वे किसी भी तरह भयभीत या विवश होकर इसलाम स्वीकार कर लें। इस अवस्था का सामना अन्य जातियों के हिंदू धैर्यपूर्वक करते रहे और हिंदू संस्कार कभी नहीं छोड़े, परंतु खटिक जाति ने कुछ और ही तरीका अपनाया। उसने इसलाम के शत्रु-पशु सुअर को अपना अस्त्र बनाया और उसको अपने घरों में पालकर मुसलमानों से अपनी दूरी बनाए रखी और इस तरह से एकमात्र यही जाति उनके अनेकानेक उत्पीड़नों से बची रह गई और हिंदू धर्म रक्षा को एक नया आयाम दिया।

## 4.4 खटिक जाति द्वारा हिंदू धर्म रक्षा

हिंदू धर्म की रक्षा में देश के समस्त हिंदुओं ने अपने-अपने ढंग से उत्तरदायित्व निर्वहन किया था। इस महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय सेवा में खटिक जाति ने एक ऐसी मुँहतोड़ प्रक्रिया अपनाई जिसको लोगों ने गंभीरता से नहीं लिया, अन्यथा अनेक हिंदू मध्यकालीन विदेशी इसलामिक उत्पीड़न एवं भयंकर नर-संहार से बच गए होते। मंदिरों और किलों का विध्वंस रुका होता और देश की विपुल संपदा भी लूटे जाने से बच गई होती। वह प्रयोग था—प्रत्येक घरों में इसलाम के शत्रु-पशु सुअर को भगवान् वराह के रूप में अंगीकार कर उसको शुभंकर मानना चाहिए था। यह एक ऐसा प्रयोग है जिससे भविष्य में भी मुसलिम आतंकवाद से बचा जा सकता है।

खटिक जाति ने हिंदू धर्म की रक्षा, हिंदू धर्म के नियमों का अनुपालन करते हुए अपना सबकुछ उत्सर्ग किया। उसने कभी भी हिंदू धर्म के विरुद्ध कोई भी कार्य नहीं किया। वैदिक आर्य धर्मप्रधान थे और देवी-देवताओं की सत्ता, प्रभाव और व्यापकता में दृढ़ विश्वास था। उनकी कल्पना में यह जगत् पृथ्वी, आकाश और अंतरिक्ष नामक तीन भागों में विभक्त था और प्रत्येक लोक में देवताओं का निवास था। वैदिक समाज में बहुदेवतावादी यज्ञप्रधान धर्म रहा है, जो जीवन के संचालन के लिए नितांत आवश्यक था। हिंदू जीवन तत्त्वों को यथावत् अवधारित करनेवाले ब्रह्मांश ही देवता थे जिनकी अर्चना सामान्य जन यज्ञों और यज्ञ-विधानों में प्रदत्त हवियों से करते थे।[1] हिंदुत्व के दसों तत्त्वों[2] का अनुसरण कर स्वसाधना और तपश्चर्या से लोग देवत्व प्राप्त करते थे। नर ही अपनी साधना और तपस्या से स्वयं को इतना विकसित कर लेता था कि वह ब्रह्ममय

1. गीता 3/4, मनु. 3/76,
2. मनुस्मृति 6/92

हो नारायण का स्वरूप प्राप्त कर लेता था।[1] खटिक जाति में महर्षि व्याघ्र, दुर्बलनाथ जैसे अनेक लोगों ने ऐसा किया, जिससे स्पष्ट होता है कि खटिक जाति ने हिंदू धर्म की रक्षा न केवल मध्यकाल के विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से युद्ध करके ही की अपितु हिंदू धर्म की मान्यताओं का पूरी तरह निर्वहन करके भी उसने हिंदू धर्म की रक्षा की और उसे अक्षुण्ण बनाए रखा।

खटिक जाति ने हिंदू धर्म की रक्षा में यह पूरा प्रयास रखा कि वह किसी भी धर्म से सर्वोत्तम होने की अपनी विशेषता खो न बैठे। समाज में उसे जो भी परिस्थिति मिली, उन सभी परिस्थितियों को अपनाते हुए इस जाति के लोगों ने हिंदू धर्म के नियमों का अनुपालन सतत रखा और अन्य हिंदू जातियों के समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत किया कि वे भी मानें कि हिंदू धर्म ही श्रेष्ठ एवं मानव जाति के लिए अत्यंत कल्याणकारी धर्म है। इस जाति ने अपनी दिनचर्या में भी हिंदू धर्म का ही संवहन किया।[2] इतने प्राचीन महापुरुषों की उन मान्यताओं का अनुमोदन किया जिसमें जीवन के आध्यात्मिक रहस्य को स्वर्ग की खोज के समान सुखद माना गया है।[3] खटिक जाति ने उस मान्यता में अपनी आस्था बनाए रखी कि विराट् विश्व चेतना का भी उत्कर्ष हिंदुत्व के अनुपालन में ही संभव दिखलाई पड़ता है।[4]

खटिक जाति के लोग हिंदू धर्म रक्षा में इसलिए भी संलग्न थे कि वे समाज में समानता का अधिकार सामाजिक समरसता के रूप में प्राप्त करना चाहते थे। समानता के भावबोध में सामाजिक समरसता दर्शन की यह अवधारणा हिंदू धर्म में प्राप्त थी।

खटिक जाति से हिंदू धर्म की रक्षा में आत्मोत्सर्ग इसलिए किया कि यह धर्म मानव को जीवन जीने के लिए एक जीवन-पद्धति का पर्याय है। इसमें संपूर्ण मानव और पूरे विश्व के कल्याण की अवधारणा है। हिंदू धर्म के ये दस तत्त्व विश्व के किसी धर्म में पूर्णरूपेण और एक साथ नहीं पाए जाते हैं—धृति (धैर्य), क्षमा, दम (तपस्या), अस्तेय (चोरी न करना), शौच (पवित्रता), इंद्रिय निग्रह, ज्ञान, विद्या, सत्य तथा अक्रोध (अहिंसा)।[5]

खटिक जाति के लोग धर्म और अर्थ में सर्वप्रथम स्वाभाविक रूप से धर्म को अधिक महत्त्व देते हैं। धर्म के अनुसार ही वे अपने लिए कर्म का नियमन स्वीकारते हैं

---

1. याज्ञवल्क्य स्मृति, 1/3, विष्णुपुराण 3/6/28,
2. मनुस्मृति 10/65
3. शर्मा, रघुनंदन प्रसाद : स्मृतियों में भारतीय जीवन पद्धति '(सांस्कृतिक गौरव संस्थान) नई दिल्ली, 2002 पृष्ठ-20-22
4. वही.
5. मनुस्मृति, 6/92

और यही कारण है कि उन्होंने मांस का प्राचीन व्यवसाय आज तक धर्म-कर्म के ही रूप में मान्य किया। जब खटिक जाति स्थानापन्न व्यवसाय अपनाने को विवश हुई भी तो वह भारतीय कृषि-परंपरा और प्रकृति के सामंजस्य से उद्भुत फल-व्यवसाय को ग्रहण किया। आज भी खटिक जाति के लोग धर्म के नाम पर अर्थ का त्याग कर देते हैं। इसके लिए वे दान देने की परंपरा अपनाए हुए हैं। वर्तमान समय में किसी भी हिंदू धार्मिक आयोजनों में वे बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं। हिंदू धर्म में अर्थ-चिंतन से ऊपर धर्म-चिंतन है, इसलिए सदैव ही खटिक जाति इसका अनुपालन करती रही।

खटिक जाति ने विश्व कल्याणकारी हिंदू धर्म की रक्षा में अपने को मिटा दिया था। इस धर्म में सबके मंगल की कामना है। सर्वे भवंतु सुखिनः, सर्वे संतु निरामया: और वसुधैव कुटुंबकम्, विश्वबंधुत्वभाव, सत्यमेव जयते इत्यादि की विश्वप्रिय अवधारणा है। इस धर्म का लक्ष्य है, परम चैतन्य में प्रवेश और उस चेतना में प्रवेश करके जीवन के प्रति स्वयं को समग्रता से समझना, जानना और उसका निर्वहन करना। विदेशी इसलामिक आक्रांताओं द्वारा खटिक योद्धाओं को इसीलिए प्रताड़ित किया, क्योंकि वे ही ऐसे विश्व कल्याणकारी उत्तम हिंदू धर्म को इसलाम में परिणित यानी धर्मांतरित करने में सबसे बड़ी बाधा थे।

खटिक जाति के लोगों ने हिंदू धर्म की रक्षा अपना प्राणोत्सर्ग करके इसलिए की, क्योंकि हिंदू धर्म और हिंदू जीवन-पद्धति से ही संसार को शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य का लाभ प्राप्त होना संभावित था। इस धर्म में व्यक्तिगत एवं सामाजिक, दोनों ही उत्कर्ष संभव पाया गया। इसी धर्म में बिना किसी अवरोध के ईश्वर की प्राप्ति का मार्ग एवं सिद्धांत है। इसमें किसी प्रकार के बल प्रयोग को स्वीकार नहीं किया गया है और न ही इसके प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता महसूस की गई है। जो इसके महत्त्व को ठीक समझते हैं वे स्वतः इसे अंगीकार करते हैं और इसका संवर्द्धन एवं संरक्षण करते हैं। धर्म के सनातन अवस्था से ही यानी वैदिक काल से खटिक जाति 'वैदिक-कालीन बलि देनेवाली खट्टिक' ब्राह्मण समूह से जुड़ी है। खटिक जाति के लोग हिंदू धर्म के हर प्रकार के गुणों को ठीक से समझते हैं, इसलिए उन्होंने प्राचीनकाल और मध्यकाल में इसकी रक्षा तन-मन-धन से की तथा आज भी कर रहे हैं।

## 4.5 धर्म रक्षार्थ सुअर पालन

सुअर इसलाम धर्म का शत्रु पशु है। इसका संबंध उनके लिए पवित्रता से संबंधित है। मल-मूत्र खाने की नियति से उच्च्व हिंदू समाज में भी सुअर को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। पूर्वकालीन हिंदू राजाओं द्वारा सुअर (जंगली सुअर) का आखेट किया जाता था। यह रीछ प्रजाति का पशु होता है, परंतु रीछ की भाँति खूँखार नहीं होता।

जंगली सुअर अपेक्षाकृत अवश्य खूँखार होते हैं और कभी-कभी तो सिंह के आक्रमण का भी कड़ा प्रतिरोध प्रस्तुत करते हैं। जंगली सुअर का मांस राजघरानों में स्वीकार्य था। बौद्ध ग्रंथों में भी मांसाहार के संदर्भ में सुअर (शूकर) का उल्लेख पाया जाता है।

हिंदू धर्म-ग्रंथों में विष्णु के जो विविध अवतार वर्णित हैं उनमें एक 'वराह' अवतार इसी सुअर से संबंधित है। इस संदर्भ से तो वराह अथवा सुअर पशु को पूरे हिंदू समाज में विशेष है। परंतु हिंदू धर्म के अघोर-पंथ आदि में सुअर पशु को अनुष्ठानिक सम्मान दिया जाता है। अघोरपीठ के दीवारों पर इस पशु को चित्रित करके इसके हिंदू सम्मान को बढ़ाया गया है। हिंदू खटिक जाति के लोग सुअर का पालन इन दोनों संदर्भों में करते दिखलाई देते हैं। प्रारंभ में खटिकों द्वारा उत्तर भारत में जंगली सुअर को पकड़कर मुसलिम आक्रांताओं से बचने हेतु उन्हें पालने का कार्य आरंभ हुआ, तत्पश्चात् इसे व्यवसाय में सम्मिलित कर लिया गया। मांस का व्यापार करने के कारण अथवा मांसाहारी होने के कारण खटिक जाति के लोगों में अघोर-पंथ के प्रति किसी प्रकार की दुर्भावना नहीं है। वे नागा साधुओं और अघोरी साधुओं, दोनों को हिंदू धर्म का रक्षक मानते हुए सम्मान प्रदान करते हैं। यही कारण है कि वे सुअर के मांस की दुकानें चलाते हैं, स्वयं भी सुअर के मांस का सेवन करते हैं और वे सुअर को पालतू पशु बनाकर लाभान्वित और गौरवान्वित हैं। जहाँ तक मांस खाने और उसका व्यापार करने की बात है, यह प्रथा उत्तर भारत के विशेष रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, दिल्ली, बिहार, पश्चिम बंगाल इत्यादि प्रांतों में थी। इसलिए सुअर खाने और उसके मांस का व्यापार करनेवाले खटिक प्रजाति को 'सुअर खटिक' कहा जाता है और इसी के सापेक्ष बकरा का मांस बेचने एवं बकरा का मांस खानेवाले खटिक को 'बकर कसाव खटिक' कहते हैं। कृषि-बागवानी पेशे से जुटे खटिक प्रजाति के लोग न तो बकरा और न ही सुअर काटते हैं और न ही खाते हैं। उनको 'माली खटिक' कहा जाता है। सोनकर खटिक अधिकांश फल का व्यापार करते हैं और शाकाहारी तथा मांसाहारी दोनों होते हैं। फल-व्यवसायी सोनकर लोगों को मेवाफरोस प्रजाति का खटिक भी कहते हैं।

उक्त कथन से स्पष्ट है कि सुअर का पालन सभी खटिक नहीं करते हैं। जो करते हैं वे परंपरा से करते हैं। इनमें कुछ लोगों में ही यह परंपरा कब और क्यों आई, यह विचारणीय प्रश्न है। कुछ गंभीरता से सोचा जाए तो उत्तर स्पष्ट हो जाता है कि सभी खटिक जातियाँ एक स्थान पर कभी नहीं रही और एक समय पर उनकी एक से अनेक पहचान भी रही। कठोर राज्य के खटिक 'कठ' कहे गए और अन्यत्र के काटिक, कटिक, खाटिक, खटिक आदि भी। अर्थात् भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न नाम एवं संबोधन के साथ इनकी उपस्थिति भी भिन्न-भिन्न रही।

प्राचीन भारतीय इतिहास इस बात का प्रमाण है कि सभी खटिक लोगों का यवनों

से और तुर्कों से संघर्ष भी नहीं हुआ था। परंतु हिंदू धर्म से घनिष्ठ संबंध इनका आदिकाल यानी सनातन काल अथवा वैदिककाल से ही था, जब वे सभी 'खट्टिक ब्राह्मण' कहलाते थे और बाद में देश-रक्षा यानी क्षात्र धर्म का दायित्व सम्हालने पर 'खटिक क्षत्रिय' कहलाए थे।

ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं कि खटिक जाति के लोग विष्णु के वराह अवतार से प्रभावित होकर सुअर का पालन आरंभ किए थे। अघोरपंथी होने और सुअर पालने का भी कोई संदर्भ नहीं मिलता है। उनकी सुअर खटिक की अलग प्रजाति भी यह सिद्ध करती हैं कि सुअर का पालन किसी व्यवसाय के अंतर्गत भी उन्होंने नहीं स्वीकार किया है। अतएव स्पष्ट है कि उनके सुअर पालने का मूल कारण हिंदू धर्म की रक्षा से ही था। अर्थात् जिन खटिक लोगों को अरब के विदेशी मुसलिम आक्रांताओं का उत्पीड़न सहना पड़ा था और जिनको इसलाम धर्म स्वीकार करने हेतु बाध्य किया जा रहा था, केवल वे ही लोग सुअर पाले थे ताकि मुसलमान उनके पास तक न आ सके और उसके घर, स्त्री और बच्चे आदि विदेशी अरेबियन मुसलिम आक्रांता शासकों के दमन, दलन एवं उत्पीड़न से बचाए जा सकें।

खटिक लोगों की भाँति एवं उन्हीं से उत्प्रेरित होकर डोम, मुसहर, भंगी आदि जाति के लोग भी सुअर पालते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन जातियों ने भी खटिक जाति की तरह कालांतर में मुसलमानों से अपनी रक्षा हेतु सुअर पालने का कार्य प्रारंभ किया। अतएव विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से स्वयं एवं परिवार की स्त्रियों एवं बालकों को बचाने के लिए जिस तरह से खटिक जाति के लोगों ने सुअर पालना प्रारंभ किया उसी प्रकार से इन जातियों ने भी सुअर पालने का कार्य किया। वे भी उसी तरह से हिंदू बने रहना चाहते थे और हिंदू धर्म की रक्षा करना चाहते थे जिस तरह खटिक जाति के लोग अपनी रक्षा करने में सफल हुए।

वर्तमान समय में सुअर पालन का एक उद्योग देश में विकसित किया जा रहा है। इसको तथाकथित उच्च जाति के लोग भी एक उत्तम व्यवसाय के रूप में अंगीकार कर रहे हैं। इसके लिए सरकार आर्थिक सहायता भी प्रदान कर रही है। परंतु पशु-पालन के प्रति रुचि न रखनेवाले हिंदू, जैसे गोपालन के प्रति उदासीन हैं उसी तरह से सुअर पालन को भी अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझते हैं। इसलिए यह प्रमाणित होता है कि सुअर का संबंध मात्र किसी मांस-व्यवसाय से ही नहीं बल्कि इसका संबंध धर्म-रक्षा से भी है, और इस क्षेत्र में पहला और अंतिम प्रयास खटिक जाति ने ही किया और जो सफल रहा। जिस तरह बकरा का संबंध यज्ञ-पशु से था और लोग बकरा पालते थे, उसी तरह से सुअर का संबंध केवल धर्म रक्षा से था, इसलिए जो हिंदू जाति या हिंदू धर्म में विशेष निष्ठा रखती थी उनको अपने धर्म (हिंदू धर्म) के सुरक्षा की सर्वाधिक

चिंता हुई और विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने जब खटिक जाति पर अत्याचार, दमन, दलन एवं प्रचंड उत्पीड़न करके उसे इसलाम स्वीकारने की योजना बनाई तो खटिक जाति ने भी अपने से दूरी बनाए रखने के लिए अपने घरों के आस-पास सुअर बाँध दिया। उनसे जब इसका औचित्य पूछा गया तो वे चतुराई के साथ उत्तर देते थे कि उनके देवी-देवता सुअर पशु का बलिदान माँगते हैं इसलिए इसे पाला गया है। आज भी लोग सुअर के बच्चे की कुर्बानी करते हैं और उसे दैव-प्रसाद के रूप में ग्रहण करते भी हैं। अब तो दुसाध (पासी, पासवान) वियार, धोबी आदि भी सुअर की बलि देने लगे हैं। वाराणसी के पास वाराणसी एवं गाजीपुर सीमा पर अवस्थित रजवाड़ी ग्राम में एवं उसके आसपास क्षेत्र के ब्राह्मण भी सुअर के बच्चे की पटककर बलि देते हैं और उनके मांस को गाँव के दलित व्यक्तियों के लोग ले जाकर खा जाते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि खटिक जाति के लिए आज भी सुअर का पालन मुख्य रूप से मुसलमानों से दूरी बनाए रखने हेतु है, न कि किसी व्यवसाय के लिए वे सुअर पालते हैं। खटिक जाति के सापेक्ष सुअर पालन का अर्थ है—धर्म रक्षा।

## 4.6 सुअर व्यवसाय एवं हिंदू संस्कृति निर्वहन

हिंदू संस्कृति में सनातन धर्म (परंपरागत कर्म) का निर्वहन अनुमोदित है। वर्णाश्रम-व्यवस्था द्वारा समस्त हिंदू समाज को विहित कर्म पूरा करना ही धर्म था। यही कारण है कि धर्म व्याघ्र महर्षि को हम मांस का व्यापार करते हुए पाते हैं, जबकि वह कभी भी जीवहत्या नहीं करते थे और न ही मांस खाते थे। अपनी हिंदू संस्कृति के निर्वहन में वे इतने तल्लीन थे कि बाट के रूप में भी वह अपने पूज्य देवता 'शालिग्राम' (शिवलिंग) को ही प्रयोग में लाते थे। आज भी खटिक जाति मांस का व्यापार करती है और फल-व्यापार में भी वह प्रायः पाषाण के बने बाट को प्रयोग में लाती है। इस प्रकार के बाट को लोग शालिग्राम का ही प्रतीक मानते हैं। पूर्व काल में धर-पकड़ की उनको कोई चिंता नहीं होती और पकड़े जाने पर बाट-माप विभाग द्वारा लगाए गए अर्थदंड को भी दे दिया जाता है। फिर भी वह लोहे के बने बाट का प्रयोग कम किया जाता है। हिंदू संस्कृति के प्रति समर्पण का यह एक सशक्त उदाहरण माना जाएगा।

सुअर व्यवसाय द्वारा खटिक जाति के लोग हिंदू संस्कृति का सतत निर्वहन कर रहे हैं अथवा नहीं, जब हम इस विषय पर दृष्टिपात करते हैं तो यह पाते हैं कि वे शत-प्रतिशत हिंदू जीवन-पद्धति के आधार पर जीवन निर्वहन करते आ रहे हैं। वे हिंदू संस्कृति में स्वतंत्रता की अवधारणा के पूर्णरूपेण संपोषण में संलग्न हैं। उन्होंने अपनी जीवन-पद्धति को भी पूरी तरह से प्रकृतिपरक बनाए रखा है, जो हिंदू संस्कृति की सबसे बड़ी विशेपता है। हिंदू संस्कृति में वर्णित आचार-विचार, मर्यादित व्यवहार, प्रकृति का

संरक्षण, दृश्य एवं अदृश्य सत्ता के प्रति सम्मान आदि सभी को वह स्वीकारते हैं।[1]

खटिक जाति का सुअर व्यवसाय प्रदूषण की समाप्ति की ओर भी एक चिंतन है। सुअर केवल उन्हीं पदार्थों को समाप्त करते हैं जिनसे प्रदूषण फैलनेवाला होता है। कब कूड़े-कचरों से जहाँ सड़ांध एवं दुर्गंध आती है उनको साफ करना, मल-मूत्र की गंदगियों को समाप्त करना सुअर पशु की धर्मिता है। वह प्रकृति के स्वच्छ वातावरण को निर्मित करने में सहायक हैं और प्रदूषणमुक्त संस्कृति हिंदू संस्कृति की विशेषता है। इस प्रकार सुअर व्यवसाय हिंदू संस्कृति निर्वहन में कभी बाधक हो ही नहीं सकता।

हिंदू संस्कृति में जीवहत्या की निंदा तो है किंतु जीव-जंतुओं के पालन-पोषण का निषेध नहीं है। इस संस्कृति में यह भी आदेश नहीं है कि मनुष्य किस जंतु को पाले और किसको न पाले। पशुपालन का कार्य आदिकाल से होता आया है और लोग अपनी उपयोगिता के अनुसार पशुओं को पालते हैं। केवल हिंसक पशुओं को छोड़कर शेष किसी भी पशु को पाला जा सकता है। अतएव सुअर पालने से हिंदू संस्कृति के आदेशों का कोई उल्लंघन नहीं होता है। अतएव सुअर व्यवसाय अथवा सुअर पालन करनेवाली खटिक जाति हिंदू संस्कृति के निर्वहन में मर्यादित है।

हिंदू संस्कृति में वैयक्तिक स्वतंत्रता को एक ऐसी परिसीमा तक मान्य किया गया है जिसमें वैयक्तिक, सामुदायिक और राष्ट्रीय हित निहित हो। इसीलिए स्वतंत्रता का शब्दार्थ है अपना विस्तार। स्व का अर्थ अपना और तत्र का अर्थ है : तंतु विस्तार, अर्थात् अपना विस्तार करना स्वतंत्रता की इस अवधारणा के अंतर्गत न केवल वैयक्तिक हित अपितु सामुदायिक एवं राष्ट्रीय हित की भी स्वभूत चेतना छिपी हुई है। खटिक जाति का सुअर पालन जैसी एक ऐसी ही स्वतंत्रता से संबंधित आयाम की धारक होने के कारण हिंदू संस्कृति का निर्वहन करने में समर्थ है।

हिंदू संस्कृति में सामाजिक समरसता की विशेषता पाई जाती है। हिंदू किसी के साथ ऐसा आचार-व्यवहार नहीं करना चाहता जिससे वह व्यक्ति नाराज या दुखी हो जाए। किसी की आलोचना अथवा निंदा में भी इसका ध्यान रखा जाता है। सुअर पालन का कार्य और व्यवहार दोनों ऐसा ही है। इससे किसी को दुःख नहीं पहुँचता और न ही सामाजिक समरसता प्रभावित होती है। इस व्यवसाय से समाज की बाह्य गंदगी तक साफ हो जाती है इसलिए यह व्यवसाय समाज हित में भी है। इस व्यवसाय से अब अन्य जातियाँ भी संबंधित होने लगी हैं और इनका क्रय-विक्रय तथा आदान-प्रदान व्यावसायिक समरसता का एक आधार भी बनता जा रहा है। अतएव यह कहना गलत होगा कि इस व्यवसाय से हिंदू संस्कृति का कहीं भी निर्वहन नहीं हो रहा है।

---

1. डॉ. वि.सो. शास्त्री, हिंदू वैचारिकी : एक अनुमोदन, पृष्ठ-19

हिंदू संस्कृति में पुरुषार्थ के जो चार साधन बतलाए गए हैं उनमें धर्म के बाद अर्थ का ही स्थान आता है। जहाँ हिंदू जीवन-पद्धति में 'धनात् धर्मः' स्वीकृत है वहाँ 'अर्थमेव प्रधानः' भी मान्य है। सुअर का व्यवसाय बिना किसी भेदभाव के यहाँ भी अर्थोपार्जन के सापेक्ष हिंदू संस्कृति के निर्वहन में बाधक नहीं है। इस व्यवसाय से यदि खटिक जाति को अर्थ का लाभ है तो इससे किसी अन्य को कोई हानि भी नहीं है। हिंदू संस्कृति यही कहती है कि जीवकोपार्जन हेतु अपना व्यवसाय भी ऐसा हो जिससे किसी को हानि न हो। सुअर व्यवसाय में किसी को हानि पहुँचाने का कोई औचित्य अथवा आधार ही नहीं है।

हिंदू संस्कृति में धार्मिक एवं सांस्कृतिक सहिष्णुता पर विशेष ध्यान दिया जाता है और किसी भी कार्य एवं व्यवहार से इसके प्रभावहीनता का प्रयास होता है। सुअर का व्यवसाय किसी भी प्रकार से हिंदू धर्म के विरुद्ध नहीं है। हिंदूधर्म ग्रंथों में कहीं भी सुअर का व्यवसाय निषिद्ध नहीं है। अतएव यह व्यवसाय हिंदू संस्कृति के अनुमोदन में सदैव धर्मसंगत है। इससे सांस्कृतिक सहिष्णुता भी प्रभावित नहीं होती है। आज किसी भी खटिक जाति के साथ चाहे वह बकरा का मांस बेचते हों अथवा सुअर का मांस बेचते हों, कोई भी हिंदू असहिष्णु नहीं पाया जाता है। सुअर का व्यवसाय करने के कारण कोई भी हिंदू उनसे धार्मिक एवं सांस्कृतिक व्यवहार स्थापित करने से इनकार नहीं करते हैं, बल्कि उनमें सामाजिक एवं धार्मिक आयोजनों एवं कार्यों हेतु धन संग्रह करते हैं, आयोजनों में आमंत्रित करते हैं और उनके द्वारा भी आयोजित धार्मिक सांस्कृतिक समारोहों में भाग लेते हैं।

अतएव यह स्पष्ट है कि सुअर व्यवसाय में हिंदू संस्कृति का पूर्णतः निर्वहन होता है, यही कारण है कि आज सुअर पालन को एक व्यावसायिक स्वरूप प्रदान करते हुए राजकीय स्तर पर सुअर पालन की सुविधाएँ प्रदान की जा रही हैं और उसे प्रोत्साहित भी किया जा रहा है। धर्म, संस्कृति और स्वयं की मुसलिम आक्रांता शासकों से रक्षा हेतु एवं वर्तमान में इसलामिक जेहादियों से टक्कर लेने के लिए खटिक जाति हर प्रकार से प्रतिबद्ध है।

## 4.7 इसलामिक निरंकुशता की टक्कर लेती खटिक जाति

विदेशी मुसलिम आक्रांताओं-शासकों ने हिंदुओं के साथ अनेक ज्यादतियाँ की थीं। उन्होंने लूटपाट की एक नवीन संस्कृति को जन्म दिया। हिंदुस्थान में दान देने की परंपरा रही। हिंदू राजा सोने-चाँदी, हीरे-मोती, पशुधन आदि अपरिमित मात्रा में दान दिया करते थे, अभाव, अव्यवस्था एवं आक्रांता स्वभाववाले अरबी लोगों की संस्कृति ही लूटमार की बन गई थी। इसलाम स्वीकारने के पूर्व वे पश्चिमी तटों पर हिंदुस्थान से रोटी माँगा करते

थे। अतएव उन्होंने भीख के स्थान पर लूट-पाट का रास्ता अपनाया। इसलाम के प्रसार के नाम पर वे हिंदुस्थान में आए और गाँवों, नगरों को तो लूटा ही, किंतु देवालयों को भी नहीं छोड़ा। देवताओं की कृपा से प्राप्त संपदा हिंदुओं ने देवालयों में रख छोड़ी थी, जिसे आक्रांताओं ने लूटा भी तो इतनी बेरहमी से कि मंदिरों को ध्वस्त कर दिया, मूर्तियों को तोड़ डाला और उनके टुकड़ों को मसजिदों की सीढ़ियों में लगाया ताकि मुसलिम लोग उस पर पैर रखकर अपमानित कर सकें। मंदिर के परिसर में गाय-बैल काटे गए और उनके रक्त से पाँव धोए गए। हिंदू धर्म माननेवालों पर धर्म-कर (जजिया) लगाया गया। इन धार्मिक ज्यादतियों यानी जेहाद का विरोध करने का जो भी साहस करता, उसे जान से मार दिया गया। खटिक जाति ने मृत्यु स्वीकार की परंतु इन ज्यादतियों एवं जेहाद से डटकर टक्कर ली। खटिक वंश का एक भी व्यक्ति जब तक किसी देवस्थान या मंदिर में जीवित रहा, विदेशी आक्रांताओं के इसलामिक मंशाओं पर पानी फेरता रहा।

कृषिपरक हिंदुस्थान में पशु-पालन की संस्कृति इतनी महान् थी कि लोग वृक्ष पूजा और पशु-पूजा को सर्वोच्च धर्म-कर्म समझते थे। गाय को हिंदू माँ के समान मानते हैं। पेड़-पौधे एवं पशु की पूजा का अर्थ उन्हें संरक्षित रखने से था। जीवनोपयोगी वस्तुओं के संरक्षण के लिए उसे संस्कृति एवं धर्म से जोड़े जाने की पद्धति थी। आदिकाल में गाय ही मूल्यवान और वही मुद्रामान भी थी। जीवन की पवित्रता एवं निष्ठा को प्रदर्शित करने के संदर्भ में हिंदू समाज के लोग गो माँ की शपथ लेते थे। इससे इस देश में दूध की नदियाँ बहती थीं और बहुओं एवं बेटियों को 'दूधो नहाओ, पूतो फलो' का आशीर्वाद दिया जाता था। इसलामिक आक्रांताओं ने हमारे धर्म की प्रतीक गाय, बैल और अन्यान्य पशुओं को भी मारकर खा डाला। हिंदुओं के समक्ष गो हत्या, मंदिरों में गोरक्तस्राव आदि ऐसे हृदयविदारक दृश्य भी किसी ज्यादतियों से कम न थे। खटिक जाति ने इससे टक्कर ली और प्रत्युत्तर में इसलाम के शत्रु-पशु सुअर को पालकर एवं उसके मांस का प्रयोग करके अपना आक्रोश शांत किया।

इसलामिक आतंक से हिंदुओं को भयभीत करने के लिए विदेशी मुसलिम शासकों द्वारा गाँवों को जलाकर राख कर दिया गया। किलों एवं दुर्गों को जीतने के बाद उन्हें ध्वस्त कर दिया गया। हिंदुओं के नगरों को लूटा और उजाड़ा गया। वहाँ के लोगों की हत्या करके गलियों और भवनों को श्मशान का रूप दे दिया गया। जंगल काटकर लकड़ियाँ अपने परिजनों में मुफ्त बाँट दी गईं। मुसलिम सैनिकों द्वारा हिंदुओं को जंगलों में ढूँढ़कर जंगली जानवर की तरह शिकार किया जाता था।[1] मंदिरों एवं मूर्तियों के अवशेषों से मसजिदों का निर्माण क़िया गया और उनको पवित्र बतलाया गया है। इन

1. गोपाल, लल्लन, इकोनॉमिक लाहेफ ऑफ नार्दन इंडिया, पृष्ठ-8

ज्यादतियों से भी टक्कर खटिक जाति ने अनेक स्थानों पर लिया और आततायियों एवं क्रूर विदेशी अरब के आक्रांताओं को मरते दम तक उनके दमन और दलन जैसे कुकृत्यों को बाधित किया।

अबोध बच्चों की हत्या और स्त्रियों का शीलहरण तथा उनको दास बनाकर उत्पीड़ित करना एवं धन के लालच में उन्हें चौराहे पर नीलाम कर देना, किसी युग में देखने को नहीं मिलता। मध्यकालीन हिंदुस्थान में आतंक मचा रखे इसलाम मजहब के समर्थकों एवं विदेशी आक्रांता शासकों के लिए यह सामान्य कुकृत्य था। खटिक जाति के लोग ऐसे दृश्यों को देखने के आदी न थे, अतएव उन्होंने इसका कड़ा प्रतिरोध किया और अपनी आहुति दे डाली।

हिंदुओं को आर्थिक दृष्टि से कमजोर बनाने के लिए भी अनेक प्रकार की ज्यादतियाँ की गईं। कृषि कर मनमाने ढंग से अधिक-से-अधिक लगाए गए। अकाल और बाढ़ के समय भी कर माफ नहीं किए गए और न दे सकने की स्थिति में दूसरे वर्ष तिगुना-चौगुना करके लिया गया। जो हिंदू धर्मानुयायी कर नहीं दे सके उनको इतना उत्पीड़ित किया गया कि वे घर-गाँव छोड़कर भाग गए। भागे हुए लोगों के कर उनके पड़ोस में बसे लोगों से वसूले गए। जब वे भी भाग गए तो गाँव में आग लगा दी गई, हिंदुओं के लहलहाते खेत जला दिए गए। जिनके अन्न तैयार न थे उनको पशुओं से चरा दिया गया। हजारों हिंदुओं की भूमि छीनकर खालसा भूमि घोषित कर दी गई और जब वह राज्य की संपत्ति हो गई तो उसे धर्मांतरित भारतीय मुसलमानों में बाँट दिया गया। अपनी पूरी शक्ति के साथ इस ज्यादती का भी विरोध हिंदू खटिक जाति के लोगों ने आगे बढ़कर किया, भले ही उनको इसकी कीमत जान देकर चुकानी पड़ी।

हिंदुओं के लघु कुटीर उद्योग नष्ट कर दिए गए अथवा व्यवसाय को धर्मांतरित मुसलमानों का मान लिया गया। उनके उत्पाद सर्वप्रथम नवाब अथवा बादशाह परिवारों को बाँटे जाते और तदुपरांत ही उनका उत्पाद-लाभ अन्य लोगों तक पहुँचाया जाता था। बहुमूल्य वस्तुएँ विदेशी मुसलिम शासकों या नवाबों के लिए उपहारस्वरूप होती थीं जिसे वे निःशुल्क ले लेते थे। सल्तनत के सदस्यों को ऋण देनेवाले हिंदू महाजनों का धन उधार लेकर उसे कभी वापस नहीं किया गया था। हिंदू व्यापारी मुसलिम शासकों के शासनकाल में रात में लूटे जाते थे। अच्छे शिल्पियों से कोई विशिष्ट निर्माण कराके उनके हाथ काट दिए जाते थे ताकि वे उस तरह का निर्माण कहीं अन्यत्र न कर सकें। ऐसी ज्यादतियों से भी खटिक जाति ने बराबर टक्कर लिया। उधर लखनऊ में पासी और खटिकों ने मिलकर महाराजा सुहेलदेव के नेतृत्व में मुहम्मद गौरी के भानजे सैमद सलार मसूद गाजी और उसकी डेढ़ लाख सेना को मौत के घाट उतार दिया। इसका परिणाम रहा कि मुसलमान आक्रांता दो सौ वर्षों तक लखनऊ और बहराइच की तरफ आँख

उठाकर देखा भी नहीं।[1]

विदेशी मुसलिम शासकों के समय कार्मिक उत्पीड़न की ज्यादतियों का भी दृश्य देखने में आता है। विदेशी आक्रांताओं द्वारा हिंदू धर्म की कट्टर समर्थक और इसलाम किसी भी मूल्य पर अस्वीकार करनेवाली राजपूत श्रेणी की क्षत्रिय जातियों को युद्धबंदी बनाकर और तरह-तरह की यातनाएँ देकर उनको समाज की मुख्यधारा से अलग कर देने के लिए भी उनके साथ ज्यादतियाँ हुईं—उनको चर्मकर्म में लगाया गया, मृत पशुओं को ढोने और उनकी खाल उतारने तथा उनके मांस तक खाने का कार्य बलपूर्वक कराया गया। ऐसा न करनेवालों को सीधा मृत्युदंड दे दिया जाता था। इसी प्रकार से घरों में शौचालय पद्धति को जन्म देनेवाले विदेशी अरब के आक्रांताओं ने अपने तथा अपनी बेगमों के मल-मूत्र उठाकर बाहर ले जाने तथा घरों की सफाई करने जैसे निम्न कोटि के अस्वच्छ कार्य भी उन गौरवशाली राजवंशीय परंपरावाले क्षत्रियों अथवा हिंदू युद्धबंदियों से कराया तथा कालांतर में क्षत्रिय वर्ग से पतित करके उन्हें अस्पृश्य बना दिया। वर्तमान समाज में चमार और वाल्मीकि जातियों की उत्पत्ति का यही इतिहास है।

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं ने अपने शासनतंत्र में कभी भी हिंदुओं और भारतीय मुसलमानों को उच्च राजकीय पद नहीं प्रदान किया। इल्तुतमिश ने भूल से भरती हुए ऐसे लोगों को न केवल निकाला बल्कि भरती करनेवालों को दंडित भी किया था। अरब के मुसलिम आक्रांताओं द्वारा न्याय में भी भेदभाव बरता जाता था। गलती करनेवाला मुसलमान सजा से मुक्त कर दिया जाता था, जबकि गलती न करनेवाला हिंदू सजा का पात्र माना जाता था। अलाउद्दीन खिलजी ने अधिकांश ऐसे उपाय किए जिससे हिंदू निर्धन हो गए।[2] यह भी एक प्रकार की ज्यादती ही थी जिसका विरोध हिंदू खटिक जाति ने लगातार किया था। इस तरह यह कहा जा सकता है कि हिंदू खटिक जाति ने हर प्रकार की इसलामिक ज्यादतियों से भयंकर टक्कर ली एवं उसका प्रत्युत्तर दिया।

## 4.8 हिंदू स्वाभिमान की रक्षक खटिक जाति

हिंदू स्वाभिमान के अनेक तत्त्व हो सकते हैं। हिंदू स्वाभिमान की झलक हमें हिंदू धर्म में अटूट निष्ठा की ओर ध्यान दिलाती है। खटिक जाति ने इस धर्म का परित्याग कभी नहीं किया, भले ही प्राणोत्सर्ग तक कर दिया। इससे हिंदू धर्म एवं हिंदू स्वाभिमान की रक्षा हो सकी।

हिंदू कभी भी रणक्षेत्र से भागता नहीं है और न ही अपनी पीठ दिखलाता है। हिंदू स्वाभिमान के प्रतीक अमर शहीद हो सकते हैं, परंतु कायर नहीं। युद्ध कोई भी रहा हो,

1. के.एल. श्रीवास्तव, दी पोजीशन ऑफ हिंदू इन देलही सल्तनत, पृष्ठ-7-10
2. प्राण नाथ, ए स्टडी ऑफ दी इकोनॉमिक कंडिशन ऑफ इंडिया, पृष्ठ-122

हिंदू राजाओं का हिंदू राजाओं से अथवा हिंदू राजाओं से विदेशी मुसलिम आक्रांताओं का, किसी में भी भाग लेनेवाला खटिक सैनिक हिंदू स्वाभिमान का सदैव रक्षक ही रहा।

सशर्त संधि अथवा वह युद्धबंदी किसी हिंदू को कभी स्वीकार नहीं रही जिससे उसके स्वाभिमान पर आँच आती हो। विदेशी आक्रांताओं की पहली शर्त इसलाम स्वीकारने की ही होती थी, जिसे कोई भी हिंदू स्वाभिमानी स्वीकार नहीं कर सकता था। इसलिए उन्होंने निर्णायक युद्ध अधिक लड़ा और किसी भी संधि को स्वीकार नहीं किया। भारी सैन्य-बल और अत्याधुनिक अस्त्र-शस्त्रों के आगे आत्मसमर्पण करने की घटनाएँ युद्ध भूमि में होती रही हैं, परंतु यह स्थिति हिंदू स्वाभिमान के सर्वथा विपरीत रही। इसलिए इसकी रक्षा की गई और इसमें खटिक जाति के सैनिक सदैव आगे रहे।

हिंदू स्वाभिमान केवल पुरुषों में ही नहीं, अपितु हिंदू नारियों में भी था। उंन्होंने मुगलों की बेगमें बनने और सुख-सुविधाओं की लाभ उठाना अस्वीकार कर दिया और अपने ही घरों में जौहर व्रत करना स्वीकार किया। आत्माहुति देकर वे अपने पुरुषों को भी विजय अथवा मृत्यु में से किसी एक को चुनने के लिए ललकारती रही थीं।

हिंदू अपने धर्म के लिए कुछ भी करने को सदैव तैयार रहा, इसलिए उसके सम्मुख जब यह प्रश्न आया कि वह मृत्यु चाहता है अथवा इसलाम, तो उसने मृत्यु को स्वीकार किया, परंतु इसलाम को कभी नहीं स्वीकार किया। इसी तरह उसके सम्मुख जब यह प्रश्न आया कि वह अपवित्र और गंदे कार्यों को करेगा या इसलाम स्वीकार करेगा तो उसने मल-मूत्र साफ करना, सिर पर मैला ढोना और चर्म-कर्म जैसे अपवित्र कार्यों को करना स्वीकार किया, परंतु इसलाम को ठुकराया। यह करना उसके हिंदू स्वाभिमान में आता था।

हिंदू को जब यह कहा गया कि वह तीर्थयात्राएँ बंद करेगा अथवा जजिया कर देगा तो तीर्थयात्रा से उसका स्वाभिमान जुड़ा होने के कारण उसने जजिया कर देना मंजूर किया, परंतु तीर्थाटन और धर्म-कर्म कभी बंद नहीं किया। इसी तरह वैवाहिक संबंधों के बारे में उसने हिंदू-मुसलिम विवाहों को हिंदू स्वाभिमान के विरुद्ध माना और मानसिंह जैसे लोगों ने पद के लालच में किया तो उनकी निंदा की गई। शरणागत की रक्षा जान देकर भी करने का कार्य हिंदू स्वाभिमान के अंतर्गत माना जाता है। हिंदू भिश्ती ने हुमायूँ के प्राण बचाए। हम्मीर ने मुहम्मद शाह को शरण दी, भले ही उसको अपने जान-माल एवं राज्य को खो देना पड़ा। इस तरह के अनेक उदाहरण मिलते हैं कि किसी हिंदू ने शरणागत मुसलिम की जान बचाई, परंतु किसी मुसलमान ने भी ऐसा किया था, इसका एक भी उदाहरण देखने या सुनने को नहीं मिलता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्तर भारत में हिंदू एवं मुसलमानों से भयंकर युद्ध हुए थे उनमें जिस भी सेना में खटिक जाति के सैनिक थे, उन्होंने उत्साहपूर्वक युद्ध किया था

और इसलामिक जिहाद का प्रत्युत्तर हर-हर महादेव के जयघोष के साथ दिया था। उस समय विदेशी इसलामिक शासकों द्वारा धर्म परिवर्तन का जो अभियान चलाया गया था, उस प्रत्येक विधा का प्रतिकार करने में इस जाति के लोगों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था। उन्होंने हिंदू धर्म की रक्षा की और अपना तथा अपने बहू-बेटियों एवं स्त्रियों तथा बच्चों की रक्षा की एक महत्त्वपूर्ण विधि 'सुअर पालन' निकाला था। इसका प्रत्यक्ष लाभ उन्होंने उठाया और लोगों के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया। सुअर पालने से न तो वे हिंदू संस्कृति से अलग हुए और न ही हिंदू संस्कृति के निर्वहन में असफल रहे। उन्होंने समस्त इसलामिक ज्यादतियों का जमकर विरोध किया और जोरदार टक्कर ली। यही कारण है कि आज भी खटिक जाति को लोग हिंदू स्वाभिमान की रक्षक जाति मानते हैं।

□

अध्याय-5

# विदेशी मुसलिम एवं अंग्रेज शासकों के अत्याचार की शिकार खटिक जाति

हिंदू खटिक जाति के लोग विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों के उत्पीड़न से ही मात्र प्रभावित नहीं हुए, अपितु अंग्रेजों ने भी इनका भयंकर उत्पीड़न और शोषण किया था। यदि कोई सामान्य जाति होती तो उसका अस्तित्व इन दोनों विदेशी शासकों के समय में ही समाप्त हो गया होता, परंतु यह जाति प्राचीन काल से ही धर्म-रक्षक और तत्पश्चात् देश-रक्षक की भूमिका में भी रही, इसीलिए इसकी मूल प्रवृत्ति एवं प्रकृति में किसी योद्धा की विशेषताएँ पाई जाती हैं। इसे मध्यकाल में विदेशी इसलामिक आक्रांताओं के विरुद्ध होनेवाले स्वाभिमानी एवं धर्माभिमानी हिंदू राजाओं के युद्ध में भी देखा गया था। मध्यकाल से ही इसे एक योद्धा जाति की संज्ञा दी गई, क्योंकि खटिक जाति ने विदेशी मुसलिम शासकों से भयंकर टक्कर ली। उस समय मुसलमान शासकों का उत्पीड़न इतना प्रचंड रूप में था कि लोग अपनी जान बचाने के लिए दुर्गम स्थानों एवं जंगलों में भाग जाते थे।

मध्ययुग में विदेशी आक्रांताओं ने हिंदू समुदाय पर प्रचंड अत्याचार ढाया था। लोगों को तरह-तरह से उत्पीड़ित किया गया था। इसमें सबसे अधिक खटिक जाति प्रभावित हुई थी, क्योंकि इस जाति ने हिंदू धर्म की रक्षा में विशेष रूप से भाग लिया था और मुसलमानों के विरुद्ध 'सुअर' पालकर इसलाम के विरुद्ध सांस्कृतिक युद्ध की एक नवीन शैली को जन्म दिया था। विदेशी आक्रांता मुसलिम शासक अपने किसी भी विरोध के युक्ति यानी प्रयास का दमन तलवारों के बल पर कर सके थे किंतु यह एक ऐसी युक्ति थी जिसका प्रत्योत्तर उनके पास नहीं था। इसलाम के जिहादियों के विरुद्ध

हिंदू धर्म रक्षा की सुअर पालना एक सरल पद्धति था जो किसी खटिक (वैदिक खट्टिक ब्राह्मण) मस्तिष्क की दूरगामी उपज थी और जिसका सफल प्रयोग करके हिंदू खटिक जाति ने आक्रांताओं को यथोचित प्रत्युत्तर दिया।

विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से लगभग 500 वर्षों तक संघर्ष करते रहने के बाद खटिक जाति का सामना विदेशी अंग्रेजों से भी पड़ा, जिन्होंने मुगलों से सत्ता छीनकर हिंदुस्थान पर अपना आधिपत्य जमा लिया था। अंग्रेज इस जाति के योद्धा-स्वरूप को अच्छी तरह समझ चुके थे, इसलिए उन्होंने इस जाति को जरायम पेशा (अपराधी) जाति घोषित कर उन्हें हिंदू समाज से ही अलग-थलग कर दिया। अंग्रेज शासकों की दृष्टि में अपराधी कौन थे? जो स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे, उन्हें विदेशी अंग्रेज शासकों ने डाकू और अपराधी तक कहा। उनकी दृष्टि में चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, सुभाषचंद्र बोस, उद्यम सिंह इत्यादि अपराधी थे। क्या हमारे उक्त आजादी के दीवाने अपराधी थे? अगर ये स्वतंत्र वीर अपराधी नहीं बल्कि पूज्यनीय भारत गौरव थे, तो उन्हीं आक्रांता अंग्रेज शासकों द्वारा विधिवत घोषित खटिक जाति भी अपराधी नहीं अपितु स्वतंत्रता सेनानी जाति है। धर्माभिमानी, राष्ट्राभिमानी एवं स्वाभिमानी खटिक जाति संपूर्ण हिंदुस्थान के लिए पूज्य है।

विदेशी आक्रांता शासक अंग्रेजों ने खटिक जाति का सामाजिक और आर्थिक, दोनों प्रकार से उत्पीड़न किया था। उन सभी स्वतंत्रता की लड़ाई को सीमा से आगे बढ़कर लड़नेवाली हिंदू जातियों के साथ अंग्रेजों ने विशेषकर खटिक जाति को भी तरह-तरह के उत्पीड़न का शिकार बनाकर भारी दमन एवं दलन के उपरांत दलित की श्रेणी में पहुँचा दिया। प्रस्तुत अध्याय में इसी जीवंत घटनाओं का मार्मिक उल्लेख किया गया है।

## 5.1 खटिक जाति एक योद्धा जाति

यह ध्रुव सत्य है कि हिंदुस्थान के विविध स्थानों, क्षेत्रों, नदियों, पर्वतों, तीर्थों आदि के नाम समय-समय पर बदलते रहे। राज्यों और राजधानियाँ बदलती रहीं। लोगों की जातियाँ और प्रजातियाँ भी अनेक नामों से जानी-पहचानी जाने लगीं। मध्यकाल तक आते-जाते कठोर-राज्य अनेक छोटे-छोटे नवीन नामवाले राज्य बन चुके थे। कठ, कठिक, खटिक भी चौलुक्य, चहमान, गुहिल, गहलोत आदि अनेक नामों से जाने गए थे। देशी राज्यों के आंतरिक युद्धों एवं महत्त्वपूर्ण विजयों के साथ ही विदेशी आक्रांताओं के साथ हुए युद्धों में इनकी जीतों का उल्लेख भरा पड़ा हुआ है, परंतु कहीं भी कठ, कठिक को छोड़कर दूसरा वर्तमान खटिक नाम नहीं मिलता है। संपूर्ण देश में पाई जानेवाली खटिक जाति के संदर्भ में वास्तव में आज यह आश्चर्य एवं उत्सुकता का ही

विषय है कि इस जाति का प्राचीन नाम एवं पहचान क्या रही होगी। खटिक शब्द यदि विशेष भावयुक्त शब्द नहीं रहा होता तो पूरे देश भर में इतनी बड़ी जनसंख्या द्वारा इसे आत्मसात् करके इसी संबोधन से स्वयं को गौरवान्वित कैसे किया गया? जिस प्रकार इसलाम के प्रवर्तक मुहम्मद साहब के जन्म के तेईस सौ वर्ष पूर्व मु. अखलव बिन तुर्फा नामक कवि ने अपनी कविताओं में हिंदू, हिंद और बाबा महादेव का उल्लेख किया था किंतु फिर भी हिंदू शब्द को नवीन कहा जाता है, उसी प्रकार 'खट्टिक' शब्द अत्यंत प्राचीन होते हुए भी आज नवीन नामों के रूप में उल्लिखित है।[1] इतिहास के पन्नों में कठ एवं कठिक के साथ वर्तमान खटिक युगरोध की तरह अडिग है। अतएव इस जाति की शाखाओं और प्रशाखाओं के ही आधार पर इस जाति की योद्धा प्रवृत्ति का अध्ययन करना उचित होगा।

सिकंदर से लेकर सल्तनतकाल के प्रारंभ होने तक के समय में खटिक जाति की पहचान कठ जाति के ही रूप में होती है। परंतु उसके कठोर राज्य का उल्लेख उस समय नहीं मिलता है। लगता है कि हिंदू राज्यों की केंद्रीयकरण की अवधि में यह राज्य भी किसी चक्रवर्ती सम्राट् के अधीन होकर किसी अन्य नाम और पहचान को प्राप्त कर लिया था। तैमूर से जिन कठ एवं पार्शिया (पार्श्वी) जाति के लोगों ने मोरचा लिया था वे किसी राज्य के राजा अथवा सैनिक नहीं बल्कि पर्वतीय जातियों के समूह थे। अल्प संख्या में तथा असंगठित एवं अव्यवस्थित होने से ही वे केवल भयंकर युद्ध करके तैमूरलंग की सेनाओं को तबाह किए थे। इसका उद्देश्य अपने किसी राज्य की रक्षा का नहीं, बल्कि अपने पराक्रम के प्रदर्शन का ही था, फिर भी वह प्रदर्शन इतना जोरदार था कि तैमूरलंग उसे जीवनपर्यंत स्मरण रखा।

खटिक जाति एक ऐसी योद्धा जाति थी जो सदैव ही उत्साह से युद्ध में भाग लेती थी और सैनिकों की कम अथवा अधिक संख्या का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। वह युद्ध को जीतने के लिए लड़ती थी और पराजय होने पर भी कोई खेद अथवा पश्चात्ताप नहीं करती थी। हारकर भी जीतने की खुशी लिए हुए खटिक जाति बार-बार होनेवाले युद्धों के लिए सदैव तैयार मिलती थी, यह उसके योद्धा जाति का होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। अपने परंपरागत अस्त्र-शस्त्रों के बल पर ये लोग पर्वतीय क्षेत्रों से युद्ध करके सफलता अर्जित करने में दक्ष थे, जबकि मैदानी क्षेत्र में विशाल सेना के साथ ही उच्च कोटि के अस्त्र-शस्त्रों की तुलना में कमजोर पड़ते थे। उस अवस्था की जानकारी होने के बाद भी वे अपने साहस को नहीं छोड़ते थे और इसीलिए सदैव युद्ध हेतु तत्पर रहते थे।

---

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, हिंदू वैचारिकी एक अनुमोदन, पृष्ठ-2-3

किसी भी युद्ध में विजय अथवा पराजय, दो में से एक ही मिलती है। इस जाति के लोगों ने पराजय से कभी न उत्पन्न होनेवाली सोच को ही मन में रखने का प्रयास किया था और इसीलिए वे सदैव जीतने के ही उद्देश्य से युद्ध में भाग लेते थे। यदा-कदा पराजय को भी वे पराजय नहीं समझते थे। उनके योद्धा होने की यह सबसे बड़ी पहचान है। वास्तव में जो योद्धा होते हैं, वे हारने का दु:ख न मनाकर जीतने की तैयारी में लगे रहते हैं। बार-बार युद्ध करना उनकी प्रवृत्ति होती है।

खटिक जाति की योद्धा-प्रवृत्ति का ऐतिहासिक परिचय सिकंदर, महमूद गजनबी, तैमूरलंग मध्यकालीन सुल्तानों एवं मुगलों तथा अंग्रेजों के साथ हुए उसके युद्धों से प्राप्त होता है।[1] सिकंदर के समय (ई.पू. 327 में) यह जाति 'कथ्यान' (कठ या काठिक) के नाम से जानी जाती थी और लाहौर तथा अमृतसर के जनपदों से घिरे हुए क्षेत्रों में निवास करती थी। उनकी राजधानी संकल थी, सिकंदर का इस जाति से युद्ध उस समय हुआ जब सिकंदर हस्ती (राजा पुष्कलावती) और पुरुराज पोरस को परास्त करने के उपरांत रावी को पार करके आगे बढ़ा था। कुछ इतिहासकारों ने 'कथ्यान' के सापेक्ष इस जाति के दो स्थानीय नामों का भी उल्लेख किया है—कथेयोई तथा कथा जाति।[2] यह जाति अपने क्षेत्र की ही नहीं अपितु आस-पास के क्षेत्र के लिए भी पराक्रमी और योद्धा के रूप में जानी जाती थी। सिकंदर से सीधी टक्कर में इस जाति के बहादुरों ने सिकंदर की सेना को ध्वस्त करके रख दिया और वे अन्य किसी भी युद्ध में लड़ने योग्य नहीं रह गए। यद्यपि वे धर्माभिमानी एवं स्वाभिमानी योद्धा इसमें पराजित हुए, मारे गए और बंदी भी बनाए गए तो भी उनके साहस में कोई कमी नहीं आई थी। कथेयोई तथा कथा जाति की पराजय को देखते हुए अन्य समीपस्थ राज्यों ने सिकंदर के सामने हथियार डाल दिए थे, किंतु सिकंदर के सैनिकों ने स्वयं ही अगले मोरचा में शामिल न होने की घोषणा कर दी। यहीं से सिकंदर की दिशा बदल गई और वह विश्वविजय का अपना अधूरा टूटा हुआ सपना लिए अपने देश लौटने लगा था।

महमूद गजनबी से खटिक जाति का युद्ध सोमनाथ मंदिर में हुआ था। इस मंदिर की प्रथम स्थापना बल्लभी वंश के किसी राजा ने पाँचवीं अथवा छठीं शताब्दी में की थी। अन्य अनैतिहासिक तथ्यों के अनुसार स्कंदगुप्त के सेनापति मैतुकवंशी भट्टारक ने ईस्वी सन् 470 के बाद इसे बनवाया था। मंदिर का महालय दक्षिणी काठियावाड़ (वर्तमान सौराष्ट्र) के समुद्र तट पर स्थिति है। मोहम्मद गजनबी ने (मूर्ति भंजन एवं लूटपाट के

---

1. शास्त्री, राजनाथ सोनकर : खटिक जाति की उत्पत्ति और विकास, पृष्ठ-152-171
2. महाजन, विद्याधर : प्राचीन भारत, पृष्ठ-46

लिए) इस मंदिर पर दो बार (सन् 1024 एवं सन् 1026 ई. में) आक्रमण किया था।[1] अन्यत्र उल्लिखित है कि 18 अक्तूबर, 1025 ई. को (कहीं 1015 ई. मुद्रित होने से प्रथम आक्रमण का संकेत मिलता है)[2] उसने गजनी से भारत के लिए प्रस्थान किया था और लूटपाट करके 2 अप्रैल, 1026 ई. को वापस गजनी पहुँच गया था। वापस लौटते समय उसे जाटों ने त्रस्त किया था इसलिए उनको दंड देने हेतु उसने अंतिम बार मार्च 1027 ई. में भारत पर आक्रमण किया था।[3] सन् 999 ई. में वह गजनी का शासक बना और 1000–1026 ई. तक हिंदुस्थान पर कुल 17 बार आक्रमण किया।[4] तद्नुसार उसका अंतिम आक्रमण अठारहवाँ आक्रमण होगा। सोमनाथ मंदिर पर उसका महत्त्वपूर्ण आक्रमण सन् 1026 ई. में होना प्रमाणित है। मंदिर में काठिक जाति भी धर्म-रक्षा और देश-रक्षा की भावना से वीरता के साथ लड़ी थी और अपना पराक्रम दिखलाई थी।

खटिक जाति ने सल्तनतकालीन अनेक सुल्तानों से भी लोहा लिया था। सन् 1397 ई. में जब तैमूरलंग ने हिंदुस्थान के अनेक राज्यों को जीतते हुए दिल्ली तक को अपने अधिकार में कर लिया था, यह समय तुगलक-वंश की सत्ता का पराभवकाल था। तैमूरलंग रुका तो नहीं और न ही दिल्ली पर अपना शासन स्थापित किया, किंतु उसके युद्धकालीन जीवन की वह घटना उसे सदैव स्मरण रही जिसमें उसको खटिक वंश के लोगों से असाधारण युद्ध करना पड़ा था।

गजतिक और समनकान नगरों को लूटते हुए जब तैमूर इसलामिक राज्य इंदराव पहुँचा तो वहाँ के अमीरों ने उसे अपना दुखड़ा सुनाते हुए बतलाया कि उनको कठोर या काठिक तथा सियाहपोश नामक दो हिंदू जातियाँ निरंतर त्रस्त रखती हैं, राज्य-कर वसूलती हैं और हिंदू धर्म से परिवर्तित मुसलिम स्त्री-बच्चों को बंधक बनाकर अपनी सीमाओं में ले जाकर उन्हें पुनः हिंदू बनाया।

स्पष्ट है कि सल्तनकाल में भी खटिक जाति का कोई राज्य था जो इसलामिक राज्य इंदराव के आस-पास ही था और वह उस समय तक स्वतंत्र हिंदू राज्य था। इंदराव भी उनके ही राज्य में रहा होगा जो कभी उनके हाथ से निकल गया था। अपने राज्य का अंग मानने से ही वे जातियाँ इंदराव नगर के धर्मांतरित मुसलिम निवासियों से कर वसूलती थी। यह आश्चर्य और गौरव का विषय है कि जिस समय पश्चिमोत्तर भारत और बंगाल तक इसलाम का आधिपत्य था उस समय भी खटिक राज्य अविजित थे। तैमूरलंग ने उन्हीं राज्यों को पराजित किया और खटिक जाति ने अपनी योद्धा प्रवृत्ति का

---

1. शास्त्री, राजनाथ सोनकर (पूर्वोद्धृत), पृष्ठ-357
2. वही, पृष्ठ-159
3. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पृष्ठ-33, 35
4. शास्त्री, राजनाथ सोनकर, पूर्वाद्धृत, पृष्ठ-157

परिचय देते हुए घोर संग्राम किया।

इसी प्रकार चौलुक्य वंश की रानी नायकी देवी ने 1178 ई. में मुहम्मद गौरी को बुरी तरह पराजित किया था, चौहान पृथ्वीराज तृतीय ने 1191 ई. में मुहम्मद गौरी हो हराया था, गुहिल जैत्रसिंह ने दो बार इल्तुतमिश के उत्तराधिकारी सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद को चित्तौड़ जीतने नहीं दिया था, मेवातियाँ (खटिक जाति की एक प्रजाति) ने एक हिंदू महिला के नेतृत्त्व में 1257 ई. में बलवन के काफिले को लूट लिया था।[1] इसी तरह के अनेक दृष्टांत मध्यकालीन इतिहास में मिलते हैं, किंतु उन सभी में खटिक जाति की प्रजातियों और प्रशाखाओं का ही नाम उल्लिखित मिलता है जिनका उल्लेख पुस्तक के परिशिष्ट-1 में किया गया है। हिंदू और मुसलमानों के युद्ध में भी इस जाति के महत्त्वपूर्ण योगदान को पुस्तक के अध्याय 4.1 में प्रदर्शित किया गया है।

## 5.2 विदेशी मुसलिम शासकों से भयंकर टक्कर

खटिक जाति ने विदेशी आक्रांता लुटेरों से तो लोहा लिया ही था, सन् 1206 ई. से सन् 1707 ई. तक के विदेशी मुसलिम शासकों से भी भयंकर टक्कर ली। इल्तुतमिश और उसके निर्बल उत्तराधिकारियों तक तो यह जाति यत्र-तत्र विद्रोह करती ही रही, परंतु उसके बाद के सुसंगठित और सुव्यवस्थित मुसलिम शासनकाल में भी वह चैन से बैठी न थी। यह अलग बात है कि उस समय तक खटिक जाति की अनेक उपजातियाँ बन चुकी थी और खटिक नाम का प्रयोग न होकर उसकी प्रशाखाओं के ही नाम का प्रयोग होता था।

मध्यकाल में खटिक जाति विभिन्न क्षत्रिय राजवंशी गोत्रों, उप-जातियों एवं उपनामों के रूप में गौरव तथा पहचान को प्राप्त थी, अतएव इतिहासकारों ने उनका उल्लेख उसी नाम से किया जिस नाम से वह सत्ता में थी, जैसे—चौलुक्य हैं। अंग्रेज इतिहासकारों ने तो यह काम जान-बूझकर किया बल्कि निरंतर बर्बर लुटेरा ही दिखलाया ताकि उनके द्वारा अपराधी घोषित खटिक जाति का महत्त्व उजागर न होने पाए। पुस्तक के परिशिष्ट में वर्णित खटिक वंश की शाखाओं एवं प्रशाखाओं का अवलोकन करने पर यह बात साफ हो जाती है कि मध्यकाल में विदेशी मुसलिम शासकों से भयंकर टक्कर लेनेवाली खटिक जाति की अनेक गोत्र, उप-जातियाँ एवं उपनाम क्षत्रियवर्गीय शाखाएँ थीं जिन्होंने अनेक स्थानों पर युद्ध लड़ा था।

पृथ्वीराज चौहान के शब्दवेधी तीर से मौत को प्राप्त मुहम्मद गौरी के उपरांत गुलाम वंश का प्रथम सुल्तान कुतुबुद्दीन और उसके उत्तराधिकारी आरामशाह को खटिक राजपूतों

---

1. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान एवं पतन, पृष्ठ-59, 198, 213-215

ने कभी चैन नहीं लेने दी और अपने राज्यों को वापस प्राप्त करने के लिए निरंतर संघर्ष करते रहे। इल्तुतमिश और उसके उत्तराधिकारी भी राजपूतों द्वारा निरंतर प्रतिरोधित थे और चौलुक्यों तथा चौहान-खटिकों से त्रस्त थे। बलवन को मेवा फरोश प्रशाखा के मेवातियों ने परेशान कर रखा था। इसी प्रकार से खिलजी, तुगलक, सैयद और लोदी वंश के सुल्तानों से इस जाति की प्रशाखाओं ने लोहा लिया। राणा सांगा की सेना में हजारों की संख्या में शामिल होकर इस वंश के सैनिकों ने सुल्तान इब्राहीम लोदी को नाकों चने चबवाए थे।

सुल्तान इब्राहीम लोदी को खटिक जाति के योद्धा सैनिकों ने कई बार चेतावनी दे डाली थी कि वह राणा सांगा को चुनौती न दे तथा चैन से रहने दे अन्यथा उसे दिल्ली के शासन से हाथ धोना पड़ेगा, परंतु इब्राहिम लोदी ने इस चेतावनी को अनमनस्क भाव से लिया और परिणाम यह हुआ कि खटिक जाति के सैनिकों ने बाबर के सहयोग से लोदी वंश का नाश कर दिया। कालांतर में बाबर और हुमायूँ ने भी कुछ टेढ़ी चाल चलने का प्रयास किया, जिसका गंभीर परिणाम उनको उस समय भुगतना पड़ा जब शेरशाह की सेना में शामिल होकर खटिकवंशीय राजपूतों ने हुमायूँ को भिश्ती के सहारे जान बचाकर भागने पर विवश किया। यही कारण था कि हुमायूँ ने अपने पुत्र अकबर को राज्य-भार सौंपते समय यह स्पष्ट रूप से समझा दिया था कि वह राजपूतों से अपना घनिष्ठ संबंध रखने पर ही चैन से शासन कर सकेगा।

अकबर ने पिता का आदेश मान्य तो किया परंतु उसने मूलतः क्षत्रिय राजपूतों को ही प्रसन्न रखने का प्रयास किया, जिसके फलस्वरूप खटिक राजपूतों ने राणा प्रताप की सेना में शामिल होकर अकबर को सदैव परेशान रखा। अकबर से लेकर औरंगजेब तक के युद्धों को यदि गहन दृष्टि से देखा जाए तो खटिक जाति उन सभी में बढ़-चढ़कर भाग लेनेवाली पाई जाती है। शिवाजी ने भी अपनी सेना में खटिक जाति के लोगों को अधिक-से-अधिक स्थान दिया था और औरंगजेब के विरुद्ध सदैव अपराजेय रहकर मुगल सल्तनत के लिए एक समस्या बने रहे। कहना अनुचित न होगा कि इसी जाति के सपूतों ने सल्तनतकाल का अंत किया।

## 5.3 मुसलमान शासकों के प्रचंड उत्पीड़न से बचने हेतु हिंदुओं का बड़ी संख्या में जंगल में पलायन

मुसलमान शासकों ने हिंदुओं की विशाल संख्या को एक सोची-समझी रणनीति के अंतर्गत उत्पीड़ित कर रखा था। गाँवों या नगरों में हिंदुओं पर कर के रूप में भारी वसूली की जाती थी एवं उन्हें भूखे-नंगे रहने पर विवश होना होता था। जंगलों में रहने पर उनके रोजी-रोटी की जिम्मेदारी स्वयं उन वनवासियों की होती थी किंतु वे मुसलिम आक्रांताओं की पहुँच से बाहर थे। यही कारण है कि उन्होंने हिंदुओं का बड़े पैमाने पर

उत्पीड़न किया जिसके फलस्वरूप हिंदुओं की एक बड़ी संख्या घने जंगलों की ओर पलायन कर गई, जिसमें क्षत्रिय राजवंशी परंपरा राजपूत अत्यधिक थे।[1]

उत्पीड़न का प्रारंभ लूटमार से किया गया। इतिहास के पृष्ठों पर यह बात उल्लिखित है कि विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने हिंदुस्थान की विपुल संपदा को लूटकर ले जाने का कार्य किया था। इतने से संतुष्ट न होने पर उन्होंने यहाँ स्थायी शासन तक स्थापित कर डाला। लूट-खसोट करने के लिए जो भी शेष रहा, वह हिंदुओं से छीन लिया और जब वे भूखों मरने पर विवश हो गए तो उनके सामने इसलाम स्वीकार करने अथवा मृत्यु को गले लगाने की शर्त दी गई। उनकी आर्थिक दशा दयनीय बनाने के लिए उन पर अनेकानेक कर लगाए गए, कृषि-भूमि छीनकर उसे राज्य की संपत्ति घोषित किया गया। अनुपयुक्त भूमि देकर अकालादि के समय भी अधिकाधिक अंश में कृषि-कर लिए गए। असमर्थ हिंदू अपने घरों से पलायित होकर जंगलों में चले गए। आज के वनवासी इसके ज्वलंत प्रमाण हैं। पलायित हिंदुओं के घोषित कर (लगान) उनके पड़ोसियों से वसूले गए और जब वे भी भाग गए तथा गाँव का गाँव वीरान हो गया तो गाँवों में आग लगा दी गई, साथ ही छिपे हुए हिंदुओं को जंगलों में ढूँढ़-ढूँढ़कर मार डाला गया।[2] उनकी तलाश में जंगल काटे एवं जला दिए गए। ऐसे नृशंस उन्मादियों के मन और मस्तिष्क में केवल हिंदुओं का हर प्रकार से उत्पीड़न ही बसा हुआ था।

712 ई. से 1206 ई. तक के मध्य ही इस देश की मुख्य रूप से उत्तर भारत की अर्थव्यवस्था को लूटपाट करके छिन्न-भिन्न किया जा चुका था और जो कुछ शेष रह गया था उसे 1206 ई. से 1761 ई. तक के सुल्तानों एवं बादशाहों ने शोषण करके प्रायः समाप्त कर डाला। हिंदू किसानों विशेषतः इसलाम विरोधी जातियों के किसान, जैसे—पासी, राजभर, चौहान इत्यादि खटिक की जमीनें छीनकर उसे मुसलमानों में बाँट दिया गया। हिंदू खटिक किसानों को जो रद्दी (बंजर, ऊसर, पथरीली, जंगली, बलूवर आदि) जमीनें छोड़ दी गईं उन पर भी अधिकाधिक कर लगाया गया। हिंदू होने मात्र का भी उनको अलग से कर देना पड़ता था। अकाल एवं अन्य संपदाओं से क्षतिग्रस्त कृषि-व्यवसाय में उपज न होने पर भी कर देने पड़ते थे और कर देने में असमर्थ हिंदुओं को कठोर यातनाएँ दी जाती थीं। ताकि वे भयभीत होकर जंगलों में भाग जाएँ। कभी-कभी मुसलिम सैनिक जंगली जानवर की तरह जंगलों में छिपे हिंदुओं का शिकार करते थे।[3]

खटिक संवर्ग के बहादुर योद्धा तथा लड़ाकू जातियों के प्रति विदेशी आक्रांताओं के मन में उत्पन्न हुआ प्रतिशोध-भाव उनके साथ ही हिंदुस्थान के समस्त वर्गों के पुरुष,

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-159
2. ईश्वरी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ करौना टकर्स, पृष्ठ-67-74
3. गोपाल, लल्लन, इकोनॉमिक लाईफ ऑफ नार्दन इंडिया, पृष्ठ-8

महिलाओं और अबोध बच्चों के लिए कहर बनकर अभिशप्त हुआ जिसका नग्न स्वरूप देखकर लज्जा भी शर्मसार हो जाती थी। इस उत्पीड़न को रोकने का एक ही उपाय था कि वे धर्माभिमानी, स्वाभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी योद्धा तथा लड़ाकू हिंदू इसलाम स्वीकार कर लें, परंतु इसलाम तो किसी भी मूल्य पर उन स्वाभिमानी एवं बहादुर हिंदू सैनिकों तथा युद्धबंदियों को स्वीकार नहीं था। इसके बदले उन्होंने जंगलों में जाकर रहना, दर-ब-दर जीवन जीना एवं कालांतर में अभाव इत्यादि के साथ आदिवासी होना स्वीकार किया।

विदेशी मुसलमान आक्रांता शासकों को बार-बार पराजित करके खदेड़ने का अदम्य साहस जिन हिंदू राजाओं ने किया था, उनकी सैन्य शक्ति का सशक्त केंद्रबिंदु मुख्यत: वर्तमान हिंदू खटिक शाखा-प्रशाखा के योद्धा और लड़ाकू वीर लोग थे। क्षत्रिय कुलोत्पन्न खटिक संवर्ग के बहादुर हिंदू सैनिकों ने विदेशी लुटेरों और आक्रांताओं के छक्के छुड़ा दिए थे। यही कारण था कि मुसलिम आक्रांता इनसे खार खाए बैठे थे और उनको जैसे ही अवसर प्राप्त होता था, युद्धकला में प्रवीण एवं युद्धवृत्ति खटिक सैनिकों का भयानक उत्पीड़न किया। उन्होंने उनका सामाजिक सम्मान समाप्त करने और उनकी आर्थिक स्थिति को दयनीय बनाने हेतु अनेक कुचक्र रचे। उनकी धार्मिक आस्थाओं पर घृणित प्रहार किए और उनके सांस्कृतिक मूल्यों को तोड़ने का भी प्रयास किया, ताकि प्रचंड उत्पीड़न से बचने के लिए हिंदुओं की अधिकाधिक जनसंख्या जंगलों में पलायन कर जाए।[1]

विदेशी मुसलमान शासकों के उत्पीड़न एवं विभिन्न अत्याचारों से हिंदुओं की एक बड़ी संख्या अपनी बहू-बेटियों एवं स्वयं की रक्षा हेतु घने जंगलों में चली गई और कालांतर में अन्न-वस्त्रविहीन जीवन व्यतीत करने को बाध्य हुई। समाज की मुख्यधारा से लंबे अरसे तक अलग रहने के कारण शारीरिक नग्नता उनकी संस्कृति बन गई और उनका जीवन जंगली एवं आदि मानवयुगीन बनता चला गया। प्राचीनकाल में हिंदू, मध्ययुगीन इसलामिक उत्पीड़न का शिकार होकर आज आधुनिक मानव के लिए उत्सुकतापूर्ण शक्ल-सूरत के बन गए हैं। वर्तमान जन-जातियों को मध्ययुगीन विदेशी मुगल शासकों के अत्याचार के भय से पलायित उन्हीं हिंदुओं के वंशज के रूप में चिह्नित किया जाता है।

विदेशी मुसलमान शासकों के समय में हिंदू व्यापारियों विशेष रूप से मांस एवं फल के व्यापारियों पर मूल्य नियंत्रण, आयात एवं निर्यात के कठोर नियंत्रण लगाए गए थे। उन पर कालाबाजारी करने का मिथ्या दोषारोपण करके उनकी संपत्ति छीन ली जाती

1. श्री वास्तव के.एल., दी पोजीशन ऑफ..., अध्याय-7

थी ताकि वे निर्धन हो जाए। उनको निर्धन बनाए रखने के पीछे उन विदेशी इसलामिक लुटेरों की यह नीति थी कि इससे खटिक कभी विद्रोह नहीं कर सकेंगे। इतना ही नहीं, कुछ मुसलिम शासकों ने यह नीति बना रखी थी कि हिंदू धनवान न हो सके। इसके पार्श्व में यही मत था कि वे विद्रोह न कर सके।[1] इस प्रकार के उत्पीड़न से खटिक व्यापारियों को जंगलों में भागने पर मजबूर किया गया। खटिक व्यापारियों से मांस-व्यापार छीना गया। जंगलों में भगा दिए जाने से खटिक जाति के लोग भी अपने पैतृक मांस एवं फल व्यवसाय तथा कृषि कार्य से वंचित हो गए और आर्थिक दृष्टि से कमजोर तथा सामाजिक दृष्टि से वनवासी हो गए।

मुसलमान शासकों के धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक उत्पीड़न से धर्माभिमानी, राष्ट्राभिमानी एवं स्वाभिमानी हिंदुओं की स्थिति अत्यंत दयनीय बनाई जा चुकी थी। दिल्ली के आस-पास के नगर मुसलमान बाहुल्य हो गए थे। बाबर ने स्वयं एक जगह स्वीकार किया है कि हिंदुओं से संपूर्ण नगर एक या डेढ़ दिन में इस प्रकार खाली करवा लिए जाते थे कि मानो वहाँ कभी वे रहे ही न हों। मुसलमान सिपाही नगरों के आसपास के गाँवों पर धावा बोलकर हिंदुओं को पकड़ते एवं उनकी बहू-बेटियों को अपनी हवस का शिकार बनाते थे। उस समय मुसलमान नगरों में और हिंदू आस-पास के गाँवों में ही रहते थे। सिपाहियों के भय से कभी-कभी गाँव पूर्णरूपेण खाली हो जाते थे। वे जंगलों में भाग जाते थे।[2]

मुसलमान शासकों के प्रचंड उत्पीड़न किसी एक प्रकार अथवा किसी क्षेत्र विशेष में ही नहीं होते थे, अपितु उन्होंने हिंदुओं को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उत्पीड़ित किया था जिससे त्रस्त होकर हिंदुओं की एक बड़ी संख्या जंगलों में पलायन को विवश हुई थी। अधिक जनसंख्यावाले हिंदुओं पर वे और भी अधिक अत्याचार करते थे, ताकि अधिक-से-अधिक जनसंख्या इसलाम स्वीकार कर लें अथवा जंगलों में पलायन करने को विवश हो जाए। हिंदुओं का प्रचंड उत्पीड़न करने से उनको दोनों ही प्रकार से दुहरा लाभ प्राप्त होता था।

हिंदू समाज में सर्वाधिक संख्या में उत्पीड़ित किए गए खटिक जाति के लोग थे जो विभिन्न उपनामों से विभिन्न क्षत्रिय राजवंशों के रूप में ख्यात थे और युद्ध-कला में दक्ष थे। वे स्वाभिमानी एवं गौरवशाली क्षत्रिय संवर्ग के थे तथा हिंदू सनातन धर्म में मरते दम तक आस्था रखनेवाले थे। युद्ध में पराजित होने अथवा अपने कायर नेतृत्व के संधि कर लेने पर युद्धबंदी और दास बनाए जाने के भय से वे बहादुर और स्वाभिमानी सैनिक

---

1. प्राणनाथ ए स्टडी ऑफ दी इकोनॉमिक कंडिशन ऑफ इंडिया, पृष्ठ-122
2. श्री वास्तव के.एल. दी पोजीशन ऑफ हिंबुज अंडर दी देलही सल्तनत, पृष्ठ-24-30

जंगलों में चले जाते थे।

उत्पीड़न से बचने के लिए जंगलों में चले गए हिंदू खटिक योद्धा उचित समय पर युद्ध हेतु एकत्रित होते अथवा किसी अन्य हिंदू राजा के साथ विदेशी मुसलिम आक्रांताओं से युद्ध करते थे। जब तक कोई हिंदू राज्य-शक्ति संगठित नहीं हो पाती थी, वे एक स्थान पर सुख-चैन से न रहकर जंगल-जंगल घूमते हुए जीवन व्यतीत करते थे। सत्ता-शक्ति के विरुद्ध संघर्ष इनकी नियति थी और शासकों द्वारा धर-पकड़ एवं अत्याचार-उत्पीड़न उनकी बहादुरी के लिए एक उपहास जैसा था, जिसका सामना करते हुए भी खटिक जाति के लोग कभी भी विचलित नहीं होते थे, भले ही उनको जंगल-पर्वतों और गुफाओं में अपने परिवार और नन्हें शिशुओं को लेकर दर-ब-दर की जिंदगी जीनी पड़ती थी। यही कारण है कि आज खटिक जाति के पास कृषि लायक जोत भूमि की भारी कमी है। 70 प्रतिशत खटिक जनसंख्या भूमिहीन है।

हिंदू क्षत्रिय-खटिक सैनिकों और अन्य जाति के हिंदुओं को मुसलमान शासकों द्वारा उत्पीड़ित होने पर जंगलों में पलायन करना तथा वहाँ भी छिपकर रहना पड़ता था। इस अवस्था की सजीव चित्रण तारीख-ए-फीरोजशाही में जियाउद्दीन बरनी ने इस प्रकार किया है—

**'मुसलिम सेनाओं में उन सैनिकों को विशेष अवसर दिए जाते थे जो वेतन के बदले केवल लूट का माल 25 अथवा 50 प्रतिशत तक प्राप्त करके संतुष्ट रहते थे। अपने पशुओं से हिंदू कृषकों के खेत उजाड़ना, चरवाना एवं नष्ट कर देना उनकी दिनचर्या थी। वे युद्ध में कम, परंतु लूटपाट में अधिक रुचि रखते थे। रास्ते में पड़नेवाले गाँवों को भरपूर लूटकर आग लगा सकते थे। और वहाँ के हिंदुओं का सबकुछ लूटकर उनको जंगलों में भगा देने हेतु विवश कर सकते थे।'**[1]

जंगलों में वानस्पतिक आधारों पर ही कुछ मिलना संभव होता है, कहीं-कहीं तो केवल पर्वत और गुफाएँ ही होती हैं जिनमें हिंसक पशु निवास करते हैं। झरनों और नदियों का जल भी सर्वत्र सुलभ नहीं होता जबकि बरसात में अपरदन के कारण चट्टानों के खिसकने से जीवन का हर क्षण खतरनाक बना रहता है। ऐसे स्थानों पर निवास करने के लिए निश्चित रूप से कोई भी मुनष्य स्वेच्छा से नहीं गया होगा, बल्कि मैदानी भागों के उत्पीड़न और अत्याचारों से अपने बचाव के लिए ही विस्थापित हुए। वे लोग विदेशी मुसलमान शासकों द्वारा मात्र इसलिए अधिक सताए गए क्योंकि उन्होंने इसलाम को अस्वीकार कर दिया और हिंदू धर्म में अपनी निष्ठा बनाए रखी।

वर्तमान घुमंतू जातियों के लोग पूर्वकालीन धर्माभिमानी, स्वाभिमानी, गौरवशाली

1. जियाउद्दीन बरनी, तारीख-ए-फिरोजशाही

और क्षत्रिय संवर्गीय जातियों के लोग हैं और वे भी अपनी बहू-बेटियों के शील-रक्षा, स्वधर्म रक्षा और हिंदू धर्म रक्षा के लिए जंगलों में पलायित कर गए और छोटे-छोटे समूहों में यत्र-तत्र विचरण करते हुए रोजी-रोटी कमाते रहे। पत्थर का काम करनेवाले उत्कृष्ट शिल्पियों को सड़कों के किनारे झोपड़ियाँ बनाकर रहते देखा जा सकता है। बाँस और अन्य वनस्पतियों के मनमोहक खिलौनों और गृहोपयोगी वस्तुओं का निर्माण करके गाँव-गाँव, गली-गली घूमकर बेचनेवाले लोगों को आज भी देखा जा सकता है। चेहरों पर झुर्रियाँवाली लंबी-चौड़ी काया को मलिन वस्त्रों में लिपटी हुई शिल-बट्टा कूटनेवाली स्त्रियों एवं खेल-मदारी का काम दिखानेवाले नट-नर्तकों को अपनी थैली फैलाए आज भी दिखाई देते हैं। ये सब जीविकोपार्जन के लिए अत्यंत विवशता में बदले गए सामाजिक रूप हैं। इन घुमंतू जातियों के लोगों में स्वाभिमानी हिंदुओं, देशरक्षक योद्धाओं एवं धर्मरक्षक वीरों को विदेशी मुसलिम शासक आक्रांताओं द्वारा दर-ब-दर करके इस प्रकार का निर्वासित जीवन जीने के लिए बाध्य किया गया एक प्रकार का दंड है।

प्रश्न है कि ये कौन हैं और कहाँ से आए हैं? उत्तर अपने आप मिल जाता है कि हिंदू धर्म और हिंदू स्वाभिमान के सच्चे प्रतिमूर्ति वे ही लोग हैं जिन्हें हम आज हेय दृष्टि से देखते हैं और आरक्षण का लाभ देने अथवा न देने की विमर्श करते हैं। ये लोग यदि इसलाम स्वीकार कर लिए होते तो आज मुसलमान के रूप में लाखों रुपए का अनुदान प्राप्त करके मक्का में हज कर आते, जहाजों पर यात्राएँ करते किंतु आज भी वे हिंदू धर्म में बने रहकर अभावों के साथ जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इनको भी स्वतंत्रता सेनानियों की तरह पेंशन, पारिवारिक पेंशन और निःशुल्क आवास, शिक्षा, रोटी, कपड़ा पाने का अधिकार है। खटिक जाति के घुमंतू लोगों की एक भारी जनसंख्या के दर-ब-दर जीवन और जंगली जीवन को एक नवीन दिशा में ले जाने और समाज की आधुनिक जीवन शैली के साथ जोड़ना आवश्यक है। इसके लिए विशेष पैकेज की व्यवस्था और इनका पुनर्वास अब अपरिहार्य हो गया है।

मुसलमान शासकों ने यह नीति अपनाई थी कि जो भी हिंदू इसलाम स्वीकार कर लेते उनको साधारण रूप में जीवित रहने दिया जाता था, परंतु मुसलमान बन जाने के बाद भी उनको आर्थिक दृष्टि से समृद्ध नहीं रहने दिया जाता था, क्योंकि आगे चलकर उनके विद्रोही बन जाने की संभावना होती थीं, दूसरी ओर जो हिंदू इसलाम स्वीकार नहीं करते थे उनकी हत्या नृशंसतापूर्वक कर दी जाती थी। उनके सामने ही उनकी स्त्रियों के साथ शीलहरण, बलात्कार एवं पशुवत् व्यवहार किया जाता था। उनके दूध पीते बच्चे मार दिए जाते थे ताकि भयभीत होकर वह हिंदू इसलाम स्वीकार कर लें। गाँव और नगरों को अपने अधिकार में ले लेने के बाद, कुछ दिनों तक हिंदू लागों को लूटने का जश्न मनाया जाता था। इस भय से भी हिंदू धर्म के प्रति दृढ़ संकल्पित लोग अपनी

पराजय होने की संभावना में अपने मूल निवास स्थानों का परित्याग करके जंगलों में भाग जाते थे। इसलाम के प्रसार एवं मुसलिम आक्रांताओं से बचने के लिए नगरों में रहनेवाले हिंदू गाँवों में आकर बस गए।[1]

वर्तमान समय में जंगलों में रहनेवाले लोगों की स्थिति का पता लगाया जाए तो पता चल जाता है कि आरंभ में वे लोग बहादुर, स्वाभिमानी तथा धर्माभिमानी हिंदू थे। आज भी अपने नाम के साथ वे भी क्षत्रियों की उपाधि लगाते हैं और अपना गोत्र आदि वही बतलाते हैं, जो वर्तमान क्षत्रिय जातियों के हैं। युद्ध-वृत्ति, स्वाभिमान और हिंदू धर्म के प्रति अटूट आस्था एवं धर्माभिमान आज भी उनमें विद्यमान पाई जाती है। कई पीढ़ी से जंगलों में रहकर जीवन-यापन करने के कारण वे अपनी मूल पहचान खो दिए हैं, परंतु उनके स्वाभिमानी और हिंदू धर्मपरायणता की प्रवृत्ति में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया है। उनका जीवन अभावग्रस्त अवश्य है, किंतु वे अभावों में भी संतुष्ट एवं प्रसन्न मिलते हैं, मात्र इसलिए कि वे आज भी हिंदू बने हुए हैं। ऐसे ही लोगों को अवसर पाकर मुसलिम और ईसाई संस्थाएँ अपने-अपने धर्म में परिवर्तित करने का कुत्सित प्रयास लगातार करती रहती हैं और जिसका विरोध हिंदू संगठनों द्वारा भी किया जाता है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन हिंदू राज्य परिवार कभी भी गाँवों अथवा जंगलों में केवल उसी समय रहने के लिए विवश हुआ जब उसके नगर स्थित दुर्गों एवं किलों पर विदेशी मुसलिम अथवा अंग्रेज आक्रांताओं का अधिकार हो गया होता था। सामान्य लोग भी गाँवों अथवा नगरों में ही रहना अधिक पसंद करते थे। किंतु भारी संख्या में हिंदुओं का जंगलों में छिपकर रहना केवल मुसलिम आक्रमण काल में ही हुआ, क्योंकि उनके साथ युद्ध में पराजित होने के बाद बलपूर्वक इसलाम स्वीकार करना अनिवार्य हो जाता था और जो लोग उसे स्वीकार नहीं करते थे उनको तरह-तरह के उत्पीड़न और अत्याचार का शिकार होना पड़ता था। इससे बचने के लिए ही मध्यकाल में हिंदू समाज के अधिकांश लोगों ने जंगलों में रहने का स्वभाव बनाया और आज वे अनुसूचित जाति और जनजाति के रूप में चिह्नित किए जाते हैं।

## 5.4 मुसलिम आक्रांताओं के भयानक अत्याचार की शिकार खटिक जाति के लोग

मुसलिम आक्रांता शासकों ने हिंदुओं पर अनेक अत्याचार किए थे, परंतु प्रत्येक का प्रभाव खटिक जाति पर नहीं पड़ पाया था। उन्होंने अनेक अत्याचारों का विकल्प निकाल लिया और उससे अपने को सदैव बचाते रहे। परंतु कुछ अत्याचार ऐसे थे जिनसे खटिक लोग भी अपने को बचा नहीं पाए और उन भयानक अत्याचारों के शिकार हो गए।

1. ब्रज नारायण शर्मा, सोशल लाईफ इन नार्दन इंडिया, पृष्ठ-305-312

आक्रांता सिकंदर (ई.पू. 327 में) को अपने विश्वविजय अभियान के उद्देश्य को पूरा करने हेतु हिंदुस्थान के बड़े-बड़े राज्यों से युद्ध करके अपना पराक्रम दिखलाना था। उस समय देश में कुल 23 गणराज्य थे, जिनके नाम इस प्रकार उल्लिखित मिलते हैं—अस्पेसियन, गुरेइअन, अस्से के नोज (अश्वक), नीसा, प्यूकेलाटिक (पुष्पकलावती), तक्षशिला, अरसेक्स (उरसा या हजारा), अभिसार (कश्मीर का पश्चिमोत्तर भाग), पुरुराज (झेलम तथा चिनाव नदियों के बीच), ग्लोग निकाई, गैंडरिस, अट्रेस्टाई, कथ्यान (कठ, काठिक), सौभूमि, फेगलस, सिबोई (शिव), छुद्रक, मालव, अंबष्ठ, जेवाई, ओस्सोडिआई, मौसिकेनोज, पैटलीन। इनमें केवल तीन (तक्षशिला, पुरुराज और जेबाई) गणराज्यों का शासन क्षत्रिय वंश के शासकों के हाथ में था, जबकि बीस के शासक क्षत्रिय नहीं बल्कि अन्य जातियों के हिंदू थे।[1]

कथ्यान गणराज्य के कथेयोई तथा कथा जाति (वर्तमान के खटिक) के हिंदू योद्धाओं ने थोपे गए युद्ध की चुनौती को स्वीकार किया और अपने पराक्रम से सिकंदर के सैनिकों को हिलाकर रख दिया। उनकी ही मार से वे इतने भयभीत हो गए थे कि आगे बढ़ने का आदेश मिलने पर भी उन्होंने सिकंदर से साफ इनकार कर दिया था। पराजित खटिक राज्य की राजधानी संकल को जिस तरह से सिकंदर ने लूटा, आगजनी की, युद्धबंदियों के साथ अमानवीय अत्याचार किया, स्त्रियों का शील-हरा और निरीह बच्चों की हत्या कराई उससे खटिक जाति को भारी क्षति पहुँची थी।[2]

सोमनाथ मंदिर की रक्षा में प्राणोत्सर्ग करनेवाले काठियावाड़ (सौराष्ट्र) के कठ या काठिक (खटिक) लोग उस समय मंदिर के प्राचीर से सटे हुए चबूतरे पर एकत्रित होकर महमूद गजनबी और उसके सैनिकों को मंदिर में जाने से रोक रहे थे। महमूद के छक्के लगभग छूट चुके थे और वह भागने ही वाला था परंतु उसी समय महमूद के कुछ सैनिकों ने पास में ही रहनेवाले खटिक परिवारों की कुछ स्त्रियों और बच्चों को अपहृत करके उनके सम्मुख खड़ा कर दिया और कहा कि यदि वे शस्त्र नहीं रखते हैं, तो उनके स्त्री-बच्चों को समाप्त कर दिया जाएगा।

कठ (काठिक) सैनिकों से शस्त्र रखवा लेने के बाद आक्रांताओं ने उनकी निर्ममतापूर्वक हत्या कर डाली तथा उनकी स्त्रियों और बच्चों को गुलाम बना लिया। इसकी सूचना मिलते ही खटिक बस्ती के सारे लोग मंदिर पर डट गए परंतु तब तक मंदिर और मूर्ति तोड़ डाली गई थी। महमूद गजनबी जब लूट का सामान लेकर चलने लगा तो उसे पुनः उसी खटिक बस्ती के लोगों ने रोकने का प्रयास एवं युद्ध के लिए

---

1. शास्त्री, राजनाथ सोनकर : (पूर्वोद्धृत), पृष्ठ-153
2. शास्त्री, राजनाथ सोनकर, पृष्ठ-165

ललकारने का प्रयास किया किंतु उस समय महमूद युद्ध के मूड में नहीं था और लूट का माल लेकर सुरक्षित लौट जाना चाहता था। तभी से वह खार खाए बैठा था और पुनः जब भी आया सबसे अधिक इसी जाति के लोगों पर भयंकर अत्याचार किया।

लूटपाट अथवा हिंदुस्थान का दर्शन करने के लिए जब तैमूरलंग यहाँ आया हुआ था और आगजनी, नरसंहार, लूटपाट के अपने काले कारनामों से लोगों को भयभीत कर रहा था, उस समय तुगलक-वंश के विदेशी आक्रांता शासन का अंतिम चरण था और देश में पूरी तरह से अराजकता फैली हुई थी। खटिक जाति उस समय भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखती थी। काठोर राज्य पर उसका अधिकार था, यद्यपि उसके राज्य के कुछ क्षेत्रों, जैसे—इंदराज आदि पर तुगलक-वंश का अधिकार था और वहाँ मुसलिम शासक नियुक्त किए गए थे। अपने इस क्षेत्र को वापस पाने के लिए (कठ अथवा काठिक) कठोर लोग निरंतर प्रयत्नशील थे, इसीलिए इंदराज के लोगों से वे बलपूर्वक कर वसूल करते थे। वहाँ के तत्कालीन मुसलिम शासक ने इसकी शिकायत तैमूरलंग से की, जिसे सुनकर वह कुपित हो उठा और अपनी भारी सेना लेकर काठिक जातियों तथा सियाहपोश जातियों का नृशंसतापूर्वक नरसंहार किया। इतिहासकारों ने बढ़ा-चढ़ाकर लिखा है कि तैमूरलंग ने उनके एक लाख नरमुंडों का ढेर लगवाकार उस पर नमाज अदा की थी।

यह तो सच लगता है कि तैमूरलंग की सेना के आगे काठिकों ने बहुत अधिक देर तक बहादुरी के साथ सामना किया किंतु अपरिचित अस्त्र-शस्त्र के समक्ष कुछ समय के लिए विवश हुए थे, परंतु यह भी सच है कि उन्होंने जिस तरह से तैमूर की सेनाओं को अपने पर्वतीय मोरचेबंदी द्वारा घेरकर अधिकाधिक संख्या में मार डाला था इससे वे सुल्तान का कोपभाजन का शिकार भी बन गए थे। उसने काठिक स्त्रियों और बच्चों तक को नहीं छोड़ा और अपने लिए एक लाख नरमुंड एकत्रित करने के लिए बौद्धों तथा सियाहपोशों को भी मार डाला। इस तरह उसने भी भयानक अत्याचर किया था।

मुसलिम आक्रांता मुहम्मद गौरी ने हिंदुस्थान पर अनेक आक्रमण किए थे और आक्रमणों में उसे खटिकवंशीय जातियों की अनेक शाखाओं तथा प्रशाखाओं के नाम से स्थापित हिंदू राजाओं से युद्ध करना पड़ा था। चौहान पृथ्वीराज तृतीय का प्रबल शत्रु जयचंद उस समय मुहम्मद गौरी का सहयोग मात्र इसलिए कर रहा था कि मुहम्मद गौरी का अभियान पृथ्वीराज के विरुद्ध था, जयचंद ने उस समय यह नहीं सोचा था कि मुहम्मद गौरी की तलवार कभी उसकी भी गरदन पर लटकेगी। हिंदुस्थान को गुलाम बनानेवाले ऐसे देशद्रोही लोगों को खटिक जाति के लोग कभी हिंदू राजा के रूप में समादृत नहीं किए, यह उनके स्वाभिमान का सबसे ज्वलंत उदाहरण है। इस जाति को जिन विदेशी मुसलिम शासक आक्रांताओं ने अनावश्यक रूप से छेड़छाड़ करके युद्ध किया और हानि पहुँचाई, साथ ही भयंकर अत्याचार किए, उनको भी यह जाति कभी

नहीं भूल पाई है। आज भी जब कभी विदेशी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा इसलाम में धर्मांतरित मुसलमानों से दंगे इत्यादि के समय इनकी ठन जाती है, तो ये पूरी तरह से मरने-मारने पर उतर आते हैं।

सल्तनतकाल में खटिक जाति पर सर्वाधिक अत्याचार किए गए थे। इनका मांस-व्यापार पूरी तरह से मुसलिम कसाई लोगों के हाथ में सौंप दिया गया था और मुसलमान धर्मांधता के कारण एवं नवाबों के यहाँ राजकीय सेवा में कार्यरत हिंदू के लिए, किसी खटिक की दूकान से मांस लेना प्रतिबंधित कर दिया गया था। ये लोग उस समय अपने घरों में ही दुकानें लगाते ओर चोरी-छिपे अपना व्यवसाय करते थे। पकड़े जाने पर उनको राजद्रोह के आरोप में फाँसी दे दी जाती थी अथवा किसी मृत पशु की खाल में भरकर उन्हें तड़पा-तड़पा कर मार दिया जाता था।

अत: खटिक जाति और इसी तरह की अन्य जातियों के साथ मध्यकालीन मुसलमान शासक आक्रांताओं ने जो अत्याचार एवं उत्पीड़न का कार्य किया था और उनको मार-मारकर दर-ब-दर एवं जंगलों में रहने पर विवश कर दिया था, उसी का परिणाम है कि आज वनों से निकलकर मैदानी भागों में आ बसने और विविध प्रकार के रोजगार कर लेने के बाद भी उन जातियों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति उच्चकोटि (जैसा वह पूर्वकाल में थी) की नहीं हो पाई है। विदेशी आक्रांता मुसलमानों के बाद अंग्रेजों ने भी इनकी परिस्थितियों को और भी दयनीय बनाया। दमन, दलन एवं उत्पीड़न के शिकार हुए लोगों को दलित (1931 की जनगणना में) नाम दिया और अंग्रेज शासकों ने अपने दरिंदों (जमींदारों, कारिंदों आदि) से इनका निरंतर शोषण कराया। हिंदू होने के कारण जो ऐसा नहीं कर पाते थे उनकी जमींदारी छीन ली जाती थी। जमींदार, कारिंदों का पद मुख्य रूप से ब्राह्मण, भूमिहार, क्षत्रिय, कायस्थ जैसी तथाकथित उच्च जातियों को दिया गया था और उनसे ही दलितों का शोषण कराया था। इसी के फलस्वरूप आज का दलित उन तथाकथित उच्च लोगों से घृणा करता है, जबकि उसे समझना चाहिए कि उस समय वे जमींदार, कारिंदें आदि भी उन्हीं अंग्रेजों के गुलाम थे, जिनके गुलाम वे लोग स्वयं थे। वे लोग अंग्रेजों के नौकर थे इसलिए उसके आदेशों को अमान्य करने पर सेवा से निकाल दिए जाते थे। अतएव शोषण कराए जाने पर उन्होंने विवश होकर वैसा ही किया, जैसा मुसलिम शासक और अंग्रेज शासक चाहते थे। वर्तमान दलित समस्या के लिए मध्यकाल के विदेशी मुसलिम शासक एवं उनके उपरांत विदेशी अंग्रेज शासक ही उत्तरदायी थे। लगभग आठ सौ वर्षों से तो हिंदू शासक हिंदुस्थान में शासन में नहीं थे।

## 5.5 हिंदू धर्म-रक्षा

किसी भी मानव समाज के सामने रक्षा अथवा सुरक्षा संबंधी सर्वप्रथम दो ही विचार आते हैं—एक धर्म-रक्षा और दूसरे को देश-रक्षा कहते हैं। अन्य रक्षा-सुरक्षाओं का चिंतन गौण अर्थ रखता है। जहाँ तक धार्मिक रक्षा की बात है, विश्व में वृहद रूप में कुल तीन ही पंथ उल्लेखनीय हैं—हिंदू धर्म, ईसाई रिलीजन और मुसलिम अथवा इसलाम मजहब। हिंदू धर्म मृदुल और सहिष्णु होने से अन्य आक्रामक पंथों से प्रभावित होता रहा। उसके अस्तित्व को बचाने के लिए बार-बार संघर्ष करना पड़ा। प्रलयकारी परिस्थितियों में उसे शाश्वत रखने का सफल प्रयास जो किया गया, उसे ही धर्म-रक्षा अथवा हिंदू धर्म-रक्षा कहा गया।

हिंदू धर्म की रक्षा हिंदुओं द्वारा इसलिए की गई कि उसमें अनेक प्रकार की मानवीय विशेषताएँ (गुण) हैं। यह धर्म सार्वभौम धर्म है। इसकी सार्वभौमिकता पर कोई प्रश्नचिह्न नहीं लगाया जा सकता है। यह एकमात्र मानव धर्म है जो अनादि, सनातन और चिरंतर हैं। यह मानव धर्म का पर्याय है। यह एक संवेदनशील धर्म है, क्योंकि यह चिन्मय तत्त्वों को मौलिकता के संचालन के लिए सजगतापूर्वक प्रयुक्त करता है। हिंदू धर्म का आत्मबोध सभी प्राणियों के संतुलित विकास के लिए प्रकृति का संरक्षण करना है।

हिंदू धर्म का दार्शनिक आयाम विस्तीर्ण है, जिसमें शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैत तथा द्वैतवाद का अप्रतिम चिंतन समाहित है। इस धर्म की आधारभूमि वेद और उपनिषद् है। यह धर्म केवल विश्वासों और सिद्धांतों का समुच्चय नहीं है। हिंदू धर्म ग्रंथों में विश्व के संपूर्ण मानव के कल्याण की जो संभावनाएँ निहित हैं वह किसी मत विशेष से आबद्ध नहीं है। इस धर्म के वैदिककाल की वैज्ञानिक उपलब्धियों को सामान्य व्यक्ति भी सहज भाव से स्वीकार करता है। इस धर्म के समस्त उपांग प्राकृतिक नियमों का अनुपालन करते हैं और अपनी सनातन आध्यात्मिक ऊर्जा को बनाए रखते हैं। यह धर्म प्रकृति का पोषक एवं उससे पोषित रहा है। यह प्राकृतिक मानकों पर आधारित सामाजिक व्यवस्थाओं का सिद्धांत है।

हिंदू धर्म प्रबुद्ध तथा एकताबद्ध मानव समूह और परिवेश का सम्यक् भावदर्शन है, जिसमें मानवता के ज्ञात, अज्ञात, भौतिक, आध्यात्मिक इत्यादि सभी तत्त्व अपनी संपूर्णता के साथ निरंतर सक्रिय तथा प्रवाहमान रहते हैं। यह धर्म चिन्मय तत्त्वों को भौतिकता के संचालन के लिए सजगतापूर्वक प्रयुक्त करता है। वैदिक वांङ्मय में धर्म के जिन तत्त्वों का उल्लेख है उनसे यह स्पष्ट होता है कि भौतिक एवं आध्यात्मिक जगत् यानी समष्टि को इस सनातन धर्म ने आत्मसात् कर रखा है। हिंदू धर्म मानवता के हित संवर्द्धन से जुड़ा हुआ है। यह पाश्चात्य शब्द रिलीजन से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। रिलीजन तो किसी-न-किसी मत, पंथ या समुदाय को संबोधित करता है, जो

किसी एक समूह की मान्यता हो सकती है। उसमें न तो सार्वभौमिकता पाई जाती है और न ही वह सर्वग्राही होता है। किंतु धर्म व्यक्तिगत जीवन को धारण करनेवाले नियमों, सामाजिक क्रियाओं को धारण करनेवाले नियमों और समस्त संसार को धारण करनेवाले नियमों के लिए प्रयुक्त है। यह धर्म सनातन एवं समस्त मतों की जननी है, जिसका प्रसार संस्कृत वाङ्मय में निहित है। धर्म ही हिंदू जीवन-पद्धति को विकसित करनेवाला एकमात्र कारक है। इस सनातन अथवा हिंदू धर्म को संपूर्ण जगत् धारण करके मानवीय कल्याण सुनिश्चित कर सकता है।

उपरोक्त विशेषताओं से युक्त हिंदू धर्म सदैव पौषणीय और ग्रहणीय है। इसे पूर्वकाल से आज तक दो प्रकार के ग्रहण लगते रहते हैं जिनको सामान्य अर्थों में इसलाम और ईसाई जैसे राहु-केतु नाम दिए गए हैं। इन दोनों ही विदेशी पंथों ने हिंदू धर्म को समाप्त करने के अनेक उद्यम समय-समय पर किए, परंतु स्वाभिमानी एवं धार्मिक हिंदुओं के साहस एवं शौर्य के समक्ष प्रभावहीन हुए।

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं के काल में लूटपाट के साथ ही हिंदुओं को इसलाम स्वीकारने और हिंदू धर्म को त्याग देने हेतु बहुविधि प्रयास किए गए। सन् 1206 ई. से 1707 ई. तक जब सुल्तानों और बादशाहों ने स्थायी रूप से यहाँ शासन-कार्य किया उस समय भी हिंदू धर्मावलंबियों को तरह-तरह से उत्पीड़ित करके हिंदू धर्म को छोड़ने और इसलाम स्वीकारने हेतु विवश किया गया। अनेक लोगों को जघन्यता के साथ मारा गया, उनके परिवारों को प्रताड़ित किया गया, उनको अस्वच्छ एवं अपवित्र कार्यों में लगाकर उनकी पद-परिस्थिति को निम्न किया गया। इसके हजारों दृष्टांत इतिहास के ग्रंथों में भरे पड़े हैं। ऐसी परिस्थिति में संतों एवं महात्माओं ने हिंदू धर्म की रक्षा की।

हिंदू धर्म की रक्षा का कारण यह था कि यह धर्म हमारे पुरुषार्थ-चतुष्टय में प्रथम स्थान पर प्रतिष्ठित है और धर्मयुक्त अर्थ-संग्रह, धर्मयुक्त राजनीति, धर्मयुक्त शासन आदि की सामाजिक स्वीकृति है। धर्म, अर्थ, काम जैसे पुरुषार्थ विहित हैं, जो मानव के लिए मोक्ष का मार्ग सुलभ करते हैं चूँकि हिंदू धर्म का संबंध मनुष्य के प्रकृतिपरक जीवन-पद्धति से है इसलिए एक हिंदू आनेवाली पीढ़ियों संपूर्ण विश्व यानी वसुधैव कुटुंबकम् के लिए इस धर्म की रक्षा आवश्यक मानता है। इस धर्म का संबंध आध्यात्मिक और भौतिक जीवन के दोनों पक्षों से है, इसलिए भी इस धर्म की रक्षा मानव एवं पृथ्वी के अस्तित्व रक्षण हेतु आवश्यक है। मानव जीवन में नैतिकता, परंपराएँ, प्रथाएँ, संस्कृति, सभ्यता आदि का जो स्वरूप दिखलाई देता है वह सब हिंदू धर्म से ओत-प्रोत है। अतएव हिंदू धर्म की रक्षा मानवता हेतु अपरिहार्य मानी गई है। हिंदू धर्म स्वयं राष्ट्र अथवा हिंदुस्थान का गौरव है। यह प्रत्येक हिंदू का स्वाभिमान है। अतएव यह धर्म रक्षणीय है। यह धर्म हिंदू मानव जगत का प्राण है, इसलिए भी इसकी रक्षा हेतु हर स्तर

का प्रयास सराहनीय है।

हिंदू धर्म रक्षा का खटिक जाति से भी गहरा संबंध है। इस जाति ने हिंदू धर्म की रक्षा हेतु अनेक विदेशी मुसलिम एवं तुर्क शासकों एवं आक्रांताओं से घोर युद्ध किया, अपने और अपने परिवारों के साथ शहीद हो गए, परंतु हर मूल्य पर हिंदू धर्म की रक्षा करते रहे। हिंदू खटिक जाति ने सामाजिक, आर्थिक यानी सभी प्रकार के उत्पीड़न सहे और जंगली तथा विस्थापित जीवन तक बिताया, परंतु हिंदू धर्म की रक्षा में लगे रहे। अपने हिंदू घरों और परिवारों को सुरक्षित रखने हेतु इस जाति ने इसलाम के शत्रु-पशु सुअर को पालने तक का कार्य किया, जो व्यावहारिक दृष्टि से सर्वोत्तम उपाय रहा। इससे विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों द्वारा बलपूर्वक की जा रही हिंसा रुकी और हिंदू धर्म की रक्षा भी हो गई।

## 5.6 अंग्रेजों से पुनः टकराव एवं उनके द्वारा अपराधी जाति घोषित

विदेशी मुसलिम शासकों की भाँति विदेशी अंग्रेज शसकों के पास यह मेधा नहीं थी कि वे हिंदुस्थान के स्वतंत्रताप्रेमी लोगों से निरंतर लड़ाई लड़ते रह सकें। वे राजनीति से काम लेते थे। दूसरों को लड़ाकर और आपस में भेदभाव उत्पन्न करके शासन करना चाहते थे। इस रहस्य को समझनेवाले लोग आजादी के लिए अंग्रेजों से दो रूपों में संघर्षरत थे—एक था नरम दल और दूसरा था गरम दल। अंग्रेज नरम दल की अपीलें अस्वीकारते रहते थे और गरमदल के क्रांतिकारी कार्यों को अपराधी कार्य की सूची में संलग्न करते रहते थे। विदेशी अरेबियन आक्रांताओं से मुक्ति का संघर्ष लड़ चुकने के बाद हिंदू खटिक जाति को अब अंग्रेजों से टकराना था जो इस जाति को जरायम (अपराधी) पेशा घोषित कर चुके थे।

1757 ई. में मुगलों से सत्ता छीनने के बाद हिंदुस्थान में ईस्ट इंडिया कंपनी के नाम से अंग्रेजों का शासन आरंभ हुआ और 1857 ई. की सशक्त क्रांति के बाद कंपनी राज के स्थान पर ताज राज (क्राउन रूल) जो 15 अगस्त, 1947 तक चला। इस प्रकार अंग्रेजों का शासन कुल 190 वर्षों तक रहा। ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए पहला अंग्रेज टाइम स्टीफेन्स 1579 ई. में गोवा में आया था और ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना सन् 1600 ई. में हुई थी। अकबर के उत्तराधिकारी जहाँगीर ने 1608 ई. में कंपनी को सूरत में तंबाकू की कोठी खोलने की स्वीकृति दी थी।[1] परंतु इसका सशक्त विरोध सूरत में राजस्थान एवं उत्तर प्रदेश से जीवकोपार्जन हेतु भागकर बसे खटिक जाति के लोगों ने किया था। उस समय यह जाति सूरत में तंबाकू उत्पादन का कार्य भी कर रही थी।

1. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-416-17

अकबर और जहाँगीर से खटिक जातियों के साथ अनेक लोगों को पट्टा भी मिला था जिसका निर्धारित कर वे दिया करते थे। अतएव उनके अकारण पट्टा छीनकर किसी विदेशी को दिया जाना उनके सम्मान के विरुद्ध था, परंतु सत्ता से टकराना उन्होंने उचित नहीं समझा। अंग्रेजों ने सूरत पहुँचकर तंबाकू उत्पादकों के लिए जो नियम निर्धारित किए उससे खटिक जाति की आर्थिक स्थिति में गिरावट और तंबाकू उत्पादन में घाटा की स्थिति बन गई।

मुगलकाल तक खटिक जाति अपनी अनेक उपजातियों तथा शाखा-प्रशाखाओं के साथ देश के भिन्न-भिन्न भागों में रहकर अपना मुख्य व्यवसाय मांस-विक्रय के साथ कृषि और सैन्य-बल में भागीदारी का कार्य कर रही थी। अपने कृषि और व्यापार से अर्थ संपन्न होने के कारण खटिक जाति के सैनिक किसी भी युद्ध में निर्भीकता के साथ भाग लेते थे और उस समय हिंदू-मुसलिम अथवा अंग्रेजों के साथ होनेवाले धर्म एवं राष्ट्रीयता भावयुक्त सभी युद्धों में भाग भी लेते थे। हिंदू होने के कारण वे सदैव हिंदू राज्यों की सेनाओं में ही रहते थे। अंग्रेजों का इनसे सैकड़ों बार संघर्ष हो चुका था।

व्यापार-कार्य से आए अंग्रेजों के समय में मुगल शासक विलासी और कमजोर हो गए थे, परंतु औरंगजेब के रहते वे हिंदुस्थान पर बहुत आसानी से अधिकर नहीं कर सकते थे। इसके लिए उनको सैकड़ों वर्ष प्रतीक्षा करनी पड़ी थी और उनको छोटी-बड़ी 111 लड़ाइयाँ लड़नी पड़ी थीं।[1] अनेक लड़ाइयों में अंग्रेज पराजित हुए और दंडित भी किए गए थे। उनको जब भी किसी खटिक सैन्य टुकड़ी से लड़ना होता, बंदूकें काम करना बंद कर देती थीं। खटिकों की मारक क्षमता के आगे वे नतमस्तक थे। खटिक योद्धा उस समय तक बंदूक और तोपें चलाना भी सीख चुके थे, इसलिए मुँहतोड़ जवाब देने में समर्थ थे। इसलामिक ताकतों से वे और उनके पूर्वज सदियों से लड़ते आए थे, इसलिए अंग्रेजों से लड़ने में उनका उत्साह कम नहीं होता था, परंतु अंग्रेज इस प्रतीक्षा में अवश्य थे कि जैसे ही अवसर मिले खटिक जाति को अपराधी जाति की श्रेणी दे दी जाए। यद्यपि इसके लिए उनको एक लंबी प्रतीक्षा करनी पड़ी थी जब अंग्रेजों ने अपने विरुद्ध क्रांतिकारी विद्रोह करने के आरोप में इस जाति को अपराधी जाति घोषित करने में सफलता पाई थी।

व्यापार के लिए हिंदुस्थान में आनेवाले अंग्रेजों ने शनैः-शनैः अपने पंथ ईसाईयत का प्रचार करना आरंभ किया। मुगलकाल के प्रताड़ित, उद्वासित एवं विस्थापित तथा देश के विभिन्न स्थानों और जंगलों में जाकर विभिन्न नामों एवं स्वरूपों में जीवन व्यतीत कर रहे भोले-भाले वनवासी लोगों को लालच अथवा मूर्ख बनाकर अंग्रेजों ने हिंदू से

---

1. दिनकर, रामधारी सिंह, (पूर्वोद्धृत) पृष्ठ-417

ईसाई बनाना आरंभ किया। उस समय भी खटिक जाति ने कंपनी के नियुक्त पादरियों को कड़ी चेतावनी दी और कई एक को तो जान से मार भी दिया था। खटिक जाति का हिंदू धर्म के प्रति पूर्ववत् अगाध प्रेम अंग्रेजों के मार्ग में बाधक समझ में आ चुका था इसलिए वे इस जाति को अपराधी जाति की सूची में डालने की सोच पहले से ही बना चुके थे। अंग्रेजों ने 1881 ई. में स्वाभिमानी एवं धर्मपरायण खटिक जाति का प्रचंड उत्पीड़न की मानसिकता से उनके देशभक्ति एवं स्वतंत्रता प्रेम के बदले उन्हें जरामय पेशा (अपराधी) जातियों की सूची में डाल दिया था।

अंग्रेजों की एक षड्यंत्रकारी योजना नागरी में भी उर्दू चलाने की थी। उसे उन्होंने हिंदुस्थानी नाम दिया था।[1] यह एक स्वाभिमानी हिंदू के लिए अस्वीकार्य योग्य योजना थी। इसका प्रबल विरोध खटिक नवयुवकों के नेतृत्व में हुआ। कई खटिक नौजवान शहीद हो गए और जो पकड़ में आए उन पर राजद्रोह का अपराधी प्रकरण पंजीकृत कराया गया। वस्तुत: अंग्रेज सरकार खटिक जाति को उचित समय पर अपराधी जाति घोषित करने के लिए पृष्ठभूमि तैयार कर रही थी।

हिंदू व्यापारियों और अंग्रेज व्यापारियों के स्वभाव और कार्य-व्यवहार आदि सभी में अंतर था। वे यहाँ विशुद्ध रूप से व्यापार करने और अधिकाधिक लाभ कमाने आए थे। रहने के लिए उन्होंने कोई अलग से स्थान नहीं रखा था, बल्कि जहाँ व्यापार करते थे वहीं निवास भी करते थे। राजघरानों को दिए गए ऋणों की वसूली वे सख्ती से करते थे और ऋण वापस न कर पानेवाले सुल्तानों को बलपूर्वक गद्दी से उतार देते तथा उसका राज्य हड़प लेते थे। अपना राज्य-विस्तार और राज्य-व्यापार की सुरक्षा के लिए सैन्य-विस्तार उन्होंने अपनी इसी नीति के अंतर्गत किया था। उनके व्यापार की एक और विशेषता थी कि जिस प्रकार उन्होंने अपने व्यापार के मार्ग से डच, पुर्तगाली और फ्रांसीसियों को हटा दिया था उसी तरह से वे किसी भी हिंदू अथवा मुसलमान को अपना प्रतिस्पर्द्धी नहीं देखना चाहते थे। हिंदू खटिक जाति एवं अन्यान्य जातियाँ जिन्हें वे अपराधी जाति घोषित कर चुके थे, उनके व्यवसाय को तो वे छल-कपट पूर्ण नीति के साथ पूर्णत: नष्ट-भ्रष्ट कर देना चाहते थे।

अंग्रेजों ने खटिक जाति के वाणिज्य एवं व्यापार को प्रभावित करने के लिए सर्वप्रथम मुसलिम व्यापारियों को प्रतिस्पर्द्धा में खड़ा किया। उन्होंने मुसलमानों को गोमांस की आपूर्ति विदेशों में करने हेतु प्रोत्साहित किया। बाहर से उनको अधिक मुद्रा प्राप्त होने लगी तो उन्होंने बकरा-मांस पर भी भारी रकम खर्च करके एकाधिकार बनाने का प्रयास किया। खटिक जाति के लोग गाय को माँ मानते थे और आर्थिक लाभ के

1. तोमर, देवपाल सिंह : हिंदू अछूत जातियों में छुआछूत, पृष्ठ-419

लिए हिंदू धर्म किसी भी मूल्य पर त्याग नहीं सकते थे। अतएव उन्होंने सुअर-मांस की दुकानें चलाने पर विशेष ध्यान दिया और बकरा मांस की दुकानों को आंशिक रूप में चलाया। अंग्रेजों की यह कूटनीति भी खटिक जाति के बुद्धिमान व्यापारियों ने विफल कर दी थी।

खटिक जाति का एक भी पराक्रम ऐसा नहीं रहा, जिसे अंग्रेज अथवा इसलामिक शासक कभी भूल सके हों। सौ वर्षों तक कंपनी ने खटिक जाति को अनेक प्रकार से परेशान किया था। इसका बदला हिंदू खटिक जाति ने कंपनी-राज को उखाड़ कर लिया। इतिहासकारों ने उन्हें मेरठ के महान् सैनिक संबोधन प्रदान किए हैं और उनके महान् साहस की प्रशंसा में उनकी जाति का उल्लेख नहीं किया है। परंतु यह सर्वविदित है कि गुलामी से मुक्ति के संग्राम का पहला बिगुल मेरठ की खटिक जाति (तितोरिया) ने ही बजाया था। वे महान् आजादी के दीवाने क्रांतिकारी तितोरियावंशीय खटिक थे। उन्होंने ही मंगल पांडेय जैसे हिंदू सैनिकों को बताया था कि वे जिन कारतूसों को दाँत से खींचते हैं उन पर गाय और सुअर की चर्बियाँ लगी होती हैं। अंग्रेजों का शतवर्षीय तख्त उलटने के लिए मेरठ के तितोरिया खटिक की यह सूचना हिंदू और मुसलिम, दोनों सैनिकों के लिए एक ऐसी चिनगारी थी जिसने देखते-ही-देखते ज्वालामुखी का स्वरूप धारण कर लिया और 11 मई, 1857 ई. को मेरठ की सैनिक चिनगारी दिल्ली में प्रवेश हो गई। वहाँ लाल किले पर बहादुरशाह द्वितीय को पुनः हिंदुस्थान का सम्राट् घोषित किया गया और इसके साथ ही अनेक अंग्रेज अफसरों की हत्या कर दी गई। यह चिनगारी पूरे उत्तर भारत में आग की तरह फैल गई। इतिहास में इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, स्वतंत्रता का शंखनाद सैनिक विद्रोह आदि की संज्ञा दी गई है, परंतु खटिक जाति (तितोरिया) के नेतृत्व का उल्लेख करने में इतिहासकारों को लज्जा आ रही थी।

अंग्रेजों की सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए खटिक सैनिकों का यह प्रयास अनुकरणीय होना चाहिए था और मुक्ति के लिए इसे बंगाल और दक्षिण भारत में भी आरंभ होना चाहिए था। परंतु अंग्रेजों के दलालों ने इस क्रांति में हिंदुस्थान के महान् सपूतों का सहयोग न करके शासकों का ही सहयोग किया। ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रभारी इस क्रांति को कभी नहीं भूल पाए, क्योंकि इसी के साथ शासन की बागडोर उनके हाथों से निकलकर ब्रिटिश सरकार के हाथ में चली गई। ऐसी है खटिक जाति जिसके कारण कंपनी-राज समाप्त हो गया। नवीन अंग्रेजी सरकार ने खटिक जाति के प्रति विशेष सावधानी बरतने का प्रयास किया और इसे स्वतंत्रता आंदोलन की सूत्रधार मानते हुए अपराधी जाति घोषित करने की भूमिका तैयार करके अंततोगत्वा इसे अपराधी जाति की सूची में घोषित किया।

यह अत्यंत अन्यायपूर्ण और अव्यावहारिक निर्णय रहा कि आजादी के लिए मुक्ति-संघर्ष चलानेवाली कांग्रेस और उसके सहयोगी दल मुसलिम लीग आदि अपराधी घोषित

नहीं किए गए, परंतु नेताजी सुभाषचंद्र बोस, चंद्रशेखर आजाद, सरदार भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी लोगों के साथ संपूर्ण खटिक जाति तथा कुछ जातियों को ही उस श्रेणी यानी अपराधी श्रेणी में अंग्रेजों द्वारा मान लिया गया और जरामय पेशा जाति की संज्ञा प्रदान करके इसे हर प्रकार से प्रतिबंधित किया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत उस जंग में जो लोग शहीद हुए थे अथवा जीवित बच गए थे, उनको सम्मान प्रदान करते हुए उन्हें स्वतंत्रता सेनानी कहकर पेंशन दी गई, परंतु खटिक जाति के प्रत्येक स्त्री-पुरुष और बच्चों को पूरे भारतवर्ष में स्वतंत्रता संग्राम लड़ने के अपराध में सजास्वरूप अपराधी घोषित खटिक जाति को स्वतंत्रता सेनानी की श्रेणी तो क्या उन्हें ठीक प्रकार से आरक्षण का लाभ तक नहीं दिया गया। इस जाति की अनेक विधवाएँ और वृद्ध आज तक पेंशन नहीं पा सके हैं। खटिक जाति को अनेक प्रांतों में पिछड़ी और सामान्य जाति की श्रेणी में रखकर आरक्षण के लाभ से वंचित किया गया है। जबकि इस जाति के साथ अस्पृश्यता एवं अस्वच्छ व्यवसाय करने के कारण संपूर्ण देश में सामाजिक भेदभाव का व्यवहार सामान्य रूप से होता है। यह अन्याय संभवतः इसीलिए यह जाति सहती आ रही है कि अभी तक इसने अपनी एकता, शौर्य और वीरता को फिर से प्रदर्शित नहीं किया है।

मेरठ के बागी सैनिकों में जाटव, वाल्मीकि जातियाँ भी थीं, किंतु उनमें तितोरिया खटिक अधिक थे। इसका प्रमाण यह है कि वर्तमान समय में भी मेरठ में सबसे अधिक संख्या खटिक जाति की है। कठिको यानी कि खटिकों की 'काठा नगरी' मेरठ में ही है। इस समय वे वहाँ चार उपजातियों में बँटे हुए थे—सोनकर खटिक, माली खटिक, बकरा खटिक और सुअर खटिक। मेवाफरोश को सोनकर खटिक में माना गया है। इस जाति के सापेक्ष मेरठ में चमार, भंगी, बहेलिया और डोम भी हैं, किंतु इनकी संख्या कम है और इनकी सामाजिक परिस्थिति भी खटिक जाति से निम्न है। मेरठ में खटिक जाति के लोग एक लंबे समय से अपने प्राकृतिक रूप में बसे हुए हैं।[1] अपनी बस्ती के दक्षिण की मुसलिम बस्ती से मेरठ के खटिकों का दूर का भी संबंध नहीं है। आज भी मेरठ में खटिकों की अधिक जनसंख्या रवींद्रपुरी मुहल्ले में रहती है। हिंदुस्थान के कई प्रदेशों के खटिक कृषि-कार्य भी करते हैं। वर्तमान में वे अपनी भूमि के स्वामी हैं। परंतु इसलामिक उत्पीड़न काल में मुख्य रूप से उत्तर भारत में उनकी भूमि को खालसा भूमि (राजकीय संपत्ति) घोषित करके उन्हें कृषि-कर देते रहने पर खेती का अवसर दिया गया था। वे लोग इस अवस्था से बहुत ही क्षुब्ध थे। अंग्रेज आए तो उन्होंने भी किसानों के हित को ध्यान में नहीं रखा बल्कि कृषि-भूमि को किसानों से लेकर पाँच साल तक के

---

1. तोमर, देवेंद्रपाल सिंह : हिंदू अछूत जातियों में छुआछूत (कॉमनवेल्थ पधियार्न, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-110001, सन् 2003, पृष्ठ-54

लिए नीलामी प्रथा द्वारा आवंटित किया ताकि किसान अपनी भूमि बचाने के लिए स्वयं ही अधिकाधिक धनराशि देगा अथवा दूसरे को वह भूमि मिल जाएगी। इसका प्रभाव खटिक लोगों पर भी पड़ रहा था। उन्होंने इसका विरोध किया। उन्हें समझाया गया कि इससे होनेवाली आय को हिंदुस्थान में ही खर्च किया जाएगा जिसका लाभ खटिक लोगों को भी मिलेगा। परंतु बाद में ऐसा नहीं किया गया। अतएव किसान आंदोलन स्थान-स्थान पर सदैव होते रहे और अधिकांश कृषक आंदोलनों में खटिक जाति की भी प्रशंसनीय भूमिका होनी माना गया। अंग्रेजों ने भी इससे क्षुब्ध होकर खटिक जाति को जरामय पेशा जाति के अंतर्गत घोषित करने का एक आधार बनाया था।

1857 ई. की क्रांति के नायक खटिक जाति सन् 1942 में असहयोग आंदोलन के समय भी चौरीचौरा[1] में थानेदार की गोलियों को बरदाश्त नहीं कर सके थे। यद्यपि अंग्रेजों के पिछलग्गू दारोगा ने किसी चमार जाति के व्यक्ति को गाली देते हुए प्रताड़ित किया था, किंतु इसको खटिक जाति के युवकों ने अपमानजनक मानते हुए थाना को घेरकर फूँक देने हेतु वहाँ के दलितों को ललकारा था। एक खटिक नौजवान की ललकार और वह भी चमार जाति के लिए, जिनकी संख्या चौरीचौरा में थी तो बहुत परंतु सहमे होने के कारण ललकार सुनते ही थाना घेरकर फूँक दिया गया और सारे अंग्रेज सिपाही जलाकर मांर दिए गए थे। इस घटना को गा़ंधीजी ने गंभीरता से लिया। खटिक जाति के लोग भी समझदार हो चुके थे। उन्होंने गांधीजी की भावनाओं को भविष्य में समझने और ध्यान देने का असफल प्रयास किया।

## 5.7 अंग्रेजों द्वारा खटिक जाति का भारी सामाजिक एवं आर्थिक उत्पीड़न

किसी भी धर्म, जाति अथवा समुदाय का धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक उत्पीड़न धीरे-धीरे उसके अस्तित्व को ही समाप्त कर देता है और धार्मिक उत्पीड़न से अपना धर्म त्यागकर मनुष्य अपने धर्म (स्वधर्म) के लिए नियत किए गए कार्य एवं व्यवहारों को करना छोड़ देता है और जीवन जीने की कला भूल जाने से भटक जाता है। धर्मविहीन होने से वह अधार्मिक, अपवित्र, असभ्य, अनाचारी और अनात्म-प्राणी बन जाता है। उसमें और किसी अमानव (पशु) में अंतर नहीं रह जाता। धर्म परिवर्तन होने पर भी यही स्थिति होती है। अपने धर्म की संस्कृति और सभ्यता को भूलना और परिवर्तित धर्म की संस्कृति को सीखना दोहरी कठिनाई होती है। परिवर्तित धर्म अनिच्छा से स्वीकार किया गया हो अथवा स्वेच्छा से, वह एक अन्य प्रकार के आहार-व्याहार से संदर्भित होने के कारण कष्टसाध्य होता है। यही कठिनाई सोचकर

1. प्रो. विपिन चंद्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2003 पृष्ठ-140

न तो स्वेच्छापूर्वक धर्म-परिवर्तन करना चाहिए और न ही बलपूर्वक दबाए जाने पर धर्म-परिवर्तन करना चाहिए। चूँकि धर्म ही जीवन है, आदर्श है, आदर्श नागरिकता है एवं आदर्श नागरिकता से आदर्श समाज का निर्माण होता है। यानी धर्म ही सबकुछ है। अतएव अपना सबकुछ (जीवन भी) देकर धर्म (स्वधर्म) यानी आदर्श समाज की रक्षा करनी चाहिए। इसलामिक उत्पीड़न काल और अंग्रेजों के शासनकाल में हिंदू धर्म में आस्था रखनेवाले मर-मिटकर भी अपने हिंदू धर्म की रक्षा में सफल रहे। इसके लिए उनका हर प्रकार से उत्पीड़न किया गया। खटिक जाति धर्मरक्षा करनेवाली जातियों में अग्रणी और एक ज्वलंत उदाहरण रही।

मनुष्य का सामाजिक उत्पीड़न उसकी समाज में स्थापित परिस्थिति को समाप्त करने अथवा विरूपित करने के लिए किया जाता है। यदि सामाजिक स्थिति यानी शक्ति समाप्त होगी तो वह अपने समाज को खंड-खंड हो जाने पर भी कुछ न बोलेगा। उसमें जाति-भेद का बीजारोपण किया जाता है। सामाजिक परंपराओं और मूल्यों पर प्रहार करके उनकी युगों-युगों से स्थापित व्यवस्था को नष्ट किया जाता है। उसमें चोरी, हत्या, पाप, मद्यपान, स्वेच्छाचार, स्वेच्छाचारिता आदि दुर्गुणों को स्थापित किया जाता है। उससे इस प्रकार के आहार-व्यवहार कराए जाते हैं जिससे वह असामाजिक हो जाए।

उसे अपवित्र और गंदे कार्यों में लगाया जाता है। नैत्यिक दैनंदिनी अथवा दिनचर्या में परिवर्तन लाया जाता है। उसकी सामाजिक समरसता, सहिष्णुता और सह-संबंधों पर आधारित सदाचारिता को नष्ट किया जाता है। नारी समाज में प्रदूषण का विष घोला जाता है। अंधविश्वास और रूढ़ियों को जन्म दिया जाता है, ताकि मनुष्य कुमार्गी बन जाए। इसी प्रकार से अनेक कार्य जो मानव जीवन के अंत: एवं बाह्य, दोनों ही पक्षों से संबंधित होते हैं, किए और कराए जाते हैं। यह सारा प्रयास सामाजिक उत्पीड़न की श्रेणी में आता है। अंग्रेजों ने भी ऐसे प्रयास किए थे। खटिक जाति के साथ उनकी आक्रामकता के कारण ही अंग्रेजों के मन में विशेष बैर था, इसलिए खटिक वंश की सभी शाखाओं और प्रशाखाओं को ढूँढ़-ढूँढ़कर और उनको चिह्नित करके उनका सामाजिक उत्पीड़न शासन स्तर पर अंग्रेज शासकों के शासनादेश से किया गया था।

मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष से अर्थ-पक्ष का सीधा संबंध जुड़ा होता है। यहाँ तक कि भौतिक और आध्यात्मिक पक्षों के लिए अर्थ आवश्यक हो जाता है। जीविका से जीवन एवं जीवन से जीव की और जीव से ब्रह्मांड की वैचारिकी सर्वस्वीकृति है। कौटिल्य अर्थशास्त्र में भी धन को मुख्य स्थान दिया गया है—'अर्थमेव प्रधान: इति कौटिल्य:।' यही कारण है कि मानव का सबसे अधिक उत्पीड़न करने हेतु उसका आर्थिक उत्पीड़न किया जाता है। धार्मिक विधि से अर्थोपार्जन की उसकी विधि-प्रवृत्ति में परिवर्तन कर दिया जाता है और उसे विवश किया जाता है कि वह अधार्मिक और

अनैतिक विधि से धन आहरित करे, अधार्मिक मदों में व्यय करें और अधिक-से-अधिक अपव्यय करें। उसके अर्थ अर्जित करने के संसाधन नष्ट कर दिए जाते हैं। आय के स्रोतों पर गाँठ लगा दी जाती है। उसकी समृद्धि एवं वैभव को हर तरह से समाप्त करके उसको निर्धन और दीन-हीन बना दिया जाता है। विविध विधियों से आर्थिक उत्पीड़न द्वारा उसे धनवान से निर्धन बना दिया जाता है। धन-संपदा से खोखला हो जाने पर वह व्यक्ति अथवा वह देश पतन को प्राप्त हो जाता है। विदेशी आक्रांताओं ने इसी उद्देश्य से सोने की चिड़िया समझे जानेवाले हिंदुस्थान को सर्वप्रथम बहुविधि से लूटने का ही कार्य किया था, धर्म-परिवर्तन तो मात्र एक दिखावा था। अंग्रेज भी केवल तिजारत के लिए आए थे, हुकूमत के लिए नहीं।[1] उन्होंने इसी दृष्टि से काम किया। उदाहरण के लिए, किसी अकालग्रस्त परिस्थिति में जमींदार ने आंग्ल सरकार से कहा उसके यहाँ घास के अलावा और कोई भी फसल नहीं हुई है। इसलिए वह किसी भी प्रकार से कर वसूल पाने की स्थिति में नहीं है। इस पर अंग्रेज-सरकार का आदेश हुआ 'घास अच्छी चीज है, उसी को बिकवाकर टैक्स वसूलिए।'[2] ऐसा लोगों के आर्थिक उत्पीड़न का दुर्भाग्यपूर्ण एवं कठिन समय था। ऐसे में आक्रांताओं एवं अंग्रेजों की विशेष शत्रु खटिक जाति भला आर्थिक उत्पीड़न से कहाँ तक बच सकती थी। अंग्रेजों ने मुगलों के भोग-विलास एवं अपव्यय से शेष बची रह गई संपदा को अत्यंत चातुर्य के साथ अपने देश में भेजकर यहाँ के लोगों को निर्धन एवं भिखारी बना दिया, जो जातियाँ उनके लिए विशेष कठिनाइयाँ उत्पन्न करनेवाली थीं, (जैसे—खटिक, भंगी, चमार, भर, वनवासी इत्यादि जातियाँ) उनकी आर्थिक स्थिति को तो योजनाबद्ध पद्धति से नष्ट-भ्रष्ट एवं दयनीय बनाया गया। मेरठ-क्रांति के अग्रदूत होने के कारण यह जाति उनको अधिक दुखदायी एवं कष्टकारी लगती थी। इसलिए उन्होंने इसका सर्वाधिक आर्थिक उत्पीड़न किया।

राजनैतिक उत्पीड़न का अर्थ है शासन और सत्ता के बल पर आदर्श नागरिकों का हर स्तर पर बलपूर्वक शोषण, उत्पीड़न, दमन, दलन और उसको प्रदत्त मानवाधिकारों का हनन। सत्ता और सैन्य बल पर प्रतिद्वंद्वी सत्ता को पराजित और प्रताड़ित किया जाना भी इसी में आता है। इसलामिक आक्रांताओं ने हिंदू राजाओं के साथ यही किया था और अंग्रेजों ने मुगल बादशाहों तथा कुछ शेष रह गए हिंदू राजाओं के साथ यही किया था। सत्ता में भागीदारी न देना और उनको सत्ता से उससे सदैव दूर रखना भी राजनैतिक उत्पीड़न कहा गया है। मुसलिम शासक कभी भी किसी हिंदू को शासन-सत्ता में महत्त्वपूर्ण

---

1. दिनकर, रामधारी सिंह (पूर्वोद्धृत), पृष्ठ-420
2. विपिनचंद्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पृष्ठ-5

पद नहीं देते थे। अंग्रेजों ने भी यही किया था। जमींदार, रैयतदार जैसे पद यदि किसी हिंदू को दिए भी थे तो केवल गरीब जनता को सता-सताकर कर वसूलने के लिए क्रूर एवं पतित चरित्रवाले लोगों को, ताकि हिंदुओं से ही हिंदुओं का उत्पीड़न करवा सके।

सांस्कृतिक उत्पीड़न द्वारा किसी की सभ्यता एवं संस्कृति को प्रभावित एवं प्रदूषित किया जाता है, उस पर अपने सांस्कृतिक मूल्य बलपूर्वक थोपे जाते हैं। उसकी प्राचीन संस्कृति के प्रत्येक पक्ष को परिवर्तित किया जाता है, ताकि कालांतर में उसे अपना मूलस्वरूप विस्मृत होने के साथ अस्तित्वहीन हो जाए। मुसलिम आक्रांताओं ने हिंदू युद्धबंदियों के साथ यही किया था और अंग्रेजों ने भी विदेशी आक्रांता तुर्क एवं मुगल शासकों की भाँति वही किया। हिंदू-संस्कृति पर ईसाई-संस्कृति का आवरण चढ़ाने के लिए यदि अंग्रेजों ने बल प्रयोग नहीं किया तो भी वनवासी और गरीबों को अपने मायाजाल में फँसाने का भरसक प्रयास किया ही, और आज भी कर करते हैं। हिंदुस्थान की गुरुकुल शिक्षा-पद्धति को हॉस्टल-सिस्टम और गृह-शिक्षा को कोचिंग-क्लासेज का नाम दे डाला गया है। अंग्रेजी को इस प्रकार से स्थापित किया कि वह आज तक विशेष योग्यतावालों की भाषा कहलाती है। भारतीय कला का स्वरूप मॉडर्न आर्ट ने ले रखा है। शास्त्रीय संगीत को पॉप-म्यूजिक में बदलकर देश को पाश्चात्य संस्कृति की दिशा में मॉडर्न यानी आधुनिक बनाने का कार्य किया गया। तक्षशिला, नालंदा जैसे उच्चकोटि के विश्वविद्यालयों के स्थान पर सर्वोच्च उपाधि का स्थान लंदन विश्वविद्यालय को बनाया। इस तरह से अंग्रेजों ने इस देश का और यहाँ के देशवासियों का हर प्रकार से उत्पीड़न किया।

आंग्ल-उत्पीड़न के उपरोक्त सभी पक्षों पर यदि विचार किया जाए तो हमें मुख्य रूप से दो ही पक्ष ऐसे मिलते हैं जिनके आधार पर अंग्रेजों ने अपनी शत्रु-जाति (खटिक) को विशेषरूप से उत्पीड़ित किया था—सामाजिक पक्ष और आर्थिक पक्ष। ये दोनों ही पक्ष सभी स्तर के लोगों के लिए विशेष महत्त्व के होते हैं, अतएव इन पर किया गया प्रहार बहुत गहराई तक होता है और उसका प्रभाव जीवन के प्रत्येक पक्षों को प्रभावित एवं प्रताड़ित कर देता है। खटिक जाति के साथ कुछ यही हुआ और फलस्वरूप अंग्रेजों के शासनकाल में खटिक जाति की सामाजिक और आर्थिक दशा अत्यंत दयनीय तथा चिंतनीय हो गई।

अंग्रेजों ने खटिक जाति को विभिन्न व्यवसायों, क्षेत्रों, भाषाओं और बोलियों के आधार पर प्रादुर्भूत नामों एवं संबोधनों को अत्यंत सावधानी के साथ अलग-अलग जाति का नाम दे दिया और उनमें से कुछ शाखाओं को ब्राह्मण वर्ग की, कुछ को क्षत्रिय वर्ग की, कुछ को व्यवसाय-स्वरूप के आधार पर वैश्य वर्ग की और कुछ को व्यवसाय के ही आधार पर शूद्र के साथ उन्हें अस्वच्छ, अपवित्र, अस्पृश्य कर्म पर आधारित अनुसूचित

जाति में नामित कर दिया। स्थानीय संस्कृति और भाषा के आधार पर ये लोग भिन्न-भिन्न लगते थे किंतु जाति के आधार पर सभी खटिक थे और सबकी एक मजबूत स्थिति थी, जिसे तोड़ने के लिए अंग्रेजों ने यह कुचक्र रचा। उन्होंने चौहान-खटिक को चौहान क्षत्रिय, खटिक-पटेल को केवल पटेल अथवा चौधरी और मांस-व्यापारी खटिक को अलग-अलग बकरा खटिक, सुअर खटिक, माली खटिक, मेवाफरोश खटिक आदि अनेक वर्गों में बाँटकर उसी के अनुसार अलग-थलग किया। उसका परिणाम यह रहा कि खटिक जाति की सामाजिक पहचान विरूपित हुई और लोग एक-दूसरे को पहचानने से वंचित होने लगे। इनके वैवाहिक यानी रोटी-बेटी के सामाजिक संबंधों में भेदभाव उत्पन्न हो गया। बकरा मांस का विक्रेता खटिक जाति का व्यक्ति किसी सुअर मांस विक्रेता के साथ रोटी-बेटी का संबंध नहीं रखने लगा। इसी तरह सुअर मांस बेचनेवाले और फल बेचनेवाले खटिक में रोटी-बेटी का संबंध समाप्त हो गया। तितोरिया, गहलोत, गुहिल, चौलुक्य, चौहान, चाहमान, पंवार, जाधव आदि सबने अपनी-अपनी जाति में रोटी-बेटी का संबंध आरंभ किया। कालांतर में इसी के आधार पर खटिक जाति को पासी, दोसाध, भर, व्याघ्र आदि जातियों से भी अलग होना पड़ा। आज खटिक की कुछ प्रजातियाँ सामान्य श्रेणी में और कुछ पिछड़ी जाति में होने से आरक्षण का लाभ नहीं पा रही हैं। चूँकि अंग्रेजों ने इस जाति की संपूर्ण शाखाओं को अपराधी (जरायम) पेशा जाति घोषित कर दिया था और उस समय जो क्रांतिकारी (अंग्रेजों द्वारा अपराधी) घोषित होते थे, उनको बाद में स्वतंत्रता सेनानी माना गया, परंतु संपूर्ण खटिक जाति को कौन कहे, खटिक विधवाओं और वृद्धों तक को पेंशन आदि की सुविधा, राशन कार्ड पर अन्न आदि सस्ते दर पर पाने की सुविधा भी नहीं दी गई।

खटिक जाति का अंग्रेजों ने आर्थिक आधार पर भी भयानक उत्पीड़न किया था। खटिक बकरा-मांस चाहे जितना बेच सकता था, परंतु सुअर मांस के लिए सीमा निर्धारित कर दी गई थी। इससे बकरा मांस में उसे मुसलिम कसाई वर्ग से प्रतिस्पर्द्धा करनी होती थी, क्योंकि मुसलिम उससे झटका मांस नहीं लेता था। इसका परिणाम यह हुआ कि खटिक मांस विक्रेताओं की कभी-कभी बोहनी तक नहीं होती थी। उनको उन दिनों मांस का निर्यात करने का अधिकार नहीं दिया गया था, जबकि मुसलिम कसाई को गोमांस, भैंस का मांस आदि बाहर भेजने का लाइसेंस दिया गया था।

खटिक को सुअर और भेड़-बकरी पालने पर प्रतिबंध नहीं था, परंतु उन्हें पालनेवाले से गंदगी सफाई हेतु कर लिया जाता था। इसे एक प्रकार से प्रदूषण-कर कहा जा सकता है, क्योंकि उन स्थानों की सफाई पशु-पालक स्वयं करते थे, न कि शासन की ओर से कोई व्यवस्था दी जाती थी। इस उत्पीड़न से बचने के लिए खटिक जाति के लोगों ने भेड़-बकरियों को तो घरों में ही रखा किंतु सुअर को घर से बाहर छोड़ दिया। यह पशु

मुसलिम बस्ती के लिए समस्या बन गए। अंग्रेज किसी भी प्रकार से मुसलमानों को अपने विरुद्ध नहीं करना चाहते थे, अतएव सुअर खटिक को प्रदूषण-कर से मुक्त कर दिया गया, परंतु अन्य पशु-पालकों पर लगा हुआ कर वापस नहीं लिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि अनेक खटिक लोगों ने भेड़-बकरी पालना छोड़कर सुअर को ही पालना आरंभ किया, यद्यपि इसके फलस्वरूप उनकी सामाजिक परिस्थिति और आर्थिक स्थिति दोनों में ही गिरावट आई।

इस प्रकार प्रमाणित होता है कि अंग्रेजों द्वारा खटिक जाति का भारी सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न किया, जिसके फलस्वरूप आज वह समाज में अपना उच्च स्थान पूर्ववत् स्थापित रखने अथवा बनाए जाने में अनेक व्यवधानों का सामना कर रही है और अपने प्राचीन गौरवशाली अतीत को ब्राह्मण एवं क्षत्रिय, दोनों वर्गों में मनवाने में अभी पूर्णरूपेण सफल नहीं हो पा रही है, क्योंकि वे दोनों ही वर्ग के लोग खटिक की वर्तमान सामाजिक परिस्थिति के आलोक में ही इस जाति के अतीत की समीक्षा कर रहे हैं। यही स्थिति आर्थिक क्षेत्र की भी है। इस जाति के लोग कुछ प्रांतों में मांस व्यवसाय में संलग्न हैं, तो कुछ प्रांतों में इनका फल और कृषि व्यवसाय है। इनमें शिक्षा का अभाव इसलिए है कि इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है इसलिए ये अत्यधिक महँगी आधुनिक शिक्षा का लाभ अपनी संतानों को नहीं दे पा रहे हैं और यही कारण है कि राज्य-सेवा और राजनीति, दोनों में ही खटिक जाति बहुत पीछे हैं। जहाँ-जहाँ इनके लिए अनुसूचित जाति की सुविधा अनुमन्य हुई है, वहाँ के खटिक कुछ अच्छी स्थिति में हुए हैं। शिक्षा के क्षेत्र में इनका विकास हुआ है और राजनीति में भी स्थिति पहले से बेहतर हुई है।

कहने का तात्पर्य यह कि अंग्रेजों ने खटिक जाति का जो भयानक उत्पीड़न किया और उसमें भी उसने जो इस जाति का सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न किया, इसका दूरगामी प्रभाव पाया जाता है और यह स्वीकार किया जा सकता है कि आज के खटिक समाज की सामाजिक और आर्थिक दयनीय स्थिति के लिए विदेशी अंग्रेज शासक भी जिम्मेदार है।

## 5.8 सामाजिक एवं आर्थिक उत्पीड़न से खटिक हुए दलित

दलित शब्द की व्युत्पत्ति का संबंध एकमात्र अंग्रेजों से है, जिन्होंने हिंदुस्थान में निवास करनेवाले उन लोगों के लिए व्यवहृत किया था जिनका मुसलिम आक्रांताओं ने धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आदि सभी आधारों पर दमन एवं दलन किया था। ऐसे लोगों से प्रत्येक परिस्थितियों में कर वसूलने और इनको आर्थिक दृष्टि से निर्बल करने में अंग्रेजों को कोई कष्ट नहीं था और वे इनसे बेगार लेते तथा तरह-तरह से शोषण भी करते थे, परंतु दिखावे के लिए घड़ियाली आँसू बहाते थे

तथा दया का भाव प्रदर्शित करने के उद्देश्य से दलित कहते थे। यह नाम उन्होंने दलितों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए दिया था, ताकि दलित वर्ग के लोग अंग्रेजों को अपना देवता मानने लगें। महात्मा गांधीजी के 'हरिजन' और बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर के 'अछूत' शब्दों के स्थान पर अंग्रेजों ने इस 'दलित' शब्द को स्थापित किया था। जबकि अनेक जातियों का सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न करके उन्हें दलित श्रेणी में अंग्रेजों ने ही पहुँचाया था। इस संदर्भ में दलित शब्द और उसके अर्थ को जान लेना उचित होगा।

सामान्य रूप से 'दलित' और 'दलन' विश्लेषित होने पर कुछ इस तरह बनते हैं—दलित अथवा द लत (दबे हुए से)। अर्थात् जिसको कोई अपने पैरों के नीचे रखकर दलन किया हो अथवा दबाकर उत्पीड़न और शोषण किया हो, वही दलित है। दलन एवं दलित भावबोध में ही अन्यान्य क्षेत्रों में विविध प्रकार से उत्पीड़न की क्रिया को भी दलन की ही संज्ञा दी जाती है, जैसे—सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक स्तर पर किसी को पीड़ित, उत्पीड़ित करना। हिंदू मानव समाज के संदर्भ में इसका अभिप्राय यही होता है। लेखक ने अपनी पुस्तक 'दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा' में दलित शब्द को बहुविधि स्पष्ट करने का प्रयास किया।[1]

दलित को पददलित न भी कहा जाए तो उसे बहुतों द्वारा बहुत प्रकार से दयनीय स्थिति में पहुँचाया गया जैसी सत्य वैचारिकी के आधार पर उन्हें दलित तो कहा ही जा सकता है। इस दयनीय स्थिति का अभिप्राय उस व्यक्ति की कुशलता का अपहरण, पवित्रता की समाप्ति, विपन्नता के अंतिम स्तर पर पहुँचाना, अस्वच्छ व्यवसाय में बलपूर्वक ढकेलना, व्यवसाय के करण अस्पृश्य एवं बहिष्कृत अवस्था में पहुँच जाना आदि से तो है ही। अन्य शब्दों में, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आधार पर उत्पीड़न, शोषण और दलन का शिकार हुए को ही दलित कहा जाता है।

हिंदुस्थान में विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के आने के पूर्व तक की अवस्था में किसी दलित शब्द की अवधारणा इसलिए नहीं थी कि देश में कोई भी वर्ग और श्रेणी में दलित था ही नहीं। श्रमिक थे किंतु शोषणमुक्त। बेरोजगार थे किंतु भुखमरी के शिकार नहीं। निर्धन थे किंतु भिखारी नहीं। अभावग्रस्त थे किंतु भूखों मरनेवाले नहीं। दान, धर्म, संत-सेवा, अतिथि-सेवा, अन्न-भिक्षा, जल-दान, गोदान, ऐसे ही अनेक दान की उत्तम हिंदू आर्थिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक व्यवस्थाएँ थी जिसके कारण देश में कहीं कोई दीन-हीन अथवा दलित नहीं था।

दलित शब्द की पृष्ठभूमि विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने तैयार की। हिंदू समाज

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री, दलित हिंदू की अग्नि-परिक्षा, 2002

को तलवारों से भयभीत करके विधर्मी बनाकर यानी इसलाम स्वीकार कराया और धार्मिक पतन करके धर्मच्युत एवं बलपूर्वक उनका सबकुछ लूटपाट के उपरांत अभावग्रस्त जीवन के साथ अस्वच्छ वृत्ति में नियोजित करके अस्पृश्य बनाकर उनका एक दलित वर्ग बनाया। मर्यादित, गौरवशाली और राजवंशीय उच्च श्रेणी के कार्यों एवं व्यवसायों में संलग्न लोगों को युद्धबंदी बनाकर बलपूर्वक मृत पशुओं से संबंधित अपवित्र कार्यों में लगाया और मल-मूत्र साफ कराया। यह सामाजिक स्तर पर धर्माभिमान, स्वाभिमान का दलन कार्य था जिसके फलस्वरूप समाज ने भी उनको अपने अलग-थलग कर दिया जिसके कारण एक अस्पृश्य दलित वर्ग बना। लोगों का वैभव लूटकर और उनको अर्थविहीन करके नंगा, भूखा और भिखारी बना दिया तथा उन्हें ही समाज में दरिद्र एवं दलित कहा गया। राजन्य वर्ग के राज्यों को अधिकृत करके अपनी सेवा में गुलाम बनाकर नियुक्त रखा और उन्हीं राजवंशीय लोगों को सर्वप्रथम गुलाम अथवा दास बनाकर दलित वर्ग के निर्माण का कार्य प्रारंभ किया। शिक्षा, साहित्य और कलाविहीन करके सजा में संज्ञाशून्य बड़ी संख्या में लोगों को दंडस्वरूप दलित बनाया। मुसलिम शासक आक्रांताओं ने हिंदुओं के प्रचंड उत्पीड़न के उपरांत मार-मारकर जंगलों में भगा दिया, वे वन में अभावग्रस्त जीवन जीने, वनों में निवास के कारण वनवासी दलित हुए। इसी प्रकार से उन्होंने अनेक प्रकार के दलित तैयार किए। अंतर यह है कि मुसलिम शासकों ने दलित बनाया, परंतु उनका नामकरण करने का कार्य अंग्रेजों ने किया।

अंग्रेजों द्वारा दलित नामकरण वर्तमान समय में बहुत व्यापक बन चुका है। आज सभी अनुसूचित जनजाति और पिछड़ी जाति के लोग अपने को दलित कहते हैं। अंग्रेजों की परिभाषा के अनुसार न तो सभी पिछड़ी जाति के लोग दलित हैं और न ही वनवासी भी दलित हैं, बल्कि दलित केवल वे ही हैं जिनके साथ छुआछूत का भेदभाव होता है। उन भावनाओं का प्रभाव आज तक काम कर रहा है जबकि अस्पृश्यता संबंधित भेदभाव संविधान में दंडनीय है और किसी को अपमान के उद्देश्य से जाति-नाम लेकर बुलाने अथवा गाली देने को भी दंडनीय अपराध घोषित किया जा चुका है। भारत सरकार के संविधान की धारा 17 के तहत देश को अस्पृश्यतामुक्त देश घोषित किया जा चुका है, तो भी अनेक जातियाँ अपने को अभी भी अछूत श्रेणी का ही मानती हैं अथवा उन्हें माना जाता है और उनके अनुसार अनेक जातियाँ अभी भी उनके साथ छुआछूत का भेदभाव करती हैं। उनकी यह सोच दोषपूर्ण है।

अस्पृश्यता असंवैधानिक घोषित कर दिए जाने के बाद, यहं स्पष्ट है कि पूर्व के अस्पृश्य अब अस्पृश्य नहीं हैं और जब दलित का संबंध केवल अस्पृश्य से है तो वर्तमान में कोई भी जाति दलित नहीं है। अतएव दलित का वास्तविक अर्थ होगा, वे सभी अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, वे सभी अति पिछड़ी एवं पिछड़ी जाति के

लोग जिनकी मुख्यतः आर्थिक स्थिति दयनीय है, सामाजिक और राजनैतिक स्थिति अविकसित है, जिनका शैक्षिक स्तर निम्न है और जो हर प्रकार से अभावग्रस्त जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अन्य जातियों की भाँति इस प्रकार का जीवन खटिक जाति के लोग भी व्यतीत कर रहे हैं। अतएव वे भी दलित हैं। अन्य जातियों की भाँति खटिक जाति के लोग भी पूर्व में इस अवस्था में नहीं थे, बल्कि इनको मध्यकाल और अंग्रेजों के शासनकाल में धर्माभिमान, स्वाभिमान एवं राष्ट्राभिमान के कारण इनका सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न करके इनको दलित बनाया गया है।

हिंदुस्थान के प्राचीन गौरवशाली इतिहास का अध्ययन किया जाए तो विदित होता है कि आज जिसे दलित की संज्ञा दी जा रही है, यानी शूद्र वर्ण उनकी यानी शूद्रों की प्रतिष्ठा उन दिनों समाज में बहुत सम्मानजनक थी, उसका राजवंशीय शासन चलता था, वे भारतीय अर्थतंत्र का मेरुदंड थीं, ऋग्वेद आदि की ऋचाएँ लिखी थीं, साथ ही रामायण और महाभारत जैसे पवित्र ग्रंथों का सृजन भी शूद्रवर्ण के पुरोधा ऋषियों द्वारा किया गया था, हिंदू धर्म एवं संस्कृति की रक्षा में शूद्र वर्णीय जातियाँ आत्मोत्सर्ग कर देती थीं। वेदों में ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ण का कहीं भी प्रार्थना या अर्चना का उल्लेख नहीं मिलता किंतु यजुर्वेद में शूद्र वर्ण की विधिवत प्रार्थना का उल्लेख प्राप्त होता है।[1]

अंग्रेजों ने हिंदुस्थान के भारतीय मुसलमानों को भ्रमित करने में सफलता प्राप्त कर ही ली थी और उन्हें अलग पाकिस्तान का निर्माण कराने का सुझाव दे डाला था। अब उनकी इच्छा यह थी कि हिंदू समाज को भी दो भागों में विभक्त कर दिया जाए, जिसमें एक बहुत बड़ा भाग दलित हिंदुओं का अलग हो जाए। इसके लिए आग तो लगाई अंग्रेजों ने किंतु उन्हें सफलता नहीं मिली। परंतु उनका अधूरा काम आज भी कुछ हिंदू धर्मविरोधी शक्तियाँ एवं कुछ अंग्रेजपरस्त लोग कर ही रहे हैं।

दलितों के नाम पर अपनी रोटी सेंकनेवाले अनेक दलित राजनेता भी हैं। वर्तमान लोकतंत्र के आलोक में जहाँ जन शक्ति का आशय मतों के बहुमत से है, वहाँ दलितों की बहुसंख्या ही जनाधार के रूप में वर्तमान राजनीति की दिशा तय कर रही है। यह देखकर कुत्सित महत्त्वाकांक्षाओं से युक्त दलित प्रतिनिधिजन तरह-तरह से इन दलितों को तोड़ने-जोड़ने एवं उनका क्रय-विक्रय में लगे हैं। वे जाति-वर्ग का नाता बतलाते हुए दलितों के हितों से खेल रहे हैं। उन्हें अपनी स्वार्थपरक राजनीति का खेल बनाया जा रहा है। इस शब्द का बार-बार प्रयोग करके दलितों को और भी दयनीय स्थिति में पहुँचाया जा रहा है। आज कोई तथाकथित दलित प्रतिनिधि जो इसी वर्ग का हो और किसी दलित को ईसाई और मुसलमान बनाए जाने की समस्या में भागीदारी सुनिश्चित

1. यजुर्वेद, 16/27

करे, दृष्टिगोचर नहीं है। वोट की राजनीति करनी हो तो मंच पर खड़े होकर ये दलितों के ही समक्ष अपने को दलित कहते हैं। जनवादी लेखक और दलित साहित्य के क्षेत्र में लेखनी चलानेवाले अब तो दलितों की एक शाखा के रूप में नक्सलवादियों (अलगाववादी) को भी स्थान देने लगे हैं तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न कर रहे हैं कि नक्सलवाद के नाम पर समस्त दलितों का सफाया हो जाए।

दलित और नक्सलिस्ट, दोनों दो अवस्थाएँ हैं। दलित वे हैं जिनका दलन किसी समय विशेष में हुआ था और उस दलन से उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति दयनीय हो गई। परंतु उनका दलन आज नहीं हो रहा है, बल्कि सरकारी स्तर पर भी उनके विकास के लिए अनेकानेक संसाधन उनको उपलब्ध कराए जा रहे हैं। नक्सलिस्ट वे हैं, जिनका दलन आक्रांताओं और अंग्रेजों के समय में तो हुआ ही, आज भी हो रहा है। उनका कृषि, उद्योग, व्यापार सबकुछ छीन लिया गया है और वे भूख से मर रहे हैं। उनके वनवासी जीवन के लिए वन की वस्तुएँ भी प्रतिबंधित कर दी गई हैं। ऐसे प्रत्येक व्यक्ति के लिए निःशुल्क नहीं तो अत्यल्प शुल्क में राशन कार्ड बन सकते हैं, परंतु नहीं बनाए गए हैं। इनको इसके योग्य उद्योगों में लगाया जा सकता है, किंतु इनको बेरोजगार ही रखा जाना उचित समझा गया है। विधवा और वृद्धावस्था की पेंशन का लाभ इनके लिए नहीं है। जितनी धनराशि इनको मार डालने पर सरकार द्वारा खर्च की जा रही है, उसके आधे से भी कम में इन विस्थापितों की पुनर्स्थापित किया जा सकता है। आरंभ में इनको चोरी के अपराधों में बंद किया जाता है। बड़े होते हैं तो बागी और नक्सलिस्ट नाम से गोली मार दी जाती है। इस ओर न तो किसी दलित राजनेता की वाणी मुखरित होती है और न ही किसी दलित साहित्यकार की लेखनी चलती है। क्या वास्तव में नक्सलिस्ट समस्या का समाधान एकमात्र गोली ही है।

अंग्रेजों ने खटिक जाति के लिए यही गोली तैयार की थी, परंतु नहीं मिटी यह जाति। उसको विविध प्रकार से सामाजिक आधार पर उत्पीड़ित किया गया। उसके मांस व्यापार को प्रभावित किया गया। उसके फलों को बाहर भेजने पर प्रतिबंध लगा दिया गया, ताकि वह अधिक और विदेशी मुद्रा का लाभ न अर्जित कर सके। सुअर पशु को अपवित्र इसलिए माना गया कि वह मुसलमानों का शत्रु-पशु है। इसका अर्थ यही है कि केवल आर्थिक लाभ के लिए अर्थ गौण रहा और धर्म मुख्य। इस जाति ने अपना सामाजिक-आर्थिक उत्पीड़न धैर्य से सहा और दलित की श्रेणी तक पहुँच गई, फिर भी इसने धर्म, संस्कृति एवं न्याय के लिए संघर्ष में आस्था रखा।

अंग्रेजों ने इस शब्द का आरोपण किस प्रकार किया यह भी जान लेने का विषय है। वस्तुतः मुसलमानों की नेताओं की सत्ता में भागीदारी की माँग को पूरा करने हेतु अगस्त 1932 में विधान मंडलों के चुनाव में कुछ सीटें अंग्रेज शासकों द्वारा सर्वप्रथम

अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षित की गईं थीं। दलित वर्ग को भी अल्पसंख्यकों की तरह हिंदू धर्म से अलग करके उन्हें भी आरक्षण देने यानी पृथक निर्वाचन की व्यवस्था की माँग का समर्थन किया। परंतु इसका जोरदार विरोध प्राय: सभी राष्ट्रवादी नेताओं ने किया। गांधीजी उस समय यरवदा जेल में थे। उन्होंने पृथक निर्वाचन जैसे भारत विरोधी कार्य के विरोध में 20 दिसंबर, 1932 को अपना आमरण अनशन आरंभ कर दिया। अंत में पूना समझौता के नाम से 18 प्रतिशत के हिसाब से 147 सीटें तथाकथित दलितों को आरक्षित की गईं, किंतु दलित समाज को हिंदू समाज का अभिन्न अंग ही माना गया। गांधीजी ने अपनी हरजिन यात्रा को 7 नवंबर, 1933 से वर्धा से प्रारंभ किया, 29 जुलाई, 1934 तक 9 माह में 20 हजार किलोमीटर तक की यात्रा की, जिसका एकमात्र उद्देश्य था—अस्पृश्यता का उन्मूलन। गांधीजी ने अस्पृश्यता को उच्च और निम्न के कृत्रिम बँटवारे का प्रतिफल कहा, जबकि अंबेडकरजी ने कहा कि अस्पृश्यता जाति-प्रथा की देन है।

इसलामिक शासनकाल में जिन हिंदुओं का विविध प्रकार से दमन, दलन एवं उत्पीड़न किया गया था, उनको अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में 'दलित' नाम देकर दोहरा उत्पीड़न किया था। 'दलित' संबोधन उन्हें इस आधार पर प्रदान किया गया था कि अरेबियन मुसलिम आक्रांताओं एवं शासकों द्वारा वे तन-मन-धन सभी प्रकार से उत्पीड़ित एवं दलित किए गए थे और अपवित्र एवं अस्वच्छ कार्यों में लगाए जाने के कारण हिंदू धर्म में अस्वच्छ पेशा के कारण पवित्रता के मापदंड के आधार पर उन्हें अलग-थलग करके अस्पृश्य की श्रेणी में पहुँचा दिया गया था। यद्यपि वे लोग न तो इसलाम स्वीकार किए थे और न ही ईसाई बने थे, फिर भी उनके प्रति अंग्रेजों ने यह सहानुभूति इसलिए दिखलाई थी ताकि वे लोग पुन: हिंदू न मानें जाएँ और इस आधार पर उनके लिए हिंदुस्थान को विभाजित करके एक अन्य राज्य स्थापित कर दिया जाए। यह प्रशंसनीय है कि समस्त दलितों ने अंग्रेजों द्वारा उन्हें हिंदुओं से अलग करने के कुप्रयास को विफल करने के साथ ही हिंदुओं के साथ रहते हुए हिंदू धर्म में अपनी निष्ठा व्यक्त की थी।

अंग्रेजों ने बाँटो और राज करो की अपनी नीति के आधार पर हिंदू ग्रंथों में प्रक्षिप्त तथ्यों का उल्लेख करते हुए तथाकथित दलितों को बहकाने का भरसक प्रयास किया कि भारतीय मुसलमानों की भाँति वे भी अपने लिए अलग राज्य की माँग करें, ताकि हिंदुस्थान को स्वतंत्र करने के पूर्व उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएँ। परंतु एक भी दलित हिंदू समाज के व्यक्ति ने अंग्रेजों के सुझाव को मान्य नहीं किया। दलितों को समझ में आ गया कि उनके प्रति अस्पृश्यता और उसके आधार पर भेद विदेशी मुसलिम शासकों द्वारा बाध्य की गई अपवित्रता (मैला ढोने, चर्म-कर्म, सुअर पालन इत्यादि) ही हैं, जो कि हिंदू धर्म की पवित्रता यानी स्वच्छता के सिद्धांत के विपरीत है और इसी

विपरीत अवस्था के कारण ही उनका हिंदू समाज से अलगाव है। उन्होंने स्वतंत्रता प्राप्त करते ही सभी अस्वच्छ एवं अपवित्र व्यवसायों का त्याग किया और अस्पृश्यता तथा भेदभाव के अभिशाप से मुक्त हो गए। उन्हें आज व्यंग्यपूर्वक या जातिसूचक भाव से केवल 'चमार' या 'भंगी' कहना भी दंडनीय अपराध बन चुका है। आज वे सभी लोग हिंदू समाज के साथ अभिन्न, सुदृढ़ और एक हैं।

हिंदू धर्म में अशौच (अपवित्रता) और अर्थहीनता को अंग्रेजों ने तोड़-मरोड़कर गलत ढंग से प्रस्तुत किया और उसके पीछे केवल यही सोच थी कि इससे समाज में एकता का भाव उत्पन्न न होने पाए और वे फूट डालते हुए अपना राज्य स्थापित रखें। उन्होंने अशौच' को 'अस्पृश्य' (अनटचेबुल) कहा, जिनको छुआ न जा सके। वर्ण-व्यवस्था एवं मनुकाल में शूद्र कभी भी अस्पृश्य नहीं थे।[1] महाभारत में वर्णित कर्ण शूद्र होते हुए भी कौरवों के साथ एक राजा की तरह सम्मानित था एवं उसके साथ अस्पृश्यता का उल्लेख नहीं है। ब्रिटिश प्रशासक जे.एच. हट्टन ने पहली बार आधिकारिक रूप से अशौच को 'अनटचेबुल' कहा। उसके प्रयास से विभिन्न सामाजिक निर्योग्यताओं को धारण करनेवाले तथाकथित अस्पृश्यों एवं दलितों को एक अनुसूची में अंतर्गत रखा गया, जिसे 1935 ई. के भारत सरकार अधिनियम में भी सम्मिलित किया गया। डॉ. अंबेडकर ने इनके लिए अनुसूचित जातियाँ पद प्रयुक्त करना श्रेयस्कर समझा। भारतीय संविधान ने भी इस पद को स्वीकार कर लिया। हिंदुत्व के दस तत्त्वों में अशौच यानी अपवित्रता एक तत्त्व यानी स्थिति होती है। मल-मूत्र त्याग करने अथवा शव यात्रा इत्यादि में सम्मिलित होने पर व्यक्ति अशौच की स्थिति में होता है, किंतु स्नानादि सफाई कर्म के उपरांत वह पुनः शुद्ध यानी पवित्र स्थिति को प्राप्त करता है। इसलिए अशौच एवं अस्पृश्यता में व्यापक अंतर है जिसे हिंदू समाज ने कभी समझने का प्रयास नहीं किया।

उक्त प्रकार से ही इसलामिक शासकों द्वारा दर-ब-दर और जंगलों में रहने के लिए विवश कर दिए गए लोगों को वनवासी, आदिवासी आदि न कहकर अंग्रेजों ने 1931 ई. से अस्पृश्य की ही श्रेणियों में 'दलित' अथवा 'डिप्रेस्ड' कहकर अलग करने का प्रयास किया। डॉ. अंबेडकर और भारतीय संविधान ने ऐसे लोगों के लिए अनुसूचित जनजाति संबोधन शब्द स्वीकार किया। डॉ. अंबेडकर का अंतर्मन इस संदर्भ में बिलकुल सुस्पष्ट था।

वर्तमान में अनुसूचित जाति श्रेणी की अनेक जातियाँ (1208) हिंदू समाज में अपने को प्रतिष्ठित कर चुकी हैं, किंतु जनजातियों को अभी भी जंगलों में जानवरों की तरह जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है। ऐसे में अंत्योदय-पद्धति अपनाते हुए उन तथाकथित दलित,

---

1. डॉ. बी.आर. अंबेडकर, अछूत कौन और कैसे?, पृष्ठ-99

वनवासी, अनुसूचित जातियों के हिंदुओं को विकसित करके समाज की मुख्यधारा से जोड़ने की आवश्यकता है, अन्यथा राष्ट्र की मुख्यधारा से न जुड़ सकने की स्थिति में वे देश और समाज के लिए एक खतरनाक समस्या बन सकते हैं। ऐसी समस्या का एक स्वरूप नक्सलवाद के रूप में आज समाज और देश के समक्ष है, जिसे कम्युनिस्ट शासन संरक्षण देने में लगा है और ईसाई मिशनरियाँ तथा मुल्ला-मौलवी लोग उन भोले-भाले वनवासियों को हिंदू धर्म से अलग करके अपनी-अपनी ओर आकर्षित करने में संलग्न हैं।

इस अवस्था को ठीक से समझने एवं समझाने और उससे बचने की क्षमता एकमात्र खटिक जाति के पास है, जो उसे जन्म से विरासत में मिली है। इस जाति के लोग न तो पूर्व में और न ही आज, किसी भ़ी विदेशी संस्कृति और धर्म के प्रभाव में कभी भी नहीं आए। भले ही वे अपने सामाजिक एवं आर्थिक उत्पीड़न से दलित की श्रेणी में पहुँचा दिए गए।

उपरोक्त संपूर्ण तथ्यों का समीक्षात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण करने पर यह पाया जाता है कि विदेशी अरेबियन मुसलिम आक्रांताओं एवं शासकों और अंग्रेजों का सबसे सशक्त रूप में विरोध खटिक जाति ने किया था इसलिए उन दोनों ही विदेशी शासकों (मुसलिम एवं अंग्रेजों) ने सत्ता में आने के बाद सर्वाधिक उत्पीड़न खटिक जाति का ही किया था। खटिक जाति एक योद्धा जाति थी और उन दोनों आक्रांता शासकों से भयंकर टक्कर लेती रही थी। इन विदेशी शासकों के उत्पीड़न से बचने के लिए पहले तो खटिक जाति के लोग जंगलों में पलायन करते रहे परंतु मुसलिम शासकों के उत्पीड़न से बचने के लिए उन्होंने सुअर पालने की एक नवीन विधि को अपनाया जिसके कारण वे अपने हिंदू धर्म की रक्षा कर सके। अंग्रेजों के शासनकाल में भी इस जाति ने उनसे जमकर लोहा लिया और यहाँ तक कि सन् 1857 में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम एवं सैनिक क्रांति का पहला बिगुल बजाकर अपनी जाति को प्रथम स्वतंत्रता सेनानी जाति की श्रेणी में पहुँचाए, साथ ही ईस्ट इंडिया कंपनी का राज्य समाप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। उनको इसके लिए अंग्रेजों का कोपभाजन बनना पड़ा। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में इस जाति का सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न इस स्तर तक किया कि वे अनेक हिंदू जातियों के साथ दलित श्रेणी में गिने जाने लगे।

□

अध्याय-6

# स्वतंत्रता आंदोलन में खटिक जाति की अग्रणी भूमिका

संघर्ष, विद्रोह, क्रांति जैसे जन आक्रोश के उद्यमों के सापेक्ष आंदोलन का स्वरूप व्यापक एवं विशाल होता है। हिंदुस्थान में अंग्रेजों के शासन को समाप्त करते हुए स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए विविध प्रकार के किए गए प्रयासों का सम्मिलित नाम था—'स्वतंत्रता आंदोलन'। इस आंदोलन में पूरे भारतवासियों ने भाग लिया था। हिंदू खटिक जाति ने भी भारी संख्या में इसमें बढ़-चढ़कर भागीदारी की थी।

खटिक जाति ने हिंदुस्थान में अंग्रेजी शासन का प्रचंड विरोध किया था। नमक व्यापार के लिए अंग्रेजों द्वारा बनाई गई 'कस्टम रेखा' का उल्लंघन किया था। स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम, जिसे 'मेरठ की सशक्त क्रांति-1857' नाम से भी जाना जाता है, के असली नायक खटिक वंश के तितोरिया ही थे। जिस प्रकार स्वतंत्रता सेनानियों को अपराधी घोषित किया जाता था, ठीक उसी प्रकार अंग्रेजी शासन में इस जाति को स्वतंत्रता सेनानियों की तरह अपराधी घोषित किया गया था। इस जाति के लोग पूरे देश में पाए जाते थे अतएव संपूर्ण खटिक जाति अंग्रेजों की उस घोषणा के बाद स्वतंत्रता सेनानी की श्रेणी में स्वत: खड़ी हो गई थी। इस जाति के लोगों ने आजादी के लिए चलाए गए गांधीजी के प्रत्येक आंदोलनों में प्रखरता से भाग लिया था। यह सब देखते हुए यह कहा जाता है कि खटिक जाति हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति एवं मातृभूमि पर अपने को न्योछावर करने को सदैव तत्पर रहनेवाली एक धर्माभिमानी, राष्ट्राभिमानी एवं स्वाभिमानी हिंदू जाति है। अतएव खटिक जाति के लोगों को मातृभूमि का असली सपूत कहा जाना स्वाभाविक एवं अत्यंत न्यायसंगत होगा। प्रस्तुत अध्याय में इसी विषय का सम्यक् प्रतिपादन है।

## 6.1 अंग्रेजी शासन का खटिक जाति द्वारा भारी विरोध

विदेशी आक्रांता तुर्क और अंग्रेज, दोनों ही असत्यचारी, अनाचारी और अत्याचारी थे। विदेशी मुसलिम अरेबियन आक्रांताओं ने इसलाम का विस्तार करने की घोषणा की, परंतु लूटकर ले गए हिंदुस्थान की समृद्धि। इसी प्रकार विदेशी आक्रांता अंग्रेजों ने व्यापार (तिजारत) का अनुरोध करके हिंदुस्थान की सत्ता को हथियाकर लगभग 190 वर्षों तक शासन किया। खटिक जाति मुसलिम शासकों के क्रूरतम शासन काल को विस्मृत कर भी नहीं पाई थी कि तब तक अंग्रेजों का शासन आ गया। ऐसे में उस समय अंग्रेजों एवं उनके शासन से खटिक जाति का विरोध होना स्वाभाविक था।

विदेशी इसलामिक शासकों के क्रूरतम नर-संहारों के अनेक दृश्य खटिक जाति देख चुकी थी और इसलाम के शत्रु-पशु (सुअर) के माध्यम से अपने मान-सम्मान, स्वाभिमान, धर्माभिमान और चल-अचल आदि की सुरक्षा कर लेने का प्रयोग भी इनका सफल रहा था। सिकंदर तथाकथित महान् के अभियान को रोकने और तैमूरी तलवारों से जूझने का अदम्य साहस एवं उत्साह खटिक जाति में भरा हुआ था। ऐसी स्थिति में अनवरत युद्ध और प्रतिकार की इनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति भला अंग्रेजों का क्योंकर भय दिला सकती थी? यही कारण था कि खटिक जाति का अंग्रेजी शासन से विरोध होना स्वाभाविक पाया गया।

दास बनाकर शासन करनेवाली किसी भी सरकार का विरोध करना इनकी संस्कृति का एक अंग था। रणभेरी की धुनों पर तांडव-नृत्य एवं वीरतायुक्त गीतों को गाते हुए पराधीनता की जंजीरों को तोड़ने के लिए खटिक जाति प्रसिद्ध थी। आज भी गाँवों में इनके उत्सवों में नगाड़ों एवं दुंदुभियों से उसी प्रकार की वीरध्वनि गड़गड़ाती हैं और ये इस प्रकार से नाचते और गाते हैं जैसे वे युद्धभूमि में शत्रु को ललकार रहे हों। ऐसी वीरोचित संस्कृति प्रधान जाति का हिंदुस्थान में व्यापारी के रूप में कुकृत्य करनेवाले अंग्रेज शासकों से विरोध होना स्वाभाविक हो गया था।

छल-कपट, अन्याय और अत्याचार सहित युद्ध जीतने और युद्धबंदियों का खून एवं हत्या के इसलामिक दुष्कृत्यों का अवलोकन इस जाति ने बार-बार और हजार बार किया था। वे घटनाएँ इनको विस्मृत नहीं हुई थी और वे बराबर उनका स्मरण रखते थे। गाँव-के-गाँव और नगर-के-नगर जला देने और लूट-हत्या से दहशत फैला देने के तैमूरलंग के कारनामों के आगे हिम्मत न हारनेवाली खटिक जाति एक प्रकार से सत्ता से टकराने की आदी हो चुकी थी, शासन और शासक का प्रतिकार उनकी नियति बन चुकी थी। ऐसे में अंग्रेजों से टकराने अथवा उनका विरोध करने के लिए आवश्यक साहस इनको किसी अन्य से सीखना नहीं था।

अपमान को निगल जाना चरित्र पतन की अंतिम सीमा मानने के कारण खटिक

जाति के हिंदू किसी का सताया जाना, तड़पाया जाना और उत्पीड़ित करके मारा जाना बिलकुल पसंद नहीं करते थे। जिस कारण से कोई भी निरपराधी विवश करके मार दिए जाते थे, उसको लेकर खटिक उत्तेजित हो जाते थे और उस हत्यारे का या जनविरोधी शासक का अंत करके ही मानते थे।

खटिक जाति के लोगों का स्वभाव है कि वे अपने लिए दी गई किसी भी गाली को एक बार क्षमा माँग लेने पर क्षमा कर भी देते हैं, किंतु अपनी जाति का अपमान वे कभी बरदाश्त नहीं कर पाते हैं। अंग्रेजों ने संपूर्ण जाति को जरामय (अपराधी) जाति घोषित कर दिया था, जो एक चुनौती स्वरूप था। उस समय स्वतंत्रता सेनानियों को अंग्रेज शासन में अपराधी माना जाता था और उसकी सजा गोली मारकर दी जाती थी। अनेक स्वतंत्रता सेनानी उस समय तक फाँसी पर लटकाए जा चुके थे। खटिक जाति के प्रति अंग्रेजों की यह अवधारणा होने पर खटिक जाति ने उसका स्वागत किया एवं देश के लिए लगातार त्याग के लिए अपनी दृढ़ता का प्रदर्शन किया।

खटिक जाति के लोग मध्यकाल की गुलामी से पूर्णरूपेण ऊब चुके थे और मुगलों को एक बोझ समझते थे। ऐसे में अंग्रेजों की गुलामी अर्थात् (दोहरी गुलामी) भला उनको क्योंकर स्वीकार्य होती? सच पूछिए तो वे अपनी दोहरी गुलामी को पसंद और स्वीकार नहीं करते थे। अतएव इसलामिक शासन की ही भाँति खटिक जाति ने अंग्रेजों के शासन का भी प्रचंड विरोध किया था। सन् 1857 में मेरठ के सैनिक विद्रोह की असफलता के बाद अंग्रेजों ने रवींद्रपुरी इलाके में बसे खटिक परिवारों पर सर्वाधिक दंडात्मक काररवाही की थी, इसलिए भी पूरे देश में खटिकों ने अंग्रेजी शासन का विरोध किया।

खटिक जाति का मांस एवं फल-व्यवसाय, साथ ही बागवानी एवं कृषि कार्य मुख्य एवं गौण व्यवसाय था। मांस का व्यवसाय वे आदिकाल से करते आए थे। जिस समय यज्ञों में मांसाहुति का प्रचलन था, वैदिककालीन खट्टिक ब्राह्मण पशु-बलि का कार्य करता था और वहीं उसकी मुख्य जीविका थी। यज्ञों में जब पशु की आहुति के स्थान पर अन्न-आहुति का आयोजन हुआ, खट्टिक ब्राह्मण को क्षत्रिय खटिक के रूप गें धर्म-रक्षा के स्थान पर देश-रक्षा यानी क्षेत्र का दायित्व मिला। हिंदू राज्यों में कहीं-कहीं इनके भी राज्य थे और अधिकतर ये सैनिक अथवा योद्धा थे। राज्याश्रय एवं राज्यों की समाप्ति के साथ ही जीविका की बारी आई तो उन्होंने अपने पूर्वजों (महर्षि व्याघ्र जो मांस बेचने का कार्य करते थे आदि) का अनुसरण किया और मांस का व्यापार करने लगे।

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं के आवागमन और उनके द्वारा किए गए शासन काल में हिंदू उत्पीड़न के साथ ही इस जाति के दो व्यवसाय पुनः हो गए—एक तो युद्ध करना यानी सैनिक वृत्ति और दूसरा, मांस व्यवसाय। मध्ययुग में मुसलिम कसाई भी यह धंधा करता था जिसके सापेक्ष इस जाति की सामाजिक परिस्थिति प्रभावित हुई। इससे

बचने के लिए कुछ लोगों ने यह व्यवसाय छोड़कर फल व्यवसाय अपनाया जबकि कुछ लोग बागवानी और कृषि के कार्य में लगे। इसलामिक उत्पीड़न से बचने के लिए बहुत से लोगों ने जंगलों में जाकर मुगलों और अंग्रेजों से मोरचा लिया एवं गोरिल्ला युद्ध किया और जो रह गए उन्होंने मुगलों से अपनी दूरी बनाए रखने के लिए सुअर पालना आरंभ किया और सुअर काटना और बेचना प्रारंभ किया।

अंग्रेज शासक इनके जन्मजात दूसरे शत्रु थे। वे हिंदुस्थान में व्यापार और शासन दोनों करने आए थे। उन्होंने मुसलिम कसाई के मांस व्यापार को प्रोत्साहन प्रदान किया और खटिक के लिए सुअर व्यवसाय का लाइसेंस अनिवार्य किया। अतएव इस जाति के लोग अपनी रोजी-रोटी प्रतिबंधित होने से अंग्रेज शासन के विरोधी होते चले गए थे।

## 6.2 अंग्रेजों द्वारा स्थापित कस्टम रेखा का उल्लंघन

व्यापार में वस्तु का महत्त्व कम, बुद्धि का अधिक होता है। जिसके पास बुद्धि होती है वह साधारण वस्तु के व्यापार से भी अधिक लाभ कमा सकता है। अंग्रेजों ने सर्वप्रथम तंबाकू का व्यापार आरंभ किया था।[1] इतनी साधारण सी वस्तु का व्यापार हाथों में लेकर उन्होंने अपने पूर्वकाल से आए पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी—इन सभी को रास्ते से हटा दिया। वे किसी भी व्यापार में अत्यधिक लाभ कमाने के लिए एकाधिकार चाहते थे। इसके लिए अंग्रेजों द्वारा विदेशी मुसलिम शासकों को प्रसन्न रखने के लिए उन्हें उपहार एवं रिश्वत देते थे। हिंदुस्थान में आज नौकरशाही में रिश्वतखोरी की प्रथा एवं भ्रष्टाचार अंग्रेजों की देन है।

कालांतर में अंग्रेजों ने नमक व्यापार पर भी एकाधिकार प्राप्त कर लिया और इससे पर्याप्त धन कमाने की योजना भी बना ली एवं नमक कानून बनाया गया। इस कानून के अनुसार नमक जो कररहित था, उसे करयुक्त कर दिया गया। इसे बनाने के लिए लोगों को लाइसेंस दिए गए। अंग्रेज व्यापारी लाइसेंसधारी नमक उत्पादकों से पूरा नमक प्राप्त कर लेते और अनेक गोदामों में इसे रखकर जमाखोरी करते और बाद में यही नमक कई गुना अधिक मूल्य पर बेचकर (कालाबाजारी करके) अत्यधिक लाभ कमाते थे। 1793 ई. में BLLS 800,000 डॉलर वार्षिक लाभ मिला था जबकि 1844 ई. में यह बढ़कर 13,00,000 डॉलर लाभ प्राप्त हुआ था।[2] 1844 ई. में नमक कर आठ आने से बढ़ाकर एक रुपया कर दिया गया।[3] यह वृद्धि भविष्य में और अधिक लाभ प्राप्त करने हेतु की गई थी।

---

1. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-416
2. ग्रोवर, बी.एल. एवं यशपाल : आधुनिक भारत का इतिहास, एस. चांद ऐंड कंपनी लि. दिल्ली, पृष्ठ-169
3. वही, पृष्ठ-180

नमक व्यापार पर एकाधिकार करने और कर में वृद्धि करके नमक के मूल्य को बढ़ाने से अनेक गरीबों ने नमक खाना तक छोड़ दिया। चूँकि मानव शरीर में पानी की मात्रा को संतुलित रखने के लिए नमक एक आवश्यक पोषक तत्त्व है, इसलिए नमक का उपयोग न करने अथवा कम करने से करोड़ों लोग अस्वस्थ, रोगी और विकलांग हो गए। नमक की कमी से एक करोड़ लोग मृत्यु को प्राप्त हो गए, परंतु अंग्रेजी सरकार के चेहरे पर सिकन तक नहीं आई। वे क्रूर लालची अंग्रेज केवल अपने लाभ की ही सोचते रहे। लोगों के मरने अथवा विकलांग होने से उनको कोई सहानुभूति नहीं थी। इस घटना से वे अपेक्षाकृत प्रसन्न हुए। उनकी सोच थी कि नमक के अभाव में जब लोग मरेंगे अथवा विकलांग होंगे तो न केवल उनका विरोध करनेवालों की शारीरिक अस्वस्थता होगी, अपितु आगे से नमक का उपभोग-स्तर बढ़ जाएगा, उससे और लाभ कमाया जा सकेगा। नमक की तस्करी को रोकने के लिए अंग्रेजों ने एक कस्टम रेखा (ग्रेट हेज) बना रखी थी। उत्तर भारत से यह रेखा चलती थी और देश को दो भागों (पूरब और पश्चिम) में बाँटती हुई दक्षिण तक जाती थीं। इसकी उत्तर-दक्षिण लंबाई 2300 किलोमीटर थी और चौड़ाई में यह रेखा 15 मीटर चौड़ी थीं। इस पर घनी झाड़ियाँ लगाई गई थीं ताकि पूरब के लोग पश्चिम और पश्चिम के लोग पूरब आ-जा न सके। उन्होंने इस चौड़ी रेखा (सड़क) पर निगरानी रखने के लिए सिपाहियों की नियुक्ति कर रखी थी। इसी का नाम कस्टम रेखा था। यह ऐसी लक्ष्मण-रेखा थी जिसको पार करनेवाले की जान चली जाती थी। सीमा पर सिपाही गोलियों से भून देते थे अथवा सिद्ध होने पर भी कस्टम रेखा पार की है, तो उस व्यक्ति को फाँसी की सजा होती थी। अतएव पश्चिम जाकर जीवन के लिए आवश्यक नमक प्राप्त करना पूरबवालों के लिए कठिन कार्य था।[1] ग्रेट हेज के संदर्भ में मैक्स की पुस्तक में विस्तृत वर्णन प्राप्त है।

नमक के अभाव में मारे गए एक करोड़ लोगों में सभी वर्ग एवं जाति के लोग थे। अतएव खटिक जाति के साहसी लोगों ने कस्टम रेखा का उल्लंघन करके जन सामान्य के लिए आवश्यक अंग्रेजों के बड़े-बड़े गोदामों से संरक्षित नमक उठा लाने का निश्चय किया। दूसरे दिन उनके साथ हजारों लोग चल पड़े। सभी हथियारों से लैस थे। सीमा पर भयंकर मार-काट हुई। बहुत से लोग मारे गए परंतु कस्टम रेखा पर अंग्रेजी शासन द्वारा नियुक्त एक भी सिपाही नहीं बचा। अंदर घुसकर सभी ने अपने उठाने भर नमक लिया और चले आए।

खटिक जाति के नेतृत्व में इस घटना को अंजाम दिया जाना एक ऐतिहासिक घटना थी। अंग्रेजी सरकार ने इस आरोप में दूर-दूर तक छापे मारकर खटिक जाति के

1. जान, मैक्स : ग्रेट हेज ऑफ इंडिया

लोगों को बंदी बनाया और मुकदमा चलाया। कुछ को फाँसी और अनेक को कठोर कारावास की सजा दी गई। इस बहादुर जाति के लोगों ने वह कर दिखाया जो कालांतर में गांधीजी के नमक-सत्याग्रह का प्रेरक ही नहीं बल्कि उनके सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930-31) की पृष्ठभूमि बना। गांधीजी और पूरे भारतवासियों ने नमक कानून का उल्लंघन किया और स्वयं नमक तैयार किया। इसी के साथ विदेशी वस्तुओं के परित्याग, सरकारी नौकरियों से त्यागपत्र और शराब-ताड़ी की दुकानों की बंदी का आंदोलन चलाया गया।[1]

हिंदुस्थान के स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास लिखनेवालों ने गांधीजी के नेतृत्व और अनेक नेताओं के पराक्रम की प्रशंसा का उल्लेख तो किया है, परंतु किसी ने भी इस आंदोलन को जन्म देनेवाली खटिक जाति का नामोल्लेख नहीं किया है। यह चिंतन का विषय है। खटिक जाति ने आरंभ में हिंसा का सहारा लिया था, क्योंकि इसके अतिरिक्त उसके पास कोई अन्य विकल्प नहीं था, परंतु गांधीजी के साथ इस आंदोलन में अहिंसात्मक ढंग से ही ये लोग भाग लिए थे। कुछ स्थानों पर आंदोलन के समय जो झड़पें हुई थीं उनमें खटिक जाति का नाम इसलिए आगे आया कि इनका स्वभाव ही अन्याय न सहने का और ईंट का जवाब पत्थर से देने का बना हुआ था। इस संदर्भ में एक छोटी सी घटना का उल्लेख आवश्यक है।

उन दिनों लेखक के पिता नेताजी शिवलाल सोनकर बंबई में थे। बाजार से कुछ सामान लेने जा रहे थे। एक दुकान पर महिलाओं की भारी भीड़ थीं। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के महिला एवं पुरुष कार्यकर्ता शराब की दुकानें बंद कराने हेतु धरने पर बैठे थे। सरकारी सिपाही उनको डंडा मारकर हटाने का प्रयास कर रहे थे। कुछ युवक शराब क्रय करने का प्रयास कर रहे थे किंतु महिलाओं द्वारा विरोध तथा उन्हें समझाने का प्रयास किया गया। युवकों ने कांग्रेस की महिलाओं को आपत्तिजनक बातें कही किंतु उन कांग्रेस के कार्यकर्ताओं ने गांधीजी द्वारा प्रेरित आंदोलन को सविनय स्वरूप में ही रखा। शिवलालजी से रहा नहीं गया एवं उन्होंने उन युवकों को बुरे ढंग से पीट दिया। पुलिस ने शिवलालजी को गिरफ्तार किया एवं कांग्रेस के सत्याग्रही कार्यकर्ता के रूप में उन पर वाद थोपा गया। मुंबई से यरवदा जेल स्थानांतरित किया गया, जहाँ गांधीजी से भेंट हुई एवं गांधीजी द्वारा उन्हें अहिंसा का संदेश प्राप्त हुआ। कालांतर में वाराणसी प्रवास के मध्य गांधीजी ने श्री शिवलालजी से भेंट की। तब तक शिवलालजी देश के लिए एक समर्पित स्वतंत्रता सेनानी के रूप में पहचाने जाने लगे थे। लोग उन्हें शर्माजी एवं नेताजी के संबोधन से बुलाते थे।

---

1. जान, मैक्स : ग्रेट हेज ऑफ इंडिया

तात्पर्य यह कि जुल्म न सहना और गोली का उत्तर गोली से देना खटिक जाति का जन्मना स्वभाव है। अपने इसी स्वभाव के कारण इस जाति के साहसी लोगों ने अपनी जान की बाजी लगाकर कस्टम रेखा को तोड़ा और कालांतर में गांधीज़ी के 'नमक कानून तोड़ो' आंदोलन के मार्ग-दर्शक बने।

ईस्ट इंडिया कंपनी ने कस्टम रेखा का निर्माण केवल नमक कर के सापेक्ष नहीं किया था, बल्कि उसका उद्देश्य पूर्वोत्तर भारत के लोगों का नमक के अभाव में शारीरिक विकास भी बाधित करना था। इसमें उनको काफी सफलता मिली थी। यदि देखा जाए तो नमक जैसे पोषक तत्त्व के अभाव में पूर्वोत्तर भारत के अधिकांश स्त्री-पुरुष एवं बच्चे बौने कद के, दुबले-पतले, सिकुड़े हुए और बहुत ही कमजोर पाए जाते थे। बंगाल में इंगलैंड से जो नमक आयात किया जाता था, उसमें मिलावट होती थी और उसमें आयोडीन की मात्रा तो बिलकुल ही नहीं होती थी। पूर्वी क्षेत्र जैसे बंगाल, उड़ीसा, झारखंड के स्त्री एवं पुरुषों का शारीरिक विकास नमक के अभाव और मिलावटी नमक खाने से पूर्णत: अवरुद्ध हो गया था। उनमें कार्यक्षमता जैसी कोई विशेषता नहीं रह गई और वे प्रमादी तथा आलसी हो गए। यही स्थिति उत्तर प्रदेश और बिहार की भी रही। बिहार के बहुसंख्यक आबादी का निरीक्षण किया जाए तो यह देखने में आता था कि वहाँ के लोग भी अधिक संख्या में पूर्वी भारत क्षेत्र के निवासियों के जैसे शरीरवाले मिलते थे। औसत आयु भी छप्पन वर्ष थी, किंतु जब देश स्वतंत्र हुआ एवं खाद्यान्न के क्षेत्र में 1971 ई. में तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा भारत आत्मनिर्भर घोषित हुआ तो औसत आयु एवं शारीरिक सौष्ठव का विकास हुआ।[1]

कस्टम रेखा का रहस्य उद्घाटन होने के बाद विदेशों में अंग्रेजों की पर्याप्त बदनामी हुई, इसलिए क्राउन राज में उसे बड़ी तीव्रता एवं सफाई से हटा दिया गया, और कहा गया कि ऐसी किसी रेखा का निर्माण ईस्ट इंडिया कंपनी से संबद्ध नहीं था।[2] उनके झूठ का परदाफाश इसी से हो जाता है कि कस्टम रेखा हटाने के बाद भी अंग्रेजों ने नमक कर नहीं हटाया था, इसलिए 1930-31 ई. में उसे महात्मा गांधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय अपने उस आंदोलन का प्रमुख मुद्दा बनाया।

## 6.3 स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम 'मेरठ-1857 की क्रांति' के असली नायक खटिक वंश के तितोरिया

स्वराज अथवा स्वशासन में प्राप्त अधिकारों के आलोक में नेता बनने और नेतृत्व करने की अनेक घटनाएँ स्वाभाविक हैं, परंतु इसलामिक और अंग्रेजी शासन के समय

1. पूर्व प्रधानमंत्री, इंदिरा गांधी का 15 अगस्त 1971 का लालकिला से हुआ भाषण
2. जान, मैक्स, दी ग्रेट हेज ऑफ इंडिया, प्राक्कथन

किसी घटना का उत्तरदायित्व लेना, नायक बनना और नेतृत्व करना बहुत ही वीरता का कार्य माना जाता था। उस समय नेताओं की धर-पकड़ ही नहीं होती थी, बल्कि उन्हें अपराधी घोषित करके गोलियों से उड़ा दिया जाता अथवा फाँसी दे दी जाती थी। यदि जेल की सजा मिलती तो वह भी अत्यंत कठोर होती थी। लोग समुद्र पार तक कालेपानी की सजा के आधार पर अंडमान निकोबार की जेलों में डाल दिए जाते थे और मरते दम तक अपने जन्म स्थान पर लौट नहीं पाते थे।

खटिक जाति के लिए यह गर्व की बात है कि उसने ऐसे विदेशी आक्रांताओं के जमाने में भी उत्पीड़न और शोषण का कड़ा प्रतिरोध किया। सिकंदर से किया गया संघर्ष उसको वापस अपने घर भागने पर विवश किया, जबकि वह बड़े-बड़े हिंदू राज्यों को जीत चुका था और हारा तो एकमात्र इसी खटिक जाति से। तैमूरलंग के सामने कोई टिकनेवाली शक्ति यदि थी तो एकमात्र खटिक जाति की शक्ति थी। मुहम्मद गजनबी और मुहम्मद गौरी द्वारा लूटी हुई हिंदू संपदा को रास्ते में छीनने का दुस्साहस खटिक के अतिरिक्त और किसी जाति में नहीं था। विदेशी आक्रांता शासक सुल्तानों और बादशाहों से बैर लेने का साहस भी इसी जाति में देखा जाता है। अंग्रेजों द्वारा बुलाई गई व्यापारियों की सद्भावना बैठक का निमंत्रण अस्वीकारने का साहस सर्वप्रथम इसी जाति के व्यापारियों ने दिखलाया था। बैठक में शामिल न होने पर मिली नोटिस का जवाब देने के लिए खटिक व्यापारमंडल का नेता जब अंग्रेजी दफ्तर में पहुँचा तो उस नोटिस को फाड़कर बैठक आमंत्रित करनेवाले के मुँह पर फेंक दिया था। अंग्रेजी शासन का इस जाति के लिए कभी कोई महत्त्व या भय नहीं रहा।

किसी भी संघर्ष अथवा आंदोलन में खटिक जाति कभी अनुयायी नहीं रही, बल्कि सदैव आगे-आगे ही रहने और नेतृत्व प्रदान करने का काम किया था। यही कारण है कि 1857 ई. की इनकी मेरठ क्रांति को प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के नाम से समादृत किया जाता है। इस स्वतंत्रता संग्राम का आरंभ मेरठ के तितोरिया खटिक लोगों ने किया। सायंकाल कुछ सेना के रंगरूट बैरकों से निकलकर छावनी क्षेत्र के बाहर खटिकों के मुहल्ले में घूमने के लिए आए। वहाँ वे अपने इच्छा एवं स्वाद के अनुसार सुअर का मांस खाना चाहते थे। इन नौजवान रंगरूटों द्वारा युवतियों पर छींटाकशी की गई। युवतियों ने उन्हें धिक्कारते हुए कहा कि तुम्हारे 40 भाई कैद में हैं और तुम लोग विलासिता में लगे हो। जाओ उन्हें छुड़वा ले आओ तो हम तुम लोगों का स्वागत एवं सम्मान करेंगे। तुम्हारे जैसे बहादुरों की आरती हम उतारेंगे और हुआ वही जिसकी महिलाओं ने अपेक्षा की थी। अपने भाइयों को छुड़ाने के लिए उन रंगरूटों ने रात्रि में कैदियों की बैरक पर आक्रमण बोल दिया एवं उन्हें छुड़ा लिया था। किंतु उनके इस वीरतापूर्ण कृत्य के कारण मेरठ छावनी जल उठा था। हिंदू सैनिकों द्वारा सभी अंग्रेज

अधिकारियों की हत्या हो चुकी थी।

वे महिलाओं के तीक्ष्ण वाक्-वाण उन खटिक नौजवानों को शक्तिबाण की तरह लगे और सैनिक बटालियनों में जहर फैल गया। खटिक सैनिकों के साथ अन्य हिंदू जातियों के सैनिक तुरंत ही दिल्ली रवाना हो गए। गोले और बारूदों पर मेरठ के लोगों ने अधिकार कर लिया और बंदूकें लूट ली गईं। किसी भी दमन का मुकाबला करने के लिए संपूर्ण मेरठ निवासी लोग रवींद्रपुरी कॉलोनी के पास खटिक नौजवानों के नेतृत्व में डटे रहे। इसमें पूरे मेरठ के खटिक जाति के साथ जाटव एवं वाल्मीकि जाति के लोग भी एकत्रित हो गए थे। तब तक मेरठ के सैनिक दिल्ली पहुँच चुके थे। इसलिए अंग्रेजों का ध्यान मेरठ से हटकर दिल्ली की ओर चला गया था।

मेरठ के तितोरिया खटिक सैनिक 11 मई, 1857 ई. को दिल्ली की सड़कों पर जब पहुँचे उस समय उषाकाल था और सड़कों पर लोगों का आना-जाना आरंभ भी नहीं हुआ था। सैनिकों का एक दस्ता यमुना नदी पार किया और शहर के चुंगी कार्यालय को आग के हवाले करते हुए लाल किला की ओर प्रस्थान किया। उस समय लाल किला में बहादुर शाह द्वितीय अंग्रेजों की कृपा-पेंशन पर जीवन बिता रहे थे। सैनिकों के अनुरोध पर उन्होंने पुनः अपने को हिंदुस्थान का बादशाह घोषित किया, लाल किला पर तिरंगा फहराया गया और दिल्ली में ईस्ट इंडिया कंपनी के राजनीतिक एजेंट साइमन फ्रेजर समेत सैकड़ों अंग्रेजों को मार दिया गया। सरकारी कार्यालय नष्ट कर दिए गए अथवा सैनिकों के अधिकार में आ गए। इस प्रकार दिल्ली फतह के साथ 1857 ई. का विद्रोह आरंभ हुआ। देश के दक्षिण और बंगाल को छोड़कर शेष समस्त उत्तर, पश्चिम हिंदुस्थान में आजादी की क्रांति का बिगुल बज उठा। अनेक अंग्रेज और हिंदू राजागण मारे गए। देश के अन्य भागों के लोगों ने अंग्रेजों का साथ दिया और विद्रोह असफल हो गया। बहादुरशाह जफर को रंगून की जेल में भेज दिया गया, जहाँ उन्होंने जीवन के अंतिम दिन व्यतीत किए। लक्ष्मीबाई की वीरता हिंदू जाति के लिए आदर्श बनी और इस प्रकार संपूर्ण भारत के स्वाधीनता हेतु क्रांति के अग्रदूत बने मेरठ के खटिकवंशीय तितोरिया।

नायकत्व के गुणों से भरपूर यह जाति अपने प्रथम प्रयास में सफल न होने पर भी अपना मनोबल सदैव ऊँचा रखे हुए थी। जब भी किसी प्रकार की समस्या हिंदुस्थान के लोगों के सम्मुख अंग्रेज प्रस्तुत करते, यह जाति उसका जमकर प्रतिकार करने में सबसे आगे रहती थीं। इसका जीवंत उदाहरण है अंग्रेजों द्वारा बनाई गई कस्टम रेखा का उल्लंघन, जिसके बारे में विस्तृत रूप से ऊपर बतलाया जा चुका है।

## 6.4 स्वतंत्रता सेनानियों की तरह खटिक जाति अंग्रेजी शासन में अपराधी घोषित

अंग्रेजों ने ब्रिटिश शासन एवं व्यापार और प्रशासन के हित में अनेक नियम बना रखे थे, जिसके कारण उन्हें भविष्य में किसी विद्रोह आदि का सामना न करना पड़े और उस नियम के उल्लंघन करनेवाले को दंड दिया जा सके। उनका एक शासनादेश यह था कि शासन के विरोध में किसी भी हिंसक घटना से संबंधित लोगों को अपराधी घोषित किया जाना और उन पर देशद्रोह का मुकदमा चलाना।

अंग्रेज सोचते थे कि हिंदुस्थान के सभी विरोधियों को एक-एक करके इसी नियम के अंतर्गत सजा दे दी जाएगी और जब कोई विरोधी नहीं रह जाएगा तो वे निष्कंटक राज्य करेंगे। गांधीजी इस बात को अच्छी तरह से समझते थे। इसीलिए उनका समस्त आंदोलन अहिंसात्मक विधि से आरंभ और समाप्त होता था। उनके शांतिपूर्वक चलाए गए आंदोलनों पर भी अनावश्यक लाठी चार्ज करके छेड़छाड़ किया जाता था ताकि आंदोलनकारी उग्र होकर अहिंसा का मार्ग पकड़ लें और उनको जेल में ठूँसने का उद्‌देश्य पूरा हो। कभी-कभी उनको सफलता मिल भी जाती थी। गांधीजी के अहिंसात्मक आंदोलनों में खटिक जाति के लोग अपने मन से भाग नहीं लेते थे बल्कि एक राष्ट्रीय आह्वान होने से ही उसमें भाग लेते थे। मन, मस्तिष्क और स्वभाव से उनको क्रांतिकारियों का आंदोलन पसंद था। किसी भी संघर्ष अथवा विद्रोह में तो वे सबसे आगे रहते ही थे। यही कारण था कि अंग्रेजों ने खटिक जाति को ही अपराधी श्रेणी की जाति यानी जरायम पेशा जाति के रूप में घोषित किया।[1]

अंग्रेजों ने यह कदम सोच-समझकर उठाए अथवा जल्दबाजी में, यह कहा नहीं जा सकता है, परंतु यह विचारणीय प्रश्न अवश्य है कि इस देश में क्षत्रिय राजपूत राजवंश की अनेक जातियाँ ऐसी थीं जिन्होंने मुगलों और अंग्रेजों, दोनों से निरंतर युद्ध लड़े और विद्रोह भी किए थे। कई मुसलिम रियासतों के शासक और सामंत भी अंग्रेजों से युद्ध किए थे। ऐसे में उन सबको तो सबसे पहले अपराधी घोषित किया जाना चाहिए था और मारकर सभी राज्यों पर पेंशन के रूप में दिया जानेवाला वेतन बचा लिया जाना चाहिए था। परंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया। यह कठोर कदम खटिक एवं कुछ अन्य जातियों के विरुद्ध ही उठाया गया।

अंग्रेजों के ऐसा निर्णय करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उस समय खटिक जाति को देश की समस्त जातियों में सबसे अधिक बलशाली, स्वाभिमानी, राष्ट्राभिमानी एवं धर्माभिमानी माना जाता था। अंग्रेजों द्वारा की गई इस घोषणा से वर्तमान खटिक

---

1. ब्रिटिश सरकार के द्वारा जारी की गई क्रीमिनल कास्ट की सूची

जाति के संदर्भ में दो तथ्य स्वत: स्थापित हो जाते हैं—पहला यह कि खटिक जाति देश की संपूर्ण जातियों में सबसे अधिक ताकतवर, योद्धावृत्ति और विद्रोही जाति थी, दूसरा यह कि संपूर्ण खटिक जाति राष्ट्रभक्त जाति थी इसीलिए उसे अपराधी घोषित किया गया था। अंग्रेजों के सामने इस जाति ने अपने शौर्य को प्रदर्शित करते हुए ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए थे जिससे शासक वर्ग हतप्रभ था। अंग्रेजी शासन ने ठीक ही सोचा था कि यदि खटिक जाति को अपराधी घोषित नहीं किया गया तो यह उनके लिए और भी संकट उत्पन्न करती रहेगी।

अंग्रेजी दासता के दिनों में स्वतंत्रता के संबंध में बातें करना भी अपराध था। अंग्रेज सरकार दो-चार लोगों को एकत्रित होने पर भी शक करती थी कि ऐसे लोग स्वतंत्रता के लिए किसी संघर्ष की नीति तय कर रहे हैं और इस आरोप में वह उनको जेलों में ठूँसकर तथा नाना प्रकार से उत्पीड़ित करती थीं, किंतु आजादी के दीवाने कृत्रिम शव-यात्रा निकालते और निर्धारित स्थान पर पहुँचकर बाँस की तख्ती के रूप में रखी हुई बंदूकें लेकर मोरचा बना लेते थे। इससे अंग्रेज सरकार किसी भी हिंदू शव-यात्रा में 8 से अधिक लोगों को शामिल होने की अनुमति नहीं देती थी। यही स्थिति वैवाहिक कार्यक्रमों की थी। बारी-बारी से एक-एक करके आए हुए अतिथियों को धर-पकड़ पाने में असमर्थ होने पर अंग्रेज अधिकारी आयोजनकर्ता के विरुद्ध काररवाही के लिए जूठे पत्तलों तक को गिनते थे। इसे देखकर लोग व्यर्थ की परेशानी से बचने के लिए जूठे पत्तलों को जलाना आरंभ कर दिए थे।

ऐसी सूक्ष्म प्रतिक्रियावादी नस्ल के शासनकाल में प्रत्येक पग फूँक-फूँककर आगे बढ़ाए जाते थे। दंड-भय से सभी लोग अपने आचार-व्यवहार में परिवर्तन लाने लगे थे। किंतु खटिक जाति के लोग अपनी शव-यात्राएँ और बारात, दोनों में ही भारी से भारी संख्या में शामिल होते थे और अंग्रेज तथा अंग्रेज मानसिकतावाले सिपाहियों को खुली चुनौती देते थे। तलाशी के नाम पर छेड़छाड़ करनेवालों पर ईंट-पत्थर बरसाने लगते थे, इसलिए अंग्रेजों के शासनकाल में पुलिसवाले पहले ही पता लगा लिया करते थे और जब किसी खटिक की शवयात्रा होती अथवा बारात निकलती तो पुलिसकर्मी रास्ते से हटकर दूर बैठ जाते थे।

खटिक जाति को अपराधी जाति घोषित करते समय खटिक जाति के संदर्भ में उनके स्वभाव, उनकी स्वजातीय शक्ति एवं योद्धा प्रजाति के बारे में समस्त सूचनाएँ अंग्रेज शासकों को प्राप्त हो चुकी थीं और इसलिए उसके सम्मुख इस जाति को दबाने के लिए इन्हें अपराधी घोषित किए जाने के अलावा दूसरा कोई विकल्प ही नहीं रह गया था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत, दासता-काल में जो भी लोग अपराधी घोषित किए गए

थे उनको स्वतंत्रता संग्राम सेनानी माना गया और उनको विशेष सम्मान एवं सुविधा का लाभ दिया गया। उनके बिना किसी जाति-धर्म के भेदभाव किए ही उनके सम्मान में वे सारी सुविधाएँ दी गईं जो अंग्रेजों द्वारा घोषित सभी अपराधी जातियों के लिए अनुमन्य थीं। उन्हें पेंशन का लाभ, वाहनों में बैठने के स्थान का निर्धारण, नि:शुल्क यात्रा-भाड़ा एवं रेल यात्रा पास आदि सभी लाभ मिले। स्वतंत्रता सेनानी का दरजा कौन कहे खटिक जाति को पूरे देश में अनुसूचित जाति की श्रेणी तक नहीं दी गई, जिसके कारण वे आज तक अनेक प्रांतों में पिछड़ी और सामान्य श्रेणी में पड़े हुए विकास की मुख्य धारा से दूर है। लगता है कि इस एक जाति को आज भी विदेशी मुगलों एवं अंग्रेजों के काल में जिस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था, वही स्थिति आज भी है, जबकि अन्य सभी जातियों को उनकी आर्थिक स्थिति के आधार पर आरक्षित और अनारक्षित जाति की श्रेणी दी गई है।

यह निश्चित रूप से चिंतन का विषय है कि जिस जाति ने धर्म-रक्षा और देश-रक्षा में अपना सबकुछ गँवा दिया, जिसने देश की अर्थव्यवस्था में योगदान किया और गुलामी की जंजीरों को तोड़ फेंकने के लिए सबसे पहले प्रयास किया, वह आज भी अंग्रेजों द्वारा प्रदत्त अपराधी की पहचान को तोड़कर सम्मान प्राप्त करने के लिए तड़प रही है। स्वतंत्रता सेनानियों के सापेक्ष तो आज इस जाति के समस्त परिवारों को स्वतंत्रता सेनानी घोषित किया जाना चाहिए था, परंतु ऐसा नहीं हुआ है। इसका एक सशक्त कारण यह है कि इस जाति के लोग आज अनेक नामों एवं संबोधनों के आधार पर अपने एक वंश के होने की पहचान तक खो बैठे हैं। इन्हें एकजुट होकर अंग्रेजों द्वारा दी गई 'अपराधी' की उपाधि को तो समाप्त करने की घोषणा के साथ अपने स्व सम्मान हेतु समाज के साथ सरकार के ध्यान को आकर्षित करने एवं स्वजातीय संगठन की शक्ति तथा उसके प्रदर्शन का प्रयास करना चाहिए।

## 6.5 खटिक स्वतंत्रता सेनानी देश भर में

स्वतंत्रता आंदोलन में देश के प्रत्येक क्षेत्रवासी तन, मन एवं धन से लगे हुए थे। इसमें न जाने कितनों के घर तक उजड़ गए। हजारों ने जेलों में दम तोड़ दिया। काला-पानी की सजा पानेवाले लौटकर अपने घरों तक नहीं आए। आजादी मिलने के बाद वे जीवित भी नहीं पाए गए, इसलिए उनको स्वतंत्रता सेनानी न मानकर केवल शहीद कह दिया गया। उनके घरों की विधवाओं और अनाथ बच्चों की कोई सुधि नहीं ली गई। क्या स्वतंत्रता की लड़ाई लड़नेवाले योद्धाओं के साथ हुआ व्यवहार यह उचित रहा? ऐसे लोगों में अधिकांश संख्या खटिक जाति की रही जिसने पग-पग पर इसलामिक और अंग्रेजी शासन से टक्कर ली? यदि इतिहास के पन्ने पर केवल क्षत्रिय राजपूतों के ही

युद्ध में लड़ने तथा बलिदान होने का उल्लेख है तो क्या क्षत्रिय-खटिक कोई अन्य थे? तितोरिया, सिसोदिया, गुहिल, गहलोत, चहमान, पवार आदि ये सारे राजपूत तो इसी वंश की प्रशाखाओं से हैं? अतएव यह कहना सर्वथा उचित होगा कि स्वतंत्र हिंदुस्थान में संपूर्ण खटिक जाति एवं उसके प्रत्येक सदस्य को स्वतंत्रता सेनानी का सम्मान मिलना ही चाहिए।

आज, स्वतंत्रता सेनानी के सापेक्ष यदि खटिक जाति का आकलन किया जाए तो इस जाति की शाखा-प्रशाखाओं के स्वतंत्रता सेनानी पूरे देश में मिलते हैं। स्वतंत्रता सेनानियों की उपलब्ध एवं प्रकाशित सूची में भी उनकी संख्या प्रत्येक प्रांत एवं जनपदों में मिलती है। कुछ के नाम ऐसे हैं जिनके उपनाम में खटिक जाति अंकित नहीं है। कुछ लोगों के जेल में जाने का अभिलेख अप्राप्त रहा वे भी इस सूची में आने से वंचित रह गए हैं। जिनको जेल ले जाते समय मर जाने से कहीं फेंक दिया गया उनका भी अभिलेख कहीं नहीं है, अतएव वे भी सूची से बाहर रह गए हैं। गाँव-घर के लोगों द्वारा सूचित करने और अनेक साक्ष्य देने के बाद भी केवल वे ही स्वतंत्रता सेनानी माने गए हैं, जिनका जेल जाने के रिकॉर्ड पाए गए हैं, जिनके कारण इस जाति के अनेक लोगों को यह श्रेणी नहीं मिल पाई। नाम के साथ जाति का उल्लेख न होने से अनेक अन्य जाति के लोग भी इस जाति के लोगों को दिए जानेवाले पेंशन लाभ को प्राप्त कर लिए, और इनको पता तक नहीं चला। यह सूची बहुत जल्दबाजी में अपने लोगों को लाभान्वित करने के उद्‌देश्य से तत्कालीन कांग्रेस की सरकार ने जारी कराई थी, ताकि वह अपने वोट की राजनीति का उल्लू सीधा कर सके।

खटिक स्वतंत्रता सेनानियों की संख्या सूची के अनुसार भी संतोषप्रद नहीं मिलती है। जिन लोगों ने अत्यधिक शौर्य और पराक्रम दिखलाए थे उनके बारे में यत्र-तत्र लेख आदि प्रकाशित होते रहते हैं। श्री राजनाथ सोनकर शास्त्री (पूर्व सांसद) ने अपनी पुस्तक खटिक जाति की उत्पत्ति एवं विकास में लिखा है—'राष्ट्र को स्वाधीनता का किरीट पहनानेवाले, अपने प्राणों को हथेली पर लेकर सर पर कफन बाँधे, ब्रिटिश शासन के विद्रोही, खटिक जाति से भी अनेक मतवाले वीर सेनानी पैदा हुए। घर-परिवार से बे-परवाह, पत्नी और बच्चों की ममता से उस पार, हुकूमत के पिट्‌ठुओं की फटकार, अंग्रेजी पुलिस का तिरस्कार, शासन का उत्पीड़न और फटकार के बीच भी खटिक समाज में अनेक बलिदानी पैदा हुए। हिंदुस्थान के विभिन्न हिस्सों में खटिक समाज के सपूतों ने स्वतंत्रता की लड़ाई में अभूतपूर्व भूमिका निभाई है। खेद है कि पढ़ाई-लिखाई के अभाव में उनकी कीर्तिगाथा दूसरों की कीर्तिगाथा बन गई। उनका त्याग और बलिदान दूसरों का इतिहास बन गया, वे चुप रह गए। उनको यह ज्ञात नहीं था कि जो कुछ उन्होंने किया यदि उसका सचमुच मूल्यांकन हो तो आज उनके परिवार, उनके बाल-बच्चे ही

नहीं बल्कि उनकी कौम भी गौरवान्वित होती। पुस्तक में सबकी जीवनी प्रकाशित करने में ग्रंथ के विस्तृत होने का भय है। अत: प्रदेश के क्रम से प्रत्येक जनपद के खटिक स्वतंत्रता सेनानी लोगों का संक्षिप्त नाम आदि आगे दिया जा रहा है।''[1]

कालापानी की सजा दिल दहला देनेवाली मानी गई थी। इस सजा से लोग समुद्र के उस पार भेज दिए जाते थे। **अंदमान** जैसे—स्थानों पर। शेष जीवन तक लोग वहीं रहते थे और वापस अपने घरों को कभी नहीं आ पाते थे। यह सजा फाँसी की सजा से भी बदतर थी और यह उसे दी जाती थी जिससे अंग्रेज बहुत अधिक क्षुब्ध हो जाते थे। उनको सर्वाधिक उद्वासित एवं उद्वेलित किया था खटिक जाति के लोगों ने···ऐसे में खटिक जाति पर बहुत अधिक समय तक मुकदमा नहीं चलता था और फाँसी या काला-पानी की सजा अंग्रेज तुरंत सुना दिया करते थे। न्यायालय में अधिकतर केवल जाति पूछकर ही फैसला लिख दिया जाता था। इसीलिए अंदमान के सेल्लुलर जेल में खटिक जाति के स्वतंत्रता सेनानियों की संख्या सर्वाधिक थी।[2]

खटिक स्वतंत्रता सेनानी गोविंद मार्कोर्ड ने **अंदमान** में 8 जून, 1872 ई. को लार्ड मेयो की गोली मारकर हत्या कर दी और उसकी सूचना लोकमान्य बालगंगाधर तिलक को देकर अज्ञातवास ले लिया। वह कभी भी गिरफ्त में नहीं आया। बदले में चोफेकर बंधुओं को फाँसी दे दी गई।[3]

**उत्तर प्रदेश** के विभिन्न जनपदों के खटिक भी स्वतंत्रता संग्राम में अपनी बहादुरी दिखलाए थे। इनमें **गाजीपुर** (सैदपुर निवासी) के बैजनाथ खटिक पुत्र नेउर खटिक और **गोंडा** जनपद के गोपीदास सूर पुत्र जवाहिर खटिक (निवासी-वीरपुर इमरिया, थाना-इटियाटाक) जिनको 1932 ई. में आंदोलन करने के कारण 3 माह की सजा और 50 रुपए का जुरमाना हुआ था।

**गोरखपुर** का चौरीचौरा नामक स्थान 5 फरवरी, 1922, दिन रविवार को अपने कांड के लिए प्रसिद्ध है। गांधीजी का असहयोग आंदोलन आरंभ हुआ था कि चौरीचौरा थाने के पुलिसकर्मियों द्वारा किए गए एक व्यक्ति के अपमान का बदला लेने के लिए हजारों लोग श्री रामपति चमार के नेतृत्व में जुट गए और थाना को फूँक दिया, जिसमें 23 पुलिस मारे गए थे। उसमें 272 लोगों का चालान किया गया, 228 सेशन सुपुर्द किए गए, 172 को फाँसी दी गई। ऊपरी अदालत ने 19 को फाँसी, 14 को आजीवन कारावास,

---

1. शास्त्री, राजनाथ सोनकर : खटिक जाति की उत्पत्ति और विकास, पृष्ठ-414 (में 13 वर्षीय बालक नानी गोपाल के साथ सोहनलाल, देवनाथ, मुल्की सिंह नामक तीन खटिक कैदियों का नाम)
2. वही, पृष्ठ-415
3. वही, पृष्ठ-416

38 को मुक्ति और शेष को 2-8 वर्ष तक की जेल हुई। तीनों प्रकार की सजाएँ पानेवाले अनेक लोग खटिक जाति के भी थे।

1857 ई. की सैनिक क्रांति में झाँसी जनपद की महिलाओं की भूमिका रोमांचकारी एवं सम्माननीय रही। महारानी लक्ष्मीबाई के साथ रहनेवाली तोपची महिला मोतीबाई की सहायक जूही खटिक, और महारानी के दूसरे तोपची गुलाम गौस खाँ की तोप में गोले डालनेवाली नानकी बाई खटिक अपनी बहादुरी के लिए विख्यात थीं।

फीरोजपुर के खटिक सर्वश्री तुलसा सिंह तवर और कल्लूराम बागड़ी के नाम स्वतंत्रता आंदोलन में गर्व से लिए जाते हैं। 1857 ई. के महान् क्रांतिकारी श्री रामलाल खटिक को बुलंदशहर चौक (कत्ली चौक) पर सरेआम फाँसी दे दी गई थीं, मेरठ में तोपखाना का तोपची तितोरिया गोत्र का खटिक ही था। सीतापुर के अगने पुत्र छोटे और खैराती निवासी द्वय तानसेन गंज को 1930 ई. और 1932 ई. के आंदोलन में भाग लेने के कारण क्रमश: 6 माह की सजा और 30 रुपए जुरमाना तथा 4 माह की सजा एवं 10 रुपए जुरमाना हुआ था। 1941 ई. तथा 1942 ई. के आंदोलन में भाग लेने के कारण भोलानाथ जार पुत्र हुसैनी खटिक को कुल 1 वर्ष व 13 माह और 40 रुपए का जुरमाना देना पड़ा था।

वाराणसी के माधवदास बाग में रखे गए अवध के नवाब वजीर अली को यहाँ का कलेक्टर चेर कलकत्ता भेजने का प्रबंध कर रहा था कि वजीर अली अपने दो सौ सिपाहियों को लेकर, जिनमें फौजदार खटिक इत्यादि को साथ कलेक्टर मि. चेर के घर में घुस गए और उसे मार डाला। यह घटना 14 जनवरी, 1880 ई. की है। राजा चेतसिंह का विद्रोह उसके 18 वर्ष पूर्वकाल में हुआ था। जब डेडिसन उस समय टकसाल में रहता था। किसी तरह अपने परिवार को बचाने में सफल रहा। दूसरी ओर 500 अंग्रेजों की सशस्त्र सेना थी जिसका मुकाबला 5 घंटे तक केवल दो लोगों ने किया था— शिवनाथ सिंह और बहादुर सिंह। वजीर अली अपने निकटस्थ साथी फौजदार खटिक के साथ भाग निकला। दोनों ने जयपुर के राजा के यहाँ शरण ली, परंतु राजा ने पुरस्कार के लालच में उन्हें अंग्रेज अधिकारियों को सौंप दिया। वे दोनों पिंजड़े में बंद करके बनारस की सड़कों पर घुमाए गए, फिर कलकत्ता भेज दिए गए और अंत तक वहीं रहे। वजीर अली एवं फौजदार की जीवनी एवं उनके संघर्ष की गाथा काशी में लोकगीत गायकों द्वारा लंबे समय तक गाई जाती रही है।

1852 ई. में वाराणसी के कलेक्टर मि. गाविंस थे। उनके आदेश से साँड पकड़े जाने लगे। हिंदू धर्म में निष्ठा रखनेवाले साँड़ को शिव का वाहन मानते हैं, अतएव हिंदू समाज में इसे लेकर जंग छिड़ गई। लोगों को पता चला कि गोमांस भक्षक अंग्रेज इन साँड़ों को काटकर खा रहे हैं। इस पर विचार के लिए खटिक बंधुओं ने असीबरना की पंचायत चित्रकूट पर आहूत की। कलेक्टर बैठक होने नहीं देना चाहता था। इससे तनाव

उत्पन्न हो गया और खटिक जाति के लोग एक कुम्हार के घर के सामने रखी हुई गौरय्या (हुक्का पर तंबाकू की चीलम जैसी वस्तु) से अंग्रेज अफसरों को मारने लगे। अंग्रेज अधिकारियों के भागते ही पुलिस भी भाग चली।

स्वतंत्रता सेनानियों में वाराणसी के अनेक लोगों का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। खटिक समाज में भी कई लोग इस विशेषण को धारण करते थे। वाराणसी में रोहनियाँ थानांतर्गत भास्करा तालाब पर सुभाषचंद्र बोस का आगमन मार्च 1926 में होना था। अंग्रेज कलेक्टर ने जनता में संदेश भेजा कि जो भी वहाँ जाएगा उसे सरकार दंडित करेगी। गाँववाले अपने प्रिय नेता का दर्शन करने में भयभीत थे किंतु अखाड़े में मस्त होकर लड़नेवाले एवं पेशे से साड़ियों की बुनाई करनेवाले गाँव के युवक शिवलाल स्वतंत्रता का गीत गाते हुए निकले। उनकी आवाज का जादू जिनके कानों में पड़ा लोग भय को त्याग आगे बढ़े। नेताजी सुभाषचंद्र बोस की सफल सभा हुई। उन्होंने शिवलालजी को गले लगाया एवं उनके निडर व्यक्तित्व से प्रभावित होकर आजाद हिंद फौज के संस्थापक नेताजी बाबू सुभाषचंद्र बोसजी ने 'नेताजी शिवलाल' कहकर स्वतंत्रता सेनानी का अलंकरण प्रदान किया था। आज भी लोग याद करते हैं।

**चटगाँव** में एक जुलूस का नेतृत्व करनेवाली मालती खटिक को अंग्रेजों ने गोली का निशाना बनाया और वह गिर पड़ी, फिर भी राष्ट्रीय ध्वज को उसने झुकने नहीं दिया। **दिल्ली** के रामकिशन राजौरा, रामचंद्र बसवाला, हरवंश राजौरा, गंगाराम निर्वाण, हरिश्चंद ठगेला, चौ. पन्नालाल बड़सीवाल, प्रभुदयाल राजौरा, रमादेव भीलवारा आदि ने भी स्वतंत्रता सेनानी की लब्ध प्रतिष्ठा प्राप्त किया एवं योद्धा की भूमिका निभाई और खटिक समाज का नाम सम्मानित किया था।

**पंजाब** के अमृतसर स्थित जलियाँवाला बाग में 13 अप्रैल, 1919 को अंग्रेजों की गोलियों से मारे गए 207 लोगों में ढाब खटिकान के खटिक सेनानी भी थे। जिनके नाम थे—अमरनाथ भल्ला (भलियारा), रामकिशन खन्ना (खची), योगेंद्रनाथ कक्कड़ (किरार), गौरीशंकर बग्गा (बागड़ी), जलियाँवाला बाग का क्षेत्र किसी समय भाई हिम्मत सिंह जल्ला बालिया की संपत्ति था। वह नाभा के राजा बलवंतसिंह का दरबारी और रणजीत सिंह का वकील रह चुका था। जल्ला उसका गोत्र था। वह बाग 12 बीघा क्षेत्रफल का था। मकानों के पिछवाड़े बाग पड़ता है। बाग में जाने के लिए तीन-चार दरवाजे थे। एक दरवाजे से दो-तीन आदमी एक साथ नहीं जा सकते थे। इसी स्थान पर जनरल रैजीनाल्ड एडवर्ड हैरी डायर ने अमानवीय एवं बर्बरतापूर्ण ढंग से नरसंहार किया था।[1]

1. विद्रोही, एम.आर. : दलित दस्तावेज (सम्यक प्रकाशन, चौक, नई दिल्ली-63, 2004, पृष्ठ-275

**बंगाल** स्थित कलकत्ता नगरी में देवीदीन खटिक बहुत धनाढ्य व्यक्ति थे। उनके पास उस समय तीन मंजिला हवेली थी। दो बेटे भी थे। वहाँ अच्छा व्यापार था। उनका पैतृक घर बस्ती खटिकान, मंदिर बाँकेबिहारी के पास, नया कोट, लाहौर में था। गांधीजी ने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आंदोलन चलाया। उसी में भाग लेने के दिनों में ये परिवारसहित मारे गए।

**मध्य प्रदेश** (छिंदवाड़ा) के विधायक जुन्नरदेव श्री वारिक राव माहोरे भी खटिक थे और भोपाल के छगनलाल असवाल भी एक स्वतंत्रता सेनानी थे। मध्य प्रदेश खटिक समाज में इनका बहुत सम्मान था।

**महाराष्ट्र** में 1872 ई. की दूसरी महत्त्वपूर्ण घटना मिस्टर रैड एवं लेफ्टिनेंट एयट को गोलियों से उड़ा दिया जाना था। यह घटना खटिक जाति के नाम लिखी गई 22 जून, 1897 को विक्टोरिया के जन्म दिन के अवसर पर बंबई में उसकी मूर्ति पर कालिख पोतने का कार्य एम. गोविंद खटिक ने किया था। इसी जाति के श्री यशवंत राव कृष्णाजी क्षीरसागर ने सन् 1938, 1940 1942 के आंदोलनों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। दलितों को अलग न होने देने के लिए जिन दिनों गांधी का आमरण अनशन चल रहा था, उनकी स्पष्ट निंदा करनेवाले खटिक नेता सप्रू सोलंकी थे, जिन्होंने 19 सितंबर, 1932 को गांधीजी को दलित विरोधी कहा था।[1] महाराष्ट्र के पूर्व मुख्यमंत्री वी. जी. खैर ने खटिक समाज के लिए बहुत काम किया था। उन्होंने खटिकों को खेरवाड़ी क्षेत्र में बसाया और अधिकार दिलाया।

**राजस्थान** के खटिक स्वतंत्रता सेनानियों में मंगल राम चौहान (कोटपुतली), बाबू ज्वाला प्रसाद सोलंकी (चिड़ावा) आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कौमी मुसाफिर प्रभातीजी भगवासिया कुल के खटिक थे। अंबेडकरजी के साथ काम भी किया था।

**लाहौर** के स्वतंत्रता सेनानी जगन्नाथ राजौरा का नाम खटिक समाज के लिए विशेष गर्व का है। उन्होंने लाला लाजपत राय पर बरस रही लाठियों को रोकने के लिए अपने को उनके ऊपर ढँक दिया था और सारी लाठियाँ उनको खाने नहीं दी थी। फिर भी सिर पर भारी चोट लग जाने के कारण 17 नवंबर, 1928 को उनका निधन हो गया था।

**हरियाणा** के अनेक खटिक सेनानियों में एक ऐसे भी स्वतंत्रता सेनानी थे जिनको लोग सम्मान के साथ 'पटौदी का नवाब' कहते थे। उनका असल नाम शंकरलाल छिलवाल पटौदी था।

इस प्रकार से अन्य राज्यों और जनपदों में भी खटिक जाति के अनेक लोग

---

1. विद्रोही, ए.आर. : दलित दस्तावेज, पृष्ठ-166

स्वतंत्रता सेनानी पाए जाते हैं, जिनकी पूरी सूची स्वयं में एक पुस्तक हो सकती है। अतएव यहाँ कुछ मुख्य-मुख्य पक्षों के साथ इसका उल्लेख किया गया है।

## 6.6 गांधी आंदोलन और खटिक समाज

गांधीजी 24 वर्ष की आयु में 1893 ई. में एक मुकदमे की पैरवी हेतु दक्षिण अफ्रीका गए थे। वहाँ काला-गोरा की रंग-भेद नीति के विरुद्ध उन्होंने जो आंदोलन चलाया उसका लाभ हिंदुस्थान के उन लोगों को मिला जो गन्ने की खेती करने के लिए अंग्रेजों के अनुबंध के साथ 1860 ई. में अपने प्रथम जत्थे के साथ गिरमिटिया मजदूर के रूप में दक्षिण अफ्रीका गए थे। जानेवाले हिंदू, भारतीय मुसलमान और पारसी जाति के लोग थे। उसके बाद वहाँ व्यापारी भी गए थे। इतिहासकारों ने जानेवाली हिंदू जातियों के नामोल्लेख कहीं भी नहीं किए हैं, यद्यपि उनकी सूची इंगलैंड अथवा दक्षिण अफ्रीका के आर्कामिन में अवश्य होंगी एवं जानेवाले सभी लोगों का हिंदुस्थान में निवास करने का पूरा पता आदि भी होगा। विदेशों में गए हुए समस्त हिंदुओं के विवरण उपलब्ध कराने का दायित्व उनका है जिन्होंने यहाँ कुल 190 वर्षों तक अपना शासन चलाया तथा हिंदू जातियों को अपने सुदूर उपनिवेश में विस्थापित किया और ऐसे लोगों की सूची को मानवता एवं सहानुभूति के लिए प्रकाशित भी नहीं किया। परिणाम यह है कि विदेशों में महत्त्वपूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित होने के बाद लोग हिंदुस्थान में अपना मूल निवास स्थान देखने आते हैं और बड़ी कठिनाई से जान पाते हैं अथवा बिना कुछ जानकारी संग्रह किए लौट जाते हैं। इतना जघन्य दुर्व्यवहार पक्षियों के साथ बहेलिया तक नहीं करता होगा, जैसा आपराधिक कार्य अंग्रेजों ने यहाँ के हिंदुओं को विभिन्न देशों में (जो उसके उपनिवेश थे) स्थायी रूप से भेजकर किया। इसी प्रकार का अत्याचार अंग्रेजों से पूर्व विदेशी आक्रांता मुसलिम शासकों, विदेशी तुर्क, मुसलिम एवं मुगल आक्रांताओं ने बगदाद की गलियों तथा ईरान की सड़कों पर हिंदू स्त्रियों, पुरुषों को गुलाम के रूप में नीलाम करके किया। यदि आज की परिस्थिति में ऐसा होता तो उन देशों एवं समुदायों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानव-हत्यारा घोषित किया जाता और उनसे विश्व की पूरी मानवता अपनी सभी प्रकार की दूरी बना लेती तो भी यह बहुत कम दंड होता।

महात्मा गांधी जनवरी 1915 ई. में भारत वापस आए। उस समय अमानवीय नियमों और कानूनों का जाल बिछाकर अंग्रेज शासक यहाँ के किसानों, मजदूरों और गरीब व्यापारियों को त्रस्त कर रखे थे और उनके विरोधों को आपराधिक श्रेणी का विद्रोह बताकर गोलियों से भूनकर लोगों की जान ले रहे थे। विवशता एवं उनके द्वारा किया गया आर्थिक उत्पीड़न भी इतना दूरगामी और गंभीर परिणाम रखता था कि आर्थिक शोषण के साथ लोगों का धार्मिक और सामाजिक उत्पीड़न स्वतः हो जाता था।

हिंदुस्थान आने के बाद गांधीजी ने चंपारण (बिहार) की नील उत्पादन संबंधी तिनकठिया-पद्धति (3/20 भू-भाग में नील उत्पादन की बाध्यता), खेड़ा की मालगुजारी पद्धति और अहमदाबाद की औद्योगिक मजदूरी पद्धति, तीनों के लिए सत्याग्रह किया और सफलता भी प्राप्त की। खटिक जाति के लोग गांधीजी के इन आंदोलनों के समय उनके साथ रहकर उनका सहयोग कर रहे थे।

अंग्रेजों ने हिंदुस्थान के स्वतंत्रता आंदोलन को जन्म लेने से पहले ही मार देने के लिए रौलेट एक्ट बिल पास किया और उसके द्वारा हिंदुस्थान के निवासियों के मौलिक अधिकारों पर प्रतिबंध लगाया गया। फरवरी 1919 में गांधीजी ने इसका विरोध किया। सत्याग्रह किया। जेल गए। लोगों ने इसका विरोध किया तो बड़ी संख्या में उनको भी जेल में ठूँसा गया। इसी तरह से गिरफ्तारी के विरोध में आयोजित सभा पर डायर ने जलियाँवाला बाग में निहत्थे लोगों पर नृशंसतापूर्वक गोली चलाई थी और उसमें भयंकर नर-संहार हुआ था। तथ्य को छिपाते हुए 270 लोगों की मृत्यु प्रदर्शित की गई है, धर्म-रक्षा और देश-रक्षा के लिए हिंदुओं के उस आत्म-बलिदान को साधारण मृत्यु का नाम देनेवाले डायर ने उसी क्षण अपने लिए भी मृत्यु-दंड को सुनिश्चित कर लिया था।

जलियाँवाला बाग में मारे जानेवाले खटिक लोगों पर संपूर्ण खटिक जाति के साथ पूरा देश आज भी गर्व करता है। गांधीजी ने इस हत्याकांड के विरोध में जनरल डायर को दंडित किए जाने तक किसी आमरण अनशन की घोषणा नहीं की थी, बस यहीं से खटिक जाति को गांधीजी नीति कुछ खटकने लगी थी।

चौरीचौरा कांड में जिन लोगों का मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न हुआ, उसको गांधीजी ने अंग्रेज शासकों की स्वाभाविक प्रतिक्रिया मान लेने का आग्रह किया और किसी को भी हिंसक प्रतिक्रिया न करने की अपील की। गुलामी काल में कम-से-कम विरोध प्रकट करने का तो अधिकार होना ही चाहिए। यदि 5 हजार लोग केवल विरोध भी प्रकट करते तो क्या थाना की पुलिस जलियाँवाला बाग का दृश्य दुहरा नहीं देती? फिर क्या गांधी इसके लिए कोई और अनशन करते? अतएव पुलिसकर्मियों को घेरकर थाना में जिंदा जला देने का जो साहस चमार, खटिक, पासी, अहीर तथा अन्य हिंदू जातियों ने किया उसके लिए गांधीजी को असहयोग आंदोलन स्थगित करने के कारण खटिक जाति के लोगों को गांधीजी की अहिंसा नीति खटकने लगी थीं। वे सोचने लगे कि गांधीजी केवल जान गँवाने की बात कहते हैं, जान की रक्षा के लिए कोई भी प्रयास करना उनकी दृष्टि में हिंसा है। इस जाति को यथास्थिति तथा व्यवहृत मान्य थे, गांधीजी को प्रत्येक स्थिति, पूर्वस्थिति मान्य थी।

गांधीजी ने अंग्रेजों के व्यापार-एकाधिकार को भी चुनौती नहीं दी। नमक-कर और नमक व्यापार पर अंग्रेजों के एकाधिकार ने पूर्वोत्तर भारत की जैविकी को ही

प्रभावित कर डाला। समाज में विकलांग बच्चे, सूखा रोग से ग्रस्त बच्चे, इतने कमजोर बच्चे कि जन्मते ही मर जाते, लोगों की लंबाई घट गई, शरीर दुबला-पतला और कमजोर हो गया, उनकी बुद्धि कमजोर हुई, औसत आयु-सीमा का स्तर गिरा, व्याधिग्रस्तता का प्रसार हुआ, इत्यादि समस्याएँ वहाँ की आनुवांशिकी हो गए। ऐसा इसलिए किया गया ताकि भविष्य में वे अंग्रेजी सरकार एवं उसके अधिकारियों से टकराने योग्य रह ही न जाएँ।

सैकड़ों वर्षों तक हिंदुस्थान के निवासियों का नमक के लिए उनकी जीवनशैली को तोड़ा गया। उनकी बनाई कस्टम रेखा पर किसी का ध्यान तक नहीं गया। एक व्यापारी की दुरभिनीति को सही ढंग से समझने का कार्य खटिक व्यापारी वृत्ति और प्रवृत्ति ने किया। इसी ने सर्वप्रथम कस्टम रेखा का उल्लंघन करके नमक कानून को तोड़ा।[1] यह कार्य गांधीजी ने सैकड़ों वर्षों के बाद किया। उनके द्वारा नमक कानून तोड़ने का आंदोलन सविनय अवज्ञा आंदोलन 1930-31 ई. के नाम चलाया गया था, जिसमें पूरे देश में और अनेक नेताओं के सहयोग से स्वयं नमक तैयार किया गया था। अंग्रेजों के नमक गोदाम लूट लिए गए थे और उनकी मशीनों को तोड़ा गया था। इसे जब एक आंदोलन के रूप में किया गया तो गांधीजी और अन्य नेताओं के साथ रहकर खटिक जाति के अनुभवी लोग भी आंदोलन करते रहे। जिस समय पूर्वोत्तर भारत के एक करोड़ लोग नमक के अभाव में दम तोड़ दिए थे उस समय अकेले खटिक जाति ने कस्टम रेखा का उल्लंघन किया और परिणामस्वरूप इस प्रचंड आंदोलन के कारण अंग्रेजों द्वारा अपराधी जाति घोषित की गई थी।

खटिक जाति के लोगों ने भी मिलकर दबाव बनाया तब गांधीजी द्वारा आमरण अनशन करके पूना समझौते की स्थिति पैदा की गई, अन्यथा दलितों को अपना अलग चुनाव एवं राजनीतिक स्वरूप प्राप्त हुआ होता। खटिक जाति के लोग उस समय देश रक्षार्थ यह समझौता हो जाने दिए अन्यथा सप्रू सोलंकी नामक खटिक ने तो एक सभा में कह ही दिया था कि गांधीजी की यह हठ दलित हित में नहीं है। लगता है कि वह दलितों का निर्माण करनेवाली प्रजातियों के पोषक हैं।[2]

खटिक जाति के इन प्रश्नों का उत्तर न तो गांधी ने दिया और न ही किसी अन्य ने पूना पैक्ट के बाद भी अस्पृश्यता का प्रश्न क्यों बना रहा और मंदिरों में अछूतों का प्रवेश क्यों रुका रहा, वाराणसी में करपात्री को नया विश्वनाथ मंदिर बनाने और छुआछूत को मानने पर कौन सा दंड दिया गया, मुसलिम लीग द्वारा अलग पाकिस्तान की माँग

1. दी ग्रेट हेज ऑफ इंडिया, पृष्ठ-118
2. विद्रोही, एम. आर. : दलित दस्तावेज, पृष्ठ-166

पर फैलाई गई। सांप्रदायिकता की मार-काट पर जिन्ना को क्यों नहीं दंडित किया गया, देश के विभाजन की जिद कैसे मान ली गई और उसे क्यों नहीं निर्ममतापूर्वक कुचला गया, इसमें हिंदू महासभा की अनदेखी क्यों की गई?

खटिक जाति का गांधीजी से यह भी निरुत्तर प्रश्न रहा कि जिस समय स्वतंत्रता आंदोलन चलाया जा रहा था और लोगों को अपराधी घोषित करके जेलों में राजनैतिक कैदी के रूप में न डालकर खुलेआम फाँसी और कालेपानी की सजाएँ दी जा रही थीं उस समय क्यों नहीं आमरण अनशन किया गया? क्रांतिकारियों को दी जानेवाली फाँसी की सजा के पूर्व यदि देश भर के लोग असहयोग आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन गांधीजी के निर्देशन पर चलाए होते तो निश्चित रूप से हजारों स्वतंत्रता के भक्तों की जान बच सकती थी।

अत: यह माना जा सकता है कि गांधी आंदोलन में राजनैतिक लाभ प्राप्त करके देश की रक्षा का प्रश्न सम्मुख आने से ही खटिक समाज गांधीजी के साथ था। हिंदू धर्म के दस तत्त्वों में सत्य और अहिंसा को अपनाने के कारण खटिक जाति के लोगों ने महात्मा गांधी को सम्मान दिया था। गांधीजी की हिंदू धर्म में पूरी आस्था थी, जो उनके 'रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम' में खटिक लोग भी आत्मानुभूति एवं सुख पाते थे और उनके साथ गाते भी थे। भगवान् श्री राम में गांधी की आस्था थी। मरते समय उनके मुख से हे राम···निकला था और राम नाम के साथ अंतिम साँस लिए थे। हिंदू अपनी अंतिम यात्रा (महाप्रयाण) के समय भी 'राम नाम सत्य है' कहता है। गांधीजी उसी राम को पूजते थे अतएव गांधी के आंदोलनों में खटिक जाति के लोग उनके धार्मिक नियोजन के कारण जमकर जुटे हुए पाए गए।

## 6.7 धर्म, संस्कृति एवं मातृभूमि पर खटिक जाति न्योछावर

मानव जीवन का अस्तित्व धर्म, संस्कृति एवं मातृभूमि के सुरक्षा-कवच से सदैव ढका होने के कारण ही शाश्वत है। धर्म और संस्कृतिविहीन मानव पशु ही तो है जिसकी कोई अपनी मातृभूमि नहीं, उसके जीवन का कोई आधार कहाँ है? यही कारण है कि हिंदू के लिए कि वह सर्वप्रथम धर्म और संस्कृति से अलग होने की सोच भी नहीं सकता और न ही अपनी मातृभूमि के लिए मर मिटने में विलंब करता है। इसका उदात्त उदाहरण खटिक जाति निरंतर प्रस्तुत करती रही है।

धर्म एक होता है। ऋषि दयानंद ने भी यही कहा है।[1] यह संघर्ष नहीं, अपितु व्यवसाय-समन्वय के कुछ नियमों का नाम है। इसे ही सनातन धर्म कहते हैं। ये नियम

---

1. आर्य, लाला ज्ञानचंद : वर्ण व्यवस्था का वैदिकरूप द्वि. सं., 2005, पृष्ठ-126

सभी के लिए भूत, वर्तमान और भविष्य काल में समान रूप से उपयोगी हैं।[1] धर्म के लक्षण बताए गए धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच अर्थात् अंतर्बाह्य शुद्धि, इंद्रिय निग्रह, धी: विद्या, सत्य तथा अक्रोध[2] इत्यादि तत्त्वों से पोषित सनातन धर्म अथवा हिंदू धर्म की महिमा का वर्णन करते हुए श्री सुरेश सोनीजी ने उचित ही लिखा है कि—

''सनातन धर्म के विराट वृक्ष पर अनेक धर्मग्रंथों के पुष्प प्रस्फुटित होते हैं, किंतु उस वृक्ष का मूल एक है और उस पर पकनेवाले प्रत्येक फल का अलौकिक आस्वाद एक। इस धर्म के महिमामय मंदिर में अनेक महात्माओं के चरितामृत का प्रसाद प्राप्य है, किंतु उस मंदिर का गर्भगृह एक है और उसमें प्रतिष्ठित परमाराध्य की परमोपलब्धि का प्रकृति परिचय एक है। इस धर्म की शाश्वत स्रोतस्विनी अनेक संप्रदायों एवं पंथों की शाखा-प्रशाखाओं में विभक्त होकर प्रवाहित होती आई है, किंतु उस स्रोतस्विनी का उद्‌गम स्थल और गंतव्य स्थान एक है। इस धर्म के अपरिसीम महासागर में अनेक तत्त्वमीमांसाओं की तरणिमा तरगांयित है, किंतु उस महासागर का जल प्रसार एक है और उसके उस पारवाला तीर्थ भी एक है। इस धर्म के हिमालय पर आरोहण करने के लिए अनेक साधना पद्धतियों के प्रशस्त पथ हैं—किंतु उस हिमाचल का मेरुदंड एक है और उसका अग्रभेदी हिमशिखर भी एक ही है। इस धर्म के इस अनंत अनैक्य में जिस आधारभूत ऐक्य का अनुशासन अविच्छिन्न मिलता है, वह है अध्यात्म-तत्त्व की अद्वितीय आराधना। इस धर्म में सदा ही अध्यात्म साक्षात्कार को अपनी प्रधान उपलब्धि तथा तत्त्व-मीमांसा, धर्मग्रंथ, संप्रदाय और उपासना पद्धति को गौण साधन माना है।''[3]

खटिक जाति उपरोक्त हिंदू सनातन धर्म की अनुयायी है। आदिकाल से आज तक यह जाति इसी धर्म में आबद्ध है। इसे किसी भी प्रकार की लालच अथवा भय ने धर्म परिवर्तन के लिए अब तक प्रभावित नहीं किया है, यह तथ्य खटिक जाति के सम्मान को उजागर करता है। धर्म एक है, इसे हृदयंगम कर लेने के कारण ही खटिक जाति ने अन्य पंथों की ओर दृष्टिपात भी नहीं किया। इस जाति के अनुसार इसलाम एवं ईसाई यानी ये दोनों ही विदेशी पंथ हिंदू धर्म के एक पथ हो सकते हैं, क्योंकि अनेक बातें इनमें हिंदू धर्म से ही अवगाहित है।

खटिक जाति का हिंदू धर्म के संदर्भ में इस प्रकार की मान्यता है कि जो व्यवस्था जीवन को सबल बनाए और जीवन-मूल्यों की व्याख्या जीवन के अनुकूल करे। बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकर ने इसका अनुमोदन करते हुए प्रोफेसर एलवुड के विचारों को इन शब्दों में प्रस्तुत करते हैं—'धर्म मूलतः एक मूल्यनिर्धारण प्रवृत्ति है, मनुष्य के

1. सोनी, सुरेश : हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्रोत, 2003, पृष्ठ-135
2. मनुस्मृति, 6/192
3. सोनी, सुरेश (पूर्वोद्धृत), पृष्ठ-40-141

विचारों से कहीं अधिक संकल्प तथा संवेगों को सार्वभौमिक बनाती है। इस प्रकार धर्म, संकल्प तथा संवेग के पक्ष को लेकर अपनी दुनिया के साथ, मनुष्यों के बीच समन्वय करता है। धर्म आशा को उत्साहित करता है और जीवन संघर्ष में असभ्य तथा सभ्य दोनों में विश्वास पैदा करता है।

उक्त अवस्था और व्यवस्था, दोनों ही ईसाई धर्म में नहीं पाई जाती है, इसलिए डॉ. अंबेडकर उसे स्वीकार नहीं करते।[1] रा.स्व. सं के सरकार्यवाह और सुरेश सोनी उन अंग्रेजों की निंदा करते हैं,[2] जो अपने ईसाई धर्म को विश्व पर थोपने के लिए घृणित उद्यमशील रहता है। डॉ. अंबेडकर इसलाम धर्म को भी बिना उसकी निंदा किए भारतीय मुसलमानों के लिए अहितकर मानते हैं।[3] यहाँ, वह इसलाम का अभिप्राय पाकिस्तान से व्यक्त करते हैं। इनके अनुसार इसलाम धर्म एक जिहाद रखता है और उसके बल पर निर्बल हिंदुओं का शोषण करता है, साथ ही एक निरर्थक जिद्द रखता है।[4] जिसके कारण वह आतंकवादी और उग्रवादी वैचारिकी का समर्थक बन जाता है।

खटिक समुदाय डॉ. अंबेडकर के इसलामिक एवं ईसाई संबंधी विचारधारा से सहमत हैं। वह स्वभाव से इसलाम एवं ईसाई पंथों द्वारा हिंदुओं के भारी उत्पीड़न के कारण इन दोनों ही पंथों की कट्टर शत्रु रही है। खटिक आज भी उन दोनों ही पंथों के माननेवालों के साथ स्वाभाविक अनिच्छा एवं दूरी रखते हैं और एकमात्र हिंदू धर्म में निष्ठा एवं श्रद्धा रखते हैं।

खटिक जाति के लिए हिंदू संस्कृति ही संपूर्ण जीवन-यात्रा है। इसके विपरीत वह किसी अन्य संस्कृति के बारे में सोचता भी नहीं। इसका एक कारण यह भी है कि इसमें विविधता के साथ ही एकता भी पाई जाती है। शुद्धता और पवित्रता एवं धार्मिकता और नैतिकता तो इसमें है ही, इसकी एक विशेषता यह भी है कि यह प्रकृतिपरक है और हिंदू जीवन-पद्धति पूर्णतः सत् (प्रकृति), ऋत (प्रकृति का नियम) और ब्रह्म (प्रकृति नियंता यानी ऊर्जा) का युग्म है, इसमें भेदभाव का कोई स्थान नहीं है। करुणा और मैत्री के भाव एकमात्र इसी में पाए जाते हैं। इसमें वर्ण-भेद की व्याख्या अनुचित है। अस्पृश्यता अथवा छुआछूत न प्राचीनकाल में था वर्तमान भेदभाव और छुआछूत प्रायोजित था और अभी भी कहीं उसकी दुर्गंध है तो वह प्रायोजित ही है। पूरा खटिक समाज इन समस्याओं को झेल चुका है इसलिए वर्तमान में इन समस्याओं के प्रति स्पष्ट दृष्टिकोण रखता है और शुद्धता एवं पवित्रता में विश्वास रखता है।

---

1. सोनी, सुरेश (पूर्वोद्धृत), पृष्ठ-66
2. सोनी, सुरेश : हमारी सांस्कृतिक विचारधरा के मुख्य स्रोत (मनोनत 4)
3. डॉ. कृष्णगोपाल (पूर्वोद्धृत) पृष्ठ-101
4. वही, पृष्ट-187, 5-सोनी, सुरेश : हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्रोत, पृष्ठ-139-140

हिंदू संस्कृति के संबंध में जो विचार एवं चिंतन खटिक समाज का है, उसका अनुमोदन श्री सुरेश सोनी ने भी किया है—'समाज जीवन में प्रचलित खानपान, रहन-सहन, विवाह, परंपरा आदि सब जगह भिन्न-भिन्न दिखाई देती है। भिन्न-भिन्न भौगोलिक, जलवायु एवं सामाजिक स्थितियों की भिन्नता के कारण ये विविध व्यवस्थाएँ विकसित हुई परंतु सभी व्यवस्थाओं का अंतिम लक्ष्य समाज की धारणा है। यह एकत्व का बिंदु माना गया।'

संस्कृति का तात्पर्य समाज विशेष की उस जीवन-पद्धति से है, जिसे लोक-व्यवहार में समाज के संचालन के लिए उसके सदस्यों द्वारा अवधारित किया जाता है। इस प्रकार संस्कृति मूलत: जीवन-पद्धति का समुच्चय है। यह (संस्कृति) हिंदू जीवन में निहित आचार-विचार, मर्यादित व्यवहार, प्रकृति का संरक्षण, दृश्य एवं अदृश्य सत्ता के प्रति सम्मान आदि सभी क्रियाएँ इसके सार्वभौमिक गुण को इंगित करती है।[1] खटिक जाति के जीवन दर्शन में इस प्रकार की हिंदू संस्कृति का स्वरूप झलकती हुई दृष्टिगोचर है।

धर्म और संस्कृति से अनुप्राणित मातृभूमि, यज्ञभूमि, इत्यादि से भूमि के महत्त्व को प्रतिष्ठित किया गया है। जिसे हम अपना देश अथवा स्वदेश कह कहते हैं, उसे अपनी मातृभूमि भी कह सकते हैं। मातृभूमि मूल निवास स्थान की ओर भी संकेत करती है और पैतृक स्थान की ओर भी। किसी समय यह मातृभूमि जन्मदात्री माता से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है और इसकी सीमा पर यदि कोई चढ़ आता है तब तो यह जीवन-मरण का प्रश्न बन जाता है। खटिक जाति के जीवन में ऐसे अनेक क्षण आए, जबकि उसे अपनी मातृभूमि के रक्षा हेतु प्राणोत्सर्ग करना पड़ा।

सिकंदर, तैमूर, गजनबी, गौरी, दिल्ली के सुल्तानों एवं बादशाहों तथा अंग्रेजों से अपने मातृभूमि की रक्षा हेतु लंबे काल तक भारतवासियों को लड़ना और मातृभूमि को इनकी गुलामी से छुड़ाने के लिए घोर संघर्ष करना पड़ा। भयंकर मार-काट हुई। मातृभूमि की बलि-वेदी पर बड़े-बड़े नरसंहार हुए। मुसलिम आक्रांताओं ने स्त्री एवं बच्चों तक को नहीं छोड़ा। युद्धबंदियों को पंक्ति में खड़ा करके तलवारों से उनकी गरदन काट दिया गया। असंख्य कठ, काठिक अपने मातृभूमि की रक्षा में प्राणोत्सर्ग कर चुके हैं। आज भी वे अपनी बलिदानी कहानी दुहराने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं।

मातृभूमि का अर्थ अपने देश अथवा राष्ट्र से होता है। प्रत्येक हिंदू अपने हिंदू धर्म और हिंदू सभ्यता एवं संस्कृति की ही तरह अपने हिंदू राष्ट्र अथवा हिंदू देश के लिए चिंतन करता है। हिंदू संस्कृति में मातृभूमि अथवा राष्ट्र के महत्त्व को प्रदर्शित करते हुए

---

1. घोषाल, यू.एन. : ए हिस्ट्री ऑफ हिंदू पब्लिक लाइफ, कलकत्ता, 1945, पृष्ठ-78-79 एवं राव, आर. : प्राचीन भारत में धर्म और राजनीति, 1995, साहित्य संगम, इलाहाबाद, पृष्ठ-60-69

विचारा गया कि परिवार के लिए अपना, गाँव के लिए परिवार का और देश के लिए सबका त्याग करके भी देश की रक्षा करनी चाहिए।[1]

राष्ट्र सर्वोपरि है अत: राष्ट्रीय संकट के समय सबको स्वयं संगठित होना चाहिए। प्राचीनकाल में हिंदू राजाओं ने यही भूल की थी। वे किसी भी राजा पर आई आपदा को उसका अपना संकट समझे और परिणाम यह हुआ कि विदेशी मुसलिम आक्रांता बारी-बारी से सबको अपने अधीन करते चले गए। अंत में देश दास हो गया। दास एवं दासत्व होने की दु:खद यातनाएँ सबको एक साथ सहनी पड़ीं। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि हमारी राष्ट्रीयता स्पष्ट और निर्विवाद होनी चाहिए। किसी भी प्रकार की शर्त अथवा प्राथमिकताओं से घिरी-बँधी राष्ट्रीयता नहीं होनी चाहिए। इसके अभाव की अभिव्यक्ति वह इन शब्दों में करते थे—'मैं जानता हूँ कि ऐसी कुछ बातें हैं, जो हमारी भारतीयता के प्रति एकनिष्ठा की प्राप्ति में बाधा बनती है।'[2]

हिंदू खटिक डॉ. अंबेडकर के उपरोक्त वैचारिक परिसीमा में आता है और जब भी देखा जाए, वह सदैव राष्ट्र के प्रति समर्पित पाया जाता है। वह देश का अभिप्राय भौगोलिक सीमा, राज्य का प्रशासनिक सीमा और राष्ट्र को सांस्कृतिक सीमा के रूप में भी विवेचित करता है।[3] राष्ट्र को जाति के रूप में नहीं लेना चाहिए, यद्यपि यह भूल होने लगी है। इसका परिणाम अच्छा नहीं मिल रहा है। लाला ज्ञानचंद आर्य ने अपनी निम्नलिखित पंक्तियों में इसे स्पष्ट किया है—

"अब, आधुनिक साहित्य लेखकों ने भी राष्ट्र शब्द के स्थान पर जाति शब्द का प्रयोग करके राष्ट्र और जाति शब्द को एक अर्थवाला बना दिया है। जिसके कारण भारतीय समाज में बहुत भ्रांति फैल गई है। अर्थात् जिसके कारण भारतीय और विदेशी लोग जहाँ ब्राह्मणादि चारों वर्णों को चार जाति कहने और लिखने लग गए हैं, वहाँ वर्तमान समय की कल्पित वंशीय जातपात को भी वर्ण और जाति के भेद के साथ सम्मिलित कर दिया गया है जिससे भारतीय समाज का रूप खंड-खंड में विभक्त हो गया है।"[4]

राष्ट्र के सापेक्ष जब मातृभूमि का स्वरूप प्रस्तुत होता है तो किसी भी देशभक्त देशवासी का सीना फूलने लगता है। शरीर में रोमांच होने लगता है। भुजाएँ फड़कने लगती हैं। ऐसी अनुभूति मन में उठती है कि कोई हमारी माँ को कुछ कह दिया है और हमें उसका कड़ा प्रतिरोध प्रस्तुत करना है। उसे दंडित करना है एवं प्रचंड रूप से

---

1. संस्कृत भाषा में एक श्रुति-त्येजक कुलस्यार्थ, ग्रामस्यार्थ कुलम् त्यजेत्'''?
2. डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार, पृष्ठ-91-92
3. लेखक की पुस्तक : दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-29
4. आर्य, लाला ज्ञानचंद : वर्ण-व्यवस्था का वैदिक रूप, (भूमिका, पृष्ठ-25)

प्रताड़ित करना है। उसके सिर को काटकर माँ के अपमान का बदला चुका लेना है। इसी भावना में खटिक जाति के लोग मध्ययुगीन आक्रांताओं के विरुद्ध उनको मिटा देने के अभिप्राय से उठते एवं लड़ते थे। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से यह प्रमाणित है कि खटिक जाति हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू राष्ट्र (मातृभूमि) के प्रति अपने आपको न्योछावर करने और आज भी न्योछावर होने को सतत तैयार हैं।

## 6.8 मातृभूमि के असली सपूत खटिक

मातृभूमि के दो बसन (आवरण, परिधान) हैं—मातृधर्म और मातृसंस्कृति। दोनों बसन अनावरित कर देने का आशय यही है कि मातृभूमि अपमानित हुई। कोई पुत्र कम-से-कम हिंदू संस्कृति में तो ऐसा नहीं है जो अपनी माँ को वस्त्रविहीन किया जाना पसंद करे। यह उसके लिए मर मिटनेवाली बात होगी।

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं ने सर्वप्रथम यही दुराचरण प्रदर्शित किया। वे मातृभूमि के सारे आभूषण लूट लिए। वीरांगनाओं को जौहर-व्रत करने को विवश किया। ललनाओं को लिप्साग्नि में भूनकर रख डाला। बालाएँ दास बनाकर कौड़ियों के मोल बेच दी गई। निहत्थे युद्धबंदियों को पंक्तिबद्ध खड़ा करके तलवारों की प्यास उनकी गरदनें काटकर बुझाई गईं। माँ की गोद से छीने हुए नन्हें शिशुओं को जमीन पर पटककर रौंद डाला। संपूर्ण देश के साथ खटिक जाति ने भी क्रूरता का नग्न तांडव बहुत ही समीप से देखा था। विदेशी अरबी मुसलिम आक्रांताओं के अत्याचार से खटिक जाति भी प्रभावित हुई थी, विदेशी मुसलिम शासक आक्रांता इस जाति से इतने आक्रोशित एवं चिढ़े हुए थे कि मार डालने के उपरांत भी पुनः-पुनः मारते थे, ताकि कहीं वे जीवित होकर उठ न सके। अवसर पाकर खटिक सैनिक जब मुगलों पर टूट पड़ते तो वे भी देश के समस्त शहीदों का बदला उसी समय ले लेने का प्रयास करते थे। शत्रु को बहुत क्रूरता से टुकड़े-टुकड़े में विभक्त कर डालते थे, जैसे उनको अपने मांस के दुकान पर भेजे गए पशुओं के विभिन्न अंगों एवं उपांगों को टुकड़े-टुकड़े विभक्त करते थे।

वह भी क्या समय था जब सिकंदर की विश्वविजय पर निकली सेना की उड़ती धूल को देखकर गाँव-के-गाँव और नगर-के-नगर खाली हो जाते थे। कोई लोहा लेने के लिए सामने ठहरने का साहस नहीं जुटा पाता था। यदाकदा जिन लोगों द्वारा सामना किया गया वे कुचल दिए जाते थे। पोरस जैसे कुछ लोगों ने साहस दिखलाया भी किंतु वे उस प्रचंड दावानल को बुझा नहीं सके बल्कि स्वयं बुझ गए। ऐसे में उस भयंकर तूफान और प्रचंड आँधी के सामने ललकार कर खड़े होना और उसके सैनिकों को मार-मार कर थका देना साधारण बात नहीं थी। यूनानी सैनिकों को खटिक योद्धाओं ने ऐसा थकाया था कि वे पुनः किसी युद्ध योग्य नहीं रह गए थे। थकी हुई असमर्थ सेना लेकर

सिकंदर भला कैसे आगे बढ़ सकता था। वह विश्वविजय का अधूरा सपना लिए वापस लौट गया। ऐसे अवसर पर सभी लोगों ने सर्वसम्मति से इस जाति के सैनिकों को मातृभूमि का असली सपूत कहकर सम्मानित किया था। यही प्रशंसा उस समय भी इस जाति के लोगों को मिली थी जब उन्होंने खूँखार काला पहाड़ व तैमूरलंग से लोहा लिया था और उसके सैनिकों को उसी तरह से थका डाला था कि वे आगे युद्ध कर सकने में असमर्थ थे। तैमूर स्वयं भी शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से बहुत थक गया था, अतएव वापस लौटने में अपना हित समझा।

मुहम्मद गजनबी और मुहम्मद गौरी तथा उसके बाद के सुल्तान और बादशाहों को निरंतर युद्ध एवं त्रस्त करनेवाली यही खटिक जाति थी। इसी जाति ने अनेक बार उन्हें मार भगाने तथा वर्षों तक हिंदुस्थान की सीमा पर रोके रखने का सदैव साहस भी किया था, इसलिए खटिक जाति को मातृभूमि का असली सपूत कहना कदापि अन्यायोचित नहीं होगा। अरब के विदेशी मुसलिम आक्रांताओं को तलवार के बल पर यहाँ ठहरने का जो अवसर मिला था उसका कारण हमारे देश के अनेक राजाओं के आपसी मतभेद ही प्रमुख थे। अमानवीय कानून के बल पर अंग्रेज भी दो सदियों तक भारतभूमि पर शासक रहे। उनके प्रत्येक अनैतिक कानूनों की अवज्ञा सर्वप्रथम खटिक जाति के ही लोगों ने ही की थी। उनकी कुछ अवज्ञाएँ गांधीजी के सविनय अवज्ञा और असहयोग आंदोलन आदि के लिए पृष्ठभूमि तक मानी गई।

राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में खटिक जाति के लोग गरम दल अथवा क्रांतिकारी दल के साथ थे, परंतु गांधीजी के भी साथ थे। दोनों में से किसी एक का आश्रय लेने की स्थिति आती तो वे क्रांतिकारियों का ही साथ देने की बात करते थे। स्वभाव से उग्र होने के कारण वे अंग्रेजों के प्रति उग्र और उत्तेजक काररवाही चाहते थे। जबकि गांधी सत्य और अहिंसा पर चल रहे थे। यही कारण था कि आजादी मिलने तक गांधीजी ने जितने भी आंदोलन चलाए उसमें खटिक जाति के लोग सभी आंदोलनों में बराबर भाग लिए थे, कुछ में सामान्य रूप से तो कुछ में सक्रिय रूप में भी। आक्रामक स्वभाव के कारण गांधीजी हर आंदोलनों में इनको पीछे रखते थे ताकि कोई हिंसक घटना उत्पन्न न होने पाए। अत: हम देखते हैं कि मातृभूमि की रक्षा में अपना सर्वस्व स्वाहा कर देने का अदम्य उत्साह खटिक जाति के लोग ही मुख्य रूप से रखते थे, इसलिए इनको मातृभूमि का असली सपूत कहा जाना पूर्णरूपेण सत्य होगा।

प्रस्तुत अध्याय के समस्त बिंदुओं पर दृष्टिपात किया जाए तो हम पाते हैं कि हिंदुस्थान के स्वतंत्रता आंदोलन में खटिक जाति की अग्रणी भूमिका रही। खटिक लोग हर स्तर पर अंग्रेजों द्वारा स्वहित में बनाए गए अनैतिक एवं अमानवीय कानूनों को तोड़ते और अपनी गिरफ्तारी देते रहते थे। अंग्रेजों के 190 वर्षीय शासनकाल में उनको सर्वाधिक

विरोध का सामना यदि करना पड़ा तो मुख्य रूप से खटिक जाति से ही करना पड़ा था। अंग्रेज शासकों ने अपने बनाए हुए असंवैधानिक कानून को वे बलपूर्वक अन्य सभी को मानने पर विवश कर दिया करते थे किंतु उन्हें खटिक जाति से भारी लोहा लेना होता था। नमककर और नमक व्यापार पर एकाधिकार के लिए अंग्रेजों ने इसी तरह की जाति एवं लोगों को ध्यान में रखकर और अत्यधिक धनराशि व्यय करके कस्टम रेखा (ग्रेट हेज) तैयार कराया था।[1] फिर भी खटिक जाति निरंतर कस्टम रेखा को पार करती और अंग्रेजों के नमक गोदामों को लूटकर गरीब हिंदुओं में बाँट दिया करती थी। रेखा पार करते समय अंग्रेजों के रक्षकों से इनकी मुठभेड़ हुआ करती थी और कुछ लोग शहीद भी हो जाते थे। दीन-दु:खी और गरीब हिंदुओं के लिए परोपकार के उद्देश्य से यह उनका बहुत बड़ा त्याग था।

खटिक जाति के लिए यह भी गौरव का विषय है कि इसी वंश-कुल में उत्पन्न मेरठ के तितोरिया उपजाति के बहादुरों ने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 की आधारशिला रखी थी और इसी के साथ हिंदुस्थान में कंपनी राज का अंत भी हो गया था। खटिक जाति से बार-बार लड़ने एवं तंग आकर ही अंग्रेजों ने आक्रोशित होकर खटिक जाति को 'अपराधी जाति' की सूची में डाल दिया था। कालांतर में अंग्रेजों स्वतंत्रता संग्राम के महान् नायकों एवं सेनानियों को 'अपराधी' संबोधन को स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत 'स्वतंत्रता सेनानी' की श्रेणी और सम्मान दिया गया। जिसके आधार पर यह कहना न्यायसंगत होगा कि खटिक जाति के लोग देश भर में स्वतंत्रता सेनानी मानने योग्य एवं संपूर्ण खटिक जाति को ही स्वतंत्रता सेनानी जाति घोषित करने की अनुशंसा है।

खटिक जाति ने राष्ट्रीय आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया और गांधीजी के चलाए गए आंदोलनों में भी स्वभावानुसार भाग लिया। हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और मातृभूमि के लिए उन्होंने अपने प्राण तक न्योछावर कर दिए। इस आधार पर यह प्रमाणित है कि मातृभूमि के असली सपूत खटिक हैं।

□

---

1. दी ग्रेट हेज ऑफ इंडिया, प्राक्कथन

अध्याय-7

# हिंदू संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की पहचान खटिक

हिंदू संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की अपनी अलग पहचान है। अपनी संस्कृति एवं राष्ट्रीयता के आधार पर हिंदुस्थान के स्त्री-पुरुष तथा उनकी जाति-प्रजातियाँ विश्वस्तर पर भी अलग से पहचान ली जाती हैं। उन्हें देखते ही यह समझा जा सकता है कि वे हिंदू हैं तथा हिंदुस्थान के हैं और उनकी संस्कृति हिंदू संस्कृति है तथा उनकी राष्ट्रीयता हिंदू राष्ट्रीयता है। हिंदू खटिक जाति की पहचान भी इसी प्रकार स्वाभाविक रूप से हो जाती है। अन्यान्य दलित जातियों में हिंदू खटिक की हिंदू संस्कृति एवं राष्ट्रीयता के प्रखर पोषक की पहचान है।

हिंदू खटिक जाति के लोग देखने में ही बाह्य स्वरूप एवं व्यवहार से मालूम हो जाते हैं कि वे हिंदू धर्म में आस्था रखनेवाले, हिंदू संस्कृति में पले हुए हिंदू राष्ट्रीयता (भारतीयता) से अनुप्राणित हैं। इनमें कहीं से भी मुसलिम, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि संस्कृतियों के कोई भी लक्षण देखने को नहीं मिलते हैं। इनसे बिना कुछ पूछे ही इनके प्रकृतिपरक जीवन-पद्धति को देखकर इनके पहचान का सत्यापन संभव है। इनकी प्रकृति से पता चल जाता है कि आदिकाल में ब्राह्मण-खट्टिक के रूप में ये ही यज्ञ-बलि के नियंता एवं मंत्रद्रष्टा थे। इनके उन्नत ललाट, चपल आँखें और अनवरत क्रिया-प्रतिक्रिया में फड़कती भुजाएँ यह इंगित करती है कि धर्म-रक्षा के साथ ही देश-रक्षा यानी क्षात्र धर्म की भी भूमिका इसी क्षत्रिय-खटिक को सौंपा गया था। इनकी श्रमशीलता, उद्यमिता और प्रखर वणिक्बुद्धि से यह भी पता चलता है कि हिंदुस्थान के आंतरिक एवं बाह्य व्यापार-प्रबंधन में कभी इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। खटिक जाति आज भी नगरों में व्यवसायी के रूप में ही चिह्नित है। इनकी वर्तमान परिस्थिति एवं भूमिका से

भी विदित होता है कि अरब के विदेशी इसलामिक आक्रांताओं एवं अंग्रेज शासकों के अनवरत दमन एवं दलन को झेलते रहने के कारण ही ये सामाजिक एवं आर्थिक रूप से बलहीन होकर दलित जातियों की श्रेणी में आ पहुँचे हैं।

प्रस्तुत अध्याय में उपरोक्त तथ्यों के सापेक्ष यह दरशाया गया है कि खटिक जाति हिंदुस्थान के प्रत्येक भाग में पाई जाती है। वर्तमान में भी हिंदू खटिक जाति हिंदू धर्म और संस्कृति के पुजारी हैं। यह जाति हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड एवं यही एकमात्र ऐसी जाति है जो नगरों में व्यवसायी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में कृषक के रूप में संबोधित है। इसकी पहचान हिंदू धर्मरक्षक के रूप में प्रमाणित है। आज के समय में विश्वव्यापी उग्रवाद की पर्याय इसलामिक ताकत को प्रत्युत्तर देने में यह जाति पूरी तरह से सक्षम है। राजनीतिक ढाँचे में भी यह जाति अति महत्त्वपूर्ण है। यह एक सांस्कृतिक राष्ट्रवादी मानसिकता की जाति कहलाती है। इसके संघर्षपूर्ण अतीत के आधार पर इसके उज्ज्वल भविष्य का सहज अनुमान होता है।

## 7.1 हिंदुस्थान के प्रत्येक भाग में खटिक जाति

वर्तमान समय में जनगणना प्रतिवेदन किसी जाति का नामोल्लेख किए बिना प्रकाशित होने लगे हैं, जिससे अनुमान लगाना कठिन है कि किस जाति की कितनी संख्या में देश के किन-किन भागों में पाई जाती हैं। संपूर्ण देश के विविध राज्यों को अलग करके देखा जाए तो आज के युग में रोजी-रोटी एवं परिवार पालन हेतु सभी जातियाँ देश के संपूर्ण भागों में सर्वत्र पाई जाती हैं। संप्रति खटिक जाति भी हिंदुस्थान के प्रत्येक भाग में प्राप्य हैं।

सुविधा के लिए यदि हिंदुस्थान का भौगोलिक वितरण उत्तर, दक्षिण, पूरब और पश्चिम नामक कुल चार खंडों में किया जाए तो खटिक जाति उत्तर में दिल्ली, हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश; दक्षिण में आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल तथा पश्चिम में राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र में अधिक संख्या में पाई जाती हैं। पूरब में जो खटिक पाए जाते हैं वे मूलतः उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा एवं अन्य प्रांतों के स्थायी एवं मूल निवासी हैं। पूरब के पश्चिम बंगाल एवं पूर्वोत्तर के अनेक राज्यों में वे रोजी रोजगार के हेतु जाकर बस गए हैं अथवा अस्थायी रूप से रहते हैं और समय-समय पर अपने मूल निवास स्थान को आते-जाते हैं। मध्य प्रदेश में यह जाति सभी दिशाओं से आकर बस गई है। मध्य प्रदेश में विशेष रूप से मध्य प्रदेश के पूर्व एवं उत्तर में उत्तर प्रदेश से, दक्षिण में उत्तर एवं पश्चिम भारत एवं महाराष्ट्र से, पश्चिम में राजस्थान से फैली हुई खटिक जाति की सैकड़ों उपजातियाँ स्थायी रूप से अब निवास कर रही हैं।

इस प्रकार हिंदुस्थान के प्रत्येक भू-भाग में निवास करनेवाले खटिक जाति के

लोग वर्तमान समय में अलग-अलग नाम, उपनामों एवं संबोधनों के कारण अपने को अन्य जाति एवं गोत्र का बताते हैं, यद्यपि उन स्थानों पर प्राचीनकाल से उनके निवास करने और मांस का व्यापार करने संबंधित प्रमाण के आधार पर लोगों द्वारा वे खटिक ही नाम से ही संबोधित किए जाते हैं। उन स्थानों के नए निवासी ही उनके परिवर्तित नाम, उपनाम एवं संबोधनों तथा नए प्रकार के व्यवसायों के आधार पर उनको खटिक जाति का न समझने की भूल कर बैठते हैं। जनगणना के समय होनेवाली भूलों से भी कई प्रदेशों में खटिक जाति की अवस्थिति शून्य मानने की भूल शासन और सरकार के स्तर से भी हुई हैं।

आरक्षण सूची के अनुसार देश के कुल 35 प्रांतों में से 12 प्रांत ऐसे हैं जहाँ इस जाति को सामान्य श्रेणी में रखकर सूची से बाहर रखा गया है। इन 12 प्रांतों में खटिक जाति न तो पिछड़ी जाति में है, न अनुसूचित जाति में है और न ही अनुसूचित जनजाति में है—(1) अंडमान निकोबार, (2) अरुणाचल प्रदेश, (3) गोवा, (4) दमनदीव, (5) दादरा नगर हवेली, (6) नागालैंड, (7) पांडिचेरी, (8) मणिपुर, (9) मिजोरम, (10) मेघालय, (11) लक्षद्वीप और (12) सिक्किम। इनमें केवल दादरा नगर हवेली में खटिक नहीं हैं, शेष सभी राज्यों में हैं। इन राज्यों में वे किराए तथा अपने स्वयं के आवासों में रहते हैं। कुछ राज्यों में खटिक जाति के लोग रोजी-रोटी कमाने हेतु जाकर स्थायी रूप से निवास भी करने लगे हैं। जिसके बारे में ऊपर लिखा जा चुका है कि अपने नाम, उपनाम, संबोधन तथा परिवर्तित व्यवसाय के कारण वे खटिक जाति के लोग अपनी मूल जाति लिखवाने से वंचित हो गए हैं। अपनी मूल जाति न लिखवाने से खटिक जाति भारी जनसंख्या में आरक्षण के लाभ से वंचित हैं और वे सामान्य वर्ग को प्रदत्त सुविधाएँ ही ले पाते हैं। उदाहरणार्थ—महाराष्ट्र के धनगर आज भी शासकीय दृष्टि से खटिक जाति से अलग हैं, जबकि वास्तविकता तो यह है कि धनगर खटिक समाज के अभिन्न हैं।

खटिक जाति को जिन 10 राज्यों में पिछड़ी जाति की श्रेणी प्रदान की गई है, वे राज्य ये हैं—(1) आंध्रप्रदेश, (2) असम, (3) उड़ीसा, (4) कर्नाटक, (5) केरल, (6) जम्मू-कश्मीर, (7) झारखंड, (8) तमिलनाडु, (9) त्रिपुरा और (10) बिहार।

देश के 35 राज्यों में कुल 14 राज्य ऐसे हैं जहाँ इस जाति को अनुसूचित जाति की श्रेणी दी गई है-(1) उत्तर प्रदेश, (2) उत्तरांचल, (3) गुजरात, (4) चंडीगढ़, (5) छत्तीसगढ़, (6) जम्मू-कश्मीर, (7) दिल्ली, (8) पंजाब, (9) पश्चिम बंगाल, (10) मध्य प्रदेश, (11) महाराष्ट्र, (12) राजस्थान, (13) हरियाणा और (14) हिमाचल प्रदेश।

जम्मू-कश्मीर राज्य में इस जाति को अनुसूचित जाति में रखने के साथ ही पिछड़ी जाति में भी रखा गया है, जबकि मध्य प्रदेश में चिकवा को अनुसूचित से बाहर रखा गया है। श्री राजनाथ सोनकर शास्त्री के अनुसार अंडमान निकोबार में इस जाति की

संख्या 18, अरुणाचल प्रदेश में 8376, गोवा में 3791, दमनदीव में 1249, नागालैंड में 654, पांडिचेरी में 3457, मणिपुर में 16824, मिजोरम में 248, मेघालय में 12208, लक्षद्वीप में 380 और सिक्किम में 266 हैं। दादरा नगर हवेली में एक भी खटिक नहीं रहते हैं।[1]

वर्तमान समय में इस जाति की परिस्थिति (स्टेटस) में प्राप्त अंतर विषाद का विषय है। इसके लिए राज्य और केंद्र सरकार के साथ ही खटिक समाज को भी चिंतन की आवश्यकता है। सभी राज्यों में[2] खटिक जाति के लोग अज्ञानता के कारण कुछ उपनामों को ही अपनी जाति, वंश, गोत्र मानते हैं और अपने को खटिक जाति से अलग मानते हैं। मांस और फल उनका मुख्य व्यवसाय है। कुछ लोग बागवानी और कृषि-कार्य से भी जुड़े हैं। संपन्न खटिक लोगों के अपने उद्योग-धंधे और अन्यान्य वस्तुओं के प्रतिष्ठान भी हैं। कहीं शिक्षा का प्रभाव है तो कहीं नहीं भी है। कहीं वे विकसित और विकासशील हैं तो कहीं पूर्णत: अविकसित हैं और रूढ़ियों-प्रथाओं के दुष्चक्र में फँसे हुए हैं। क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर के खटिक संघटन[3] तथा इस जाति के विद्वान् लेखक एवं साहित्यकार महानुभाव पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भी जाति की उन्नति का प्रयास कर रहे हैं। पूर्व सांसद श्री राजनाथ सोनकर शास्त्री ने खटिक जाति को पूरे देश में अनुसूचित जाति का दरजा दिलाने का जो प्रयास किया है उसका उल्लेख उनकी पुस्तक में द्रष्टव्य है।[4] वर्तमान में इसी प्रकार के प्रयासों की आवश्यकता है। प्रयास हो भी रहे हैं, जैसा कि दिल्ली खटिक समाज से प्रकाशित एक पत्रिका के इस अंश से स्पष्ट है—

भारत सरकार ने दिनांक 26-6-1956 से अनुसूचित जाति तथा अध्यादेश संशोधन के अनुसार मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब, बंगाल, मध्य भारत (तत्कालीन) राजस्थान, हिमाचल प्रदेश तथा दिल्ली से खटिक जाति को अनुसूचित जाति की सूची में सम्मिलित कर लिया था। इससे खटिक जाति को भी संविधान में दिए विशेष अधिकार प्राप्त हो गए, जिससे उन्नति करने हेतु मार्ग प्रशस्त हो गया।

अधिनियम में सिख धर्म को माननेवाले खटिक जाति को भी खटिक जाति तथा अनुसूचित जाति मानकर इनको भी वे सारी सुविधाएँ देने की व्यवस्था की गई। यद्यपि अनेक महानुभावों ने अपने आपको ठाकुर (क्षत्रिय) आदि मानते हुए महामहिम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद सहित सभी को खटिक समाज के बारे में लिखा मगर कौमी मुसाफिर

---

1. शास्त्री, राजनाथ सोनकर (पूर्वोद्धृत), पृष्ठ-353-354
2. वही, 183-308
3. वही, 309-328
4. वही, पृष्ठ-329-412

बाबा प्रभाती, श्री तुलसी सिंह तंवर, श्री रामचंद्र बसवाला, श्री भगवत स्वरूप नागर, डॉ. गंगा राम निर्वाण, श्री हरीचंद ठगेला आदि के प्रयासों से यह समाज अनुसूचित समाज का हिस्सा है। दिल्ली प्रदेश खटिक समाज के संस्थापक अध्यक्ष श्री नेतराम ठगेला ने ऑल इंडिया खटिक फेडरेशन का गठन किया। फेडरेशन पूरे भारतवर्ष में खटिकों को अनुसूचित जाति में लाने के लिए एक ड्राफ्ट विधेयक तैयार कर रही है। उस पर अनेक विशेषज्ञ काम कर रहे हैं। दिनांक 1 मई, 2005 को संसद् पर श्री ठगेला के नेतृत्व में अखिल भारतीय खटिक फेडरेशन ने धरना देकर प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह, यू.पी.ए. व कांग्रेस की अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी तथा केंद्रीय समाज कल्याण मंत्री श्रीमती मीरा कुमार को ज्ञापन दिया गया।[1]

यहाँ, यह एक विचारणीय प्रश्न है कि खटिक जाति के लोग देश के प्रत्येक भाग में तो अवश्य पाए जाते हैं, परंतु वह कौन सी अवस्था थी जिसके फलस्वरूप उनको वैभवशाली पश्चिमी क्षेत्र को छोड़कर देश के अन्य भागों में जाकर बसना पड़ा? यही प्रश्न उन सभी जातियों के लिए उठता है, जो पश्चिम भाग से देश के अन्य क्षेत्रों में तो गए परंतु अन्य क्षेत्रों की जातियाँ पश्चिम की ओर नहीं गईं। कारण स्पष्ट है कि उन दिनों जितने भी विदेशी आक्रमण हिंदुस्थान पर होते थे, पश्चिम दिशा से ही होते थे। विदेशी लुटेरों एवं आक्रांताओं के लिए पश्चिमी क्षेत्र से ही हिंदुस्तान में प्रवेश कर पाना संभव था। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सिकंदर ने पश्चिम क्षेत्र पर आक्रमण पहले किया। महमूद गजनबी और उसके पूर्व में सुबुक्तगीन आदि उसी पश्चिमी दिशा से ही यहाँ आए थे। मुहम्मद गौरी तथा उसके बाद मुसलिम आक्रांता तैमूरलंग आदि ने भी हिंदुस्थान पर आक्रमण की दृष्टि से पश्चिमी भागों को ही चुना था।

निश्चित है कि जब सारे आक्रामक एवं आतंकी पश्चिम से ही हिंदुस्थान में प्रवेश किए तो सर्वप्रथम उनके लूटपाट और मार-काट का प्रभाव भी पश्चिमी प्रदेशों में निवास करनेवाले हिंदुओं पर ही पड़ा होगा। ये आक्रमण अनवरत होते रहे और वहाँ के निवासियों का लगातार उत्पीड़न होता रहा। इससे बचने के लिए ही अन्य जातियों की भाँति खटिक जाति के लोग भी पश्चिम से उत्तर, दक्षिण एवं पूरब आदि क्षेत्रों में जाकर बस गए। इसी कारण पश्चिमी क्षेत्र की अन्यान्य जातियाँ देश के अन्य भागों में बसी हुई पाई जाती हैं, परंतु दक्षिण-पूर्व की जातियाँ पश्चिम में नहीं पाई जाती हैं। वर्तमान समय में दक्षिण-पूरब की जो जातियाँ पश्चिम में दिखलाई देती हैं, वे अपनी रोजी-रोटी के लिए वहाँ गई हैं, इस सत्य को स्वीकार लेने में कोई आपत्ति नहीं पाई जाती है। उदाहरण-स्वरूप बस्ती खटिकान मंदिर बाँके बिहारी, नया कोट, लाहौर के निवासी श्री देवीदीनजी के पूर्वज

---

1. खटिक उत्थान, अंक मई, संपादक नेतराम ढगेला

इसलामिक उत्पीड़न से बचने के लिए पैतृक आवास को वहीं छोड़कर कलकत्ता चले आए थे। देवीदीन अपने समय के लखपति थे और कलकत्ता जैसे शहर में तीन मंजिला हवेली में रहते थे। गांधीजी के विदेशी वस्तु बहिष्कार आंदोलन के समय उनको तथा उनके दोनों युवा पुत्रों को अंग्रेजों ने गोली मारकर समाप्त कर दिया था। इस प्रकार विदेशी इसलामिक आक्रांताओं से बचने के लिए लाहौर से कलकत्ता आए तो वहाँ पर अंग्रेजों ने उनका वंश ही मिटा दिया।

## 7.2 हिंदू धर्म और संस्कृति की वाहक खटिक जाति

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं ने तलवार के बल पर हिंदू धर्म एवं संस्कृति को समाप्त करने का प्रयास किया और इसके लिए हिंदुओं की गरदनों को लगातार तलवार का निशाना बनाया गया। अंग्रेजों ने गोलियों से भूना और जब गोलियाँ कम पड़ गईं तो अपने विवेक का सहारा लिया। अन्य यूरोपीय देशों से जाने-माने विद्वान् को लंदन में बुलाया गया। उनको सारी सुख-सुविधाएँ उपलब्ध कराने के साथ ही प्रतिमाह एक मोटी रकम को वेतन के रूप में दिया गया और बदले में उनसे कार्य लिया गया हिंदू धर्म और संस्कृति के संबंध में ऐसी मनगढ़ंत बातों को उनके द्वारा लिखा जाए ताकि हिंदू धर्म एवं संस्कृति अपने मौलिक स्वरूप को खो दें। यहाँ के लोगों की जीवन-पद्धति, उनके आचार-व्यवहार, रहन-सहन इत्यादि सभी को विरूपित करके प्रस्तुत करने का कार्य उन्हें सौंपा गया। धर्मग्रंथों का संपादन मैक्समूलर से लाया गया जो जर्मनी का था और समस्त भारतीय ग्रंथों का संपादन उसने लंदन में बैठकर किया। यूरोपीय लेखक जो हिंदुस्थान की धरती पर पाँव तक नहीं रखे वे भी भारत का इतिहास, भारत के धर्म-संस्कृति, भारतीय लोकजीवन सबकुछ वहीं लंदन में बैठे-बैठे देखे और लिखते गए। हिंदू धर्मग्रंथों का प्रकाशन एवं मुद्रण का कार्य अंग्रेजों द्वारा सन् 1828 से सन् 1888 के मध्य हुआ। इस कार्य के पार्श्व में उनका मुख्य लक्ष्य हिंदू समाज को धर्म के नाम पर बाँटना था। इस बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रथम प्रकाशन एवं मुद्रण मनुस्मृति का था, जिसमें साठ प्रतिशत प्रक्षिप्तता यानी मिलावट किया गया।[1]

अनेक लेखक एवं विद्वान् उन्हीं भ्रामक और मिथ्या ग्रंथों को पढ़कर स्वयं भी उसी पद्धति के लेखन-कला का अनुकरण कर बैठे। यहाँ की प्रत्येक धार्मिक एवं सांस्कृतिक जातियों का इतिहास इतना घृणित रूप से प्रस्तुत किया जिसका अध्ययन करके उसका खंडन प्रकाशित होना चाहिए। कम्युनिस्ट और जनवादी लेखक तो उन्हीं मिथ्या ग्रंथों का संदर्भ देकर हिंदू समाज में जातिवाद का विष घोल रहे हैं, अर्थात् जो काम अंग्रेज करते

---

1. मनुस्मृति का प्रथम संपादन एवं प्रकाशन, 1828

थे वही वे भी कर रहे हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में हिंदू खटिक जाति का मौलिक और यथार्थ इतिहास लिखे जाने की आवश्यकता है। हिंदू खटिक जाति के बारे में अंग्रेजों तथा अन्य लेखकों ने जो अन्य तर्क प्रस्तुत किए हैं कि खटिक जाति एक अपराधी जाति रही, पूर्णतः त्रुटिपूर्ण है। वस्तुतः हिंदू खटिक आदिकाल से ही हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति के वाहक एवं रक्षक रहे हैं। यह अनेक उद्धरणों से प्रमाणित है।

हिंदू धर्म ही सनातन धर्म है। वह सनातन काल से हैं। यह वेदकालीन ऋषियों एवं मुनियों के ज्ञान-विज्ञान के शोधपरक प्रयोगों और परीक्षणों द्वारा सत्यापित आध्यात्मिक चिंतन तथा व्यवहारपरक भौतिक अनुशीलन का प्रतिरूप है। खटिक जाति उसी सनातन हिंदू धर्म की वाहक है। हिंदू धर्म में धृति, क्षमा आदि जिन दस तत्त्वों को मानव जीवन में व्यवहृत होने के लिए प्रतिष्ठित किया गया है, खटिक जाति उन्हीं तत्त्वों को पूर्णतः आत्मसात् किए हिंदू धर्म के प्रति निष्ठावान है।

हिंदू धर्म में सत्, ऋत्, ब्रह्म के सापेक्ष जिस प्रकृतिपरक जीवन-पद्धति को विकसित किया गया है, उसके प्रति खटिक जाति तन, मन, धन से अर्पित है। इसका अवलोकन खटिक जाति में पाए जानेवाले मर्यादित आचरणों, सत्यनिष्ठ व्यवहारों और स्वदेश एवं स्वधर्म के प्रति इनके त्यागपूर्ण बलिदानों में कर सकते हैं। खटिक जाति ने मांस-व्यापार में रहते हुए भी हिंदू धर्म के प्रति जिस प्रकार की क्रियाशीलता दिखलाई है, उससे स्पष्टतः यह स्वीकार किया जाता है कि यह जाति वास्तव में हिंदू धर्म की पूर्ण वाहक है।

हिंदू धर्म का चिंतन एक तरफ विश्वकल्याण के हित में है जिसे हम 'वसुधैव कुटुंबकम्, सर्वे भवंतु सुखिन सर्वे संतु निरामया: और विश्वबंधुत्व' भाव जैसे महान् आदर्शों के रूप में सतत प्रवहमान पाते हैं तो दूसरी ओर यह राष्ट्र-प्रेम, राष्ट्र-रक्षा, राष्ट्र-धर्म, राष्ट्रीय संस्कृति और राष्ट्रीय संपदा के लिए समर्पण का आह्वान भी है। खटिक जाति आदिकाल से हिंदू धर्म के इस आह्वान को धर्माभिमान मानते हुए उसके पालन में संलग्न है, भले ही इसके लिए उसे पश्चिम भारत से देश के अन्यान्य क्षेत्रों में फैलना पड़ा, दर-ब-दर होना पड़ा और उच्च सामजिक परिस्थिति के उपरांत अवनयन के बाद दलित परिस्थिति को स्वीकार करना पड़ा। हिंदू धर्माभिमान के कारण खटिक जाति को भला कौन कह सकता है कि वह हिंदू धर्म का प्रखर वाहक नहीं है?

हिंदू धर्म में स्वधर्म के अनुपालन का सिद्धांत समाज की सुव्यवस्था को ध्यान में रखकर प्रतिपादित है। इसके पीछे कोई षड्यंत्र नहीं है। यह चिंतन अति उत्तम है कि सभी लोग अपने धर्म-कर्म में लगे रहें, ताकि सामाजिक समरसता बनी रहे। खटिक जाति के विषय में आज तक कोई प्रमाण नहीं मिलता कि उसने हिंदू समाज की समरसता को समाप्त करने के लिए कोई कार्य किया हो। खटिक जाति ने समरसता की सीमा का

उल्लंघन किया तो केवल उनके प्रति जो हिंदू समाज के शत्रु थे, जो हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति को नष्ट करने का प्रयत्न किए और जिन्होंने अपने तथाकथित इसलाम पंथ को बलपूर्वक थोपने के लिए हिंदू पुरुषों, स्त्रियों, बच्चों को तड़पा-तड़पा कर मारा था। हिंदू धर्म में ऐसे दुर्जनों से संबंध निषिद्ध है, समरसता की तो बात दूर है। खटिक जाति ने इस दिशा में प्रशंसनीय उदाहरण प्रस्तुत किया। अतः उसे हिंदू धर्म का घोर अनुयायी मानना सर्वथा उचित है।

हिंदू धर्म में अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध अंतिम साँस तक लड़ने का सिद्धांत है। इसमें परोपकार के लिए अपने प्राण तक दे देने का संकल्प है। इस धर्म में गाय, स्त्रियों और अबोध बच्चों की प्राण-रक्षा का व्रत है। इसमें चोरी, हत्या और व्यभिचार को अनाचार कहकर पाप बतलाया गया है। जिसमें प्राण-रक्षा का अभिप्राय धर्म-रक्षा और देश-रक्षा है। हिंदू धर्म किसी व्यक्ति विशेष की मनोव्यथा, वैयक्तिक व्यवस्था और मनोरंजन की कथा नहीं है जिसको ग्रहण करने के लिए तलवारों और बंदूकों के भय की आवश्यकता है। हिंदू धर्म प्राणरक्षक प्रकृति और ब्रह्म की अनुकंपा का मानव के लिए वरदानस्वरूप निःशुल्क उपहार है। खटिक जाति ने समय-समय पर अपनी जान देकर गाय, स्त्री और बच्चों की रक्षा की, धर्म और देश की रक्षा में प्राण न्योछावर किए, पाप-कर्मों से सदैव दूर रहे, तलवारों और बंदूकों की परवाह किए बिना नमक के अभाव में मर रहे करोड़ों हिंदुओं के प्राणों की रक्षा के लिए अंग्रेजों की कस्टम रेखा को पार किया और उनके द्वारा सामूहिक रूप से स्वतंत्रता संग्राम सेनानी होते हुए भी अपराधी घोषित हुए। खटिक जाति हिंदू धर्म रक्षा के लिए प्रतिबद्ध एक योद्धा जाति है।

खटिक जाति जिस प्रकार से हिंदू धर्म की प्रखर अनुयायी रही, उसी तरह वह हिंदू संस्कृति की भी अनुगामी रही। खटिक जाति ने हिंदू संस्कृति के उस स्वरूप को अंगीकार किया जिसका उद्भव हिंदुस्थान में हुआ था और जिसकी बेलि, पत्र, पुष्पों ने पूरे विश्व के लिए अपनी शीतल छाया का लाभ निःशुल्क, निष्पक्ष एवं भेदरहित दिया था। विश्व की अनेक संस्कृतियाँ आईं और इस सनातन हिंदू संस्कृति में समाहित होकर कृतार्थ हो गईं। नैसर्गिक सुखों के साथ हिंदू जीवन-पद्धति से स्वर्ग तक का लाभ प्राप्त किया जा सकता है। शक, पह्लव, कुषाण, हूण जो भी आए इस सहिष्णु-धर्मी हिंदू संस्कृति में पंच तत्त्वों की भाँति मिल गए। छुद्र नदियों जैसी वे बाह्य संस्कृतियाँ, महासागर जैसी हिंदू संस्कृति में मिलकर अदृश्य हो गईं। मिलिंद की यूनानी संस्कृति भगवान् बुद्ध के चरणों को धोने लगी। प्रकृति के नैसर्गिक सिद्धांतों पर आधारित हिंदू संस्कृति से मानव-सृजित दो संस्कृतियाँ (इसलामिक संस्कृति और ईसाई संस्कृति) ईर्ष्या एवं द्वेष रखने लगी। दोनों ने सर्वप्रथम हिंदू संस्कृति के वस्त्राभारणी

को छीनने का प्रयास किया और बाद में हिंदू संस्कृति के पुजारियों पर भी प्रहार किया। खटिक जाति ने इन दोनों संस्कृतियों से सदियों तक लोहा लिया, तलवार से तलवार को लड़ाया और बाबर की तलवार से प्रचंड टक्कर एवं तुर्कों की संस्कृति को मिटाया। अवसर आते ही विलासी मुगलों के उत्तराधिकारी अंग्रेजों के एक पाँव सन् 1857 में तोड़ दिए और प्रचंड जय-जयकार हुई मेरठ के तितोरिया खटिकों की जिसने हिंदू सैनिकों को गोमाता की सौगंध दिलाकर अंग्रेजों के कंपनी राज की चूल हिला दी। हिंदू संस्कृति की पूजा में अपना सबकुछ अर्पित करनेवाली खटिक जाति के संदर्भ में इतना स्पष्ट कहा जा सकता है कि यह जाति प्राणार्पण से हिंदू धर्म की सेवा में अनवरत थी।

हिंदू संस्कृति जिस प्रकार से कालातीत और सर्वदा कल्याणकारी है,[1] उसी प्रकार से खटिक जाति भी सदा सनातन और लोकसेवक, देशसेवक और धर्मसेवक रही है। जहाँ हिंदू संस्कृति का आधार प्रकृति है,[2] वहीं खटिक जाति प्रकृति (स्वभाव) से ही प्रकृति की उपासक रही है। यह जाति हिंदू संस्कृति के आहार, आवास, आवरण (परिधान), आमोद-प्रमोद, अलंकरण, आचरण इत्यादि से पूर्णतः हिंदुस्थानी होने का दृश्य उपस्थित एवं प्रामाणिक करती है।

हिंदू संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता हिंदूधर्मिता है। इस संस्कृति में हिंदू धर्म की समस्त परिभाषाओं, व्याख्याओं, तत्त्वों और तत्त्व मीमांसाओं, अध्यात्मपरक सिद्धांतों और प्रकृतिपरक जीवन-पद्धति के नियमों का सुंदर और सुखद समावेश है। खटिक जाति ने ऐसे अद्‌भुत और अद्वितीय हिंदू धर्म के प्रति प्रत्येक काल में (आतंकवादी और उग्रवादी काल में भी) जो श्रद्धा और भक्ति अर्पित किया वह हिंदू संस्कृति की भी अविरल आराधना माना जाएगा। हिंदू संस्कृति की रक्षा और सुरक्षा का भी खटिक जाति ने जो सफल प्रयास कर दिखाया, वह स्तुत्य है।

हिंदू संस्कृति वास्तव में हिंदू खटिक जाति अथवा अन्य किसी भी हिंदू जाति के लिए इसलिए पूजनीय है कि इसका जन्म प्राचीनतम है—उतना ही प्राचीनतम यह देश हिंदू राष्ट्र भी है। मानव जाति के इतिहास ने जब आँखें खोलीं तो उसने भारत को एक सुसंस्कृत, सबल, समृद्ध राष्ट्र के रूप में देखा। मानव प्रजाति ने बीते समय में शांति, समन्वय, सौहार्द और एकात्मता का संदेश यहीं से प्राप्त किया।[3] यहीं का होना सौभाग्य की बात है, गर्व की भी बात है। अतएव हिंदू संस्कृति की पूजा हिंदू खटिक जाति अपने

1. उपाध्याय, आचार्य बलदेव : वैदिक साहित्य और संस्कृति, पृष्ठ-426
2. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री : हिंदू वैचारिकी एक अनुमोदन, पृष्ठ-19
3. सोनी, सुरेश : हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्रोत (मनोगत, पृष्ठ-4)

लिए सौभाग्य और गर्व की बात मानती है।

हिंदू खटिक जाति उस हिंदू संस्कृति की आराधक है जिसमें हिंदू राष्ट्र की अखंडता की झलक मिलती हो और हिंदुस्थान के समस्त हिंदू 'भारत माता की जय' बोल रहे हों। यह वैचारिकी डॉ. भीमराव अंबेडकरजी के अखंड भारत के उद्घोष से पूरी तरह संबंधित देखी जाती है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह सरकार्यवाह डॉ. कृष्णगोपाल ने[1] बाबा साहब द्वारा साइमन कमीशन को प्रेषित प्रत्युत्तर दिनांक 17-5-1929 द्वारा पूजनीय हिंदू राष्ट्र और हिंदू संस्कृति के प्रति अर्पित उनकी भी पूजा को इन पंक्तियों में प्रस्तुत किया है—

'मैं कर्नाटक को बंबई से अलग करने के विरुद्ध हूँ, क्योंकि एक भाषा, एक प्रांत का सिद्धांत अमल में लाने के योग्य नहीं है।...आज की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि लोगों में संयुक्त राष्ट्रीयता का आभास उत्पन्न किया जाए।

उनमें यह भावना नहीं है कि वे सर्वप्रथम भारतीय और बाद में हिंदू, मुसलमान, सिंधी और कर्नाटकी हैं, बल्कि यह भावना कि वे प्रथमत: और अंतत: भारतीय हैं, उत्पन्न की जाए। यदि यह आदर्श हो तो फिर ऐसी कोई बात नहीं करनी चाहिए जिससे क्षेत्रीयतावाद और पृथक्-पृथक् समूह चेतनाओं का उदय हो।'[2]

डॉ. अंबेडकर का एकात्मता-संबंधी उक्त विचार हिंदू धर्मग्रंथों[3] में वर्णित 'एक वर्ण-ब्राह्मण वर्ण से ही रूप अन्य वर्ण' के चिंतन का अनुमोदन है[4] जिसे हम हिंदू संस्कृति भी कह सकते हैं। खटिक जाति आज भी केवल एक (हिंदू) ही को स्वीकार करती है, और इस एक को आत्मसात् करके अपने को पूर्ण संतुष्ट रखती है। इसीलिए उसके द्विज-स्वरूप को वेदनिष्ठ माना जाता है जिसमें एक द्विज के लिए आवश्यक अर्हताओं का उल्लेख इन शब्दों में है—'द्विजन्मा होने के लिए नियमबद्धता, सत्यता, सुखमय, यज्ञ, शील और तेजस्वी वाणीवाला होना आवश्यक है।'[5]—ये वैदिक अपेक्षाएँ खटिक हिंदू भी पूरी करते हैं। अतएव उनको हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति के प्रबल वाहक की पहचान से चिह्नित किया जा सकता है।

---

1. डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार, पृष्ठ-82
2. अंबेडकर : लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-122
3. वृहदारण्यकोपनिषद (अ. 1, ब्रा. 4, 11-13), महाभारत (शांतिपर्व, अ. 42, श्लोक 10) तथा श्रीमद्भागवत (स्कंद-9, अ. 14, श्लोक-4
4. आर्य, लाला ज्ञानचंद : वर्ण-व्यवस्था का वैदिक रूप, (भूमिका, पृष्ठ-22-23)
5. ऋग्वेद, 6/50/2

## 7.3 भारतीय अर्थव्यवस्था की मेरुदंड हिंदू खटिक जाति

अर्थ की उपयोगिता संसार की समस्त संस्कृतियाँ स्वीकार करती हैं, क्योंकि यह जीवनयापन के लिए अपरिहार्य है। आचार्य कौटिल्य ने भी इसे प्रमुख वस्तु माना है—'अर्थमेव प्रधानः इति कौटिल्यः।' परंतु हिंदू संस्कृति में इसे धर्म के बाद अर्थात् द्वितीय स्तर दिया गया है। मानव पुरुषार्थ-चतुष्टयों का क्रम देखने से यह स्पष्ट परिलक्षित है—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। परंतु यह भी असत्य नहीं कि धन से ही धर्म-कर्म संपादित होते हैं—'धनात् धर्मः ततः सुखम्।' फिर भी हिंदू संस्कृति धर्मोचित धनोपार्जन की ही स्वीकृति देती है।

उचित धर्म-कर्म क्या हो सकते हैं, यह स्पष्ट है—'वे कर्म जो पाप की श्रेणी में न आए और जो धर्मसंगत हो, धर्म-कर्म है।' इसके लिए एक व्यवस्था का होना आवश्यक है, परंतु वह व्यवस्था भी धर्मात्माओं द्वारा बनाई अथवा निर्मित की गई होनी चाहिए किसी अर्थशास्त्री द्वारा नहीं। हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था, जिसके मेरुदंड हिंदू खटिक जाति के लोग भी माने जाते हैं, पूर्णतः हिंदू धर्म और हिंदू-कर्म के सह-संबंधों पर अवधारित हैं।

हिंदू अर्थव्यवस्था में धर्म और अर्थ सम्मिश्रित है, अलग-अलग नहीं। यह अर्थव्यवस्था हमारे ऋषियों एवं मुनियों द्वारा निर्मित होने से धर्मसम्मत एवं अटल है।

गैर-हिंदू संस्कृतियों यानी विदेशी संस्कृतियों में धर्म और अर्थ को अलग-अलग मान्य किया गया है। वहाँ यानी ईसाईयत एवं इसलाम में अर्थोपार्जन में केवल अर्थ-दृष्टि ही प्रधान होती है। अतएव अर्थव्यवस्था यानी अर्थ-प्रबंधन में 'अर्थ' मुख्य होता है। धर्म तो वहाँ होता ही नहीं।

हिंदुस्थान की समृद्धि को अर्थविहीन दरिद्र विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने धर्म के नाम पर, अर्थ-दृष्टि के सापेक्ष इसका तात्पर्य मात्र लूट से लिया था। हिंदू धार्मिक चिंतन के अनुसार लूट या चोरी का धन पाप का ही धन होता है। लूट की संपदा से कोई भी कार्य लुटेरों ने इसलाम पंथ के लिए नहीं किया बल्कि अपने सुखोपभोग पर ही सारा धन व्यय-अपव्यय कर डाला। विचारणीय प्रश्न है धर्म के नाम पर लूट का उपभोग सभी धर्मों में पाप है। हिंदुस्थान में अवस्थिति अधिकतम मसजिदों का निर्माण तो मंदिरों एवं मूर्तियों के ही ध्वंसावशेषों (मलवों) से उन्हीं मंदिरों की नींवों पर ही कराया गया।

अंग्रेजों ने यहाँ के भोगी-विलासी नवाबों को मद्यपान एवं चिलम (हुक्का) पिलाते-पिलाते तंबाकू व्यापार को इतना विस्तृत कर दिया कि एक दिन उनसे उनकी बादशाहत छीन ली और इंगलैंड की जीर्ण-शीर्ण एवं विपन्न हो चुकी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए हिंदुस्थान के हीरे-मोती सबकुछ उठा ले गए। मुगलों ने तलवार से

लूटा तो अंग्रेजों ने व्यापार से लूटा, मगर दोनों ने जी भरकर हिंदुस्थान को लूटा है। अतएव एक हिंदू तो यही कहेगा कि वे दोनों ही हमारी समृद्धि के लुटेरे थे और उनके लूटपाट से ही यह सोने की चिड़िया कहा जानेवाला महान् देश हिंदुस्थान आज तक निर्धन हुआ है। देश की भाँति देशवासी भी निर्धनता के शिकार हैं। अनेक ऐसी जातियाँ हैं जो सदियों से शासन और सत्ता से टकराने के कारण कंगाल है। हिंदू खटिक जाति उनमें से एक है।

हिंदू खटिक जाति प्रत्येक आर्थिक पक्षों के आधार पर हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड मानी गई हैं। इस जाति ने पशु-पालन में अग्रणी भूमिका निभाई और गाय को धार्मिक रूप से माँ के समान पाला। इसलाम और ईसाईयत से इनका सीधा संघर्ष मुख्य रूप से गोधन को ही लेकर है। खटिक जाति गोपालक थी, जबकि इसलाम एवं ईसाई गोघातक यानी गोमांस भक्षक थे। गोरक्षक खटिक जाति की पशु-संपदा उन विधर्मियों द्वारा बलपूर्वक मारकर खा डाली गई, जिसके कारण खटिक जाति जो कभी हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था की मेरुदंड थी, पशुविहीन और दुग्धविहीन हो गई।

खटिक समाज अपनी परंपरा कृषि के लिए विख्यात था। बिना किसी लागत व्यय के जो भी कृषि-उत्पाद वे प्राप्त करते थे, संपूर्ण रूप से वह शत-प्रतिशत लाभांश ही होती थी। मुगलों एवं अंग्रेजों ने इसी आधार पर उनसे एवं अन्य हिंदू जातियों से अधिकाधिक प्रतिशत कर वसूला एवं उनको कृषि-कार्य छोड़ने पर विवश किया। खटिक जाति के लोग आज बहुत कम संख्या में खेती करते हैं। क्योंकि वैश्विक बाजारवाद एवं भारतीय कृषि क्षेत्र में व्याप्त विदेशी निवेश के रूप में षड्यंत्रों द्वारा कृषि में लागत-व्यय 95 प्रतिशत और लाभांश मात्र 5 प्रतिशत रह गया है। जुताई, बुआई, निराई, सिंचाई, खाद, कटाई, दबाई, ओसाई, पिसाई—ये सब पहले निःशुल्क था, कृषक स्वयं इन कार्यों को करते थे। बीज घर पर बनाए जाते। हरी एवं कंपोस्ट खाद स्वयं निर्मित होती थी। हल-बैल जोताई करते एवं नहर-पुरवट से सिंचाई होती थी। अब, मशीनी-युग में सबकुछ एक या दो लोग ही कर लेते हैं। शेष लोग बेरोजगार रहते हैं। हिंदू खटिक जाति में कृषि-कार्य इसी हानि को ध्यान में रखकर लोगों द्वारा अब कम होता है।

खटिक जाति का कोई पैतृक उद्योग-धंधा नहीं रहा। इस जाति के लोग परंपरागत रूप से मांस का व्यवसाय करते हैं। मुख्य रूप से बकरा का मांस बेचते हैं। इनको बकरकसाव कहते हैं। जो लोग सुअर मांस बेचते हैं उनको सुअर खटिक भी कहते हैं। मुगलकाल से मुसलिम कसाई को इनका प्रतिद्वंद्वी बनाया गया जिसके फलस्वरूप इनका मांस-व्यापार प्रभावित हुआ। ऐसी स्थिति में खटिक समाज में बागवानी और फल व्यवसाय पर ध्यान दिया गया। इस व्यवसाय में लगनेवाले क्रमशः माली खटिक और

मेवाफरोश कहलाए। आज ये शाक-सब्जी, फल, मांस, व्यवसाय में संलग्न हैं। इनके व्यापार को प्रभावित करनेवाले मुगल और अंग्रेज नहीं हैं, किंतु स्वाभाविक शत्रु के रूप में मुसलमान आज भी मांस एवं फलों के व्यवसाय में इन्हें चुनौती दे रहे हैं। बच्चे से लेकर बूढ़े तक निरंतर कार्य-व्यवसाय में लगे रहकर यजुर्वेद के इस आदेश का पालन करते हैं—'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत्छतऽसमा:[1]।' (अर्थात् मनुष्य कार्य करता हुआ ही सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करें)।

अपने कार्य-व्यवसाय में ये कभी प्रमाद नहीं करते और ऋग्वेद के इस आश्वासन का अनुपालन करते हुए अधिकाधिक लाभ अर्जित करते हैं—'कर्मों के करने में शीघ्रता करनेवाले सुकर्म सेवी जन ही सदा सहायक महती बुद्धि और क्रिया द्वारा उत्तमोत्तम धन प्राप्त करते हैं।' यथा—

तरणिरित्सिषासति वाज पुरन्ध्या युजा।
आ व इंद्र पुरुहुत नमे गिरा नेमि तष्टेव सुद्रवम्॥[2]

फिर भी न तो खटिक जाति की आर्थिक स्थिति उन्नत हो रही है और न ही देश की अर्थव्यवस्था में विकास के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। लाला ज्ञानचंद आर्य इसके मुख्य कारण को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं—'आजकल संसार में आजीविका का प्रश्न बहुत जटिल और आवश्यक बना हुआ है। इस समस्या को सुलझाने के लिए भारत में भी उन्हीं विदेशी साधनों का उपयोग किया जा रहा है जिसकी उपयोगिता अब नहीं है।'[3] इसका एक उदाहरण कृषि के वैश्वीकरण के रूप में पूर्व वर्णित है कि सारा कार्य मशीनों से करने के कारण लागत-व्यय 95 प्रतिशत है और शुद्ध लाभ मात्र 5 प्रतिशत है। मशीनीकरण से बेरोजगारी अलग से बढ़ गई है और लोगों को आहार देना कठिन है।

डॉ. भीमराव अंबेडकरजी इसे भारतीय अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण का दुष्परिणाम और हिंदुस्थान द्वारा कम्यूनिस्टों एवं मार्क्सवादियों द्वारा इसे स्वीकार किया जाना बतलाते हैं। उनका कहना था कि समाजवादी व्यक्ति एक आर्थिक प्राणी बनकर रह जाता है, जबकि केवल आर्थिक संपन्नता से ही व्यक्ति समाज में अपना स्तर नहीं बना सकता। आर्थिक शक्ति ही एकमात्र शक्ति नहीं है।[4]

इससे स्पष्ट है कि हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए पुनः यहाँ

---

1. यजुर्वेद, 40/2
2. ऋग्वेद, 8/32/20
3. आर्य, लाला ज्ञानचंद : वर्ण व्यवस्था का वैदिक रूप, पृष्ठ-26
4. अंबेडकर : भारत सपूत, पृष्ठ-44 तथा संपूर्ण वाङ्मय, भाग 1, पृष्ठ-62-64 (उद्धृत डॉक्टर गोपालकृष्ण (पूर्वोद्धृत-पृष्ठ-260-261)

परंपरागत विधियाँ अपनानी होंगी अर्थ-वृत्ति को धर्म एवं नीतिशास्त्र से अनुशासित करना होगा और इन दोनों की निर्बाधता के लिए वैश्वीकरण की पश्चिमी-यूरोपीय हवाओं का रुख उनकी ही ओर मोड़ना होगा। हिंदुस्थान के निवासियों को एक बार पुनः कम्यूनिस्टों मार्क्सवादियों-समाजवादियों से डटकर लड़ना होगा और उन्हें बतलाना होगा कि यहाँ समाज का तात्पर्य लोकजीवन से है न कि मात्र मनुष्यों के समुदाय से है। हमारे लोक जीवन का प्रतिभाग मानव, प्रकृति, जीव-जंतु एवं वनस्पतियों के साथ सबकुछ है। हिंदुस्थान की भूखी एवं अभावग्रस्त जनता एवं बेरोजगार युवक अब यह समझने लगे हैं कि उनको कम्यूनिस्टों एवं तथाकथित जनवादियों ने ही भ्रमित करके नक्सलवादी, उग्रवादी, आतंकवादी, जनवादी, अतिवादी इत्यादि नाम देकर तथा अधार्मिक-अनाचारी (डाकू, लुटेरा, अपराधी आदि) संवेदनहीन बनाकर उन्हें अर्थोपार्जन में लगाया है और नित्यप्रति गोलियाँ खाकर मरने हेतु उकसाया है।

यह सत्य उजागर होने लगा है कि हिंदुस्थान में कम्युनिस्ट अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए इस समय नक्सलिस्ट, आतंकवादी, उग्रवादी पैदा करने में संलिप्त हैं। सैकड़ों वर्षों पूर्व अरब में यही कार्य पैगंबर (भगवान) के दूत (खलीफा) इसलामिक आक्रांता शासकों से कराते थे ताकि बगदाद में बैठे उनको मांस-रोटी, मद्य-महिलाएँ और सोना-चाँदी-हीरे-जवाहरात निःशुल्क मिलते रहें। ईसाई देशों ने भी उनका अनुकरण किया और अब वही कार्य अपनाने के लिए गरीब एवं भूखे हिंदुस्थानी लोगों को कम्यूनिस्ट मानसिकता के लोग कर रहे हैं। यह न तो लूट-पाट करने वालों के हित में है और न ही देश की अर्थव्यवस्था के हित में है।

यह सर्वविदित है कि हिंदू संस्कृति में दान और परोपकार तथा अतिथि सेवा की भावना ही देश की अर्थव्यवस्था का सुदृढ़ आधार रही और धर्म पर आधारित कार्यों से ही यह देश विदेशी आक्रांता लुटेरों की दृष्टि में सोने की चिड़िया लगने लगा था जबकि लोगों ने परिश्रम किया। परिश्रम से धन अर्जित किया और धर्म में निष्ठा रखी। दूसरों का छीना नहीं। इसीलिए सुख-शांति से जीवनयापन करते रहे। अनाधिकार चेष्टा, लूट-खसोट, रंगदारी वसूलनेवाले क्या घिनौने नहीं लगते? विदेशी इसलामिक आक्रांता और अंग्रेज लुटेरे क्या वर्तमान डकैतों, रंगदारों, नक्सलिस्टों को पसंद थे? यदि नहीं, तो किसी के बहकावे में आए बिना देश में धर्म को अपनाते हुए नियमित उद्योग करके दो जून की रोटी सुख-चैन से खाने में लगना ही उत्तम होगा और इससे देश की अर्थव्यवस्था सुधरेगी और ऐसे लोग भी हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था के मेरुदंड बन सकेंगे। खटिक जाति के लोग कभी भी लूट-पाट अथवा अर्थ अर्जन के अनाधिकार चेष्टा नहीं करते। चोरी-डकैती के दुर्गुण खटिक जाति संस्कारों में नहीं पाए जाते हैं। जी-जान से लगकर अर्थोपार्जन करते हैं। आर्थिक क्षेत्र में कृषि के साथ व्यवसाय में अत्यंत लगन एवं परिश्रम करने के कारण खटिक जाति

को हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड कहा जाता है। खटिक जाति ही एकमात्र ऐसी जाति है जो नगरों में मांस, फल एवं सब्जी व्यवसायी और ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं बागवानी में लगकर कृषक यानी किसान तथा खेतिहर मजदूर की भूमिका में है।

## 7.4 खटिक जाति की पहचान हिंदू धर्मरक्षक

खटिक जाति हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड ही नहीं है, बल्कि खटिक जाति एक हिंदू धर्म रक्षक यानी धर्माभिमानी, राष्ट्राभिमानी एवं योद्धा वर्ग की जाति भी है। वैदिक काल में खटिक जाति का कार्य यज्ञ एवं धार्मिक अनुष्ठान था। इसे संपूर्ण करनेवाले सभी लोग ब्राह्मण कहे जाते थे। उस काल में चूँकि वर्ण एवं जाति भेद कुछ नहीं था इसलिए धर्मोचित कार्यों में संलग्न लोग ब्राह्मण संबोधित हुए। यज्ञ-पशु की बलि देने का कार्य वैदिककालीन खट्टिक ब्राह्मण को सौंपा गया था।[1]

कालांतर में जब वैदिक समाज असुरक्षित हुआ। अवैदिक समुदाय ने वैदिक समाज पर आक्रमण करना प्रारंभ किया। तब वैदिक समाज की सुरक्षा के लिए तत्कालीन खट्टिक ब्राह्मण सात धर्म यानी रक्षक की भूमिका में तत्पर हुए। विदेशी आक्रांताओं ने जब देश पर आक्रमण किया, भारी मात्रा में लूटपाट किया, भयंकर नरसंहार किया, मंदिरों एवं मूर्तियों को तोड़कर नष्ट किया, स्त्रियों और बच्चों तक का अपहरण किया, हिंदू राज्यों को जलाकर राख कर डाला, तो वह एक ऐसी चुनौती थी जिसे कोई शक्तिशाली, बहादुर और साहसी समुदाय ही स्वीकार कर सकता था। अंततोगत्वा यह कार्य बलिकर्मी वैदिककालीन ब्राह्मण (खट्टिक) यानी क्षात्र धर्म पालक क्षत्रिय को सौंपा गया। शत्रुओं को दंड देने में वह कठोर था, इसलिए उसे कठ अथवा काठिक या कठोर भी कहा गया। वह भारत के आक्रांत क्षेत्र पश्चिम को अपना ठहराव बनाया। जहाँ अपना शिविर बनाया उसे काठियावाड़ कहा गया जो उसके जाति नाम का स्मरण दिलाता है। इसी रूप में उसने देश-रक्षा यानी भारत के भौगोलिक सीमा के रक्षा संबंधित क्षात्र धर्म का दायित्व सम्हाला था।

खटिक जाति के लिए प्राचीन हिंदुस्थान का पश्चिमी क्षेत्र सौंपने के बाद जब उसे धर्म-रक्षा का कार्य समाज द्वारा सुनिश्चित किया गया, उस समय भी वह हिंदू धर्म में रही। यही कारण है कि प्राचीन खटिक जाति ने अपने सैन्य बल का प्रयोग कभी किसी विदेशी राज्यों पर नहीं किया। बल्कि जो भी विदेशी आक्रांता आए, केवल उनसे ही लड़कर उनको भगाने और अपने देश को सुरक्षित रखने का प्रयास किया।

---

1. वैदिककाल में सभी ब्राह्मण थे। वृहदारण्यकोपनिषद् (आ.ब्रा. 4, 11-13) महाभारत (शांतिपर्व, अ.42, श्लोक 10), श्रीमद्भागवत (स्कंद 9, अ. 12, श्लोक-4) और आर्य, लाला ज्ञानचंद : वर्ण व्यवस्था का वैदिक रूप (भूमिका, पृष्ठ-22-23)

खटिक जाति के लोग ने सिकंदर को उसके राज्य में जाकर नहीं पछाड़ा था और न ही मुहम्मद गजनबी, गौरी और तैमूरलंग को उनके राज्य में जाकर युद्ध किया था। वे दुर्दांत आततायी तो स्वयं ही खटिकों की अपनी भारतभूमि को अपवित्र करने आए थे—निरंतर नए-नए सैनिकों, घोड़ों और विकसित शस्त्रों के साथ। परंपरागत साधारण शस्त्रों को अपनी बलिष्ठ भुजाओं में धारण करते हुए खटिक जाति के धर्मरक्षक योद्धाओं ने जो पराक्रम दिखलाया उसके परिणामस्वरूप सिकंदर को वापस अपने देश भागना पड़ा था। क्या तैमूरलंग इनके द्वारा लिए जानेवाले प्रतिशोध की कठोरता को भाँपकर नहीं भागा? अपने आवासों के चारों ओर इस जाति ने इसलाम के शत्रु-पशु सुअर को बाँधकर विदेशी मुसलिम आक्रांता एवं शासकों के पाँवों में जंजीर लगा दिया था और वे एक कदम भी उनके आवासों की ओर बढ़ाने का साहस नहीं कर सके थे।

हिंदू राष्ट्र के लिए समर्पित यह खटिक जाति क्षात्र धर्म यानी क्षत्रिय धर्म का निर्वाह करते हुए देशरक्षक एवं धर्मरक्षक बनी रही। प्राचीन काल में तो धर्म की रक्षा करना ही देश की रक्षा माना जाता था किंतु आज धर्म रक्षा को भारत में आदर्श नागरिकता का एक दोष जैसा मान लिया गया है। इसी तरह देश की रक्षा का अभिप्राय धर्म की रक्षा था। यह जाति दोनों ही दायित्वों के निर्वहन में सदैव तन-मन-धन से तत्पर रही, इसलिए विदेशी मुसलिम आक्रांताओं तथा शासकों ने विशेषकर इसी जाति का अधिक उत्पीड़न किया। हिंदू धर्म का त्याग करके इसलाम ग्रहण करने के लिए सर्वाधिक दवाब भी उन पर बनाया गया। इनका सामाजिक-आर्थिक उत्पीड़न तो इतना हुआ कि इनकी एक बड़ी संख्या दर-ब-दर होकर वनवासी हो गए। वनों में भी इनको चैन से नहीं रहने दिया गया। इनको उत्पीड़ित करने के लिए जंगल जला दिए जाते थे। देश-रक्षक के रूप में अपनी पहचान स्थापित करनेवाले खटिक जाति के लोग विदेशी इसलामिक आक्रांताओं की आँख की किरकिरी थे। इसी तरह अंग्रेजी शासन में हिंदू विरोधी अंग्रेजी नियमों एवं शासनादेश का उल्लंघन करने के कारण ये अंग्रेजों के भी दुश्मन बन गए थे। दोनों से लोहा लेने के कारण खटिक जाति को प्रत्येक शासनकाल में हर प्रकार की हानि उठानी पड़ी थी। आज वे इसीलिए दलित हैं कि उनका सभी प्रकार से दलन हुआ। स्वतंत्रता संग्राम में भी सबसे आगे रहनेवालों और क्रांति का प्रथम बिगुल बजानेवाले का सम्मान पाने के बाद भी आजाद हिंदुस्थान में एक ऐसी उपेक्षित जाति है जिसे हिंदू धर्मरक्षक और हिंदू देशरक्षक, दोनों का दायित्व निर्वहन करने का अवसर मिला था। अंग्रेजों ने जिन-जिन भारत के सपूतों को अपराधी घोषित किया था वे सभी स्वतंत्रता सेनानी कहे गए, परंतु अंग्रेजों ने जिस पूरी जाति को ही अपराधी घोषित कर दिया था, उसको आज तक स्वतंत्रता सेनानी का सम्मान नहीं दिया गया। देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवालों को पेंशन का लाभ मिला, परंतु खटिक जाति को आज तक संपूर्ण देश में

अनुसूचित जाति की सूची में भी सम्मिलित नहीं किया या सरकार की ओर से कोई लाभ नहीं दिया गया। खटिक जाति के प्रति यह भेदभावपूर्ण व्यवहार दुर्भाग्य का विषय है।

कहा जाता है कि धर्मरक्षक, देशरक्षक होने के बाद भी खटिक जाति जीव हत्या, मांस व्यापार और सुअर पालन से जुड़ी होने के कारण ही दलित और अस्पृश्य वर्ग की मानी गई, परंतु हिंदू धर्मग्रंथों में ऐसा कहीं नहीं लिखा मिलता है कि शिल्पी और कठिन काम करने से आर्यत्व घट जाता है।[1] वेद में राजा, आचार्य तथा मननशील व्यक्तियों को धन-संग्रह के लिए हल चलाने और कपड़ा बुनने आदि के काम करने की आज्ञा दी गई है। जो वस्तुतः शूद्रों के ही कार्य हैं, यथा—

'सी सेम तंत्रं मनसा मनीजिण उर्ण सूत्रेण कवयो वयन्ति।'[2] वेद के इसी आदेश का अनुपालन खटिक जाति आज भी कर रही है।

## 7.5 विश्वव्यापी उग्रवाद की पर्याय इसलामिक ताकत को खटिक जाति प्रत्योत्तर देने में सक्षम

धर्म के आलोक में उग्रवाद को इसलाम के जेहाद का पर्याय समझा जाता है। सांप्रदायिकता, आतंक, अलगाव, अतिक्रमण, अनाचार, दंगा-फसाद, लूटमार इत्यादि कितने ही पर्याय उग्रवाद के हैं। इसलाम में ये सभी व्यवहृत हैं, इसीलिए इसलाम के साथ उग्रवाद का नाम स्वाभाविक रूप से आ ही जाता है। ऋग्वेद में इसे दस्यु-स्वभाव कहा गया है—विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवः।[3]

विदेशी आक्रांता शासक इसलाम के अनुयायी थे। हिंदू आस्थाओं के प्रतीक देवालयों तक को इसलाम के अनुयायियों ने लूटा। इसलाम के अनुयायी दो प्रमुख विदेशी दस्युओं के नाम हिंदुस्थान में सर्वविदित हैं—महमूद गजनबी और मुहम्मद गौरी। इनकी संतानें (पराजित हिंदुस्थान के विदेशी शासक, सुल्तान और बादशाह) और भी अनेक खूँखार आतंकवादी थीं। उनके उग्र तेवर की तलवारें हिंदुओं के साथ-साथ धर्मांतरित भारतीय मुसलमानों पर भी गिरी थीं। कदाचित् विदेशी आक्रांता हिंदुओं से तो कुछ भय भी खाते थे, किंतु भारतीय मुसलमानों को पूर्णतः तुच्छ (दास) समझते थे। उच्च पद देना तो दूर, भूल से प्रदत्त उच्च पदों पर से उनकी वास्तविकता ज्ञात होने के कारण हटा तक देते थे। इल्तुतमिश ने 33 उच्चाधिकारियों को भारतीय मुसलमान होने के कारण पद से हटा दिया।[4] इमादुद्दीन रैहान ने अन्य भारतीय मुसलमानों के साथ अपनी उपेक्षा होने पर

1. आर्य, लाला ज्ञानचंद : वर्ण व्यवस्था का वैदिक रूप, पृष्ठ-102
2. यजुर्वेद, 19/80
3. ऋग्वेद, 1/5/8
4. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पृष्ठ-158

विद्रोह कर दिया था।[1]

इसलामिक उग्रवाद कितना घृणास्पद है, इसे रैहान सदृश भारतीय मुसलमान अच्छी तरह समझ सकते हैं कि उस समय उनको धर्म परिवर्तन के लिए अवश्य विवश किया गया था। किंतु इस समय अपने धर्म में पुनः वापसी पर कोई प्रतिबंध और प्रताड़ना की संभावना नहीं है। बल्कि जिस प्रकार से ईसाईयत का भय इसलाम के चारों ओर मँडरा रहा है, उससे मुक्ति का एकमात्र समाधान निरंतर जेहाद का आह्वान है। इससे उग्रवाद और हिंसा का लगातार लगनेवाला कलंक मिट नहीं सकता है।

यदि कोई देश उसके अधिकारों का हनन कर रहा हो तो इसलामिक ताकत अपने अधिकारों के लिए क्रांति का सहारा ले सकती है, परंतु वैर किसी और से एवं बदला सभी से, यह इसलामिक जेहाद के उग्रवाद का उद्देश्य गलत है। यूरोपीय शक्तियों से मुकाबला संभव नहीं तो इसकी झल्लाहट हिंदुस्थान पर क्यों? क्या हिंदू चाहे होते तो हिंदुस्थान का विभाजन रोक नहीं सकते थे? क्या अलग राज्य के लिए भारतीय मुसलमानों द्वारा प्रादुर्भूत सांप्रदायिकता उतनी भयावह थी जितनी सल्तनतकाल में थी? हिंदू जब सिकंदर, महमूद गजनबी, गौरी, चंगेज, तैमूर जैसे नरपिशाचों का सामना कर सकते थे तो मुट्ठी भर विदेशी आक्रांता जेहादियों से भी आसानी से निपट सकते थे। खटिक महासभा मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र ने सरदार बल्लभभाई पटेल से यही कहा था और उन्होंने भी पूरा आश्वासन दिया था, परंतु गांधीजी के उपवास-व्रत ने मुश्किलें पैदा कर दीं। आज पाकिस्तान का हर नागरिक यह सोचकर घबरा रहा है कि अफगानिस्तान, इराक के बाद यदि कभी उसकी भी बारी आई तो किस मुँह से और कैसे हिंदुस्थान से मदद माँगी जाएगी।

इसलाम का वर्चस्व पूरे विश्व में स्थापित करने के अभिप्राय से प्रायोजित उग्रवाद स्वयं इसलाम के लिए आत्मघाती सिद्ध होगा और विश्व के मानचित्र से उसका नामोनिशान मिट जाएगा—यह भविष्यवाणी नहीं अपितु प्रकृति का संदेश है। प्रकृति उन कोमों या संप्रदायों को कभी क्षमा नहीं करतीं, जो प्रकृति पर ही हमला करते रहे हैं। नीयत बदल सकती है तो नियति क्यों नहीं बदल सकती?

आज इसलामिक जेहादी उग्रवाद विश्वव्यापी बन चुका है। अरब में बने बमों का प्रयोग पूरे एशिया और यूरोप सहित सभी महाद्वीपों के लिए खतरा बन चुके हैं। इस पर अंकुश लगाने की प्रारंभिक काररवाही भी आरंभ हो चुकी है। अमेरिका जैसे देशों द्वारा उग्रवादियों को उनके घर में घुसकर मारा जा रहा है। हिंदुस्थान अभी भी शांति और अहिंसा पर अडिग है। परंतु यदि हिंदुस्थान को अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद का युद्ध क्षेत्र

1. श्रीवास्तव, प्रो. अशोक : दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन, पृष्ठ-158

बनाया गया तो इसका जवाब खटिक जाति के ही सिद्धांतों पर आधारित कट्टरता और शौर्य के माध्यम से पूर्व काल की तरह अभी दिया जा सकेगा। इतना ही नहीं, विदेशी आक्रांता एवं इसलाम विरोधी अन्य जातियाँ (जैसे—पासी, चमार, वाल्मीकि आदि) भी खटिक जाति के साथ अपने स्वाभाविक तालमेल एवं स्वभाव के कारण एकजुट होकर इसलामिक उग्रवाद को नेस्तनांबूद यानी जड़-मूल से समाप्त कर देगी।

खटिक एवं उसके स्वभाववाली जातियों के पौरुष एवं पराक्रम का अनुभव इसलाम एवं ईसाई, दोनों को है। आज भी इनसे संयुक्त भय बना हुआ है। यही कारण है कि खटिक समाज को तरह-तरह से उद्वासित करने और क्षति पहुँचाने का कार्य हो रहा है। स्वतंत्रता के बाद यह पहला अवसर है जब हिंदुस्थान की सत्ता ईसाई एवं इसलाम के अनुयायियों के हाथ में आई है। सत्ता पाते ही पुनः मुसलमानों एवं ईसाइयों को अनुसूचित जाति के आरक्षण का लाभ बाँटने की प्रक्रिया तेज कर दी गई है। यह माँग ब्रिटिश शासनकाल (1936) में अमान्य की गई। डॉ. अंबेडकर ने स्वयं इसका विरोध किया। माननीय उच्चतम न्यायालय ने भी इसे खारिज कर दिया।[1] फिर भी वोट की राजनीति के परिप्रेक्ष्य में 1970 ई. से कांग्रेस इसे बार-बार मनवाने का प्रयास करती रही है। इस समय उसकी यू.पी.ए. की सरकार है, अतएव वह इसे किसी भी मूल्य पर पूरा करना चाहती है। इसके जबरदस्त विरोध का बिगुल भी खटिक जाति ने भी संपूर्ण देश में बजाया है।[2]

'दलितों पर घात' नामक पुस्तक में यह स्पष्ट किया गया है कि धर्मांतरित ईसाइयों एवं मुसलमानों को अल्पसंख्यक के नाम पर संवैधानिक रूप से जितना लाभ दिया गया है, उसका आधा भाग भी वर्तमान अनुसूचित जाति के दलितों को नहीं दिया गया है। दलितों को संविधान की धारा 338 के अनुसार केवल एक राष्ट्रीय आयोग गठित करके उसके माध्यम से सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं उनके उत्पीड़न नियंत्रण के लिए भारत सरकार द्वारा व्यवस्थित किया गया है और तत्संबंधित निर्देश राज्य सरकारों को भी है। इसकी तुलना में दूसरी ओर अल्पसंख्यकों के लिए राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था आयोग अधिनियम, 2004, राष्ट्रीय धार्मिक तथा भाषायी अल्पसंख्यक आयोग के साथ संविधान की धारा 15 (4) के तहत शिक्षा में

---

1. पंजाब राव बनाम मेश्राम ए.आई.आर. 1965, रामलिंगम बनाम अब्राहम 1967 एस.सी.सी. 24 सूसाई बनाम भारत संघ, ए.आई.आर., 1987, पृष्ठ-733, पैरा 8 तथा 10 फरवरी 2005 को सेंटर फॉर पब्लिक इंटरेस्ट मेटिगेशन संस्था द्वारा दाखिल एवं खारिज याचिका।
2. शास्त्री, डॉ, विजय सोनकर : धर्मांतरित ईसाइयों एवं मुसलमानों को अनुसूचित जाति में शामिल करना 'दलितों पर घात' (प्रकाशक-अ, भा. सामाजिक समरसता अभियान, सेक्टर-6 आर.के. पुरम्, नई दिल्ली) यह पूरे हिंदुस्थान में वितरित की गई है।

आरक्षण, धारा 16 (4) के तहत रोजगार में आरक्षण, धारा 29 एवं 30 के तहत अल्पसंख्यक समुदाय को रोजगार एवं व्यवसाय में विशेष सुविधाएँ देने का प्रावधान है। इनको मंडल कमीशन की संस्तुति पर पिछड़े वर्ग का 27 प्रतिशत का आरक्षण भी प्राप्त है।

अनुसूचित जनजाति के साढ़े सात प्रतिशत आरक्षण लाभ को तो पूरी तरह से ईसाई हथिया चुके हैं ही और आदिवासियों के लाभ का 90 प्रतिशत से भी अधिक भाग इनके कब्जे में है। आरक्षण का लाभ कितने आदिवासी प्राप्त कर रहे हैं, यह स्वयं जंगलों की ओर दृष्टि डालकर देखा जा सकता है।

सन् 2004 से सत्ता में आई और कांग्रेस द्वारा संचालित यू.पी.ए. सरकार का एक और कारनामा इसलामिक उग्रवाद का पोषक प्रतीत होता है। संविधान की धारा 15 (40) के अनुसार केंद्रीय सरकार द्वारा सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों को सभी अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश दिए जाते थे, किंतु वर्तमान यू.पी.ए. सरकार ने दिनांक 10 मार्च, 2006 से कानून में संशोधन करके अल्पसंख्यक संस्थाओं में दलित एवं पिछड़े वर्ग के छात्रों के प्रवेश के संवैधानिक अधिकार को समाप्त कर दिया है।[1] दलित एवं पिछड़े वर्ग के लोगों को इस पर गंभीरता से विचार करना है कि न केवल विदेशी मुल्क की कांग्रेस अध्यक्षा श्रीमती सोनिया गांधी की दलित विरोधी भावना पर बल्कि दलित और पिछड़े वर्ग का संसद् में प्रतिनिधित्व कर रहे उन जन प्रतिनिधियों का जो या तो बिक गए हैं अथवा अपनी किसी कमजोरी के कारण आँख मूँदकर समर्थन कर रहे हैं। कुछ तथाकथित दलित नेता आज अपने हित के लिए दलितों का अस्तित्व बेच रहे हैं और कल इस देश को और देशवासियों को (विशेषकर दलितों को) भी बेच देंगे। खटिक जाति एवं उनके कुछ जन-प्रतिनिधियों ने इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया है और इसका मुँहतोड़ जवाब देने के लिए वह देश के समस्त पिछड़े एवं दलितों तथा जनजातियों से भी अपील की है कि सभी लोग स्वयं इसके विरोध में सड़कों पर आएँ।

हिंदुस्थान की सत्ता को सँभाल रही वर्तमान कांग्रेस द्वारा संचालित यू.पी.ए. सरकार पूर्ण बहुमत में है इसलिए दलित विरोधी कोई भी कार्य पूरा कर लेने की स्थिति में है। अन्य क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियाँ केंद्र सरकार द्वारा वित्तपोषित है, इसलिए दलितों के साथ होनेवाले इस अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने में वे भी सक्षम नहीं है। अतएव दलित एवं पिछड़े वर्ग की जनता को स्वयं आगे आना होगा और डॉ. भीमराव अंबेडकरजी के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए दृढ़ संकल्पित जनप्रतिनिधियों, चिंतकों, विद्वानों और

---

1. अंबेडकर-बाबा साहब संपूर्ण वाङ्मय, खंड-1, पृष्ठ-73 (द्रष्टव्य डॉ. गोपालकृष्ण : बाबा साहब व्यक्ति और विचार, पृष्ठ-66

लेखकों को दलितों का साथ देना होगा। दलित एकता ने हर अवसरों पर दलित विरोधियों को असफल किया है, इस बार भी वह असफल होंगे।

धर्मांतरित ईसाइयों एवं मुसलमानों को हिंदुस्थान में अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल करना यदि इसे आरक्षण का एक सामान्य प्रक्रिया माना जा रहा है तो यह एक धोखा है। यह एक अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र का हिस्सा है। हिंदुस्थान के हर नागरिक को इसे भलीभाँति समझ लेना चाहिए। आज विश्व के ऊपर आतंकवाद का काला घनघोर बादल मँडरा रहा है। यह प्रचंड आतंकवाद अंतरराष्ट्रीय ईसाई लॉबी और अंतरराष्ट्रीय मुसलिम लॉबी का आपसी द्वंद्व है। इस भयंकर द्वंद्व के लाभ-हानि का परीक्षण पूर्णरूपेण एवं पूर्ण व्यस्थित ढंग से हो रहा है। अमेरिका, ब्रिटेन, स्पेन, फ्रांस इत्यादि देशों में हुए आतंकी आक्रमण से अंतरराष्ट्रीय ईसाई लॉबी ने क्या खोया, इसे सहज में जाना जा सकता है। इसी प्रकार इराक और अफगानिस्तान को अमेरिका द्वारा नष्ट-भ्रष्ट कर देना तथा ईरान और पाकिस्तान के ऊपर लटकती नंगी तलवार से अंतरराष्ट्रीय मुसलिम लॉबी को भी अपनी हानि का स्वरूप समझ में आ चुका है। अब ईसाई एवं मुसलमान दोनों ही लॉबी यह तो मान चुकी है कि फैसला बिना युद्ध के संभव नहीं है। इसलिए उस अवश्यंभावी युद्ध यानी अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद का संग्राम भूमि कहाँ बनाई जाए?

हिंदुस्थान में ईसाइयों एवं मुसलमानों की बढ़ती जनसंख्या एवं इसके लिए आ रही विदेशी धन की बाढ़ ने यह सोचने पर विवश कर दिया है कि भारत में तेजी से धर्मांतरण करवाकर अपनी-अपनी जनसंख्या बढ़ाया जाए। योद्धा एवं साहसी हिंदुओं को धर्मांतरित करके उसके आक्रामक स्वभाव एवं धार्मिक कट्टरता के स्वभाव के अनुरूप अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद के उस संभावित रणक्षेत्र हिंदुस्थान को बनाने की योजना की यह प्राथमिक तैयारी है। धर्मांतरित ईसाइयों एवं मुसलमानों को अनुसूचित जाति की सूची में शामिल करने की माँग इसी अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र का एक हिस्सा है। इससे हिंदू समाज बटकर घट जाएगा। अब तो आपसी मतभेद, संघर्ष एवं देश को अशांत करने के इस प्रयास को स्वयं दलित समाज को आगे आकर रोकना होगा। इसमें खटिक जाति के बुद्धिजीवी एवं पराक्रमी युवा वर्ग को अपने समकक्ष पिछड़ी एवं दलित जातियों के आत्मीय सहयोग की अपेक्षा है। यदि सहयोग मिला तो यह निश्चित है कि यह जाति विश्वव्यापी उग्रवाद की पर्याय इसलामिक जेहादी ताकत को जवाब देने में सक्षम होगी।

## 7.6 राजनीतिक ढाँचे में खटिक जाति अति महत्त्वपूर्ण

खटिक एक राजवंशीय परंपरावाली हिंदू जाति है। महाराज खट्वांग[1] खटिक वंश

---

1. भदकारिया (भदौरिया) : ठा. श्यामलाल : सूर्यवंशी 360 गोत्रीय क्षत्रिय वंशावली, पृष्ठ-67

के राजा माने जाते हैं। राजा खट्वांग इक्ष्वाकु वंश के थे। इनके दो पुत्र थे—दीर्घवाहु और महाप्रख्यात्। खटिक राजवंशी परंपरा महाप्रख्यात् के पुत्र खास (खश) से आगे बढ़ती गई। महाप्रख्यात् के बड़े भ्राता एवं खट्वांग के ज्येष्ठ पुत्र रघु हुए एवं रघु से अज तथा अज के पुत्र दशरथ एवं दशरथजी के पुत्र भगवान् श्री राम हुए जो क्षत्रपति राजा ही नहीं, अपितु आज भी संपूर्ण हिंदू समाज के मन मस्तिष्क पर शासन करते हैं। महाभारत में कठ गणराज्य के क्राथ नरेश ने कौरवों की ओर से युद्ध में भाग लिया था।[1] विष्णुपुराण में भी सौराष्ट्र में खटिक राजा का राज्य माना गया है।[2] सिकंदर से युद्ध के समय यह जाति कथेयोई तथा कथा के नाम से ख्यात थी और उनकी राजधानी सांगला थी।[3] तैमूरलंग से भी इस राजशक्तिधारी जाति का संघर्ष हुआ था। महारानी लक्ष्मीबाई के साथ सहायक तोपची इसी वंश की थीं। ब्रिटिश काल में भी अंग्रेजी शोषण एवं दमन का सामना यही जाति करती थी। अंग्रेजी नमक कानून की धज्जियाँ उड़ाकर उनके द्वारा बनाए गए कस्टम रेखा का उल्लंघन सर्वप्रथम इसी जाति ने किया था और तदोपरांत अपराधी जाति घोषित हुई थी। गांधीजी का नमक आंदोलन तो उनके सैकड़ों वर्ष बाद आरंभ हुआ था।

राजवंशीय परंपरा का होने से इस जाति में नेतृत्व करने की अद्भुत क्षमता है। आज भी यह जाति प्रत्येक धार्मिक एवं सामाजिक कार्यक्रमों में आगे बढ़कर भाग लेती है। राजनीति में यह जाति हिंदू चमार, भंगी, पासी, राजभर आदि जातियों की ही तरह खुलकर भाग लेती है। वर्तमान समय में वोट की राजनीति विशेष महत्त्व रखती है। अतः जिस जाति के पास अधिक वोट होते हैं, उसका महत्त्व राजनीतिक दृष्टि से अधिक होता है। इस समय इस जाति की जनसंख्या इतनी है कि उस संख्या के आधार पर यह जाति राजनीतिक ढाँचे में अति महत्त्वपूर्ण हो गई है।

इस समय हिंदुस्थान में खटिक जाति की कुल जनसंख्या चार करोड़ है। दुर्गम स्थानों पर बिखरे होने से जनगणना में गणना करते समय त्रुटि हो जाती है, इसलिए भी खटिक जाति की संख्या कम मिलती है। दूसरा कारण यह है कि खटिक जाति की राजपूत एवं ब्राह्मणगोत्रीय शाखाओंवाली जातियों के कॉलम में मूल जाति खटिक न लिखकर अपनी उपजातियों का ही नाम लिखवा देते हैं। इसलिए भी खटिक जाति के अनेक उपजातियों की गणना खटिक जाति के साथ नहीं हो पाती है। वस्तुतः इनकी लगभग दो हजार उपशाखाओं-प्रशाखाओं को ध्यान में रखकर विचार किया जाए तो इनकी जनसंख्या बहुत अधिक है जिससे यह जाति राजनीतिक ढाँचे में अपना महत्त्वपूर्ण

1. रायचौधरी पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एंशिएंट इंडिया, पृष्ठ-2020
2. विष्णुपुराण, 4/2/68
3. पांडेय, विमलचंद : प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, भाग-1

स्थान बना सकती है।

खटिक जाति की संपूर्ण जनसंख्या वर्तमान राजनैतिक ढाँचे में वोट की अवधारणा के अनुसार एक बड़ी संख्या है। देश में सरकार चलाने के लिए 271 सांसदों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक सांसद को अभी सांसद बनने के लिए दो लाख वोट मिलती है, तो उसकी सरकार साढ़े पाँच करोड़ वोटों पर बन सकती है। वर्तमान समय में 4 करोड़ जनसंख्या के आधार पर खटिक जाति में तीन करोड़ वोट होने की संभावना है। इस आँकड़े के आधार पर हम इस जाति में छिपी हुई राजनैतिक शक्ति का अनुमान सहज भाव से लगा सकते हैं।

वर्तमान समय में ईसाई और इसलाम धर्म अपनानेवाली जातियों को अनुसूचित जाति में डालने की कोशिश यू.पी.ए. सरकार कांग्रेस के इशारे पर कर रही है और उसे कम्युनिस्टों का भी समर्थन मिल रहा है। ऐसा होने पर हिंदू खटिक ही नहीं हिंदू चमार, पासी, भंगी, राजभर जैसी राजनैतिक आधार पर महत्त्वपूर्ण जातियाँ निर्बल हो जाएँगी। राजनीतिक क्षेत्र में इनका जो महत्त्व इस समय है, वह कम हो जाएगा। इन जातियों के प्रत्याशियों की संख्या भी कम हो जाएगी और तब खटिक जाति के वोट को उतना महत्त्व नहीं मिल पाएगा, जितना इस समय है। अनुसूचित जाति के लिए सुरक्षित सीटों पर दलित ईसाई और दलित मुसलमान भी चुनाव लड़ने लगेंगे। अतएव हिंदू खटिक जाति की संगठित शक्ति को उपयोग में लेकर राजनीति की दिशा एवं दशा सुनिश्चित करने के लिए खटिक जाति के लोगों को स्वत: सोचना होगा और मतदान के लिए सदैव सजग तथा तत्पर भी रहना होगा।

## 7.7 खटिक जाति की सांस्कृतिक राष्ट्रवादी मानसिकता

हिंदू खटिक जाति आध्यात्मिक आस्था से जुड़ी है, अतएव धर्म-रक्षा और देश-रक्षा की राष्ट्रीय भावना इसमें पाई जाती है। अपने आजीविका का संबंध भी ये धर्म को अलग करके नहीं रखे हैं। इनके जीवन-पद्धति का आधार हिंदू संस्कृति है और हिंदू संस्कृति पूर्णतया प्रकृतिपरक है। खटिक जाति का हिंदू संस्कृति से विशेष लगाव है। इनकी हिंदू संस्कृति के प्रति जो निष्ठा है, वह भी इनके हिंदू राष्ट्र की अवधारणा से अनुप्रेरित है। आध्यात्मिक आस्था से लगाव होने से खटिक जाति हिंदू संस्कृति को हिंदुस्थान में राष्ट्रवाद का अधिष्ठान मानती है।

हिंदू खटिक जाति उन अनेक हिंदू जातियों में एक है जिसमें सर्वाधिक सांस्कृतिक एकता के भाव हैं। आज भी सामूहिक रूप से उत्सव करना, धार्मिक कार्यक्रमों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेना खटिक जाति के धार्मिक भाव की सामाजिक अभिव्यक्ति ही तो है। उनके संपूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रमों में हिंदू होने की सुगंध मिलती है। उनमें राष्ट्रवादी दृष्टिकोण

यानी धर्माभिमानी, स्वाभिमान एवं राष्ट्राभिमान के भाव प्रखरता से भी मिलते हैं।

हिंदू खटिक परिवारों में भी अन्य हिंदू परिवारों की भाँति समय-समय पर बड़े-बड़े धार्मिक आयोजन होते हैं। जैसे—व्रतोत्सव, उपवास-व्रत, पूजा-पाठ, कथा-प्रवचन, हवन-अनुष्ठान, देव-जागरण इत्यादि। इनका संपादन पूर्ण हिंदू-धर्म पद्धति से होता है और उसमें हिंदू राष्ट्र की भावना भी होती है। सामूहिक उत्सव एवं समारोहों की संगति से इनको अधिक लाभ होगा।[1]

सामान्य रूप से मिलने-जुलने और आपस में एक जगह बैठकर जहाँ अन्यान्य जाति के अच्छे सामाजिक लोग आपस में धार्मिक एवं आध्यात्मिक बातें किया करते हैं, वहीं खटिक जाति के घोषित असामाजिक तत्त्व भी लगातार बड़े-बड़े धार्मिक कार्य करते दिखलाई देते हैं। उनमें व्याप्त अधिकाधिक धार्मिक भावना का यही प्रतीक है।

हिंदुस्थान में संस्कृति ही राष्ट्रीयता का मापदंड है। सांस्कृतिक कार्यों का संपादन सांस्कृतिक मूल्यों की पृष्ठभूमि में किया जाना भी राष्ट्रवादी मानसिकता है। यह विशेषता खटिक जाति में पाई जाती है। इस जाति का सांस्कृतिक जीवन, धर्म-रक्षा और देश अथवा समाज रक्षा से आरंभ होकर ही राजनीतिक क्रांति की दिशा में लगातार अग्रसर है, इसलिए इस जाति की धार्मिक-सांस्कृतिक मानसिकता को पूर्णतः राष्ट्रवादी कहा जा सकता है।

हिंदुस्तान में एक जाति का दूसरी जाति के प्रति व्यवहार, तभी तक भाई-चारा भी संभव है, जब वह जाति स्वयं में धार्मिक एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवादी मानसिकता न रखती हो। किसी भी समकक्ष अथवा अन्य जाति के लोग यह नहीं कह सकते हैं कि उनको खटिक जाति में धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रवादी विशेषताएँ नहीं मिलती हैं।

खटिक जाति में राष्ट्रवादी लक्षण पाए जाते हैं, किंतु जातीयता और भेदभाव के कोई दुर्गुण नहीं मिलते हैं। यह जाति अपनी भावी पीढ़ी को भी अपनी हिंदू संस्कृति ही विरासत में देती आई है जिसमें धर्म-रक्षा, देश-रक्षा, लोकसेवा, सदाचार और परोपकार की भावना को महत्त्व दिया गया है। यह जाति आदि से अंत तक भारतीय है, डॉ. अंबेडकरजी के इस जाति के संदर्भ में उद्घाटित उक्त विचार इसी अवधारणा का संपोषण है।

खटिक जाति ने अपनी राष्ट्रवादी मानसिकता के कारण ही विदेशी आक्रांताओं से जबरदस्त मोरचा लिया था, और वह भी ऐसे समय में जब विदेशी इसलामिक तलवारों के क्रूरतम प्रहारों एवं नृशंस हत्याओं के आगे हजारों हजार हिंदू शस्त्र डाल देते थे। अपने परंपरागत शस्त्रों से खटिक जाति ने आततायियों एवं विदेशी मुसलिम आक्रांताओं को

---

1. अंबेडकर : संपूर्ण वाङ्मय, भाग 1, पृष्ठ-73

जिस तरह त्रस्त कर रखा था, उसे देखते हुए यह प्रमाणित है कि यदि उनके पास पर्याप्त शस्त्र रहे होते तो वे इस देश को विदेशी मुगलों और अंग्रेजों के गुलाम नहीं होने दिए होते। बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर भी यही कहते थे—'यदि हिंदू समाज में सभी लोगों को शस्त्र रखने की स्वतंत्रता होती तो समाज की शक्ति कई गुना बढ़ सकती थी। समाज के बहुत थोड़े क्षत्रिय लोग ही शस्त्र रखते थे और शेष समाज अपने-अपने कार्य में व्यस्त रहता था। हमारी हार (यानी मुगलों से) का यह एक बहुत बड़ा कारण है।'[1]

खटिक जाति ने भारत रत्न बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर के राष्ट्रवादी सभी विचारों का समर्थन किया, जैसे—राष्ट्रीय निष्ठा सर्वोच्च स्थान पर,[2] राष्ट्रीय संकट के समय स्वयं संगठित होकर खड़े हो जाओ[3], राष्ट्रहित सर्वोपरि[4], देश की आवश्यकता के लिए सदैव तत्परता इत्यादि। इन सभी आधारों पर यदि खटिक जाति का परीक्षण किया जाए तो उसकी सांस्कृतिक राष्ट्रवादी मानसिकता का भाव स्वत: स्पष्ट हो जाता है।

## 7.8 हिंदू खटिक जाति का उज्ज्वल भविष्य

किसी भी व्यक्ति अथवा जाति का भविष्य उसकी शारीरिक, मानसिक और आर्थिक क्षमता पर, उसके धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक अभिरुचि एवं अर्हता पर निर्भर करता है। इन आधारों पर यदि हिंदू खटिक जाति का परीक्षण किया जाए तो उसके प्राचीन, मध्ययुगीन और आधुनिक दशाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि इस जाति को वर्तमान समय में तीन प्रकार की शक्ति की आवश्यकता है। वर्तमान समय में सामाजिक शक्ति, राजनैतिक शक्ति एवं आर्थिक शक्ति के रूप में मानव समाज में व्याप्त इन तीनों शक्तियों का संतुलन मानव समाज के उत्थान एवं हित के लिए अति आवश्यक है। इन्हीं तीनों शक्तियों में आर्थिक एवं राजनैतिक शक्ति एक सीमा तक गौण है किंतु सामाजिक शक्ति समरसता, समानता एवं स्वतंत्रता के साथ सामाजिक बंधुता के लिए अति आवश्यक है। इसलिए हर प्रकार के विकास के लिए एकमात्र सामाजिक शक्ति ही मुख्य है।

हिंदू खटिक जाति का मांस-व्यापार और सुअर-पालन, ये दो ऐसे आधार हैं जिनका संबंध पवित्रता से है। उक्त व्यवसायों के आधार पर मानसिक रूप से स्थापित सामाजिक पवित्रता खटिक जाति के सामाजिक परिस्थिति को प्रभावित करती है। वर्तमान समय में जाति-भेद स्वत: समाप्त होते जा रहे हैं। अब कोई भी किसी की जाति नहीं

1. डॉ. अंबेडकर : लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-502
2. वही, राइटिंग्स एंड स्पीचेज वाल्यूम-2, पृष्ठ-195-196 (1942)
3. डॉ. अंबेडकर, लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-234-235 (दि जनता, 11 मार्च, 1933 में प्रकाशित)।
4. डॉ. अंबेडकर, वाल्यूम-1, पृष्ठ-101

पूछता। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग (भारत सरकार) द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में पूज्य शंकराचार्य स्वामी जयेंद्र सरस्वतीजी महाराज ने स्पष्ट कहा था कि आज हिंदू समाज में जाति-व्यवस्था अर्थहीन हो चुकी है।[1] देशाटन, रोजी-रोटी की तलाश में प्रवास अथवा घर से निर्वासन और सामाजिक समरसता के वातावरण ने समाज की दिशा मोड़ना आरंभ कर दिया है। विषमता का विषाक्त वातावरण समाप्त होता जा रहा है। लोग जाति-भेद भूलकर एक साथ आ रहे हैं, एक साथ बैठ रहे हैं और एक साथ खा-पी रहे हैं। यही कारण है एक खटिक जाति से जो लोग मांस का व्यापार करते हैं और सुअर पालते तथा सुअर का मांस बेचते हैं, केवल उनके ही घरों में पवित्रता को लेकर अन्य जातियों के साथ सामाजिक दूरी बनी हुई है। फल विक्रेता मेवाफरोश, बागवानी और खेती करनेवाले माली खटिक, राजपूत वर्गीय खटिक प्रजातियाँ, दक्षिण भारतीय खटिक शाखाएँ आदि के साथ सामाजिक स्तर का कोई मत-मतांतर नहीं देखने में आता है।

स्पष्ट है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के कारण स्वाभाविक रूप से समाज के प्रत्येक वर्ग से संबंध और समरसता रखना चाहता है। यदि उसे समाज का सम्मान सबसे और समान रूप से प्राप्त होता है, तो यह निस्संदेह रूप से कहा जा सकता है कि वह व्यक्ति समाज स्वीकृत है और प्रत्येक समाज में उसको स्थान है। इसके लिए उस जाति को समाज में पूजा-पाठ, धर्म-कर्म, दान-अनुदान, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में अपनी उपस्थिति एवं श्रद्धा आदि दिखलाने का अधिकार प्राप्त होता है। समाज के सभी वर्गों के सुख-दु:ख में भागीदार बनना होता है। यदि वह समाज को अपना मानेगा तभी संपूर्ण समाज भी उसे अपनाएगा।

अत: यह स्वाभाविक है कि खटिक जाति का भविष्य उज्ज्वल करने के लिए उसे अपने को समाज के प्रत्येक जाति के साथ सामंजस्य स्थापित करना होगा, ताकि उसे सामाजिक शक्ति प्राप्त हो सके। इसमें कुछ व्यावसायिक स्वच्छता भी रखी जाए तो वह और भी उत्तम हो सकता है। व्यवसाय में परिवर्तन की आवश्यकता हो तो अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए कुछ भी किया जाना उचित है। स्वधर्म का पालन यानी खटिक जाति के लिए वर्तमान समय में हिंदू धर्म का पालन है। जो कर्म लोग करते आए और उन कार्यों से यदि सामाजिक स्थिति प्रभावित हुई जान पड़ती है, तो वर्तमान का आग्रह है कि उन अस्वच्छ कार्यों के स्थान पर किसी स्वच्छ कार्य अथवा व्यवसाय को अपनाया जाना चाहिए। इस समय जीविका के जितने भी साधन बतलाए गए हैं, सभी

---

1. तीन दिवसीय कार्यशाला, बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी, स्वतंत्रता भवन राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग, भारत सरकार के सौजन्य से आहूत, दिनांक 28-30 सितंबर, 2003

पर सबका समान रूप से अधिकार है और कोई भी व्यवसाय किसी के लिए वंशगत नहीं रह गई है। खटिक जाति को अपनी सामाजिक स्थिति को सशक्त बनाने हेतु इस विषय में चिंतन करना होगा कि मांस के कार्य करनेवाले खटिक शाखाओं के साथ स्वच्छता का प्रश्न जुड़ा है और इनको ही लेकर सामंजस्य एवं समन्वय में कठिनाई है, शेष किसी भी शाखा-प्रशाखाओं के संबंध में इस प्रकार की कोई समस्या नहीं है। यहाँ, यह भी निर्देशित किया जाने योग्य है कि वर्तमान समय में खटिक जाति के ब्राह्मण-क्षत्रिय धर्म से संबंधित आदिकाल की परिस्थिति पर समाज का ध्यान उतना नहीं होगा जितना वर्तमान पर हो सकेगा। अत: वर्तमान सामाजिक शक्ति प्राप्त करने की आवश्यकता है ताकि खटिक जाति का भविष्य उज्ज्वल बन सके।

सामाजिक परिस्थिति को सर्वग्राही बनाने के लिए डॉ. अंबेडकर ने कहा है कि समाज के अधिकारों की रक्षा अर्थात् सभी जातियों के सम्मान की स्थिति सामाजिक चेतना द्वारा ही संभव है।[1] अतएव सामाजिक समरसता एवं सहिष्णुता के बारे में सभी को समान रूप से चिंतन भी करने की आवश्यकता है। यह भय भी लोगों को निकालना होगा कि समाज के अन्य लोग उसे कुछ कहेंगे तो नहीं। यह हिंदू समाज की एक कायरता है, जिसे दूर करना होगा।[2] आपस में भाई-चारा का वातावरण बनाना होगा।[3] राष्ट्र को उच्चासन पर पहुँचाने के लिए जाति-भेद त्यागना होगा।[4]

समाज में स्थापित यह मान्यता है कि आर्थिक समृद्धि से समस्त हीनता का भाव ढँक जाती है। आज, जिसके पास धन है, उसके लिए दु:सह कार्य भी असंभव नहीं हैं। वह किसी भी कार्यक्रम का आयोजन भव्यता के साथ कर सकता है और अपनी चाहत के अनुसार अपनी भावनाओं का प्रदर्शन कर सकता है, क्योंकि वर्तमान में अर्थ ही महत्त्वपूर्ण हो गया है।

खटिक जाति के उज्ज्वल भविष्य में धन की कमी सबसे बड़ी बाधा है। इस जाति में जिसके पास धन-दौलत है, उसके घर स्वत: समाज के अन्यान्य प्रतिष्ठित लोग आते-जाते हैं और उनसे सभी प्रकार के संबंध रखने में गौरवान्वित भी होते हैं। ऐसा इसलिए कि धनवान खटिक जाति का व्यक्ति किसी भी कठिनाई में नहीं होता, बल्कि वह लोगों की कठिनाइयों को दूर करने में सहायक होता है। अर्थ एक ऐसी वस्तु है जो किसी भी समस्या का स्वत: समाधान है। अतएव खटिक को अपनी आर्थिक स्थिति को प्रबल

1. अंबेडकर वाङ्मय, भाग-1, पृष्ठ-167
2. वही, पृष्ठ-76
3. वही, पृष्ठ-78
4. वही, पृष्ठ-78

बनाने हेतु गंभीरता से प्रयास करना चाहिए। शिक्षा एवं व्यवसाय के क्षेत्र में पिछड़ेपन के कारण खटिक जाति की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति भी दयनीय है। उसे आरक्षण का लाभ भी सर्वत्र नहीं है। यह विषमता शासन द्वारा प्रायोजित है।

खटिक जाति की जनसंख्या करोड़ों में है और वह समाज में अपनी राजनीतिक पहचान अंकित कराने में सक्षम है। किंतु उसके वोट बैंक में सेंधमारी की जाती है। कांग्रेस पार्टी का यह कहना है कि उसका जो भी उत्थान हुआ है उसके ही शासन की देन है। तब प्रश्न है कि आरक्षण में विषमता क्यों रह गई? संपूर्ण भारत में खटिक जाति को अनुसूचित जाति सम्मिलित क्यों नहीं किया गया? दूसरी पार्टी का कहना है कि खटिक चूँकि दलित है, इसलिए उनको दलित, शुभचिंतक पार्टी के साथ रहना उचित है। कोई पार्टी समाजवाद का लालच देती है, तो कोई उनकी दीनहीन दशा को सांत्वना देते हुए धन-धरती के बँटवारे की लालच देती है। खटिक जाति में राजनैतिक द्विविधा की स्थिति उत्पन्न हो गई है कि संपूर्ण समाज अपने पूरे वोट बैंक के साथ आखिर किधर जाएँ?

स्वाभाविक एवं प्राकृतिक रूप से स्पष्ट है कि यह एक कट्टर हिंदू जाति है। इस जाति का स्वाभाविक धर्म हिंदू है। इसकी जीवन-पद्धति हिंदू जीवन-पद्धति है। फिर तो वही पार्टी इस जाति के लिए उपयुक्त होगी जो हिंदू हित की बात करे। क्या खटिक जाति का हित हिंदू हित से अलग का है? यदि नहीं तो हिंदू, हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू राष्ट्र का प्रश्न न केवल खटिक जाति अपितु इस प्रकार की हिंदू चमार, हिंदू राजभर, हिंदू पासी, हिंदू भंगी आदि सभी के जातियों लिए विचारणीय है। प्रत्येक जाति का भविष्य 'हिंदू उत्थान भाव' से संबंधित राजनीतिक पार्टी के हाथ में है।

सामाजिक और आर्थिक सशक्तीकरण के साथ ही जातियों के राजनीतिक सशक्तीकरण का प्रश्न भी आज के संदर्भ में विशेष महत्त्वपूर्ण हो गया है। जो भी जाति चाहे जिस प्रकार से राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय पार्टी में है अर्थात् शासन-सत्ता में है, वह अपने कल्याण के मार्ग प्रशस्त कर ले रही है। और जातियाँ शासन-सत्ता से बाहर की राजनीतिक पार्टी में हैं, वे चिल्लाते रह जाते हैं परंतु उनकी कोई सुननेवाला नहीं है। अत: खटिक जाति को अपने कटु अनुभवों को स्मरण रखना होगा कि शासन और सत्ता से टकराने के कारण ही वह खटिक-ब्राह्मण, खटिक-क्षत्रिय के स्तर से लुढ़कती हुई आज हिंदू दलित के स्तर तक पहुँची है। इसलिए खटिक जाति के लिए बहुत आवश्यक है कि अपने उज्ज्वल भविष्य के संदर्भ में सामाजिक, आर्थिक पहलुओं एवं आयामों के साथ-साथ अपने राजनीतिक सशक्तीकरण पर भी विशेष ध्यान दे। इसलिए आवश्यक है कि शासन और सत्ता पर अधिकार भी प्राप्त करें। बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकर ने इसी उद्देश्य से कहा था कि 'शिक्षित बनो, संघर्ष करो और सत्ता पर अधिकार करो।'

प्रस्तुत अध्याय का निष्कर्ष यह है कि हिंदू खटिक जाति आज भी हिंदू संस्कृति और हिंदू राष्ट्रीयता की सशक्त और स्पष्ट पहचान है। इतना ही नहीं, यह जाति हिंदुस्थान के प्रत्येक भागों में विद्यमान है। हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति में खटिक जाति की आस्था पूर्ववत् बनी हुई है। अपने परिश्रम के बल पर यह जाति जो भी आर्थिक क्रिया-कलाप करती है, वह देश की अर्थव्यवस्था में पर्याप्त सहायक है। भारत में खटिक जाति को हिंदुस्थान की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड कहा जाता है। इस जाति की एक अलग पहचान 'हिंदू धर्म रक्षक' के रूप में होती है। आदिकाल से इनका विदेशी इसलामिक आतंकवाद से युद्ध होता रहा है, इस आधार पर यह माना जाता है कि विश्वव्यापी उग्रवाद की पर्याय इसलामिक शक्ति का प्रत्युत्तर देने में खटिक जाति सक्षम है। राजनीतिक ढाँचे में इसकी स्थिति करोड़ों की जनसंख्या के होने से बहुत अच्छी है किंतु जिन स्थानों पर खटिक जाति को अनुसूचित जाति की सूची में नहीं रखा गया है, वहाँ की दशा चिंतनीय है। खटिक जाति के लोगों के मानस में हिंदुत्व की अमिट छाप है, जो इसके सांस्कृतिक राष्ट्रवादी मानसिकता छवि की परिचायक है। खटिक जाति के उज्ज्वल भविष्य में सबसे बड़ी बाधाएँ हैं—व्यावसायिक आधार पर इसकी सामाजिक परिस्थिति के साथ जुटा पवित्रता का प्रश्न, अशिक्षा, अर्थाभाव और राजनीति में सत्ता तक पहुँच न होना। जिस दिन धर्माभिमानी, स्वाभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी खटिक जाति अपने परिश्रम से अपनी कमियों को दूर कर लेगी, तो खटिक जाति के उज्ज्वल भविष्य से इनकार नहीं किया जा सकता।

□

अध्याय-8

# खटिक जाति का पुनरुत्थान एवं सशक्तीकरण

उत्थान-पतन प्रकृति का शाश्वत नियम है। पतनोपरांत पुनरुत्थान अनुकूल प्रकृति में पुरुषार्थ का परिणाम है। सशक्तीकरण मानव की वह सामाजिक सुदृढ़ता है, जो पुनः पतन की संभावना समाप्त करती है। खटिक जाति के लिए ऐसे ही पुनरुत्थान और सशक्तीकरण की अपेक्षा है।

हिंदुस्थान की अनेक जातियाँ दलित श्रेणी की हैं। इनमें से हिंदू खटिक जाति भी एक है। वर्तमान समय में दलित जातियों की सामाजिक परिस्थिति (स्टेटस) निर्बल है। सामाजिक आधार पर एक तथाकथित उच्च जाति वर्ग के व्यक्ति के पास जितनी सामाजिक शक्ति है उतना बल दलित जाति के लोगों में नहीं है। देश की सर्वाधिक जनसंख्यावाली ये दलित जातियाँ अपनी विपन्नता से देश की अर्थव्यवस्था को निरंतर प्रभावित करती रहती है जिसके कारण आज का हिंदुस्थान एक गरीब, पिछड़ा हुआ और अविकसित अथवा अर्द्धविकसित देश कहलाता है। अतएव राष्ट्रहित के लिए दलित जातियों का पुनरुत्थान के साथ सामाजिक शक्ति का दलित वर्ग में हस्तांतरण आवश्यक है।

डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने अपनी पुस्तक 'हू वेयर शूद्राज?' में एक शंका को व्यक्त किया है। उन्होंने यह प्रश्न उठाया है कि वर्तमान दलित जातियाँ क्या शूद्र वर्ण से संबंधित हैं? लगभग संपूर्ण दलित जातियाँ अपनी उत्पत्ति क्षत्रिय या राजपूत से मानती हैं। वैसे भी आचार्य बलदेव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक में शूद्रों के कार्य का उल्लेख स्पष्ट रूप से किया है। कृषि, चिकित्सा, तकनीकी और विद्यालयों में ब्राह्मण शिक्षकों को अन्नदान करना शूद्रों का प्रमुख कार्य था। वर्तमान दलित 90 प्रतिशत भूमिहीन, आरक्षण से चिकित्सा एवं तकनीकी शिक्षा में प्रवेश एवं दयनीय स्थिति के कारण दान देने में असमर्थ देखे जाते हैं। ऐसे में प्राचीन शूद्रों से दलितों की उत्पत्ति के सिद्धांत का

आधार नहीं प्रतीत होता है। इसलिए डॉ. अंबेडकर द्वारा प्रदर्शित शंका पर स्वतः ध्यान केंद्रित होता है। डॉ. अंबेडकर द्वारा व्यक्त किए गए शंका के आलोक में दलितों के उत्पत्ति के सिद्धांत का अध्ययन अति आवश्यक है। दलित समुदाय का तात्पर्य ही सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं अन्यान्य रूप से पिछड़े अथवा दयनीय स्थिति में जीवन-यापन करनेवाले लोगों का समुदाय है। इसलिए ऐसे लोग जो पहले दलित नहीं थे किंतु कालांतर में दलित हुए, उनके न मात्र सशक्तीकरण अपितु पुनरुत्थान की दिशा में चिंतन करने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने अपनी पुस्तक 'हू वेयर शूद्राज'? के आमुख के प्रथम पृष्ठ पर ही लिखा है कि वैदिककालीन शूद्र वर्तमान दलित नहीं है। उनका विचार है कि यदि भारत के दलित प्राचीन शूद्र नहीं हैं तो शूद्रों के लिए बने नियम-कानून भी उन पर लागू नहीं होते। डॉ. बी.आर. अंबेडकर के उक्त विचारों के आलोक में दलित विषय पर आज चिंतन आवश्यक है।

हिंदू खटिक जाति सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक, तीनों ही दृष्टि से उन्नत नहीं है, अतएव उसके सामाजिक उत्थान, शैक्षणिक सशक्तीकरण और आर्थिक उन्नति के लिए प्रयास आवश्यक है। यह जाति कुछ राज्यों में आरक्षण की किसी भी सूची से बाहर है, बिहार आदि कुछ राज्यों में पिछड़ी जाति की सूची में और उत्तर प्रदेश सहित शेष प्रांतों में ही अनुसूचित जाति में है। यह त्रिस्तरीय सरकारी परिस्थिति इस जाति के समकक्ष की किसी भी अन्य जाति को नहीं प्राप्त है। अतएव खटिक जाति को सभी राज्यों में अनुसूचित जाति की सूची में शामिल करना सशक्तीकरण की दिशा में अति-आवश्यक है। ऐसा होना न्यायसंगत ही नहीं अपितु दलित हिंदुओं में सम्मिलित खटिक जाति के पूर्णरूपेण उत्थान के लिए आवश्यक है। यह अध्याय इन्हीं संदर्भों का विश्लेषण है।

## 8.1 दलित जातियों की दयनीय परिस्थिति

वैदिक काल में वर्ण-व्यवस्था नहीं थी।[1] जातियाँ भी नहीं थीं। उत्तर वैदिक काल में भी तीन ही वर्ण थे—शूद्र नहीं था।[2] डॉ. भीमराव अंबेडकर ने भी केवल तीन ही वर्ग-भेद मान्य किया है—आर्थिक वर्ग, बौद्धिक वर्ग अैर सामाजिक वर्ग[3]। विदेशों में भी बल्कि चार वर्गों में ही समाज बँटा था—पहला वर्ग बुद्धिजीवियों (इंटलेक्चुअल क्लास) का था जिसे ब्राह्मण कहा जा सकता है। दूसरा वर्ग सैनिक वर्ग (मिलिटरी क्लास) था जिसे क्षत्रिय कहना अनुचित न होगा। तीसरा वर्ग व्यापार अथवा व्यापारी वर्ग (बिजनेस

1. लेखक की पुस्तक-दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-55
2. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-43
3. डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब-व्यक्ति और विचार, पृष्ठ-70

क्लास) था, जिसे वैश्य माना जाता है। चौथा वर्ग सेवा कार्य (सर्विस क्लास) है जिसे शूद्र कह सकते हैं।[1]

मध्यकाल के पूर्व तक हिंदुस्थान में किसी का किसी के द्वारा कभी दलन हुआ ही नहीं था, अतएव किसी दलित के होने की संभावना ही नहीं रह जाती। विभिन्न समुदायों का आपस में युद्ध होता था। किंतु उसे दमन एवं दलन की संज्ञा नहीं दी जा सकती। शूद्र यदि मान भी लिया जाए तो वह वर्ण के साथ था इसलिए वह भी सवर्ण (हिंदू) था, अवर्ण वे थे जो हिंदू नहीं थे। वह कभी दलित नहीं रहा, और न ही अस्पृश्य। शूद्र पुरोधा सदैव पूजनीय थे।[2] वे हिंदू सामाजिक संस्कृति के पूर्ण वाहक थे।[3]

आधुनिक काल में भी दलित शब्द का प्रयोग सामान्य रूप से उन लोगों के लिए किया जाता है जो शिक्षा के अभाव तथा अन्यान्य कारणों से सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से पिछड़े अथवा कमजोर हैं। कदाचित् मध्ययुग में जिनको विदेशी मुस्लिम आक्रांताओं ने अस्वच्छ, मैले तथा अपवित्र कार्यों में लगाकर सामाजिक क्षेत्र में अछूत (अस्पृश्य) बना डाला था, उनको ही अंग्रेजों ने दलित नाम देकर एक बहुत बड़ी हिंदू जनसंख्या को हिंदू समाज से अलग करने का प्रयास किया था।[4] जिस प्रकार भारत के मुसलमान धर्मांतरित होने के कारण हिंदू समाज से अलग हो गए। आज, जो निम्न मानी जानेवाली जाति के हैं, परंतु उनकी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक स्थिति सशक्त है, वे भारी विकास के उपरांत भी दलित ही कहे जाते हैं। आज तो अस्पृश्यता को भी अपराध और असंवैधानिक घोषित कर दिया गया है,[5] कोई भी अपने वंश-परंपरागत कार्य करने को बाध्य नहीं है और आरक्षण के आधार पर राजनीति में उनको भाग लेने की पूरी स्वतंत्रता भी है। अतएव यह कहना भूल है कि दलित का अभिप्राय किसी जाति विशेष से है। हिंदू खटिक जाति भी दलित कहलाना अस्वीकार करती है।

आज जिनको दलित कहा जा रहा है, वे भी अपने स्वाभिमान को स्थापित करते हुए अपने प्रति इस शब्द को सुनना पसंद नहीं करते। यदि कोई किसी से यह कहे कि 'ये दलित हैं, इनकी मदद की जाए' तो वह तथाकथित दलित व्यक्ति यह सुनकर क्रोधावेश में हो जाता है, और तुरंत कहता है कि 'मदद करो या न करो किंतु गाली मत दो।' इससे स्पष्ट पता चलता है कि हिंदू स्वाभिमान के प्रतीक ऐसे सभी लोग जिनको मध्यकाल में और अंग्रेजों के समय में भी लूट-पाट करके निर्धन और अपवित्र कार्यों

1. मुखर्जी, पी. : वियांड दि फोर वर्णाज, अनटचेबुल इन इंडिया 1988
2. लेखक की पुस्तक-दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-77
3. लेखक की पुस्तक-दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-210
4. धर्मपाल : रमणीय वृक्ष (Beautiful Tree) पृ.
5. भारत के संविधान का अनुच्छेद पृष्ठ-17

में लगाकर हीन बना दिया था, अब वे सभी सुविधाएँ लेना अपनी विवशता मानते हैं, किंतु अपने को दलित कहते सुनना उनकी कोई विवशता नहीं है। फिर भी देश में अस्थिरता एवं नक्सलवाद को उत्पन्न करने की मानसिकता के कारण कम्युनिस्टों और जनवादी साहित्यकारों द्वारा उनको बार-बार दलित कहा एवं लिखा जाता है।

दलित शब्द का प्रयोग यदि सही ढंग से होता तो किसी को आपत्ति नहीं होती। हिंदू वैचारिकी केवल इतना ही कहती है कि विदेशी आक्रांताओं (इसलाम और ईसाई धर्मवाले विदेशी शासक) के शासनकाल में राजवंशीय एवं गौरवशाली जिन स्वाभिमानी लोगों को किसी भी प्रकार से युद्धबंदी बना लिया गया था, उनका हर प्रकार से भयंकर उत्पीड़न एवं दलन किया गया था और उसी दलन का प्रभाव प्रमाणित पाकर अंग्रेजों ने उनको दलित संबोधन दिया था। यही सच है, सर्वमान्य है और स्वयं जिनको दलित कहा जाता है, उनको भी ज्ञात है। विदेशी आक्रांता इसलामिक शासकों तथा अंग्रेज शासकों को ही इनके लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है।

स्वतंत्रता संग्राम के उपरांत कुछ लोग शीघ्रता से सत्ता की प्राप्ति हेतु दलितों एवं सामाजिक रूप से निर्बलों को लक्ष्य कर उनकी भावना को भड़काने के लिए नारा दिया—'धन-धरती बँटकर रहेगी, भूखी जनता अब न सहेगी।' इस तरह के नारों के पार्श्व में हिंदुस्थान में गृह-युद्ध अथवा रक्त-क्रांति कराना ध्येय था। यह प्रयास लोगों की भावना बदलने और उसे दुर्भावना में परिवर्तित करने के लिए हो रहा है। ये लोग स्पष्ट रूप से कहते थे कि वर्तमान अस्पृश्यता, शोषण, उत्पीड़न, दलन आदि का जो परिणाम दृष्टिगोचर हो रहा है वह मनुवादी ब्राह्मण और क्षत्रियों का कार्य है। जबकि ऐतिहासिक तत्त्व इससे उलट था। किसी भी स्थिति-परिस्थिति के लिए उत्तरदायी शासन एवं सत्ता होती है। गत 800 वर्षों से ब्राह्मण एवं क्षत्रिय अथवा यह कहा जा सकता है कि हिंदू तो सत्ता में ही नहीं थे, तो ब्राह्मण या क्षत्रिय अथवा किसी भी हिंदू को इसके लिए उत्तरदायी कैसे ठहराया जा सकता है?

उपरोक्त मानसिकता एवं वैचारिकीवाले जब तक दलित शब्द का प्रयोग करते रहेंगे तब तक यह स्पष्ट करते रहना होगा कि वे लोग अपनी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति कमजोर होने के कारण ही इस स्थिति में हैं। मध्यकाल में जो व्यवसाय मुगलों ने निर्धारित किए उन व्यवसायों को कई सौ वर्षों तक तथा कई पीढ़ियों तक लोगों को करना पड़ा था। सत्ता की दृष्टि से भी देखा जाए तो 551 वर्षों तक इसलामिक शासन था और 190 वर्षों तक अंग्रेजों का शासन था। दोनों ने अपने शासनकाल में उत्पीड़न और शोषण किया। एक ने तलवार के बल पर केवल हिंदुओं का जबकि दूसरे ने स्वहित में कानून बनाकर, कानून के बल पर देश के प्रत्येक वर्ग का प्रचंड शोषण किया। खटिक जाति ने मुसलिम एवं मुगल आक्रांता शासकों तथा अंग्रेजों यानी दोनों का ही इस मुद्दे

पर प्रतिकार ही नहीं किया, अपितु जमकर टक्कर भी लिया।

यह चिंतन का विषय है कि 750 वर्षों तक न जाने कितनी पीढ़ी विदेशी मुसलिम आक्रांताओं द्वारा दंडस्वरूप बलपूर्वक निर्धारित अस्वच्छ पेशों के आधार पर समाज से कटी रही और आक्रांता विदेशी शासकों ने स्वयं उनके साथ अस्पृश्यता अथवा छुआछूत का जो वातावरण उत्पन्न किया था, वह स्वच्छ कार्यों में लगे सभी हिंदू वर्ग के लिए भी अभिशाप बन गया। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि अछूत जातियाँ आपस में भी स्वच्छता, पवित्रता और व्यवसाय के आधार पर भेदभाव करती है।

उदाहरण के लिए श्री देवेंद्र पाल सिंह तोमर[1] के शोध-प्रबंध को देखा जा सकता है जो मेरठ जनपद को शोध-क्षेत्र बनाते हुए खटिक, चमार, भंगी, बहेलिया और डोम जातियों में आपस में ही छुआछूत का होना पाया है। खटिक शेष चारों जातियों से खान-पान का संबंध नहीं रखते हैं। हरिजन के छू जाने पर खटिक स्नान करता है। एक पंगत में बैठकर वे खा नहीं सकते। चमार लोग डोम से भेदभाव रखते हैं। खटिक और बहेलिया का भी संबंध नहीं है। यह स्थिति मेरठ में सर्वत्र नहीं है। वहाँ के क्षेत्रीय स्थायी निवासी जो अपने आस-पास बसे हुए अस्पृश्य जातियों को जानते हैं, वे ही इस तरह का व्यवहार करते हैं। बाहरी लोग जो इन्हीं जातियों में से होते हैं, उनके साथ इस तरह का व्यवहार नहीं होता है। रोजी-रोटी के लिए जो लोग विभिन्न नगरों में आने और जाने लगे हैं और जो शिक्षित हैं वे इस प्रकार का भेदभाव नहीं मानते हैं।

अतएव कहा जा सकता है कि दलित जातियों की दयनीय परिस्थिति पूर्वकाल में मुगलों द्वारा प्रायोजित दंडस्वरूप अस्वच्छ वृत्ति में बलपूर्वक लगाकर बनाई गई सामाजिक विषमता है। उस समय यही हिंदू समाज शासनादेशों का पालन करते हुए विदेशी मुसलिम आक्रांताओं एवं शासकों द्वारा बलपूर्वक अस्पृश्य बनाए जाने से उनको अस्पृश्य माना, परंतु वर्तमान समय में स्वतंत्र भारत के शासनादेश एवं संविधान के अनुच्छेद 17 में यह है कि किसी को अस्पृश्य मानना और उसके साथ छुआछूत का भेदभाव करना दंडनीय अपराध है। ऐसी अवस्था में भी लोग शासनादेश का ही पालन करते हुए किसी के साथ भेदभाव नहीं करते हैं। खटिक जाति यह मानती है कि उनका उत्पीड़न एवं दलन दुर्भावनावश मुसलिम शासकों द्वारा मध्यकाल में किया गया।

स्पष्ट है कि उस समय उच्चवर्णीय (ब्राह्मण एवं क्षत्रिय) लोगों को दलित बनाने के लिए उनकी सामाजिक स्थिति को कमजोर किया गया था,[1] इसलिए अस्पृश्य की भाँति रहने की उनकी आदत भी बन गई थी। स्वतंत्रता मिलते ही वे संघर्ष किए या नहीं

---

1. तोमर, देवेंद्र पाल सिंह : हिंदू अछूत जातियों में छुआछूत, कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, दरियागंज, दिल्ली, 2003, पृष्ठ-43-82

किए परंतु इन समस्याओं से स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत दलितों को संवैधानिक रूप से मुक्ति मिल गई थी, जबकि पराधीन होने की दशा में वे साढ़े सात सौ वर्षों तक इस अभिशाप से मुक्त नहीं हुए थे। फिर भी आज किस तरह ब्राह्मण और क्षत्रिय दलित समस्या के लिए दोषी हैं। वे हिंदू जिनको ब्राह्मण और क्षत्रिय आदि कहकर सारा दोष उन पर थोपा जाता है वे भला अपनों पर ही अत्याचार, व्याभिचार, दमन और दलन कैसे करते? वे भी तो युद्धबंदी हिंदुओं को स्वाभिमानी ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय जाति का समझते थे। अपने ही भाई-बिरादर के साथ वे कभी भेदभाव नहीं किए होंगे। मुगल शासकों एवं अंग्रेजों द्वारा कर वसूली हेतु सशक्त, स्वार्थी एवं प्रभावशाली हिंदुओं को जमींदार के रूप में नियुक्त किया जाता था। कालांतर में उनके ही अत्याचार एवं वसूली के लिए उत्पीड़न को दलित समस्या के साथ जोड़कर इसके लिए ब्राह्मण एवं क्षत्रियों को दोषी माना गया।

जाति के आधार पर दलितों के वोट बैंक को भुनाने के लिए स्वयं दलित नेता भी उनको भ्रमित किया करते हैं और मनुस्मृति तथा पवित्र हिंदू धर्मग्रंथों को जलाकर कहा करते हैं कि यह सब वर्तमान ब्राह्मणों का बनाया हुआ संविधान है, जो दलितों को अस्पृश्य और दलित बनाए रखने के लिए लिखा गया है। अब, दलित भी यह जान चुके हैं कि वे ग्रंथ आदिकाल में ऋषियों और महर्षियों द्वारा लिखे गए और उनको लिखनेवाले अधिकांश लोग जैसे व्यास और वाल्मीकि तत्कालीन शूद्र वर्ण के ही थे। रामायण लिखनेवाले शूद्र महर्षि वाल्मीकि और महाभारत लिखनेवाले शूद्र महर्षि वेदव्यास का नाम आज कौन नहीं जानता है। किंतु छद्म राजनीति में फँसा हिंदू समाज आज अपनों द्वारा ही छला जा रहा है।

दलित अपनी अवस्था के लिए आर्थिक स्थिति का कमजोर होना स्वीकार लेते हैं। वास्तव में उन राजवंशी एवं धर्माभिमानी लोगों का सबकुछ विदेशी मुसलमान आक्रांता शासकों ने लूट लिया था। उनकी कृषि-भूमि को खालसा भूमि (शासन की भूमि) घोषित कर दिया था। अत्यधिक मात्रा में कर देनेवालों को वह भूमि दी जाती अथवा धर्मांतरित मुसलमानों में बाँट दी जाती थीं, विभिन्न युद्धबंदियों का स्वाभिमान भंग करने के लिए अस्वच्छ काम बलपूर्वक लिए जाते थे। इसलिए वे स्वत: भी खेती से दूर होते गए। खटिक जाति का मुख्य व्यवसाय मांस व्यापार था और जब यह व्यवसाय मुसलिम कसाइयों द्वारा हस्तगत कर लिया गया और झटका मांस किसी भी मुसलमान के लिए निषिद्ध कर दिया गया, तो खटिक जाति की आर्थिक स्थिति और भी दयनीय हो गई।

हिंदू खटिक जाति को उत्तर भारत में मुसलमान देखना तक पसंद नहीं करते थे इसलिए अपने सामने पाकर वे मार-पीट करते। दक्षिण भारत एवं महाराष्ट्र में झटका का

1. प्रो. शेरिंग, हिंदू ट्राइब्स एंड कास्ट, भूमिका पृष्ठ-20

मांस व्यवसाय के कारण मुसलमानों के दुर्भावना का शिकार खटिक जाति के लोगों को होना पड़ता था। उनके घर की सारी वस्तुएँ लूट ली जाती थीं। उसके पालतू भेड़-बकरी आदि सब छीन लिए जाते थे, जब वे मांस व्यापार में घाटा उठाने से फल व्यवसाय चयन किए तो मांस बेचनेवाले से फल लेना अपवित्र माना गया। सामान्य हिंदू लोग भी इनके हाथ का फल नहीं लेते थे।

हिंदू खटिक जाति के लोगों ने अपने तथा अपने परिवार की बहू-बेटियों की रक्षा के लिए जब सुअर पालना आरंभ किया उस समय भी वे नहीं समझ पाए थे कि मुसलमान अपने शत्रु-पशु का मांस लेंगे नहीं और हिंदू भी बकरा मांस के स्थान पर सुअर मांस पसंद नहीं करेंगे। अतः सुअर मांस व्यापार अपेक्षाकृत उतना लोकप्रिय नहीं हो सका, केवल विदेशी मुगलों के उत्पीड़न से परिवार को बचा सके थे। समाज में उनकी परिस्थिति मांस बेचने से दयनीय थी ही, विस्टा खानेवाले पशु सुअर को पालने से और भी निम्नतर हो गई।

विदेशी इसलामिक शासकों और अंग्रेजों ने खटिक जाति को किसी भी प्रशासनिक कार्य अथवा सम्मानजनक काम करने हेतु नियुक्त नहीं किया था। उन्होंने सेना में तो इस जाति के लड़ाकू स्वभाव के कारण स्थान अवश्य दिया था, जिसका परिणाम उनसे मेरठ क्रांति के रूप में ब्याज के साथ खटिक जाति से वसूला। ये सदैव सत्ता से दूर रखे गए और अंततोगत्वा अपराधी जाति की श्रेणी में डाल दिए गए ताकि इनको जेलों में डालने और गोली मारने पर किसी कानूनी परेशानी का सामना न करना पड़े।

## 8.2 खटिक जाति दलित जाति की श्रेणी में

विदेशी मुसलिम आक्रांताओं ने आरंभ में यहाँ की संपदा लूटने के प्रयास में जब हिंदू मंदिरों पर आक्रमण किया, उसके पूर्व ही मंदिर की विपुल संपदा, वहाँ तक पहुँचने का मार्ग और मंदिरों में निःशस्त्र पुजारियों इत्यादि की पूरी जानकारी विभिन्न स्रोतों के माध्यमों से उनके गुप्तचरों को दे दी गई थी जो विभिन्न श्रेणी के व्यापारी बनकर हिंदुस्थान में आए थे। इसके पहले उन्होंने अनेक देशों के मंदिर, गिरिजाघरों पर आक्रमण किया, अपना इसलाम सभी पर बलपूर्वक थोपा और कई दिनों तक लूट-पाट करते रहने के बाद उन स्थानों से कुछ संपदा ही आहरित कर सके।

विदेशी आक्रांताओं ने यदि पूर्व सूचना को न प्राप्त किया होता तो सर्वप्रथम काठियावाड़ पर ही आक्रमण करते, क्योंकि वह बहुत समृद्ध देश था। परंतु उनको पता चला कि वहाँ बहादुर एवं स्वाभिमानी कठ अथवा कठिक जाति के लोगों की संख्या सर्वाधिक है तो उनका साहस छूट गया। कठिक एवं पार्श्वी जातियाँ के वीरों ने सिकंदर के सैनिकों को लोहे के चने चबाने पर मजबूर किया था, यह बात उनको ज्ञात थी।

उनको यह भी पता था कि पशु-बलि का कार्य कठ, कठिक ही करते हैं जो थोड़ी संख्या में सोमनाथ मंदिर क्षेत्र के ही आस-पास रहते हैं। गजनी के वे राक्षस यदि आवाज़ करते या ललकारते तो उन्हें तुरंत कठ एवं योद्धाओं से प्रचंड चुनौती मिलती किंतु वे इसलाम के जिहादी नारे लगाते नहीं बढ़ रहे थे बल्कि चुपचाप धीरे-धीरे मंदिर के उस द्वार से अंदर प्रवेश किए जिस ओर से दर्शनार्थी बाहर आया करते थे।

उन अरबी आक्रांताओं ने बाहर निकलनेवाले सभी श्रद्धालुओं को मार डाला और जब मंदिर में दो-चार पुजारी ही रह गए तो भीतर घुसकर लूट-पाट आरंभ कर दिया। एक पुजारी ने मंदिर के पीछे खटिकों की बस्ती के पास जाकर दूर से ही आवाज दी कि मुसलमान मंदिर लूट रहे हैं और उसे तोड़ भी रहे हैं। इतने में समस्त खटिक जाति के स्त्री-पुरुष और बच्चे अपना अस्त्र हाथ में लेकर दौड पड़े। बाहर खड़े विदेशी आक्रांताओं से इनका युद्ध आरंभ हो गया। तलवारों के आगे इनके छोटे से 'घात' अस्त्र टिक न सके। सभी खटिक मारे गए। जीवित बचे स्त्री-बच्चे बंदी बना लिए गए और मंदिर लूट लिया गया। समाचार तेजी से काठियावाड़ पहुँचा, परंतु देरी हो चुकी थी। मंदिर ध्वस्त किया जा चुका था। लुटेरे भाग चुके थे। फिर कठिक उनका दूर तक पीछा करके उनके लूटे हुए कुछ धन छीन लाए और मंदिर को समर्पित कर दिया।

विदेशी इसलामिक आक्रांताओं के साथ खटिक जाति के पराक्रम को इसलामिक शासक अनेक बार देख चुके थे इसलिए उन्होंने सर्वप्रथम खटिक जाति के ही धर्माभिमानी, स्वाभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी हिंदुओं को अधिक प्रताड़ित किया था। तुगलक और खिलजी शासनकाल में इनका सर्वाधिक उत्पीड़न हुआ और अलाउद्दीन की बर्बरता का सामना करने के लिए खटिक जाति ने उसी समय से सुअर-पालन कार्य आरंभ किया। इसलाम के शत्रु-पशु के अपने घरों के इर्द-गिर्द बाँध देने से इनके घरों की ओर विदेशी आक्रांता आँख उठाकर देखने का साहस नहीं कर पाते थे, परंतु ऐसे मानव विष्टा खानेवाले अपवित्र पशु को पालने से अन्य हिंदू जाति के लोग खटिक जाति से दूरी बनाते चले गए थे। यह दूरी उतनी भी नहीं थी जितनी दूरी चर्म-कर्म करनेवाले चमार जाति और मल-मूत्र ढोनेवाले भंगी जाति के साथ थी। कालांतर में हिंदू डोम जाति को भी शव और श्मशान के अस्वच्छ एवं अपवित्र कार्य से जोड़कर उनसे भी दूरी रखी गई थी, यद्यपि हिंदू को शवदाह की अग्नि वही देता था। आक्रांताओं द्वारा हिंदू स्वाभिमान को बलपूर्वक गंदे कामों में लगाकर बनाई गई भंगी जाति की भी वही स्थिति थी। सफाई के लिए उसका सभी घरों में जाना आना सर्वस्वीकृत था। इससे स्पष्ट है कि उस समय दलित की श्रेणी तक पहुँचानेवाली अस्पृश्यता केवल कार्यों तक ही सीमित थी, काया तक नहीं। कार्य से लोग समाज में छोटे-बड़े माने गए और समाज में उनको उच्च अथवा निम्न या दलित परिस्थिति निर्धारित की गई।

वैदिक काल अथवा पूर्व मध्यकाल में जाति-भेद का ऐसा कोई घिनौना आधार था ही नहीं। सभी पुरुष, स्त्री, बच्चे शौच के लिए दूर खेतों में या एकांत में चले जाते थे। किसी के भी घर में कोई शौचालय नहीं होते थे। राजघरानों में भी शौचालय इत्यादि की प्रथा नहीं थी। विशिष्ट प्रकार के लोगों के लिए उनके अपने आरक्षित क्षेत्र थे। अकबर की 6000 बेगमें थीं जिन्हें शौचादि हेतु बाहर जाना प्रतिबंधित था। जब वे बाहर जाती थीं तो उनका शारीरिक संबंध बाहरी लोगों से हो जाता था। वे अक्सर गर्भवती हो जाती थी। विदेशी नावाबों एवं बादशाहों को यह बहुत बुरा लगता था। इसलिए उनको बाहर जाने से रोका गया था। उस समय घर में शौचालय की सोच ही नहीं थी। यह केवल मध्ययुग में विदेशी आक्रांताओं के विलासितापूर्ण जीवन जीने की पद्धति के कारण प्रचलन में आई। आक्रांताओं द्वारा तरह-तरह के उत्पीड़न और पराजित हिंदुओं पर लगाए गए भाँति-भाँति के आरोपों के कारण मांस-व्यापार में संलग्न खटिक जाति भी प्रभावित हुई और उसकी सामाजिक परिस्थिति निम्न हुई, जो उसके दलित बनने का एक कारण बनी।

हिंदू राज्यों में राजन्य परिवारों के सहयोग के लिए राज्यकर्मी नियुक्त होते थे, जो महलों के अंदर तक जाकर कार्य पूरा करते थे। उनके साथ छुआछूत का कोई भेदभाव नहीं होता था। राजकन्याओं के साथ उनकी सखी-सहेलियाँ भी स्वेच्छा से उनके ससुराल जाया करती थीं। ऋषि-कुल के धार्मिक कार्यों में सहयोग के लिए राजाओं की ओर से अनेक सहायककर्मी दिए जाते थे ताकि धर्म-कर्म में किसी तरह का व्यवधान न आने पाए। किंतु ऐसे सहयोगियों के साथ किसी तरह का भेदभाव नहीं होता था। काठोर राज्य में स्वयं खटिक कुल के राजाओं के पास भी ब्राह्मण पुरोहित और विभिन्न वर्गों के सहयोगी होते थे, जो राज्य की कृषि-पशुपालन संपदा के संवर्द्धन में तथा उद्योग एवं वाणिज्य के संवर्द्धन में अपना योगदान करते थे। कार्यों के आधार पर भी उनकी सामाजिक स्थिति प्रभावशाली थीं, जो मध्यकाल में मुख्यत: प्रभावित हुई। दलित वर्ग की उत्पत्ति मध्यकाल में आक्रांताओं द्वारा हुआ और उनका नामकरण अंग्रेजों के शासनकाल में हुआ था।

एक प्राचीन कहावत है कि धन बलवान होता है। धन-संपन्न होने से प्राचीन काल में खटिक जाति एक शक्तिशाली सामाजिक पहचान धारण करती थी। उसका अपना राज्य और राजधानी थी। धन से ही उनके पास हजारों सैनिक थे। विदेशी आक्रांताओं की सबसे बड़ी विशेषता यही थी कि वे पहले अर्थ पर ही लुटने की नीयत से आक्रमण करते थे और अर्थ संपदा लूटकर किसी भी राज्य अथवा राजा को कमजोर कर देते थे। इतना ही नहीं, उनको प्रजा से भी भय रहता था कि उनके एकत्रित धन से भी विद्रोह हो सकता है। युद्ध में दुर्गों के साथ-साथ नगरों और गाँवों को भी लूटा जाता था। अंग्रेजी सरकार के शासन में क्रांतिकारी अभिवादन स्वीकार करने के कारण यह जाति अंग्रेजों

द्वारा बुरी तरह से लूटी एवं प्रताड़ित की जाती थी।

विदेशी इसलामिक काल में योजनाबद्ध तरीके से खटिक जाति का आर्थिक उत्पीड़न हुआ था। उनके खेतों को रात में पशुओं से चरा डालते और पके अन्नोंवाले खेत की सारी फसलें काट ली जाती थीं। ऐसा करने में असमर्थ होने की स्थिति में आग लगा दी जाती थी, ताकि पूरी फसल जलकर राख हो जाए और खटिक जाति का पूरा परिवार भूखों मर जाए अथवा कहीं से कर्ज लेने पर विवश हो जाए। महाजनों को सख्त निर्देश एवं आदेश दिए जाते थे कि वे नकद अथवा अन्न खटिक जाति को छोड़कर ही दे सकेंगे।

खटिक व्यापारियों को उत्पीड़ित करने के लिए बाँट-माप और तराजू में कोई-न-कोई खोट कृत्रिम रूप से निकाला जाता था और बिना सच्चाई की जाँच कराए ही उनकी मांस एवं फल की दुकानों को एक सप्ताह के लिए सीज कर दिया जाता था, ताकि खुलने के बाद सबकुछ सड़ गया हो। इनसे व्यापार कर भी कई प्रकार के लिए जाते थे। सर्वाधिक कर इसी जाति से लिया जाता था। इस आधार पर यह जाति उस समय भी आर्थिक संपन्न एवं सामाजिक रूप से अति सम्मानित थी।[1]

विदेशी शासनकालों यानी विदेशी इसलामिक शासनकाल और अंग्रेजों के शासनकाल में खटिक जाति की स्थिति पिंजरे में बंद किए गए सर्कस के शेर की तरह थी। मुसलिम शासक अथवा अंग्रेज शासक खटिक जाति के लोगों से भयभीत भी थी। इनके परिश्रम का लाभ राज्य को अधिकाधिक मात्रा में मिलता था, ऐसे में इनको पूर्णतः समाप्त कर देने से राजस्व की भारी क्षति भी हो सकती थी। इसलिए सर्कस के शेररूपी खटिक को उतना ही धन रखने दिया जाता था जितने से वह जीवित रह सके परंतु पिंजरा तोड़कर बाहर आने की शक्ति उसमें न आने पाए और इतना कम भी नहीं दिया जाता था कि वह पिंजरे में दम तोड़ दे।

खटिक जाति की मध्यकालीन राजनीतिक स्थिति उसकी परंपरागत बहादुरी के लिए ही प्रसिद्ध रह गई थी। उसकी राजधानी लूट ली गई थी। कठ जाति के लोगों को वनों-पर्वतों में दर-ब-दर होकर जीवन व्यतीत करने के लिए विवश किया गया था। वे पड़ोसी राज्यों में घुसकर अपने पुराने परंपरागत कर वसूलते थे और न देने पर बल प्रयोग करते थे। तैमूरलंग को इसी प्रकार की शिकायत मिली थी कि उसके जाति-वर्ग के शासकों से कठिक लोग अपने पुराने शासकीय कर वसूलते थे और राज्य पर अपना अधिकार छिन जाने पर भी वे उसे अपने ही राज्य का अंग मानते थे।

स्पष्ट है कि इनकी राज्य-शक्ति को कमजोर बनाने के लिए निरंतर प्रयास किए

1. डॉ. विजय सोनकर शास्त्री : दलित हिंदू की अग्नि परीक्षा, पृष्ठ-168

गए थे, फिर भी उन्होंने अपने बाहुबल पर अपना ताजविहीन शासन चला रखा था। विदेशी मुसलिम काल में यह एक विचित्र और संभवत: अपने आप में अद्वितीय घटना थी। खटिक के अतिरिक्त अन्य किसी भी दलित जाति में ऐसा साहस नहीं था कि वह सत्ता में न रहते हुए भी अपनी राजनीतिक महत्ता को स्थापित और कायम रख सके।

खटिक जाति को राजनीतिक क्षेत्र से जोड़ने के संबंध में उस समय दो विचारधाराएँ थीं। एक का सोचना था कि इनको राज्य-प्रशासन का कोई भी पद देने पर ये संगठित होकर विद्रोह कर सकते हैं, अतएव विदेशी शासकों का विचार था कि खटिक जाति को कोई भी स्थान न देना ही उचित होगा। दूसरा पक्ष यह तर्क देता था कि राज्य-सेवक बना लेने पर इनमें प्रशासन के प्रति निष्ठा उत्पन्न हो सकती है। खटिक जाति की सोच उक्त दोनों विचारों से भिन्न थी। इस जाति ने सबकुछ सहना स्वीकार किया, परंतु स्वाभिमान बेचकर शासकों की दासता स्वीकार नहीं की थी। कुछ दशक पूर्व तक भी खटिक जाति के मजदूर किसी भी जाति के घर मजदूरी कर लेते हैं, किंतु मुसलिम जाति के घर किसी भी काम को करने से साफ इनकार कर देते थे।

खटिक जाति के दलित होने के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक कारणों के अलावा एक कारण और भी था जो उनके उक्त तीनों कारणों को प्रभावित करता था। वह था इस जाति की शिक्षा प्राप्ति में व्यवधान। अस्पृश्य जातियों की शिक्षा अंग्रेज शासक इसलिए परोक्ष रूप से बाधित कर रखे थे ताकि वे विवश होकर ईसाई-पद्धति पर मिशनरियों द्वारा संचालित विद्यालयों में अध्ययन करेंगे।

अंग्रेजों की फूट डालो और राज्य करो की नीति की सर्वत्र निंदा करते हुए देश में अनेक संत-महात्माओं, समाज-सुधारकों तथा जनप्रतिनिधियों ने संयुक्त रूप से ऐसा प्रयास किया कि दलित जातियों का आत्मबल जाग उठा। अस्पृश्यता को सामाजिक स्तर से मिटा देने हेतु महात्मा गांधी, डॉ. अंबेडकर आदि लोगों ने देश में सर्वत्र घूम-घूमकर प्रयास किए और अस्पृश्यता को हिंदू समाज में दासता काल का कलंक समझकर विवश बैठ जानेवाली जातियों को अपने पैरों पर उठने हेतु आह्वान किया। दयानंद सरस्वतीजी ने सभी को वेद का अध्ययन और यज्ञ तथा यज्ञोपवीत धारण करने को उचित ठहराया। देश में सामाजिक समरसता बनने लगी तो अंग्रेजों ने हमारे मनीषियों को विष देकर हत्या कराने का षड्यंत्र आरंभ किया। दयानंदजी की हत्या इसी तरह की गई थी। परंतु इसका दोष उच्च जाति पर लगाया गया, जबकि ब्राह्मण इसलिए प्रसन्न हो रहे थे कि दयानंदजी उनके वेद भगवान् को घर-घर तक पहुँचा रहे थे।

खटिक जाति के सापेक्ष यह आक्षेप भी बेबुनियाद है कि दलितों की शिक्षा पर हिंदू ब्राह्मणों द्वारा रोक लगाई गई थी, ताकि देश में उन जैसा कोई पैदा ही न हो। दलितों की विशाल संख्या को किसी भी विद्यालय के दो, एक ब्राह्मण अध्यापक भला कैसे रोक

सकते थे? डॉ. अंबेडकर, ज्यातिबा फूले तथा अन्य दलित लोगों की शिक्षा को बाधित किया गया होता तो वह एक साक्ष्य होता। दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी के पास प्रथम श्रेणी के टिकट होने पर भी उनको उस श्रेणी में यात्रा करने से अंग्रेजों द्वारा ही रोका जाता था। हिंदुस्थान का कोई ब्राह्मण या क्षत्रिय दक्षिण अफ्रीका जाकर उन्हें वहाँ नहीं रोका था।

सच तो यह है कि जितनी भी दलित जातियाँ यानी विदेशी मुसलिम अरेबियन शासकों द्वारा बलपूर्वक कराए गए अस्वच्छ वृत्ति के कारण उत्पन्न हुई जातियाँ उन दिनों थीं, विदेशी आक्रांता शासकों द्वारा सामाजिक दृष्टि से इतना हेय बना दी गई थी कि उनको अपनी सामाजिक परिस्थिति वापस प्राप्त करने में ही सदियाँ लग गई थीं। उनकी आर्थिक स्थिति इतनी दयनीय बना दी गई थी कि विद्यालय की ओर देखने की उनकी स्थिति ही नहीं थी और वे जन्म लेते ही दो जून की रोटी में ही व्यस्त हो जाते थे।[1] यही कारण था कि प्राचीन जातियाँ जो अपना राजवंशीय गौरवशाली इतिहास रखती थीं, दलित बनी और खटिक जाति भी सामाजिक दृष्टिहीन होकर दलितों की अवस्था में पहुँच जाने से दलित श्रेणी में जा पहुँची।

अत: कहा जा सकता है कि खटिक जाति के त्रि-स्तरीय दलन के लिए पूरी तरह से विदेशी मुसलिम आक्रांता एवं शासक जिम्मेदार थे। जन्मजात वैर-भाव रखने के कारण अंग्रेजों ने भी इस जाति के विकास को हर स्तर पर अवरुद्ध किया। और ये दोनों ही परिस्थितियाँ खटिक जाति को दलित बनाने का कारण बनी।

मुगल शासकों ने जाति-वर्ग में ऊँच-नीच का मापदंड व्यवसायगत बनाया और जो भी जाति-वर्ग निम्न व्यवसायों में लगाए गए थे, उन जातियों को स्वत: निम्न हो जाने दिया। वे जब बलपूर्वक लोगों को मुसलमान बना सकते थे, तो बलपूर्वक किसी भी जाति को अछूत कहने अथवा मानने पर बलपूर्वक प्रतिबंध भी लगा सकते थे। यदि वे आदेश प्रेषित कर देते कि मलिन और अस्वच्छ कार्यों में लगे लोगों के साथ भेदभाव अथवा छुआछूत का जो व्यक्ति व्यवहार करेगा तो उसे मौत की सजा दी जाएगी अथवा उसको भी उसी पेशे में बलपूर्वक नियोजित कर दिया जाएगा, तो वैसा नहीं हुआ। विदेशी मुसलिम आक्रांता शासक तो स्वयं चाहते थे कि लोग उपेक्षित होंगे तो विवश होकर इसलाम स्वीकार करें। यद्यपि उनकी विचारधारा धरी-की-धरी रह गई और स्वाभिमानी एवं देशभक्तों ने अस्पृश्य होना स्वीकार किया परंतु बलपूर्वक इसलामिक धर्म-परिवर्तन को ठुकराते हुए इसलाम को किसी भी मूल्य पर स्वीकार नहीं किया।

मुगलों ने सम्मानित, धर्माभिमानी, राष्ट्राभिमानी एवं उच्च जाति वर्ग के लोगों को

---

1. धर्मपाल : (ब्यूटीफूल ट्री) रमणीय वृक्ष, (इस संदर्भ में विस्तृत विवरण इस पुस्तक में देखा जा सकता है।)

उनका सम्मान भंग करने के लिए अस्वच्छ कार्यों में लगाने के साथ ही उनकी धन-संपदा को छीनकर उनकी आर्थिक स्थिति पर और भी बड़ा आघात पहुँचाया। यदि वे प्रखर हिंदू विचारधारावाले लोग धन-संपत्ति से कमजोर नहीं रहे होते तो अपने धर्म-कर्म, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का संपादन करते रहते और समाज की मुख्यधारा से वे अलग-थलग नहीं पड़े होते। परंतु ऐसा नहीं हुआ। उनको लूटकर मात्र निर्धन ही नहीं बनाया गया बल्कि विभिन्न प्रकार के अपराधों के लिए जातिविशेष को जिम्मेदार नामित किया। ऐसे बहुसंख्यक समाज को दलित बनाने की उनकी सोची-समझी रणनीति थी, जिसको सफल बनाने में वे तभी तक सक्षम थे जब तक कि उनका शासन था।

विदेशी शासकों ने जिन लोगों को दलित बनाया, उसके पूर्व उनके गौरवशाली इतिहास को ही जला डाला। किसी भी अंग्रेज लेखक ने भारत के बलपूर्वक दमन एवं दलन के उपरांत बनाए गए ऐसे दलितों के राजवंशीय इतिहास पर लेखनी नहीं चलाई बल्कि यह लिखा कि वे लोग भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में रहते हैं, और उनकी कोई राजनीतिक पहचान नहीं है, बल्कि वे शूद्र श्रेणी के मजदूर हैं जिनसे निःशुल्क सेवा एवं दास के रूप में काम भी लिया जा सकता है। विदेशी शासकों के इसी दृष्टिकोण ने खटिक जाति को भी दलित श्रेणी में पहुँचाया।

## 8.3 दलित जातियों के पुनरुत्थान में ही राष्ट्रहित

राष्ट्रहित का प्रश्न प्रत्येक काल में सर्वोपरि रहा। व्यक्ति, परिवार, समाज, गाँव, प्रदेश आदि सबसे ऊपर होकर राष्ट्रहित की बात महत्त्व रखती है। किसी देश का दुर्दिन आने को होता है तो राष्ट्रहित का चिंतन गौण हो जाता है। हिंदुस्थान के गुलाम होने का प्रधान कारण राष्ट्रहित चिंतन का अवरुद्ध होना ही था।

डॉ. रामधारी सिंह दिनकर ने हिंदू हार का कारण बतलाते हुए लिखा है कि हिंदुओं का राजनीतिक जीवन बंद हो गया था, इसलिए उनकी हार हुई। उन्होंने स्पष्ट किया है कि मनुष्य बलहीन पहले होता है, पराजय उसकी बाद में होती है। देश की एकता पहले टूटती है, दासता उस पर बाद में आती है। उन्होंने राष्ट्रहित की ओर से हिंदुओं के ध्यान हट जाने का उल्लेख इन शब्दों में किया है—

'असल में, पतन तो इस देश का हर्षवर्द्धन के बाद ही आरंभ हो गया था, क्योंकि उसके बाद चक्रवर्ती सम्राट् के पद पर भारत में कोई राजा नहीं बैठ सका था। केंद्र की शक्ति टूट गई और कोई किसी को कोई रोकनेवाला न रहा। परिणाम यह हुआ कि सारे देश में छोटे-छोटे राज्य उठ खड़े हुए और वे आपस में ही युद्ध करने को अपना परम कर्तव्य मानने लगे। अपना राज्य और अपनी राजधानी राजाओं को इतनी प्यारी हो उठी

कि देश का अस्तित्व ही वे भूल बैठे।'[1]

डॉ. अंबेडकर ने पूना समझौता इसी राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर स्वीकार किया था और आह्वान किया था कि हिंदू समाज की कायरता को दूर करें, भाई-चारा का वातावरण बनाएँ, सामूहिक उत्सव आयोजित करें, विभेदकारी बातों पर ध्यान न दें, अपने में आत्मसम्मान का भाव जागृत करें, सभी लोग सर्वप्रथम अपने को भारतीय मानें, राष्ट्र के प्रति अपनी निष्ठा को सर्वाधिक महत्त्व दें, संगठित, महान् और समृद्ध भारत का स्वप्न साकार करें, मार्क्सवादी तथाकथित नैतिकता को अस्वीकार करें, सफलता और सम्मान न मिलने पर भी मिलकर चलते रहें, सफलता के लिए असंवैधानिक मार्ग न अपनाएँ, अपने ऊपर विश्वास करें और कठोर परिश्रम करें, हिंदू धर्म पर डटे रहो।[2]

राष्ट्रहित को सर्वोपरि माननेवाले डॉ. अंबेडकर स्वयं भी एक महान् राष्ट्रवादी थे। उनके इस चरित्र की प्रशंसा में डॉ. कृष्णगोपाल ने लिखा है—'डॉ. अंबेडकर का जीवन राष्ट्र तथा दीन-हीनों की सेवा के लिए समर्पित था। उन्हें एक ओर करोड़ों दुःखी-पीड़ित लोगों के अधिकारों की रक्षा का प्रश्न, तो वहीं दूसरी ओर राष्ट्रहित का सतत स्मरण था। हम जहाँ भी उनको देखते हैं राष्ट्रीय हितों का संरक्षण-संवर्धन करता हुआ पाते हैं। यद्यपि अपने ही धर्मानुयायियों के व्यवहार के कारण वे दुःखी थे परंतु कष्ट और अपमान उनको, उनके देशभक्ति के विचार तथा व्यवहार से विचलित नहीं कर पाए। उनकी देशभक्ति के उदात्त स्वरूप को प्रकट करनेवाले उदाहरण दीर्घकाल तक देश के नागरिकों का मार्गदर्शन करते रहेंगे।'[3]

राष्ट्रहित का उपरोक्त विचार वास्तव में विचारणीय एवं अनुकरणीय है, परंतु यह केवल कुछ ही लोगों का विचार बनकर शाश्वत नहीं कर सकता। अकेले-अकेले तो अनेक हिंदू राज्यों ने राष्ट्रहित की सोच बनाई थी, किंतु उनके विचार मात्र उनके ही राज्य तक सीमित रहने से त्रुटिपूर्ण थे। उनको बृहत्तर भारत के हित को राष्ट्रहित के रूप में देखना चाहिए था। यही अपील अथवा आह्वान डॉ. अंबेडकर का है और इसी के लिए सभी समाज-सुधारक तथा जनप्रतिनिधि भी कहते आए हैं। आज भी कहना पड़ रहा है, क्योंकि समाज में एक बहुत बड़ी जनसंख्या जिसे दलित नाम दिया गया है, वह अभी तक अपनी रोजी-रोटी के अतिरिक्त और कुछ भी सोचने की स्थिति में नहीं है। यह विशाल आबादी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक तीनों स्तरों पर अभी भी पीछे है।

---

1. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-258-259
2. डॉ. अंबेडकर संपूर्ण वाङ्मय, भाग-1, पृष्ठ-73, 78, 92, लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-104, दस स्पोक अंबेडकर, भाग-1, पृष्ठ-139, राइटिंग्स एंड स्पीचेज, भाग-7 पृष्ठ-76-79, भाग-8 पृष्ठ-354 तथा अंबेडकर एक चिंतन, पृष्ठ-34, 89
3. डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार, पृष्ठ-82

जब तक इन दलित जातियों का पुनरुत्थान नहीं किया जाता, तब तक राष्ट्रहित के लिए दलित जातियों का पुनरुत्थान होना आवश्यक है।

यहाँ उत्थान और पुनरुत्थान का अभिप्राय भी समझना समीचीन होगा। वस्तुत: किसी भी देश अथवा व्यक्ति (जाति) का उत्थान कुछ कठिन होता है। इसके लिए समस्त पक्षों से संबंधित योजनाएँ निर्मित करनी पड़ती हैं, क्योंकि जिसका उत्थान किया जाना होता है, कभी-कभी देखा गया है कि वे उत्थान शब्द की परिभाषा तक से अवगत नहीं होते। उत्थान विकास की अंतिम अवस्था है, इसलिए इसमें श्रम, साधन, समय इत्यादि अधिक लगता है।

पुनरुत्थान में अधिक प्रयास नहीं करना होता, इसलिए वह दुष्कर अथवा कठिन भी नहीं है। जिसका पुनरुत्थान होना होता है, उसका उत्थान हो चुका होता है, परंतु कालांतर में उसका पतन भी हुआ होता है। अर्थात् पुनरुत्थानवाले समाज को उत्थान और पतन दोनों का ज्ञान होता है, अतएव पुनरुत्थान के लिए केवल उसे कुछ व्यवस्थाओं एवं संसाधनों (सहायताओं) की ही आवश्यकता होती है। यही आवश्यकता खटिक एवं अन्य दलित जातियों के पुनरुत्थान के लिए आवश्यक हो गई है जिसके लिए हर प्रकार से दलित शुभचिंतक चिंतित दिखलाई देते हैं, परंतु सबकी चिंतनधारा अलग-अलग है।

एक वैचारिकी यह मानती है कि संविधान में निहित दलित पुनरुत्थान की व्यवस्थाओं के अनुसार उनको संपूर्ण प्रकार के लाभ मिलने चाहिए। यह चिंतन लोकतांत्रिक एवं उपयुक्त है। इसमें हिंसा नहीं है। समाज के टूटने, बिखरने और फिर से दासत्व को प्राप्त करने का भय नहीं है।

दूसरा विचार त्वरित उत्थान की बात करता है और इसके लिए असंवैधानिक प्रयासों को भी स्वीकार किया गया है। इस वैचारिकी में दलित हित प्रथम स्थान पर है, राष्ट्रहित भले ही गौण हो जाए। ऐसे में हिंसा स्वाभाविक है, क्योंकि इसमें समरसता रहेगी ही नहीं। आज इसे ही उग्रवाद, नक्सलवाद और आतंकवाद के रूप में देखा जा सकता है। इसके लिए जनवादी सोच दोषी है या साम्यवादी वैचारिकी, यह कहना कठिन है क्योंकि ये भी अपने को जनसेवी और दलित संरक्षक ही बतलाते हैं।

हमारा अपना मत यह है कि खटिक जैसी अन्य सभी दलित जातियों का हित उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विकास से ही संभव है इसलिए उनका पुनरुत्थान भी इन्हीं तीन आवश्यकताओं के इर्द-गिर्द चक्रण करता है। मार्क्सवाद जिस समता की बात करता है, वह किसी भी जीव और आत्मा के सापेक्ष धर्मात्मा और परमात्मा की मान्यतावाले देश में संभव नहीं है। यह चिंतन अप्राकृतिक एवं अस्वाभाविक है। पृथ्वी पर उत्पन्न लगभग चार सौ करोड़ लोग एक समान नहीं हैं, प्राकृतिक वनस्पतियों या पेड़-पौधे एक समान नहीं हैं, एक ही प्रजाति के करोड़ों-करोड़ जीव अलग-अलग

रूपरंग के होते हैं। वैसे ही मानव कैसे एक समान हो सकता है? समता अथवा समानता अप्राकृतिक है। इस प्रकार हिंदू वैचारिकी के मध्य पाई जानेवाली सामाजिक समरसता प्राकृतिक एवं स्वाभाविक है, क्योंकि हिंदू जीवन पद्धति पूर्णतः प्रकृतिपरक है और, प्रकृति विविधताओं वाली है। अतः परिस्थितिजन्य विविधता का दर्शन स्वाभाविक है।

विविधता को समाप्त करके समता की स्थापना का स्वप्न कभी साकार होनेवाला नहीं, हिंदुस्थान में तो एकदम नहीं। समता और समानता की वैचारिकी यहाँ अप्रासंगिक है, क्योंकि समता लाने के लिए किसी के भव्य भवन को ध्वस्त करके झुग्गी-झोपड़ियों को उसके ध्वंसावशेषों से किसी भी इमारत का रूप देना मानवीय व्यवहार की सीमा का लंघन है। इस प्रकार के सिद्धांत को समाज सहन नहीं कर पाएगा और भयंकर रक्त-पात का ही जन्म होगा।

समता के स्थान पर हिंदुस्थान में समरसता की बात प्रासंगिक है। यह युगानुरूप भी है। इसमें हिंसा नहीं, रक्तपात नहीं और उथल-पुथल भी नहीं है। कहीं खुशी और कहीं गम भी नहीं है। सभी के सुख की संभावना है। इससे खटिक और अन्य दलित जातियों का पुनरुत्थान संभव है। इससे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक समरसता स्थापित करके दलित जातियों का पुनरुत्थान किया जा सकता है।

पुनरुत्थान का उद्देश्य प्राचीन गौरवशाली परिस्थिति एवं भूमिका की पुनः प्राप्ति एवं सर्वोन्मुखी विकास से है। जब कोई देश अथवा जाति पुनरुत्थान करती है तो वह अपना सर्वोन्मुखी विकास के साथ अपनी प्राचीन पहचान को स्थापित करती है। राष्ट्र का हित उसके सर्वोन्मुखी विकास में निहित है। सर्वोन्मुखी विकास का संबंध सभी व्यक्तियों के विकास से संदर्भित है। इसमें व्यक्ति अथवा कोई वर्ग विशेष नहीं, अपितु सभी व्यक्तियों के विकास से संदर्भित है। इसमें व्यक्ति अथवा कोई वर्ग विशेष नहीं, अपितु सभी व्यक्ति और सभी वर्ग के लोग विकास के शिखर पर होते हैं। देश की संपूर्ण जनसंख्या विकसित होती है तो उसे विकसित देश कहते हैं। अमरीका एक विकसित देश है। उसकी संपूर्ण आबादी लगभग उतनी ही है जितनी आबादी हिंदुस्थान में दलितों की है।

हिंदुस्थान में दलित की श्रेणी में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और कुछ पिछड़ी जातियाँ सम्मिलित की जाती हैं। इनकी कुल संख्या देश की संपूर्ण आबादी का एक-तिहाई है। बल्कि उससे कुछ अधिक ही है। वर्तमान समय में कुल दलित संख्या 35 करोड़ है। कल्पना की जा सकती है कि 35 करोड़ लोग जिस देश में पिछड़ जाएँ तो उस देश का विकास क्यों न अवरुद्ध होगा? अमरीका जैसे विकसित देश की पूरी जनसंख्या से भी अधिक लोग विदेशी आक्रांता अरब के मुसलिम शासकों के योजनाबद्ध रणनीति के कारण हिंदुस्थान में पिछड़ गए हैं और विकास की मुख्यधारा

से दूर हैं। कालांतर में अंग्रेज शासकों द्वारा अपनी सत्ता की आयु बढ़ाने के लिए हिंदुओं को आपस में बाँटने हेतु किए गए प्रयासों का भारी प्रभाव रहा।[1] उनका विकास न होने का प्रभाव इस देश पर भी पड़ रहा है। राष्ट्रहित में विकास-दर का आवश्यक लक्ष्य आज बहुत दूर छूट गया है। इसका एक ही कारण है—35 करोड़ दलितों का पुनरुत्थान न किया जाना।

दलितों का पुनरुत्थान अब प्राथमिकता के आधार पर आवश्यक एवं अनिवार्य किए जाने का समय है। इसमें जितना ही विलंब हो रहा है, देश का विकास उतना ही विलंबित होना तय है। देशभक्ति का दंभ भरनेवाले जो लोग इस देश को आगे बढ़ाना चाहते हैं, वे यदि तत्काल दलितों के पुनरुत्थान में नहीं जुट जाते हैं, तो उनकी सारी देशभक्ति धरी रह जाएगी और यह देश उनके सामने ही पिछड़ जाएगा और पुनः यूरोपीय समुदाय का दास बन जाएगा। अतएव दलित सशक्तीकरण इस देश की प्रथम आवश्यकता है और इसी में राष्ट्रहित भी है।

राष्ट्रहित में खटिक जाति एवं अन्य दलित जातियों का पुनरुत्थान कार्य कुल चार क्षेत्रों में संपादित किए जाने की आवश्यकता है, क्योंकि इन चार क्षेत्रों में ही विदेशी दलन का शिकार होने से दलित कहलाए, इन्हीं क्षेत्रों में पिछड़ने से ये विकास की मुख्यधारा से दूर होते चले गए और इन्हीं क्षेत्रों में प्रगति करने से इनका पुनरुत्थान हो सकेगा। वे क्षेत्र हैं—सामाजिक क्षेत्र, आर्थिक क्षेत्र, शैक्षिक क्षेत्र और राजनैतिक क्षेत्र। आगे इन सभी क्षेत्रों में विकास यानी पुनरुत्थान की संभावनाओं का उल्लेख किया गया है।

## 8.4 खटिक जाति का सामाजिक उत्थान आवश्यक

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज से है अतएव उसे समाज द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार ही अपनी सामाजिक परिस्थिति प्राप्त करके तद्नुसार जीवन-यापन करना पड़ता है। खटिक जाति को समाज में पहले 'खट्टिक ब्राह्मण' की परिस्थिति प्राप्त थी। इस स्थिति में रहकर वह धर्म-यज्ञों में पशु-बलि का कार्य करता और धर्म-रक्षा की प्राप्त भूमिका का निर्वाह करता था। बाद में उसे देशरक्षा का दायित्व सौंपा गया और उसकी नवीन परिस्थिति यानी क्षात्र धर्म को देश एवं समाज (कार्यरक्षा) पर आधारित क्षत्रिय-कुल से जोड़ दिया गया। उसी के अनुसार उसके अनेक राजवंशों का शासन-क्रम हिंदुस्थान के प्राचीन इतिहास में अंकित है। मध्ययुग में उसे उसी रूप में विदेशी आक्रांताओं से युद्ध करना पड़ा जिसमें उन युद्धों में खटिक जाति की भूमिका ने वीरता

1. धर्मपाल : ब्यूटीफुल ट्री (इस पुस्तक में शिक्षा के क्षेत्र में दलितों को किस प्रकार अंग्रेजों द्वारा पीछे किया गया, उसका विस्तृत विवरण है।)

का परिचय दिया। मुसलिम शासनकाल में खटिक जाति का निरंतर उत्पीड़न हुआ। उसकी सारी धन-संपदा छीन ली गई। उसकी जीविका पर आघात किया गया और रोजी-रोटी की समस्या उत्पन्न की गई। उसका राजवैभव समाप्त हो जाने पर मांस और कृषि-कर्म के आधार पर उसकी सामाजिक परिस्थिति निम्न बना दी गई। अस्तित्व रक्षा के लिए उसने इसलाम के शत्रु-पशु का पालन आरंभ किया तो उसकी सामाजिक परिस्थिति को अस्पृश्यता से जोड़ दिया गया।

इस प्रकार विदेशी मुसलिम आक्रांताओं के शासनकाल में खटिक जाति का भयंकर उत्पीड़न हुआ और उसे जंगलों में भी पलायन कर खानाबदोश जीवन में भी रहना पड़ा। मुगलों ने इस जाति का इतना उत्पीड़न, दमन एवं दलन किया कि अंग्रेजों को इनकी दयनीय स्थिति देखकर इनको भ्रमित करके इनकी सहानुभूति प्राप्त करने के उद्देश्य से इसे दलित श्रेणी में लाना पड़ा। इस श्रेणी को उन्होंने बाद में उस समय दिया जब अन्य दलित जातियों का दलित नामकरण किया जाने लगा। उनसे पहले तो अंग्रेजों ने इस जाति में स्वतंत्रता की प्रखर ज्वाला को देखकर इन्हें असामाजिक कहकर अपराधी की श्रेणी में डाल दिया था ताकि कभी भी इनको शासनादेश के अंतर्गत प्रताड़ित किया जा सके।

अन्य दलित जातियों के साथ इस जाति के प्रति भी देश के कुछ जागरूक लोगों में दया के भाव उत्पन्न हुए। राजा राममोहन राय और उसके बाद अनेक जनप्रतिनिधियों, संतों, महापुरुषों ने भी प्रयास किए। सभी ने अन्य अस्पृश्य घोषित जातियों के साथ ही खटिक जाति के प्रति अस्पृश्यता को समाप्त करने पर आम सहमति जताई। उनके प्रयास से अस्पृश्यता और भेदभाव तथा तिरस्कारपूर्ण जीवन में कुछ आशा जागृत हुई। सामाजिक कुरीतियों पर नियंत्रण स्थापित किया गया।

खटिक सहित सभी अस्पृश्य घोषित जातियों के लिए श्री एस.के. बोले ने यह माँग की कि समस्त सार्वजनिक स्थान, जैसे—कुआँ, तालाब, अस्पताल, विद्यालय आदि पर विना किसी भेदभाव के इन जातियों को जाने की छूट दी जाए। बंबई विधान परिषद् में यह प्रस्ताव रखते हुए श्री बोले ने कहा था—

'अस्पृश्यता भारत माता के श्रेष्ठ नाम के ऊपर कलंक की तरह है और यदि यह तुरंत दूर नहीं होती है तो अछूत लोग अपने अधिकारों के लिए सत्याग्रह करेंगे। आज समय आ गया है, जब सभी हिंदू मिलकर अस्पृश्य बंधुओं के प्रति अपना व्यवहार बदलकर उन्हें अपने गले लगाएँ।[1]

वीर सावरकर उस समय हिंदू महासभा के उच्च पदाधिकारी थे। 12 वर्षों तक

---

1.डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार, पृष्ठ-55

अंडमान में जेल की सजा काटकर 6 जनवरी, 1924 को जब वह आए तो उन्होंने भी अस्पृश्यता को समाप्त करने पर एक जोरदार वक्तव्य दिया-प्रयास भी किए। सावरकरजी अपने इस प्रयास को किसी भी युद्ध से कम महत्त्वपूर्ण नहीं मानते थे।[1]

भेदभाव मिटाने के लिए कहा गया कि सभी पुत्र एक ही माँ की संतानें हैं। सबको यज्ञ करना चाहिए। सबको यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए। सबको वेद पढ़ना चाहिए। इससे अस्पृश्य लोगों को बहुत लाभ हुआ किंतु पूरा लाभ नहीं मिल पाया, क्योंकि रूढ़िवादी विचारोंवाले लोग उस समय भी कुछ अवश्य रह गए थे, जो इसके लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं थे। ऐसे ही लोगों के लिए डॉ. अंबेडकर ने अस्पृश्यता को अपराध की संज्ञा प्रदान की, ताकि भविष्य में भेदभाव रखनेवाले दंडित किए जा सकें। डॉ. अंबेडकर के इस प्रयास का देश की संपूर्ण जनता ने पूरा स्वागत एवं समर्थन दिया।

हिंदू खटिक जाति के सापेक्ष यदि समकक्ष सभी दलित जातियों के बारे में देखा जाए तो यह ज्ञात होता है कि प्रारंभिक सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में चिह्नित दलित जातियों ने अपने प्रति होनेवाले अन्याय एवं सामाजिक दुर्व्यवहार के प्रति निरंतर संघर्ष किया है। इनका संघर्ष प्रवाहमान सामाजिक चिंतन का प्रतिफल रहा है।

मध्यकाल में दलित सामाजिक चिंतन का प्रतिनिधित्व करनेवाले चिंतकों में कबीर, दादू, नानक, रैदास आदि का नाम उल्लेखनीय है। सभी ने तथाकथित उच्च लोगों से आग्रह किया कि दलित अथवा निम्न लोगों से संबंध अथवा निकटता बनाए रखना न केवल किसी दलित के लिए अपितु उनके लिए भी उपयोगी होगा।

आधुनिक भारत में दलित जातियों का सामाजिक चिंतन मुख्यत: गांधी एवं अंबेडकर के चिंतन से प्रभावित रहा। वेद को प्राचीन धर्मग्रंथ मानते हुए लोगों को समझाया गया कि वेदों में कहीं भी अस्पृश्यता का उल्लेख नहीं है। विधि निषेध तर्कसंगत होने चाहिए[2], क्योंकि ये नियम हिंदू धर्म की उदात्त भावनाओं के पूर्णत: विपरीत है।[3]

खटिक जाति का सामाजिक उत्थान कई प्रकार से संभावित है। सर्वप्रथम समाज को इसकी जानकारी कराई जाए कि प्राचीनकाल में इस जाति का एक गौरवशाली इतिहास रहा। महाभारत में महर्षि व्यास द्वारा जिस व्याघ्र गीता को स्थान दिया गया है, उसके महान् प्रणेता महर्षि व्याघ्र थे जिनसे खटिक अथवा आखेटक जातियों की उत्पत्ति एवं मांस व्यवसाय नामक वृत्ति का इतिहास अवगाहित है। इस जाति के लोग वैदिककाल में धर्म के पुनीत एवं संस्कारादि कार्य यज्ञों में पशु-बलि देने का दायित्व निर्वाह करते

1. लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-463
2. गांधी एम.के. : नवजीवन पब्लिकेशन, अहमदाबाद
3. श्रीवास्तव, के.एल. : दि पोजीशन ऑफ हिंदूज अंडर, दि दिल्ली सल्तनत, 1206-1526, पृष्ठ-160-172

थे और समाज में 'खट्टिक ब्राह्मण' के रूप में प्रतिष्ठित थे। इक्ष्वाकु वंश के महाराजा खट्वांग से प्रारंभ राजवंशावली से खटिक जाति के बारे में उल्लेख पौराणिक एवं धार्मिक ग्रंथों में वर्णित हैं। महाराज खट्वांग ही भगवान् श्रीराम के पूर्वज थे। कठोपनिषद् की रचना इसी जाति के महर्षि ने की। काठियावाड़ का नाम इसी कठ, कठिक (खटिक) जाति के नाम पर पड़ा। काठोर राज्य जिसकी राजधानी सांगल थी, इनकी ही थी। सिकंदर, तैमूरलंग, महमूद गजनबी आदि से लोहा इसी जाति ने लिया। अंग्रेजों द्वारा बनाई गई कस्टम रेखा को इसी जाति ने तोड़ा। 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम का बिगुल इसी जाति के तितोरिया खटिक ने मेरठ में बजाया और हिंदुस्थान से कंपनी राज को उखाड़ फेंका। अंग्रेजों ने विवश होकर इस जाति को अपराधी घोषित किया, जबकि इस जाति के हजारों-हजार लोग स्वतंत्रता सेनानी थे।

उपरोक्त इतिहास का अवलोकन करने पर समाज में लोगों की इस जाति के प्रति आस्था जागृत होनी स्वाभाविक है। मांस व्यापार और सुअर पालन को लेकर यदि कुछ कमी रह जाती है, तो ऐसे लोगों को कहना होगा कि आरंभ में मांस व्यवसाय खटिक जाति से संबंधित था और वह स्वभाव बोध से आच्छादित था और हिंदू संस्कृति तथा हिंदू धर्म, दोनों में ही स्वधर्म का पालन करना अनिवार्य था, इसलिए खटिक जाति को महर्षि व्याघ्र की ही भाँति मांस का व्यापार करना पड़ा। परंतु इससे समाज में अपनी प्रतिष्ठा को गिरता देखकर धीरे-धीरे खटिक जाति ने मांस व्यापार बंद कर दिया है अथवा बंद करने लगे हैं और उसके स्थान पर फल-व्यवसाय और अन्य व्यवसाय भी प्रारंभ कर रहे हैं और वर्तमान समय में जाति-भेद स्वत: समाप्त भी होता जा रहा है। ऐसे में खटिक जाति की सामाजिक परिस्थिति भी समाज के अन्य उच्च जातियों की तरह होती जा रही है। अतएव अब किसी को भी इसकी उच्च सामाजिक स्थिति को स्वीकार कर लेने में कठिनाई नहीं है। यदि कोई इसके बाद भी इनको अस्पृश्य और समाज बहिष्कृत बतलाने का प्रयास करता है, तो उनके लिए संविधान में उल्लिखित धाराओं का उपयोग करके उसे दंडित किया जा सकता है।

वर्तमान समय में समाज को समझाना होगा कि जीविका और जाति से कोई संबंध नहीं रह गया है। अनेक उच्च वर्ण एवं जाति के लोग चमड़े के क़ारखानों में काम करने लगे हैं। इससे वे अपनी जाति नहीं बदल लिए हैं। रेलवे जैसे प्रतिष्ठानों में सफाई का काम निविदा पर करने के लिए सभी जाति के लोग जुटे हुए हैं, अतएव उनको सफाईकर्मी जाति की संज्ञा देना अनुचित है। मांस का व्यापार, फल का व्यापार यह सब भी कई जाति के लोग करने लगे हैं। अत: खटिक जाति के पीछे लगा हुआ कार्य-व्यवसाय का यह अभिशाप भी यहीं समाप्त हो जाता है।

धर्म-कर्म को आधार मानकर खटिक जाति की समीक्षा की जाए तो यह जाति

धर्म-कर्म के मामले में भी किसी सामान्य हिंदू जाति से पीछे नहीं है। धार्मिक कार्यक्रमों का आयोजन और आयोजित कार्यक्रमों में तन-मन-धन से भाग लेना इसका परंपरागत व्यवहार रहा है। यह जाति समस्त हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार ही जीवन व्यतीत कर रही है। पूजा-पाठ, तीर्थाटन, स्नान पर्व, दान-धर्म आदि सभी में यह जाति उत्साहपूर्वक भाग लेती है। अनेक धर्मपुरोधा भी इस जाति में उत्पन्न हुए हैं, जिनको सारा समाज आदर के साथ पूजता है।

आजकल किसी भी सामाजिक स्थिति का आकलन उसके शैक्षिक स्तर और आर्थिक दशा पर भी किया जा रहा है। खटिक जाति अब इस दिशा में भी आगे निकल रही है। खटिक जाति की संस्थाएँ विकास-पथ पर अग्रसर हैं। उनको और भी प्रगतिशील बनाने की आवश्यकता है। समाज में खटिक जाति की संस्थाओं द्वारा पत्रिका आदि का प्रकाशन भी आवश्यक है, ताकि लोगों को कुछ-न-कुछ जानकारी प्राप्त होती रहे। बुद्धिजीवी प्रोफेसर स्तर के लोग, अधिकारी संवर्ग के महान् सचेतक और संपन्न स्वजातीय भी खटिक संस्थाओं का सहयोग करके इस जाति की सामाजिक दशा को उन्नत करने में सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

वर्तमान समय में खटिक जाति का प्रतिनिधित्व शासन-सत्ता में कम है, और है भी तो बहुत नहीं है। इतनी बड़ी जनसंख्यावाली इस जाति में एकता का बीजारोपण जिस दिन हो जाएगा, और चारों ओर से इस जाति के विधायक और सांसद जब सत्ता में भागीदारी निभाने लगेंगे तो वह दिन दूर न होगा कि यह जाति अपना खोया हुआ सामाजिक स्तर पुनः प्राप्त कर लेगी।

## 8.5 खटिक जाति का आर्थिक विकास आवश्यक

मानव समाज अर्थ का दास इसलिए कहा गया है कि उसकी सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आदि सभी आवश्यकताएँ बिना अर्थ के संपूरित नहीं हो पाती हैं। इसी अभिप्राय से अर्थोपार्जन आवश्यक होता है। कोई व्यक्ति, समाज अथवा जाति अर्थाभाव में ही दीन, दयनीय और निम्न की संज्ञा प्राप्त करती है।

खटिक जाति चूँकि शासन और सत्ता से निरंतर टकराती रही इसलिए मध्ययुग में ही विदेशी मुसलिम आक्रांता शासकों द्वारा उसकी संपूर्ण आर्थिक क्षमता को बलपूर्वक तहस-नहस कर दिया गया था ताकि वह विद्रोह न कर सके और उन विदेशी मुसलिम आक्रांताओं को बिना किसी प्रकार की बाधा के शासन करने का अवसर मिल सके। अंग्रेजों के समय भी यह जाति अपने उग्र स्वभाव और दासत्व नापसंद करने के कारण अंग्रेजी सत्ता से निरंतर लोहा लेती रही। अतएव अंग्रेजों ने प्रयत्नतः इसकी आर्थिक स्थिति को और भी दयनीय बनाने का प्रयास किया।

इस अवस्था को सुधारने और आर्थिक क्षेत्र में विकास का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कहीं अन्यत्र से आज कोई सहायता नहीं मिलनेवाली है। इसलिए आरक्षण के अंतर्गत सरकारी सुविधाओं का उपयोग करने हेतु निर्धारित अर्हताएँ पूरी करना आवश्यक है। इसका लाभ सबसे गरीब स्तर के खटिक समाज को प्राप्त होगा। उच्च एवं मध्यम स्थितिवाले स्वजातीय लोगों को निम्न आर्थिक दशावालों का सहयोग उसी तरह करना होगा जिस तरह से मारवाड़ी संघ आदि में लोग करते हैं और जिसके परिणामस्वरूप उस जाति में कोई भी ऐसा नहीं है जो दयनीय आर्थिक स्थिति में जी रहा हो। उन्नत अवस्थावालों को भी मध्यम और निम्न अवस्थावालों का सहयोग करना चाहिए। वे लोग जो भी प्रतिष्ठान स्थापित करें उसमें स्वजातीय बंधुओं को प्रमुखता के साथ स्थान दें ताकि तीव्र गति से यह जाति अपनी स्थिति को अर्थ संपन्न बना सकें।

हिंदू खटिक जाति के लोगों को चाहिए वे कठोर परिश्रम करें और धंधे में संकोच न करके विविध प्रकार के प्रयास से आय अर्जित करें। ध्यान यह रहे कि धन अर्जित करते समय वे अधर्म के रास्ते पर न जाएँ और प्रयत्नतः वही धंधा करे जिससे उनकी सामाजिक स्थिति पर कोई प्रतिकूल प्रभाव भी न पड़े। उदाहरण के लिए आप स्वयं देख सकते हैं कि फल-व्यापार के प्रति किसी के मन में कोई घृणा-भाव नहीं है, किंतु सुअर मांस बेचनेवाले खटिक के प्रति लोगों के मन में पवित्रता को लेकर घृणा का भाव उत्पन्न होता है। अतः जीविका का कोई अन्य साधन भी चुन लेने में कोई परेशानी नहीं है। स्वच्छता और पवित्रता से भी घर में लक्ष्मी का निवास होता है, एक हिंदू खटिक इसमें पूरा विश्वास करता है।

वैश्विक धारा ने समाज को एक ऐसा स्वरूप प्रदान किया है कि उसका उपयोग कहीं-कहीं आवश्यक होने पर किया जा सकता है। जैसे—कृषि करनेवाले को पहले अच्छी सामाजिक दशा का नहीं माना जाता था, इसलिए खेत जोते, बोने, काटने आदि सभी कार्यों के लिए मजदूर रखे जाते थे। विज्ञान ने ट्रैक्टर उपलब्ध कर दिया। बिजली की व्यवस्था हो गई। खेती का संपूर्ण कार्य सभी लोग खुद ही करने लगे। अब ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य सभी लोग अपनी खेती अपने हाथ से ही करके संतुष्ट हैं। खटिक जाति के लिए भी कुछ यही संस्तुति है कि वह विज्ञान का लाभ उठाएँ। वह अपनी कृषि, व्यापार-पद्धति सभी में परिवर्तन लाए। मांस-व्यवसाय को अथवा सुअर-पालन को धीरे-धीरे सार्वजनिक रूप से स्वीकृति मिलने लगी है और इसके लिए सरकार व्यवस्था भी दे रही है। खटिक लोग उन व्यवस्थाओं का उपयोग करे। आवास अन्यत्र और सुअर-पालन अन्यत्र करें। इसके लिए मशीनों का उपयोग करें तथा आवश्यकतानुसार कर्मचारी भी रखे। थोक का काम भले करें परंतु प्रयत्नतः काटने और बेचने का काम दूसरों से कराएँ और यदि कोई न करे तो काटकर बेचना बंद करें। सुअर तो विदेशों में

निर्यात हो रही है। इसका निर्यात करके भी लाभ अर्जित किया जा सकता हे। इसी तरह ठेला आदि पर फल-सब्जी न बेचकर अच्छी सी दुकानों में इसके लिए व्यवस्था बनाए। इस तरह व्यवसाय का स्वरूप बदल जाने से जाति के पीछे लगा हुआ प्रायोजित कलंक स्वत: मिट जाएगा। वर्तमान समय में सरकार द्वारा अनेक प्रकार की सुविधा प्रदान की जा रही है ताकि लोग अर्थोपार्जन करके देश की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड बन सके। यह जाति तो पहले से ही भारतीय अर्थव्यवस्था का मेरुदंड मान्य की गई है।

वर्तमान समय में (आजादी मिलने के बाद से) यह जाति आर्थिक क्षेत्र में अनेक उद्यमों से अर्थोपार्जन में लगी है। गरीब परिवार के लोगों का ध्यान फल-सब्जी व्यापार पर अधिक है। क्योंकि इसमें नकद भुगतान का लाभ प्रतिदिन मिल जाता है, इसलिए वे लोग लाभ का अंश अपने परिवार के लिए सुरक्षित निकालकर मूल पूँजी से दूसरे दिन का धंधा आरंभ कर लेते हैं। यह अवश्य है कि इसके लिए उनको कठोर परिश्रम करना होता है। प्रत्येक संभावित दरवाजों तक जाना होता है। इसमें बच्चों का भी सहयोग लेना होता है और उन्हें विद्यालय भेजने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इस पर हिंदू खटिक जाति को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि सबकुछ के बाद भी बच्चों की शिक्षा में व्यवधान न हो, अन्यथा अज्ञानता खटिक समाज के भविष्य को बहुत नीचे गिरा सकती है। मूर्ख के पास धन रहेगा तो चालाक लोग खाए बिना नहीं मरेंगे—यह पुरानी कहावत उन पर भी चरितार्थ होने लगेगी।

## 8.6 खटिक जाति का शैक्षणिक एवं राजनैतिक सशक्तीकरण

हिंदू धर्म में उल्लिखित भौतिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान की बातों का अवलोकन करने से पता चलता है कि प्राचीनकाल में देश के शिक्षा का स्तर उन्नत अवस्था में था। नालंदा, तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय केवल हिंदुस्थान में ही थे। ये विश्व के प्रथम विश्वविद्यालय थे जहाँ विदेशों से भी आकर छात्र ज्ञानार्जन करते थे। इन विश्वविद्यालयों में पुस्तकों का विशाल संग्रहालय था जिसमें विभिन्न विषयों पर पुस्तकें लिखकर रखी हुई थी—विशेषकर हस्तलिखित ग्रंथ अधिक थे। अज्ञानी अलाउद्दीन खिलजी ने अपने शासनकाल में सबसे घिनौना कार्य यही किया कि विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में आग लगवा दी। कई मंजिलें पुस्तकालय में असंख्य पुस्तकें कई महीनों तक जलती रहीं। साहित्य के उस प्रथम शत्रु को आज सभी धर्म, जाति और संप्रदाय के लोग अपशब्द से उसकी भर्त्सना करते हैं, क्योंकि वे पुस्तकें सबके लिए थीं और उनका लाभ सबको मिल सकता था।

मध्यकाल में भारतीय शिक्षा-व्यवस्था को ध्वस्त करने का परिणाम खटिक जाति को भी भुगतना पड़ा, अतएव अन्य दलित जातियों में जिस तरह से शैक्षिक स्तर निम्न

पाया जाता है, उसी प्रकार इस जाति में भी शिक्षा का स्तर उन्नत नहीं है। आर्थिक स्थिति अधिकांश परिवारों की अच्छी नहीं है, इसलिए लोग बच्चों एवं स्त्रियों को भी व्यवसायों में लगाए रखने हेतु विवश हैं। यह विवशता कुछ परिवारों में तो बहुत अधिक है, जबकि कुछ परिवारों में सामान्य स्थिति है।

उच्चतम आर्थिक स्थिति के हिंदू खटिक अपने बच्चों को अच्छे आधुनिक विद्यालयों में भेजकर मेडिकल और इंजीनियरिंग की शिक्षा दिला रहे हैं। प्रशासनिक स्तर की आई.ए.एस., पी.सी.एस. स्तर की प्रतियोगिताओं में भाग लेने की तैयारी करने का भी अवसर प्रदान कर रहे हैं, जबकि मध्यम आय वर्ग के खटिक लोग अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार शिक्षा पर कम धन व्यय कर पाते हैं। अत्यंत दयनीय आर्थिक स्थिति के खटिक लोग अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों में भेजकर संतुष्ट हैं—कुछ छात्रवृत्ति मिल जाती है और कुछ बच्चों को खाने को भी मिल जाता है।

स्पष्ट है कि खटिक जाति के बच्चों को उनकी आर्थिक स्थिति ही उच्च शिक्षा प्राप्ति में बाधा डाल रही है। इसके लिए आरक्षण में प्राप्त सहायता पर निर्भर रहने से कुछ नहीं होगा। स्वजातीय धनाढ्य लोगों को भी इस विषय में सोचना होगा। गरीब बच्चों को शिक्षा के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक कोष की स्थापना आवश्यक होगी। गरीब बच्चों के लिए नि:शुल्क आवास, भोजन, वस्त्र, पुस्तकें आदि भी उपलब्ध करानी होगी। बिना त्याग और तपस्या के शिक्षा का उन्नत लक्ष्य पाने में भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

वर्तमान समय में शिक्षा को व्यावसायिक स्वरूप प्रदान किया गया है। उस पर पाश्चात्य संस्कृति भी प्रभावी है। मिशनरियों द्वारा संचालित विद्यालयों में अंग्रेजी शिक्षा को प्राथमिकता दी जा रही है और शिक्षा के माध्यम से ही बच्चों की हिंदू-संस्कृति पर प्रभाव डाला जा रहा है। समस्त प्रतियोगिताओं में अंग्रेजी का माध्यम होना, सरकारी और न्यायालयी कार्यों का अंग्रेजी में संपादित किया जाना, यह सब इस देश की अंग्रेजी काल के दासता का प्रतीक है। इस विषय पर भी गंभीरता से विचार करना होगा। किसी भी देश की भाषा सीखना अच्छी बात है, किंतु विचार इस पर करना होगा कि उससे हमारी संस्कृति कहीं प्रदूषित तो नहीं हो रही है। श्री सुरेश सोनी का अभिप्राय यही है जो निम्नलिखित पंक्तियों से द्रष्टव्य है—

"अपने श्रेष्ठतम तत्त्वज्ञान और उस तत्त्वज्ञान के प्रकाश में विकसित हुई संस्कृति के कारण भारत भूतकाल में विश्वगुरु की भूमिका निभाने में सक्षम रहा। विगत कुछ शताब्दियों के बाह्य आक्रमण के कारण विश्व को मार्गदर्शन देने की भारत की क्षमता समाप्त हुई है। विशेष रूप से अंग्रेजों के आक्रमण ने इस क्षमता को नष्ट किया है। हम देखते हैं कि आज तथाकथित शिक्षित व्यक्ति को अपने देश की संस्कृति का कोई विशेष

ज्ञान नहीं होता है। संसार को हमारा कुछ अवदान था, इसकी कोई कल्पना नहीं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि समाज मानो अपनी जड़ों से कट रहा है।''[1]

श्री सुरेश सोनी की भी सोच यही है कि प्राचीनकाल में दलित वर्ग के न जाने कितने ज्ञान पुरोधा उत्पन्न हुए थे, परंतु मध्यकाल में वर्तमान दलित जातियों पर इतने अमानवीय अत्याचार हुए जिससे उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति बद से बदतर हो गई। ऐसे में जब वे दो जून की रोटी के लिए मुँहताज हो गए तो बच्चों की शिक्षा भला वे कैसे दे सकते थे। लगभग 800 वर्षों तक विदेशी शासकों द्वारा इनके विरुद्ध मानसिकता होने के कारण खटिक जाति को राज्याश्रय या प्रशासन-तंत्र का लाभ भी नहीं मिल पाया, बल्कि उसके स्थान पर वे सदैव उत्पीड़ित ही किए गए।

विदेशी शासकों द्वारा कभी फारसी और उर्दू तथा बाद में अंग्रेजी भाषा हिंदुओं पर थोपी गई। खटिक जाति ने अपने स्वाभिमान का प्रदर्शन इस दिशा में भी किया और उसने विदेशी भाषा की शिक्षा को दासता का प्रतीक माना इसलिए शिक्षा का लाभ न लेने एवं बहिष्कार का स्वर दिया।

उस समय विद्यालयों का प्रबंधन विदेशियों के हाथ में था, इसलिए विषय और भाषा का चयन वे स्वयं करते थे। मुगलों और अंग्रेजों के काल में गुरुकुल पद्धति शिक्षा का लोप हो गया था, और उसके स्थान पर विदेशी शिक्षा-पद्धति प्रचलन में थी। यह शिक्षा अंग्रेजों के लिए हिंदू नौकर पैदा कर रही थी। हिंदू खटिक जाति के लोगों ने इसे अपना और अपनी जाति-परंपरा का घोर अपमान मानकर उसका परित्याग कर दिया। राष्ट्र-सम्मान के लिए इतनी बड़ी अग्नि-परीक्षा खटिक जाति ने दी जो विश्व के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। दासता से घृणा, भले ही अंधकार स्वीकार्य—यह सिद्धांत ही नहीं, खटिक जाति के लिए व्यवहार भी रहा।

अतएव वर्तमान समय में इतना त्याग-बलिदान करनेवाली जाति के समुचित शिक्षा का प्रबंध पूरे हिंदू समाज के लिए विचारणीय विषय है। राष्ट्रभाषा हिंदी के लिए इतना बड़ा त्याग स्वयं हिंदुस्थान के इतिहास में ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा। इसी त्याग पर ध्यान देते हुए डी.डी. घोपले[2] ने बंबई विधान परिषद् के समक्ष यह प्रस्ताव रखा था कि दलित बच्चों की शिक्षा के लिए अलग से भी स्कूल एवं छात्रावास बनवाए जाएँ तथा उनके लिए शिक्षा अनिवार्य की जाए। महर्षि दयानंद सरस्वती ने कहा कि वेद-ग्रंथ किसी जाति विशेष के लिए नहीं हैं, अतएव दलित लोग इसे अवश्य पढ़ें, यज्ञ करें और यज्ञोपवीत भी धारण करें। इससे शिक्षा का स्तर ऊँचा उठने के साथ ही सामाजिक

1. सोनी, सुरेश : हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्रोत, पृष्ठ-(मनोगत-4), एवं पृष्ठ-14
2. डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार, पृष्ठ-55

विषमता भी समाप्त होगी।[1]

खटिक जाति की शैक्षिक स्थिति को सुदृढ़ किया जाना आवश्यक है, क्योंकि इसी के आधार पर उसकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति की भी स्थापना होगी और तब उसे राजनीतिक क्षेत्र में भी अपने को स्थापित करने का अवसर मिल सकेगा। यहाँ एक तथ्य स्पष्ट कर देना उचित होगा कि पुराने विचारधारावाले दलित खटिक समाज के लोग जो निर्धन हैं, अशिक्षित हैं और समाज में अपनी स्थिति को अधिक उन्नत नहीं कर पाए हैं, वे अभी भी अपने परंपरागत व्यवसायों में लगे रहकर उच्च सामाजिक परिस्थिति नहीं प्राप्त कर सके हैं। ऐसे लोग राजनीति को सामान्य रूप में देखते हैं। इस विषय पर उनसे बात की जाए तो वे झल्ला जाते हैं और कहते हैं कि 'यहाँ दो पैसा कमाने से अवकाश नहीं है, बच्चों का पेट पालने के लिए दिन-रात परिश्रम करनी पड़ रही है, ऐसे में हमें राजनीति से क्या लेना-देना है? क्या राजनीति हमारा चूल्हा जला देगी?' परंतु वर्तमान समय में आरक्षण के अंतर्गत अपने अधिकारों के औचित्य को ठीक से समझनेवाले अनपढ़ खटिक जाति के लोग भी राजनीति के क्षेत्र में जागरूक दिखते हैं। वे दिन भर का समय देकर अपना पहचान-पत्र बनवाते हैं, वोटर लिस्ट में यदि नाम छूट गया हो तो उसे लिखवाने के लिए पूरा समय निकालते हैं और ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत से लेकर नगर पंचायत के समस्त चुनावों में आरक्षित सीटों पर एक सशक्त प्रत्याशी की भूमिका निभाने लगे हैं। महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में भी खटिक जाति के नवयुवक छात्रसंघ के चुनाव में प्रत्याशी बनते हैं।

उत्तर प्रदेश में दलित संवर्ग के सहयोग से बनी सरकार ने संगठन तोड़ने का पहला प्रयोग छात्रों के संगठनों को तोड़कर आरंभ कर दिया है। छात्रसंघ के चुनाव हमेशा के लिए समाप्त कर दिया गया है। सरकार का प्रयास है कि छात्र केवल पढ़ें और सरकारी नौकर बनें। उन्हें बोलना, राजनीति करना कुछ न आ सके। यह पूरे छात्र-शक्ति को चुनौती है। दलित छात्र इसे साधारण में न लें, क्योंकि राजनीति में आनेवाला दिन उनका ही है। संख्या-बल उनके पास है, राजनीतिक ज्ञान-बल की आवश्यकता होगी। पं. मदनमोहन मालवीय ने एशिया का सबसे बड़ा एवं विश्व का तीसरे क्रम पर अवस्थित काशी हिंदू विश्वविद्यालय को बनाते हुए यही चिंतन किया था कि इस विश्वविद्यालय से स्वतंत्रता संग्राम के लिए युवा सेनानी एवं स्वतंत्रता के उपरांत देश-निर्माण के लिए उत्तम नेतृत्व का उत्पादन होगा। वे आह्वान करके छात्रों को राजनीति की ओर जाने के लिए प्रेरित करते थे। जिसका परिणाम जगजीवन राम जैसे नवयुवक राजनीतिज्ञ दलित समाज से पैदा हुए। जब छात्र राजनीति छात्र जीवन में नहीं सीखेंगे तो किसी के नौकर

---

1. वही, पृष्ठ-58

बनने के बाद अवसर कहाँ मिलेगा?

खटिक समाज को इस विषय में गंभीरता से विचार करना होगा कि करोड़ों की संख्या में होने के बाद भी दलित राजनीति में पिछड़ने के स्थान पर किसी राष्ट्रवादी अथवा सांस्कृतिक चिंतन की राष्ट्रीय राजनीतिक दल को अपना घर बनाना पड़ेगा। क्षेत्रीय पार्टियाँ स्वार्थ-प्रेरित एवं व्यक्ति-विशेष द्वारा किसी समुदाय के हित पोषण के चिंतन के अलावा कुछ नहीं हैं। राष्ट्रीय भावना की कमी एवं राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य की अनदेखी है। खटिक जाति हजारों शाखा-प्रशाखाओं का जनमत साथ है, फिर भी वह सत्ता से इतनी दूर क्यों है? क्या बिना सत्ता में आए वह अपनी समस्याओं का निराकरण करा सकेगी? यदि नहीं, तो अपनी कुत्सित मानसिकता को त्याग दिया जाए और अपनी दृष्टि को दूर-दृष्टि का स्वरूप दिया जाए। दलित राजनीति दूसरों के खेल की वस्तु बनने न पाए, इसका पूरा ध्यान रखा जाए।

आजकल चुनाव में वोट देने और अपनी सत्ता बन जाने के बाद दलित पुनः वही रोजी-रोटी जुटाने में लग जाते हैं और भूल जाते हैं कि जिस सरकार को उसने स्थापित किया है, वह उनके लिए क्या कर रही है? इस विषय में खटिक जाति समय-समय पर मूल्यांकन करती रहती है। उसने एक अवसर सभी को दिया। परंतु पहचान कर लेने के बाद उन सभी को चिह्नित कर लिया है। उसे अपना हिंदुस्थान, हिंदू राष्ट्र, हिंदू जीवन-पद्धति, हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति चाहिए, जिसके लिए वह इसलामिक आक्रांताओं, शासकों और अंग्रेजों के अनेक उत्पीड़न और शोषण बड़े धैर्य के साथ सहा। यह जाति अपने विवेक से काम लेती है, प्रतिनिधियों की कुत्सित मानसिकताओं को ठीक से समझती है और अपनी संख्या के बल पर देश की राजनीति की दिशा तय करती है। यदि संपूर्ण दलित एकजुट हो जाएँ और अपने विवेक से काम लें तो उनके इस प्रयास से हिंदू-हितरक्षण की दिशा में कार्य करनेवाली राजनीतिक पार्टी का चेहरा स्वयं ही उसके सम्मुख आ जाएगा। दलित की राजनीति करनेवाले यह भ्रामक प्रचार करते हैं कि हिंदू और हिंदुत्व की बात करनेवाली राजनीतिक पार्टी मात्र तथाकथित ब्राह्मणों और क्षत्रियों की पार्टी है तथा इसके साथ दलितों का कभी उद्धार नहीं हो सकता है।

प्रत्यक्ष प्रमाण है कि अभी केंद्र की कांग्रेस संरक्षित यू.पी.ए. सरकार का कारनामा दलित देख चुके हैं। बार-बार जो माँगें विभिन्न शासनकाल में अस्वीकृत हुईं और यहाँ तक कि मा. उच्चतम न्यायालय ने भी अस्वीकार कर दिया, फिर भी वह दलित हितैषी कांग्रेस सरकार जिस प्रकार से दलितों का आरक्षण दलित ईसाई और दलित मुसलमान नाम देकर विदेशी धर्मावलंबियों के लिए हिंदुस्थान में तुष्टिकरण की राजनीति कर रही है, वह किसी दलित हित पर घात कम नहीं है? ऐसा कोई भी कार्य हिंदू, हिंदुत्व की बात करनेवाली सरकार के शासनकाल में कभी भी नहीं हुआ है।

दलित हिंदू खटिक जाति और अन्य दलित जातियों के सामने देश का भविष्य है। वर्तमान दलित नेता केवल अपनी रोटी सेंक रहे हैं। उनको देश से नहीं, केवल अपने सत्ता में बने रहने से ही मतलब है। किसी दलित जाति के लिए यह भी प्रसन्नता की बात हो सकती है, किंतु उससे भी अधिक प्रसन्नता की बात तब होगी जब प्रत्येक दलित अपने को दलित बनाए जानेवाली परिस्थितियों पर विचार करेगा और मध्यकालीन भारत का उत्पीड़न भरा अपना ही इतिहास पढ़ेगा। दलित यदि अभी भी दलन नहीं चाहते हैं तो ईसाई और मुसलिम तुष्टिकरण पर विशेष ध्यान देनेवाली राजनीतिक पार्टियों पर अपनी लगाम कसे और उनको भी हिंदू तथा हिंदुस्थान के लिए काम करने पर बाध्य करें। अन्यथा उनका चुनाव ही न करें। अतएव खटिक जाति का शैक्षिक एवं राजनैतिक सशक्तीकरण आवश्यक है।

## 8.7 खटिक जाति को संपूर्ण हिंदुस्थान में अनुसूचित जाति में सम्मिलित करना आवश्यक

हिंदुस्थान के संविधान के निर्माता और संविधान निर्माण समिति के अध्यक्ष बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकरजी को देश का बच्चा-बच्चा जानता है कि हमारा संविधान उनके ही विशाल मस्तिष्क की उपज है। संविधान में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण की जो व्यवस्था उन्होंने की है, उसका उद्देश्य यही था कि इस सूची की जातियाँ जो सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनैतिक दृष्टि से पिछड़ गई हैं और जिसके फलस्वरूप आज उनको दलित की संज्ञा प्रदान की गई है, वे अपना हर प्रकार से विकास कर सकें, ताकि उनके विकास के साथ-साथ संपूर्ण देश का विकास भी हो सके।

आरक्षण सूची संसद् द्वारा स्वीकृत की गई और यह व्यवस्था भी सुनिश्चित की गई कि भविष्य में यदि किसी भी जाति को इस सूची में सम्मिलित करना होगा तो उसके लिए राज्य सरकारों की स्वीकृति लेकर अथवा राज्य सरकारों द्वारा प्रस्तावित किए जाने पर उसे संसद् की स्वीकृति हेतु भेजा जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था में राजनीतिज्ञों की दुर्भावना अथवा अदूरदर्शिता का परिणाम था कि खटिक जाति संपूर्ण हिंदुस्थान में अनुसूचित जाति में शामिल नहीं हो पाई, क्योंकि तत्कालीन राजनीतिज्ञों ने खटिक जाति के अंदर व्याप्त राजनैतिक शक्ति का अनुमान लगाकर उसे सुषुप्त ही रखने का निर्णय ले लिया है अन्यथा खटिक जाति को अन्य राज्य में पिछड़ी जाति और अन्य सामान्य वर्ग में रखने का औचित्य नहीं था। संविधान द्वारा निर्मित इस व्यवस्था का परिणाम सुखद नहीं रहा। इसका परिणाम कुछ असमानता भी उपस्थिति किया है। एक ही जाति कहीं अनुसूचित जाति में, कहीं जनजाति में और कहीं पिछड़ी

जाति में संस्तुत की गई। जिस प्रांत ने उसकी संस्तुति भेजी ही नहीं वहाँ उस जाति को सामान्य वर्ग में छोड़ दिया गया है।

आरक्षण सूची की इस त्रुटि का परिणाम आज अनेक जातियाँ भुगत रही हैं, जिनमें से खटिक जाति भी एक है। इसकी कुछ प्रजातियाँ उन्नत हैं। उनका नाम-संबोधन भी राजवंशीय गोत्रों से संबंधित है। उन लोगों को यह तो पता है कि उनकी जाति खटिक जाति है, किंतु वे अपने को अन्य खटिक जातियों एवं उनके गोत्रों से अपने को भिन्न बतलाते हैं और जनगणना के समय अपनी जाति खटिक न लिखवाकर अपने गोत्र का नाम लिखवाने की भूल कर जाते हैं। इसी का परिणाम है कि कुछ राज्यों में खटिक जाति की जनसंख्या होने पर भी जनसंख्या पुस्तिका में अंकित नहीं है। ऐसे में जनगणना विभाग और राज्य सरकारें भी क्या करे?

बिहार राज्य में खटिक जाति अपने नाम के साथ गुप्ता आदि लिखकर अपने को व्यवसायी वर्ग (वैश्य-स्तर) का बतलाती हैं। इसलिए वहाँ पर उसे पिछड़ी जाति की श्रेणी राज्य सरकार की संस्तुति पर केंद्र सरकार ने प्रदान किया है। और भी कई राज्य हैं जहाँ इस जाति को पिछड़ी जाति की श्रेणी में रखा गया है। परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति का जो लाभ उत्तर प्रदेश के खटिक को मिलता है, वह बिहार के खटिक को नहीं मिलता है। ऐसे में बाबा साहब का स्वतंत्रता, समानता और बंधुता यानी सामाजिक न्याय का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता रहा है।

अत: आवश्यक है कि आरक्षण सूची की समस्त जातियों का एक बार पुनरावलोकन किया जाए और प्रत्येक जाति को प्रत्येक प्रांतों की सूची में एक ही श्रेणी में रखा जाए, ताकि उनकी समान परिस्थिति और समान लाभ की प्राप्ति में न्याय का दर्शन हो। ऐसी विषमता किसी एक या दो-चार जातियों में होती तो उतनी समस्या नहीं थी, स्थिति यह है कि खटिक, राजभर, गोड़, खरवार आदि अनेक जातियाँ हैं जिनकी परिस्थिति प्रत्येक प्रांतों के भिन्न-भिन्न हैं। कुछ जातियों की पहचान (आइडेंटीफिकेशन) की भी समस्या है। पेशे के आधार पर क्षेत्र विशेष में उनके संबोधन के नाम अभिलेखों में अंकित कर दिए गए हैं और उसे उसी जाति का मान्य किया जाता है, जबकि वे जातियाँ दूसरी श्रेणी की हैं।

आरक्षण का प्रकरण इस समय बहुत महत्त्व रखता है, इसलिए देश की प्रत्येक जाति को समान रूप से विकास का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु प्रत्येक प्रांतों की सूची में अंकित होना आवश्यक है और अंकित किए जाने के साथ ही उसे वही श्रेणी भी दी जानी आवश्यक है जिस श्रेणी में उसे एक राज्य ने रखा है। खटिक जाति अनेक प्रांतों में अनुसूचित जाति की सूची में अंकित है, अतएव जिन प्रदेशों में उसे पिछड़ी जाति में रखा गया है, वहाँ भी उसको बिना किसी व्यवधान के अनुसूचित जाति की सूची में रखा

जाना न्याय संगत है। इसी के साथ उन प्रांतों की अनुसूचित जाति सूची में भी इस जाति को अंकित किया जाना आवश्यक है, जहाँ भी सूची में इस जाति का नामोल्लेख हुआ ही नहीं है। ऐसा होने पर यह जाति प्रत्येक प्रांतों की सूची में आ जाएगी और उसको देश में सर्वत्र एक जैसी परिस्थिति मिल सकेगी।

यह महत्त्वपूर्ण कदम अनेक दलित जाति से जुड़ा हुआ हो सकता है, इसलिए उक्त काररवाही एक बार सभी जातियों के लिए करनी आवश्यक है। कुछ लोगों का कहना है कि जिस जाति की संख्या किसी प्रांत में है ही नहीं, उसे उस राज्य की सूची में रखा ही क्यों जाए? यह स्थिति और यह प्रश्न अनुत्तरित नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि इन जातियों को सामाजिक भरपाई के रूप में आरक्षण प्राप्त है। मध्यकाल के प्रचंड इसलामिक उत्पीड़न से बनी दलित जातियों को इस प्रकार की सहायता उनके आर्थिक उत्थान से अधिक उन्हें सामाजिक उत्थान एवं सम्मान की दिशा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। इसी तरह से यह जरूरी नहीं है कि वह जाति किसी प्रांत की मूल जाति न हो तो उस प्रांत में कहीं से प्रवासी भी न बनी हो। आज रोजी-रोजगार के लिए अनेक लोग दिल्ली में स्थायी रूप से बस गए हैं। कुछ की तो दूसरी-तीसरी पीढ़ी तक ने दिल्ली में निवास किया है। परंतु वैसी अनेक जातियों का नाम दिल्ली राज्य की आरक्षण सूची में अंकित नहीं हैं। वे लोग विवश होकर सामान्य श्रेणी में रहकर जीविका तलाश रहे हैं और वे अनुसूचित जाति का होने का लाभ नहीं पा रहे हैं। ऐसे लोगों को सलाह दी जाती है कि वे अपने मूलस्थान से प्रमाण-पत्र बनवा लावें, परंतु वह व्यक्ति जब अपने मूल स्थान जाता है तो उसके ग्राम प्रधान सीधे कह देते हैं कि वह वहाँ नहीं रहता है तो कैसे प्रमाणित किया जाए कि वहाँ रहता है। वोटर लिस्ट में नाम नहीं, राशनकार्ड नहीं, निवास प्रमाण-पत्र नहीं। जमीन-जायदाद कुछ भी नहीं प्राप्त होने से कैसे प्रमाणित किया जाए कि वे अनुसूचित जाति के कारण हैं।

ग्राम प्रधान का कहना अपने स्थान पर उचित भी है। दिल्ली में किसी व्यक्ति का राशनकार्ड है, आवास भी है और वह भी निजी, और वोटर लिस्ट में नाम भी है। आस-पास के लोग जानते भी हैं कि वह किस जाति का है। परंतु राजधानी में उसका जाति प्रमाण-पत्र इसलिए नहीं बन पाएगा क्योंकि उसकी जाति का उल्लेख वहाँ की जाति आरक्षण सूची में नहीं है। अतएव यह एक महत्त्वपूर्ण एवं विचारणीय समस्या है जिसका समाधान आवश्यक है, तभी खटिक जाति के लोगों को समानता के आधार पर आरक्षण का लाभ बराबर-बराबर मिल सकेगा और राष्ट्रीय स्तर पर उनमें पाई जानेवाली विषमता भी समाप्त होगी। परंतु यह समस्या शासन सत्ता में बैठे लोग राजनीतिज्ञ एवं नौकरशाह हल नहीं होने देंगे। उनको पता है कि कोई भी आरक्षण सूची की जाति यदि राष्ट्रीय स्तर पर एक जैसी परिस्थिति पा गई तो चारों ओर वह आरक्षण का लाभ माँगने लगेगी। दलित

वोट बैंक मजबूत होगा और दलित जातियाँ जो अभी तक अलग-अलग पहचान रखती है, एकत्रित होगी तो राजनीति में दिशा निर्धारित करने लगेगी। अतएव नीतिकारों का बस चले तो खटिक जैसी अधिकाधिक जनसंख्यावाली जाति को तो देश भर में कभी भी एक जैसी परिस्थिति नहीं मिल सकती, क्योंकि वर्तमान राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाहों द्वारा उन्हें लगातार उपेक्षित किया जा रहा है। अंग्रेजों की तरह ही भयभीत सत्ता-शासन में वर्तमान समय में भारत की स्वतंत्र सरकारें भी खटिक जाति और उसके राजनीतिक सशक्तीकरण की शक्ति को गंभीरता से समझती एवं विचार करती है, इसीलिए उनके सशक्तीकरण की दिशा में अनदेखी कर रही है।

किसी के चाहने और न चाहने का अब कोई अर्थ नहीं रहा। यह जाति यदि स्वयं अपनी माँगों को सशक्त रूप से शासन के सामने प्रस्तुत करे और डट जाए तो एक दिन सभी राज्य सरकारों और केंद्र सरकार (संसद्) खटिक जाति की माँग को माननी होगी और खटिक जाति को पूरे देश में समान परिस्थिति (स्टेटस) प्रदान करते हुए अनुसूचित जाति की श्रेणी मिल जाएगी। इसके लिए खटिक जाति को निम्नलिखित कार्य करना होगा—

1. राष्ट्रीय स्तर पर बने हुए खटिक संघटनों की शाखाएँ जिला एवं तहसील स्तर तक बननी चाहिए और सभी शाखा-प्रशाखा के खटिक लोगों को केवल मूल जाति खटिक के नाम से उसमें उत्साहपूर्वक भाग लेना चाहिए। सभी लोग सदस्यता ग्रहण करें और जनगणना के समय भी स्पष्ट रूप से जाति कॉलम में खटिक अंकित कराए। वे चाहे तो अलग से उपनाम कोष्ठक में भी लिख सकते हैं। इससे मूल जाति खटिक स्पष्ट होगी और कोष्ठक में उपनाम उनके गोत्र को संकेत करेगा।
2. तहसील एवं जिला स्तर पर बैठकें, धरना, प्रदर्शन करते हुए, ज्ञापन देते हुए एक दिन राज्य की राजधानियों पर और उसके बाद देश की राजधानी पर संसद् के सामने विशाल रैली बुलानी चाहिए, ताकि लोगों को खटिक जाति की संख्या और शक्ति का अनुमान लग सके। इससे सभी प्रांतों की सूची में खटिक जाति को आरक्षण की सूची में अनुसूचित जाति का दरजा मिल सकता है।
3. अनुसूचित जाति को आरक्षण सूची में लाने के लिए आवश्यक मानकों की पूर्ति पर भी ध्यान दिया जाए। किसी भी जाति को अनुसूचित जाति में सम्मिलित करने के लिए निम्नलिखित मानक निर्धारित किए गए हैं—

   (क) वे जातियाँ जिनके साथ पूर्व में अस्पृश्यता का व्यवहार होता रहा हो।

   (ख) वे जातियाँ जो आज भी गंदे व्यवसाय (जैसे—चमड़ा, मांस, मैला-

सफाई आदि) में लगी हों।

(ग) जनगणना विभाग उस जाति के विषय में अपने सर्वेक्षण प्रतिवेदन को अनुकूल रूप में भेजें।

(घ) राज्य सरकार अपने यहाँ से इसे एक प्रस्ताव बनाकर और अपने विधानसभा से स्वीकृत करके संसद् को भेजें।

(ङ) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग (राज्य एवं राष्ट्र स्तरीय) की अनुकूल आख्या (आयोग इसके लिए आर.जी.आई. से उस जाति के बारे में उसकी प्राचीन परिस्थिति के संबंध में रिपोर्ट माँगता है, जबकि राज्य सरकार से उस जाति की वर्तमान परिस्थिति की जानकारी प्राप्त करता है, फिर राज्य आयोग राष्ट्रीय आयोग को भेजता है तब राष्ट्रीय आयोग उसे संसद को भेजता है, और अंत में संसद् उस जाति को अनुसूचित जाति में सम्मिलित करती है)।

आश्चर्य का विषय यह है कि सारी प्रक्रिया अनुकूल होने के बाद भी संसद् में अपना शासन सँभालनेवाली सरकार जब चाहती है तभी वह माँग पूरी होती है, अन्यथा लाख नियम-कानून और संविधान की संदर्भ देते रहें, अथवा संपूर्ण प्रस्तुति विधिसम्मत की गई हो, परंतु उसको पूरा होना तभी संभव है, जब केंद्र सरकार चाहेगी तभी पूर्ण हो सकेगा।

खटिक जाति वर्तमान समय में आरक्षण का लाभ कहाँ पा रही है और कहाँ उसे नहीं मिल रहा है, इसके लिए निम्नलिखित सूची अवलोकनीय है।

| क्र.सं. | राज्यों के नाम | सामान्य वर्ग | पिछड़ी जाति | अनुसूचित जाति | अनुसूचित जनजाति |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | अंडमान निकोबार | 1 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 2. | अरुणाचल प्रदेश | 2 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 3. | आंध्र प्रदेश | नहीं | 1 हाँ | नहीं | नहीं |
| 4. | आसाम | नहीं | 2 हाँ | नहीं | नहीं |
| 5. | उड़ीसा | नहीं | 3 हाँ | नहीं | नहीं |
| 6. | उत्तर प्रदेश | नहीं | नहीं | 1 हाँ | नहीं |
| 7. | उत्तरांचल | नहीं | नहीं | 2 हाँ | नहीं |
| 8. | कर्नाटक | नहीं | 4 हाँ | नहीं | नहीं |
| 9. | केरल | नहीं | 5 हाँ | नहीं | नहीं |
| 10. | गुजरात | नहीं | नहीं | 3 हाँ | नहीं |
| 11. | गोवा | 3 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 12. | चंडीगढ़ | नहीं | नहीं | 5 हाँ | नहीं |
| 13. | छत्तीसगढ़ | नहीं | नहीं | 5 हाँ | नहीं |

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 14. | जम्मू-कश्मीर | 6 हाँ | 6 हाँ | नहीं | नहीं |
| 15. | झारखंड | नहीं | 7 हाँ | नहीं | नहीं |
| 16. | तमिलनाडु | नहीं | 8 हाँ | नहीं | नहीं |
| 17. | त्रिपुरा | नहीं | 9 हाँ | नहीं | नहीं |
| 18. | दादर नागर हवेली | 4 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 19. | दमनदीव | 5 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 20. | दिल्ली | नहीं | नहीं | 7 हाँ | नहीं |
| 21. | नागालैंड | 6 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 22. | पंजाब | नहीं | नहीं | 8 हाँ | नहीं |
| 23. | पश्चिम बंगाल | नहीं | नहीं | 9 हाँ | नहीं |
| 24. | पांडिचेरी | 7 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 25. | बिहार राज्य | नहीं | 10 हाँ | नहीं | नहीं |
| 26. | मणिपुर | 8 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 27. | मध्य प्रदेश | नहीं | नहीं | 10 हाँ | नहीं |
| 28. | महाराष्ट्र | नहीं | नहीं | 11 हाँ | नहीं |
| 29. | मिजोरम | 9 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 30. | मेघालय | 10 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 31. | राजस्थान | नहीं | नहीं | 12 हाँ | नहीं |
| 32. | लक्षद्वीप | 11 हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 33. | सिक्किम | 12हाँ | नहीं | नहीं | नहीं |
| 34. | हरियाणा | नहीं | नहीं | 13 हाँ | नहीं |
| 35. | हिमाचल प्रदेश | नहीं | नहीं | 10 हाँ | नहीं |
| | योग— | 12 हाँ | 10 हाँ | 14 हाँ = 36 राज्य (जम्मू-कश्मीर में दोनों स्थान पर रखने से) | |

संपूर्ण 35 राज्यों की सूची अवलोकन करने पर हम देखते हैं कि 14 राज्यों में खटिक जाति को अनुसूचित जाति में रखा गया है, जबकि अन्य प्रदेशों में उसे पिछड़ी जाति में रखा गया है। 12 राज्य ऐसे हैं जहाँ खटिक जाति को किसी भी आरक्षण का लाभ नहीं दिया जा रहा है, परंतु दिल्ली में बिना किसी आधार के ही कुछ खटिक लोगों को जनजाति की श्रेणी दी गई है परंतु उसमें लिखा है जो अनुसूचित जाति में नहीं होंगे उनको भी जनज़ाति का लाभ दिया जाएगा। प्रश्न है कि कौन खटिक ऐसे हैं जो दिल्ली में अनुसूचित जाति में नहीं हैं, वे ही जनजाति का लाभ पा सके हैं। जम्मू कश्मीर के लिए भी तमाशा बनाया गया है कि कुछ लोगों को अनुसूचित जाति में रखा गया है, जबकि कुछ लोगों को पिछड़ी जाति में रखा गया है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि दलित वर्ग की खटिक जाति के ही साथ इस तरह का उत्पीड़नात्मक कार्य नहीं किया गया है, बल्कि इस तरह का दुर्भावनापूर्ण कार्य अनेक दलित जातियों के साथ किया गया है। अब प्रश्न है कि ये दलित जातियाँ क्या करें? भगवान् भरोसे बैठी रहें या अपनी माँगे रखें? रखे भी तो किसके नेतृत्व में, कौन सी राजनैतिक पार्टी सत्यनिष्ठा से उनके हित में कार्य कर सकती है? इसका निश्चय कैसे होगा? उत्तर स्पष्ट है—'कार्यों को देखकर।' अब, यह सोचने और समझकर निर्णय लेने का समय आ गया है कि मन को चंचल बनाने से देश की भी स्थिति डाँवाडोल हो रही है। कभी एक पार्टी को, कभी दूसरी को और फिर कभी तीसरी को। कब तक खटिक जाति के लोग बदलते रहेंगे अपने भाग्य को। व्यर्थ अपनी शक्ति को न गँवाया जाए। हमारा राष्ट्र है, तभी तक हम हैं। जब राष्ट्र विदेशियों का दास था तो हम भी दास ही थे। फिर क्या यह साफ नहीं हो जाता कि जिनके कारण देश पुनः दासता की ओर जा रहा है, जिनके कारण हमारी किसी भी समस्या का समाधान नहीं हो रहा और जिनके कारण हमारा अधिकार विदेशी धर्म के लोगों में बाँट दिया जा रहा है, उसका प्रतिरोध करने का साहस और हिंदू हित में कार्य करने की क्षमता किसमें है? लेखक बल प्रयोग के विरुद्ध है। अपने, अपनी जाति, अपने देश के विषय में सोचने का काम हम पर है। जैसा बोएँगे वैसा ही पाएँगे। इसमें कोई चमत्कार होनेवाली नहीं है।

## 8.8 हिंदू हितरक्षण की पर्याय खटिक जाति

हिंदू खटिक जाति का आदि से लेकर अब तक का इतिहास इस बात का प्रमाण है कि इस जाति ने वर्तमान तथाकथित दलित जातियों (पूर्वकाल की स्वाभिमानी हिंदू धर्मरक्षक एवं देशरक्षक) का सिर ऊँचा रखा है, दलितों की गौरवशाली परंपरा का कायम रखा है और हिंदू हित में अपना जीवन सदैव समर्पित रखते हुए हिंदू हितरक्षण की पर्याय बनी हुई है।

हिंदू हितरक्षण का कर्तव्य खटिक जाति ने निरंतर निर्वहन किया है। हिंदू का हित है—हिंदुस्थान (राष्ट्र) रहे, हिंदुत्व रहे, हिंदू रहे, हिंदू धर्म रहे, हिंदू संस्कृति रहे, हिंदू सभ्यता रहे, हिंदू धर्म-ग्रंथों का सम्मान रहे, हिंदू जीवन-पद्धति रहे, हिंदू धर्म की प्रतिष्ठा बनी रहे, हिंदू की परिस्थिति में समाज में समरसता बनी रहे, हिंदू की आर्थिक समृद्धि पूर्ण विकसित रहे हिंदू की राजनैतिक संप्रभुता स्थायी हो और वह क्षुद्र राजनैतिक मानसिकता के कारण देश को पुनः एवं दासता तक न पहुँचा दे, हिंदू सांस्कृतिक दशा उन्नत रहे इत्यादि। हिंदू खटिक जाति को हिंदू हितरक्षा के उपरोक्त सभी उपादानों पर सदैव खरा पाया गया है। उसका इतिहास लिखा जाए तो अलग से एक और ग्रंथ तैयार हो सकता

है। अतएव यहाँ संक्षेप में ही खटिक जाति के हिंदू हितरक्षण संबंधी विवरणों को बतलाया गया है।

हिंदुस्थान अथवा हिंदू राष्ट्र विश्व का वह अकेला देश है, जो भौतिक (प्रकृति) और आध्यात्मिक शक्तियों के सहयोग से सुदृढ़ ढंग से निर्मित है। अन्य राष्ट्रों ने विश्व को काला सागर तक पहुँचा दिया है। अपने वर्चस्व हेतु मानव अस्तित्व को मिटा देने की क्रिया-प्रतिक्रियाएँ शिथिल नजर नहीं आ रही हैं। समय दूर नहीं जब संसार की पीड़ित मानवता के लिए हिंदुस्थान ही शरणस्थली बनेगा। इस हिंदू राष्ट्र में मानव संरक्षण एवं सुरक्षा के संपूर्ण दशाओं का होना ही मुख्य कारण है। अन्य किसी भी देश में यह विशेषताएँ नहीं हैं जो हिंदुस्थान में हैं।

शाश्वत राष्ट्र के संपूर्ण तत्त्व हिंदू राष्ट्र में विद्यमान हैं। हिंदू राष्ट्र का तात्पर्य जीवन जीने की कला, मानव अस्तित्व की गतिशीलता एवं निरंतरता, श्रेष्ठ आचरण, मूल्य आधारित समाजीकरण के साथ इन सभी को आपस में जोड़ती हुई प्रकृतिपरक जीवन पद्धति तथा सामाजिक मर्यादाओं पर आधारित संस्कृति ही मुख्य है।

हिंदू राष्ट्र के अंतर्गत स्थापित हिंदू लोकजीवन में सामाजिक संस्थाएँ, परंपराएँ, रीति-रिवाज तथा प्रकृति पर आधारित संस्कृति ही मुख्य है। हिंदू राष्ट्र का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक दर्शन, सांस्कृतिक मान्यताओं पर टिका है, ऐसे में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद ही हिंदू राष्ट्रवाद है। हिंदू राष्ट्र पूर्ण व्यवहार्य है और इसकी कोई सीमा नहीं है।[1] यह देश और राज्य की अवधारणा से परे है। देश एवं राज्य के लिए एक निश्चित भू-भाग तथा जन आवश्यक है, किंतु राष्ट्र तो एक सांस्कृतिक अवधारणा है। देशरूपी शरीर में राष्ट्र एक आत्मा है। अतएव हिंदू राष्ट्र का अधिष्ठान हिंदू संस्कृति है। हिंदू संस्कृति में वसुधैव कुटुंबकम् और सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे संतु निरामया: की वैचारिकी है। अन्य किसी देश में यह नहीं है, इसलिए यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि हिंदू राष्ट्र अपने व्यावहारिक स्वरूप में विश्व कल्याणार्थ अवस्थित है। प्रलयकाल में विश्व मानवता की रक्षा-सुरक्षा यहीं संभव है। इसकी गारंटी यही है कि विश्व की समस्त प्राचीन सभ्यताएँ जहाँ मिट गईं वहीं हिंदुस्थान की प्राचीन सभ्यता पूर्ववत् विद्यमान है—

आज से तीन हजार वर्ष पूर्व भारतीय संस्कृति का जो रूप था, आज भी मूलत: वह वैसा ही है। मिस्र, बेविलोन और यूनान में भी प्राचीन सभ्यताएँ उठी थीं, किंतु, काल ने उहें ध्वस्त कर दिया। केवल भारत ही एक ऐसा देश है, जिसका अतीत कभी समाप्त नहीं हुआ। वह बराबर वर्तमान के रथ पर चढ़कर भविष्य की ओर चलता जा रहा है।

---

1. लेखक की पुस्तक : हिंदू वैचारिकी, पृष्ठ-133

भारत का अतीत कल भी जीवित था, आज भी जीवित है और कदाचित् आगे भी जीवित रहेगा।[1]

डॉ. रामधारी सिंह दिनकर का उपर्युक्त उद्घोष हिंदू खटिक जाति के लिए भी संदर्भित होता है। यह भी एक ऐसी जाति है जो अपने मूल रूप में आदि मानव के साथ-साथ आज तक वैश्विक मानव संसार के साथ अपने हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू सभ्यता को स्थापित किए हुए हैं। इस आधार पर इसे एक हिंदू राष्ट्र की 'हिंदू राष्ट्रीय जाति' भी कहा जा सकता है और इसीलिए इस जाति को हिंदू हितरक्षण की पर्याय जाति माना जाता है।

हिंदू खटिक जाति को एक से एक खूँखार विदेशी इसलामिक आक्रांताओं से युद्ध करने का अनुभव रहा है। उसे विजय और पराजय के कारण भली-भाँति ज्ञात हैं। जिसने महासगर में स्वयं योद्धा के रूप में युद्ध किया हो उसे कहीं से कारण ढूँढ़ना नहीं होता। भारतीय दलित जातियों का स्पष्ट कथन है कि हिंदू हारे नहीं, बल्कि उन्होंने आक्रमणों का सामना ही नहीं किया। उन्होंने लुटेरों की शक्ति का आकलन पूर्णरूपेण नहीं किया। वे उठे ही नहीं अन्यथा 18 घुड़सवारों के साथ बख्तियार का बेटा नदिया के राजमहल को नहीं जीत पाता उसे घोड़ों का व्यापारी समझकर राजमहल में आने दिया गया था।[2] परंतु खटिक जाति ने कभी ऐसी भूलें नहीं कीं। सिकंदर, तैमूरलंग, महम्मद गौरी आदि सभी को लुटेरा-शत्रु ही माना इसलिए सदैव उनके अस्तित्व को हिलाते रहे।

मानव स्वभाव है कि वह पहले अपने बारे में सोचता है। विश्व के सारे देश भी केवल अपने ही बारे में चिंता करते हैं। हिंदुस्थान में भी अभी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो राष्ट्रहित के स्थान पर पहले अपने हित की सोच रखते हैं। कुछ समुदाय तो यहाँ का अन्न खाते हैं, किंतु अपने को इस देश का मानते ही नहीं हैं। वे निरंतर यही सोचते हैं कि न हिंदू रहे, न हिंदुत्व रहे और न हिंदुस्थान रहे। हिंदू धर्म को तो वे अपनी आँख की किरकिरी समझते हैं। एक ओर हिंदू धर्म का अंत कर देने के लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा में हैं।

परंतु राष्ट्रभक्त जातियों में खटिक जाति जानी-पहचानी है, किंतु उसको खुलकर उपालंभ देनेवाला कोई नहीं है। यह जाति बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकरजी के स्वर में स्वर मिलाकर इसलाम के जेहादवाद का विरोध करती है। इसलाम का भ्रातृत्व

---

1. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-85
2. वही, पृष्ठ-85
3. अंबेडकर एक चिंतन, पृष्ठ-91

विश्व व्याप्त मानव का भ्रातृत्व नहीं है[3], मुसलमान अपने को हिंदुओं से श्रेष्ठ और भारत का मालिक समझते हैं,[1] वे हिंदुओं के प्रति द्वेषपूर्ण मानसिकता रखते हैं,[2] हिंदुस्थान के प्रति तो वे वफादार हो ही नहीं सकते,[3] वे देश के संविधान के स्थान पर इसलाम के कानूनों का पालन करते हैं,[4] हिंदुओं के साथ सदैव संघर्ष (जेहाद) की मानसिकता रखते हैं।[5] इन्हीं कारणों से बाबा साहब का स्पष्ट आदेश था कि मर जाओ, परंतु मुसलमान कभी न बनो।[6]

खटिक जाति ने अपना सबकुछ लुटा दिया परंतु उसका एक प्रखर हिंदू का स्वरूप यथावत रह गया। इसीलिए खटिक जाति आज भी हिंदू हितरक्षण में लगे रहकर सदैव यही कामना करती है कि हिंदू रहे, हिंदुत्व रहे और कोई भी हिंदू बलपूर्वक ईसाई अथवा मुसलमान न बनाया जा सके और न ही किसी का बलपूर्वक धर्म परिवर्तन किया जा सके। खटिक जाति की यह चिंतन वास्तव में उचित है कि यदि हिंदू और हिंदू संस्कृति नहीं रहने पाया तो हिंदुस्थान भी हिंदुस्थान नहीं रह जाएगा। इसलिए यह जाति हिंदू हितरक्षण के लिए आह्वान करती है।

हिंदू हितरक्षण का अभिप्राय है—'हिंदू धर्म रहे।' इस धर्म का आधार शाश्वत वेद हैं तथा वेद में धर्म का अर्थ है धारयति इति धर्मः, यानी धारण करना जिसके द्वारा सामाजिक नियमों का अनुसरण करते हुए समाज में प्रसन्नतापूर्वक रहा जाए। धर्म का अर्थ है कि समाज के नियम और व्यवस्था को धारण करना और उसका अनुपालन भी करना। इसके सापेक्ष हिंदू धर्म का अर्थ प्रकृति के नियमों के आधार पर जीवन जीना यानी आध्यात्मिक और भौतिक शक्तियों की सत्ता के अनुरूप अपने आचार-व्यवहार को प्रस्तुत करना। हिंदू धर्म प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करके दिनचर्या तथा ऋतुचर्या के अनुरूप आचरण के संदर्भ बोध में अवस्थित है। हिंदू खटिक जाति का जीवन-क्रम हिंदू धर्म के अनुपालन का ही पर्याय है। अतएव इस जाति ने अपने जीवन की हजारों वर्षों की लंबी यात्रा में हिंदूधर्म से कभी विलग होने का अवसर ही नहीं दिया। हिंदू धर्म रक्षा में तो उसने दर-ब-दर होना, वनवासी होना, दलित होना स्वीकार किया, अतएव पूर्ण प्रमाणित एवं सर्व विदित है कि हिंदू हितरक्षण की पर्याय खटिक जाति है।

---

1. लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-394-395
2. भारत रत्न डॉ, अंबेडकर, प्रस्तावना-अटलबिहारी वाजपेयी
3. लाइफ एंड मिशन, पृष्ठ-413-14
4. भारत रत्न डॉ. अंबेडकर, पृष्ठ-172
5. डॉ. अंबेडकर एक चिंतन, पृष्ठ-77
6. वही, पृष्ठ-92

धर्म जीवन का संबल है। इसे सार्वभौमिक नैतिकता भी कह सकते हैं,[1] क्योंकि धर्म व्यक्ति के मन को शुद्ध बनाने का पवित्रतम उपाय है। इसी के आधार पर एक व्यक्ति दूसरे को प्रेम करता है। जिसमें विद्वेष हो वह धर्म नहीं और जिसमें अंधविश्वास हो वह भी धर्म नहीं।[2] धर्म की इस मान्यता को हिंदू खटिक समाज ने भी निर्वहन किया और हिंदू धर्म तथा हिंदू संस्कृति की रक्षा भी किया। इस हिंदू जाति ने उसी हिंदू संस्कृति को अपनाए रखा जिसका आधार महाभारत में प्रकृति संबोधन से उल्लिखित है।[3] इसके प्रत्येक आयाम में ऋतु, मौसम, जलवायु तथा वातावरण की प्रभावी भूमिका है। यानी प्रकृति ही संस्कृति है—नेचर इस हिंदू कल्चर।[4] प्रकृति शाश्वत है, अतएव हिंदू संस्कृति भी आज तक शाश्वत है। रामधारी सिंह दिनकर भी इससे सहमत हैं—आज से तीन हजार वर्ष पूर्व भारतीय संस्कृति का जो रूप था, आज भी मूलत: वह वैसा ही है।[5]

हिंदू संस्कृति के ही साथ हिंदू सभ्यता भी आज जीवंत स्वरूप में विश्व के सामने एक चुनौती प्रस्तुत करती है कि विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यता का नाम हिंदू सभ्यता है। इसके साक्ष्य केवल हजारों वर्षों पुराने पाए गए पुरातात्विक अवशेष ही नहीं, हमारे प्राचीन धर्म-ग्रंथ भी हैं। ये वे ग्रंथ हैं जिनसे विदेशी विद्वान् भय खाते थे, इसलिए उन्होंने इनमें मिलावट की और इनकी प्राचीनता और मौलिकता को नष्ट करने का प्रयास किया। मैक्समूलर जो जर्मनी में पैदा हुआ, केवल पैसे के लालच में इंगलैंड आकर रहने लगा और हिंदुस्थान की एक झलक देखे बिना ही यहाँ के वेदादि धर्मग्रंथों का भ्रामक एवं प्रक्षिप्त रूप में संपादन कर डाला। अपनी बात सत्य करने के लिए मैक्समूलर इत्यादि का नाम लिया जाता है किंतु शास्त्रार्थ अथवा सांस्कृतिक चर्चा में विदेशी विद्वानों को हेय की दृष्टि से देखा जाता है।

हिंदू धर्मग्रंथों को विदेशी लोगों ने शेक्सपीयर का उपन्यास समझ लिया था। परंतु जब उनका गंभीरता के साथ अवलोकन किया तो भयभीत हो उठे। श्री सुरेश सोनी ने इस अवस्था का वर्णन बहुत सुंदर ढंग से किया है—

'जैसे-जैसे भारत, भारतीयता और हिंदू धर्म का अधिक प्रचार होने लगा वैसे वैसे ईसाई धर्म प्रचारकों और पादरियों के कान खड़े हो गए। उन्हें लगने लगा कि यदि संस्कृत वाङ्मय का इसी प्रकार प्रचार-प्रसार चला तो सृष्टि का निर्माण 4004 ई.पू.

1. डॉ. कृष्णगोपाल : बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार, पृष्ठ-239, 244
2. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-261-266
3. महाभारत (भीष्मपर्व) 5/11-12,
4. लेखक की पुस्तक : हिंदू वैचारिकी, पृ., 19
5. दिनकर, रामधारी सिंह (पूर्वोद्धृत) पृ., 85

हुआ तथा बाइबिल में व्यक्त विचार ही सर्वश्रेष्ठ विचार हैं, ये धारणाएँ ध्वस्त हो जाएँगी। अत: उन्होंने ऐसे एक नहीं अनेक लोग तैयार किए जो भारतीय साहित्य और इतिहास की प्राचीनता, श्रेष्ठता और गहनता का विरोध करने के लिए आगे आए और उनका विरोध कोई साधारण विरोध नहीं रहा। इन लोगों ने भारतीय साहित्य, इतिहास, संस्कृति को कम-से-कम प्राचीन सिद्ध करने हेतु उसमें उपलब्ध तथ्यों को अपने कुतर्कों से काटकर अप्रमाणित और अवास्तविक बताया। इन लोगों के मन में भारतीय साहित्य का भय कितना था इसका परिचय फ्रेडरिक बाडमेर ने इन शब्दों में दिया था, 'बाइबिल के रक्षक इतने भयभीत हो गए हैं कि उन्हें ऐसा लगने लगा कि संस्कृत का वर्चस्व बाइबिल की मिनार गिरा देगा (दि लूम ऑफ लेंग्वेज, न्यूयॉर्क 1944 पृष्ठ-174)।'[1]

सोनीजी ने हिंदू धर्मग्रंथों का महत्त्व समझाते हुए कहा है कि उनमें हम अपने भारत की दर्शनात्मक विचारधारा का दर्शन करते हैं।[2] अतएव आज आवश्यकता इस बात की है कि वेद, पुराण, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, जैनागम, त्रिपिटक, न्याय, सांख्य, योगादि, दर्शन तथा विभिन्न संतों द्वारा रचित ग्रंथ संग्रह में संचित हमारी संस्कृति, परंपरा तथा तत्त्वज्ञान से आज की पीढ़ी परिचित हो,[3] ताकि हिंदू धर्मग्रंथों पर आधारित हिंदू धर्म शाश्वत रहे, उसकी प्रतिष्ठा बनी रहे और इस तरह हिंदू जीवन-पद्धति में भी कोई वैश्विक परिवर्तन न आने पाए। अंग्रेज इसी से घबड़ाते थे कि हिंदू यदि हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू जीवन-पद्धति से अलग नहीं किया जा सका तो उसे किसी भी प्रकार से अन्य धर्म की ओर मोड़ा नहीं जा सकता है। एक दृष्टांत का उल्लेख उन्होंने इस संदर्भ में किया है, जो अत्यंत सजीव है—

'ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन जब चल रहा था उस समय फ्रांस में अबे डुबोई नामक फ्रेंच मिशनरी काम करता था। फ्रेंच राज्य क्रांति के समय वह भागकर भारत आया और मद्रास प्रेसीडेंसी में उसने कार्यारंभ किया। ईसाईयत के प्रचार के लिए कार्य करते समय उसने बहुत गहराई से हिंदू समाज की जीवन-पद्धति, परंपराएँ, सांस्कृतिक मूल्य आदि का अध्ययन किया तथा अपना मूल्यांकन कंपनी के डायरेक्टर बोर्ड को भेजा। अपने निष्कर्षों में उसने लिखा कि हिंदुओं का तत्त्वज्ञान श्रेष्ठ है। इनकी परंपराएँ एवं संस्कृति महान् है। जब तक उनकी इसमें गहरी आस्था बनी रहेगी तब तक अंग्रेजी राजसत्ता का यहाँ स्थायी रहना तथा ईसाईयत का प्रचार होना कठिन होगा।''

---

1. सोनी, सुरेश : हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्रोत, पृष्ठ-15
2. वही, पृष्ठ-142
3. वही, (मनोगत-पृष्ठ-प्रथम)

हिंदू खटिक जाति हिंदू धर्मग्रंथों में इतनी निष्ठा रखती है कि वह कभी भी किसी के भी बहकावे में आकर किसी भी हिंदू ग्रंथ का कभी निरादर नहीं किया। अपने घरों में जहाँ देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ होती हैं, वहाँ पर हिंदू धर्मग्रंथों को रखने का कार्य इस जाति के अनेक घरों में परंपरा से पाया जाता है। अभी तक इनके सारे प्रयास हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू धर्मग्रंथों के प्रति पूर्णत: समर्पित भाव वाला ही पाया गया है, अतएव कहा जा सकता है कि खटिक जाति सदियों से हिंदू हितरक्षण की पर्याय है।

हिंदू हितरक्षण में अग्रणी खटिक जाति सामाजिक सम्मान के लिए मध्यकाल से आज तक संघर्ष कर रही है। अपने साथ-साथ इस जाति ने अन्य दलित जातियों में भी आत्मसम्मान का भाव जागृत करने में कभी भी कदम पीछे नहीं हटाया। सामाजिक जीवन और धर्म सदैव ही इसकी नियति एवं अधिष्ठान रहा। इसने कभी हिंदू लोकजीवन में वर्ग-संघर्ष को मान्य नहीं किया। दलित समाज को सम्मान देने हेतु खटिक जाति सभी के संगठित सहयोग की आवश्यकता को अपरिहार्य मानती है।

आर्थिक समृद्धि के लिए भी खटिक जाति निरंतर प्रयत्नशील है, क्योंकि इसे पता है कि प्रत्येक जाति, वर्ग और व्यक्तिगत आर्थिक समृद्धि से ही देश को पुन: समृद्धशाली बनाया जा सकता है। आर्थिक समृद्धि के लिए यह जाति साम्यवादी विचारों को कभी मान्य नहीं करती है। धर्म और नैतिकता के माध्यम से अर्जित संपदा ही स्वजातीय समृद्धि और देश की समृद्धि का स्वप्न है। यही कारण है कि खटिक जाति सदैव दलितवादी अवधारणाओं को स्वीकार करती है और जनवादी विचारों तथा साम्यवादी यानी कम्युनिस्ट पद्धतियों को अपनी आर्थिकी वैचारिकी से बाहर रखती है।

खटिक जाति हिंदू संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए अपनी तथा अपने देश की सांस्कृतिक धरोहर को सदैव उन्नत करने में योगदान कर रही है। इसके साथ ही देश के राजीतिक क्षेत्र में भी इसने पाँव फैलाने आरंभ कर दिया है, क्योंकि खटिक जाति को पता है कि बिना सत्ता और शासन पर अधिकार प्राप्त किए दलितों के साथ वह अपने सर्वांगीण विकास की मंजिल तक नहीं पहुँच सकेगी। इन सभी आधारों पर कहा जा सकता है कि आज हिंदुस्थान में खटिक जाति हिंदू हितरक्षण की पर्याय है जो प्रत्येक आधारों पर दलित संवर्ग की जातियों के लिए प्रतिनिधित्व कर सकने में सक्षम है।

अध्याय के निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि खटिक जाति का पुनरुत्थान और सशक्तीकरण आवश्यक एवं अपरिहार्य है। यह एक धर्माभिमानी, स्वाभिमानी एवं राष्ट्राभिमानी जाति एवं लोगों का समूह है जो विदेशी आक्रांता शासकों के प्रचंड उत्पीड़न, दमन एवं दलन के कारण बलपूर्वक बनाई गई दलित जाति है। इसके समान

और भी कई जातियाँ दलित श्रेणी में हैं। सभी दलित जातियों का पुनरुत्थान राष्ट्रहित में आवश्यक है। खटिक अपने सामाजिक उत्थान, शैक्षणिक सशक्तीकरण, आर्थिक उन्नति और राजनैतिक संप्रभुता के लिए निरंतर संघर्षरत है। दुःख का विषय है कि अभी तक इस जाति को अनेक प्रांतों में अनुसूचित जाति की श्रेणी में नहीं रखा गया है, जबकि यह जाति हर स्तर से अनुसूचित जाति में रखने की अर्हतायुक्त है।

□

# उपसंहार

वैदिक काल समरसतापूर्ण जीवन-शैली का, याज्ञिक हुताहुतियों की सुगंधि का और भेदभावरहित समाज के स्नेहिल सम्मिलन का स्वर्णिम युग था। सभी देवज्ञ थे। सभी ब्राह्मण और ब्रह्मज्ञ थे। सभी धर्मरक्षक थे। सभी स्वधर्मपालक थे। सभी सम्मानित थे। हिंदू खटिक (खट्टिक) भी वैदिक ब्राह्मण थे। यज्ञ-संपादक थे। याज्ञिक पशु-बलि का धार्मिक कार्य वे ही संपादित करते थे। वैदिक काल का सबसे कठोर याज्ञिक कार्य बलि-कार्य था। सामान्य ब्राह्मण के लिए यह कठिन काम था। कठोर मन: स्थिति के ब्राह्मण ही यह कर सकते थे। वैदिक काल में वेद को मानने एवं समूहों की रक्षा का वीरता एवं साहस का कार्य भी खट्टिक ब्राह्मणों को ही स्वीकार करना पड़ा। कालांतर में वैदिक व्यवस्था के तीव्रता से विस्तार के कारण वैदिक संस्कृति, लोकजीवन एवं वैदिक धर्म की रक्षा में क्षात्र (क्षत्रिय) धर्म का निर्वहन हेतु वैदिक खट्टिक ही क्षत्रियों के रूप में तत्पर हुए। उनके राज्य का कठोर राज्य के नाम से उल्लेख किया जाता है। अन्य याज्ञिक भी इस प्रकार के भू-स्वामी थे। कठ ब्राह्मण तत्त्वज्ञानी भी थे। कठोपनिषद् की रचना उन्होंने ही की थी। कठोर राज्य का कठोपनिषद् नचिकेता नामक एक साहसी बालक को जीवित अवस्था में यमलोक भेजता है और वरदान प्राप्त कर जीवित ही वापस बुला लेता है। नचिकेता में जीवात्मा का दर्शन करानेवाले कठ अथवा कठिक वही तो थे जिनके नाम पर काठियावाड़ का नामकरण हुआ। वैदिक काल में इतनी सम्मानीय जाति यदि वर्तमान खटिक जाति थी तो यह आज हिंदू खटिक के लिए गर्व की ही बात है। वह धर्मरक्षक और देशरक्षक भी थी। दोनों विशेषताओंवाली किसी अन्य जाति का नाम विश्व के किसी भी इतिहास में नहीं मिलता है। हिंदू खटिक जाति के लिए यह और भी सम्मान की बात है।

वैदिक यज्ञ हिंदुस्थान में सर्वत्र होते थे। कठ ब्राह्मण यज्ञ-कर्म से जुड़े थे। उनका सर्वत्र होना स्वाभाविक था। स्वधर्म पालन हेतु वे कहीं भी गए, किंतु अपनी मातृभूमि

काठोर राज्य से उनका अटूट पैतृक संबंध स्थायी रहा। बहुत दिनों के बाद उनको स्थायी रूप से काठियावाड़ और देश में यत्र-तत्र आवास बनाकर स्थायी रूप में रहना पड़ा था। इसका एक लंबा इतिहास पुस्तक के पूर्व अध्यायों में है।

सर्वविदित है कि हिंदुस्थान को जब विदेशी आक्रांता मुसलिम शासकों ने शिकार करने की दृष्टि से सोने की चिड़िया कहा और उसकी चर्चा दूर-दूर तक के देशों तक फैली थी तो उसे देखने की जिज्ञासा भी विश्वव्यापी हो चुकी थी। जो देखने आए, उनके लिए आसान मार्ग पश्चिम की ओर से ही भारत में था। इसकी जानकारी विदेशी व्यापारियों से लोग पा चुके थे। वाहन के साधन मुख्यत: घोड़े, ऊँट, हाथी आदि ही थे इसलिए आने में समय लगता किंतु भूलने और भटकने का कोई कारण न था।

प्रारंभ में जो आए उन्हें यहाँ की धरती, यहाँ की संस्कृति, यहाँ की सभ्यता, यहाँ की जीवन-पद्धति सबकुछ प्रकृतिपरक मिली, जिसका स्थायी आनंद प्राप्त करने हेतु वे रुक गए और हिंदू धर्म स्वीकार करके हिंदू संस्कृति को अपनाकर यही रच-बस गए और हिंदू जीवन-पद्धति के अनुरूप जीवन जीने लगे। कुछ ही समय में उनकी विदेशी संस्कृति का स्वरूप हिंदू धर्म में विलीन हो गया।

पूर्व मध्यकाल में जो विदेशी अरब के आक्रांता आए वे लालची, कायर और स्वार्थी थे। इतना ही नहीं, वे अवसरवादी और विश्वासघाती भी थे। सिकंदर निकला था विश्वविजय के लिए, परंतु पश्चिमोत्तर के छोटे-छोटे धर्मपरायण हिंदू राजाओं से ही उसकी भुजाएँ थक गईं। मगध की ओर आँख उठाकर देखने का उसे साहस नहीं हुआ। विश्वासघात करके हिंदू राजा पोरस के पुत्र की हत्या कर दी, परंतु पोरस के पराक्रम को देखकर साहस टूट गया। कठ (खटिक) योद्धाओं ने तो उसके पाँव ही उखाड़ फेंके। उन दिनों जब राजाज्ञा का केवल अनुपालन होता था, सिकंदर की सेना ने पहली बार हिंदुस्थान की धरती पर अपने राजा की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया और कठ योद्धाओं से जान बचाकर स्वदेश लौटने की माँग पर डटे रहे। सिकंदर को विवश होकर अपने आदेश को वापस लेना पड़ा।

ऐसे ही अनेक अवसर आए जब पश्चिम हिंदुस्थान पर अरब के अनेक विदेशी इसलामिक आक्रांताओं ने आक्रमण किए लोगों के आवास लूटे, स्त्रियों और बच्चों का अपहरण किया अथवा हत्या कर दी, और हिंदू युद्धबंदियों के साथ अमानवीय अत्याचार किए। ऐसे कुकृत्य उन विदेशी इसलामिक आक्रांताओं ने किया जो सारे संसार में लूट-पाट और हत्या-अपहरण के लिए कुख्यात थे। बार-बार के उत्पीड़न से मात्र अपने परिवार को सुरक्षित रखने के लिए कठ योद्धा कालांतर में पश्चिम से विस्थापित जीवन जीने हेतु बाध्य हुए और देश के संपूर्ण भागों में बसते चले गए।

कठिन परिश्रम करने के कारण ही वे कठ, कठिक कहे गए थे। परिश्रमी और शरीर

से भी कठोर (बलवान, शक्तिशाली) होते हैं तभी तो कठोर अथवा कठिन परिश्रम कर लेते हैं। काठियावाड़ के वे कठिक जब देश के विभिन्न स्थानों पर गए तो अपने को व्यवस्थित करने के लिए उनको कठिन परिश्रम करना अनिवार्य हो गया था। कठोर परिश्रम भी वे लगन के साथ करते थे। पशु-बलि को जब पशु-वध अथवा पशु-हत्या कहकर यज्ञ-बलि का कार्य निषिद्ध कर दिया गया, तो ये लोग भी पशु-वध को पाप समझने लगे। किंतु स्वधर्म यानी जीविकोपार्जन का पालन आवश्यक था, इसलिए मांस लोगों को बेचने और अपनी जीविका चलाते रहे। महाभारत में महर्षि व्याघ्र का स्वधर्म भी मांस विक्रय का ही था, जो इस जाति के पुरोधा थे। महात्मा सदन खटिक भी मांस बेचते थे परंतु पशु-हत्या नहीं करते थे। दोहरी जीवन-शैली इस जाति का स्वभाव बन चुका था, इसलिए वे अनभिज्ञ लोगों को बराबर खटकते भी रहते थे। स्वभाव से धर्मात्मा और वृत्ति से मांस विक्रेता खटकने की तो बात ही थी?

खटिक जाति निडर, जुझारू और योद्धा जाति है। विदेशी आक्रांताओं की बड़ी-बड़ी दोधारी तलवारें, भाले, बरछी आदि की बराबरी के अस्त्र-शस्त्र किसी हिंदू राजा के पास न थे, फिर कठ ब्राह्मण के पास कहाँ से आते? मांस काटने के छोटे-छोटे औजारों को अस्त्र-शस्त्र का नाम देना अनुचित होगा। तब भी उनको शत्रुओं के हथियारों का भय न था। वे यह भी नहीं देखते थे कि उनकी संख्या उनसे बहुत अधिक है। बस, लड़ने का निश्चय कर लिया तो फिर उतर आए मैदान में। खटिक जाति के लोग शत्रुओं पर निर्भीक होकर प्रहार करते थे और निहत्थे लड़ने में भी मौत का कोई भय नहीं था। ऐसे ही निडर खटिक समाज के वीर योद्धा आज भी तो मिलते हैं। जेहादी मुसलमानों के बड़े-बड़े हथियारों से उनको बिलकुल भय नहीं रहता है और मुठभेड़ों में वे सबसे आगे ही रहते थे। यह उनके अनुवांशिक यानी जन्म से मिली निडरता और निर्भीकता का सबसे बड़ा और सशक्त साक्ष्य है।

विदेशी आक्रांताओं के आक्रमण का अनेक हिंदू राजाओं ने बिना युद्ध किए ही लोहा मान लिया, भाग गए अथवा आत्मसमर्पण किया परंतु कठिक जाति ने बिना युद्ध किए पराजय स्वीकार नहीं किया। वे तत्क्षण जूझ पड़ते थे। उनके जुझारूपन को देखकर विदेशी सैनिक एवं बड़े-बड़े योद्धा भी दाँतों तले अंगुली दबाते थे। आज भी उनकी आनुवांशिक विशेषता देखने को मिल जाती है। बात-बात में लोगों से उलझना और बात न बने तो मरने-मिटने पर उतरकर जूझना, उनके जुझारूपन को ही प्रदर्शित करता है।

निर्भीकता और जुझारूपन की विशेषता किसी महान् योद्धा में ही देखने को मिलती हैं। खटिक जाति के समाज में यह विशेषता सदैव रही, आज भी है और लगता है कि भविष्य में भी रहेगी। योद्धा सदैव योद्धा ही होता है, कायर सदैव कायर होते हैं। आज के संदर्भ में देखें को खटिक जाति के लोग अहं टकरा जाने पर यदि मार-पीट, लड़ाई-झगड़ा

और रक्त संघर्ष भी आवश्यक हुआ तो उससे पीछे नहीं हटते हैं। यह उनके योद्धा-प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है।

हिंदू खटिक जाति के लोग कृषक, व्यवसायी एवं अंतरराज्यीय व्यवसाय करने के अभ्यासी हैं। दूरस्थ स्थानों पर जाकर अपनी इच्छानुसार व्यवसाय करना इस जाति के लोगों का स्वभाव है। आरंभ में वे मांस का व्यापार करते थे। इसे पवित्रता से जोड़ा गया तो वे अस्वच्छ व्यवसाय त्यागकर फल बेचने और बागवानी तथा खेती भी करने लगे। देश के अंदर ही दूर-दूर तक जाकर व्यवसाय करना उनका स्वभाव था, जो बार-बार अभ्यास करने से बना था। पश्चिमी हिंदुस्थान के राज्य से जब वे अन्य प्रदेशों में गए तो उन्होंने अपनी इच्छानुसार व्यवसाय किया। स्वेच्छया व्यवसाय चयन और उसका स्वत: क्रियान्वयन तथा संचालन उनके लिए व्यवधानरहित था। स्थानीय माँग के अनुसार कहीं उन्होंने फल बेचे, सब्जियाँ बेची तथा अन्य व्यवसाय भी किए। खटिक जाति निर्भय स्वभावयुक्त जाति थी इसलिए व्यवसाय में भी वैसी ही वे स्वतंत्रता चाहते थे। आज भी हिंदू खटिक जाति के लोग अपनी-अपनी इच्छा का ही व्यवसाय अथवा नौकरी करते हैं।

हिंदू खटिक जाति आरंभ से ही धर्म-कर्म से जुड़ी हुई है। धर्म का एक आवश्यक अंग कभी बलि-कर्म हुआ करता था। प्रारंभ में वे यही कार्य करते थे। बलि-प्रथा बंद तो हुई नहीं, किंतु अन्न-बलि को प्रतिस्थायी बनाकर उसे कम अवश्य कर दिया गया। इसका प्रारंभ उत्तर-वैदिक काल की धार्मिक व्यवस्था में देखा जा सकता है। फिर भी लोकधर्म के अंतर्गत अनेक जातियाँ थीं जो शक्ति की प्रतीक चंडी देवियों को बलि देती थी। वह परंपरा आज भी अनेक जातियों में विद्यमान है। परिणामस्वरूप बलि-ब्राह्मण यानी वैदिककालीन खट्टिक की आय एवं कुशलक्षेम की समस्या उत्पन्न हुई। तब खटिक समाज मांस का व्यापार करने में तत्पर हुआ किंतु धर्म-संगत विधि से ही। उसने धर्म-कर्म कभी नहीं त्यागा। हिंदू सनातन धर्म मे स्वधर्म का अनुपालन खटिक समाज निरंतर करता रहा। आज भी खटिक लोग अपने घरों में मातृ-शक्ति और मातृदेवी की पूजा करते हैं। नवरात्र में उनकी पूजा-पद्धति 'जोत जवारा' के रूप में देख सकते हैं। क्षेत्रीय धर्म-पद्धति का भी वे अनुसरण करने लगे हैं और किसी भी अवसर पर होनेवाले हिंदू धर्म-कर्मों में खटिक समाज के लोग सहज भाव से तन-मन-धन अर्पित करके भाग लेते हैं। इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिंदू खटिक जाति का जीवन आदि से लेकर अब तक धार्मिक बना हुआ है, अतएव उसे एक धर्मानुयायी जाति की संज्ञा प्रदान की गई है।

हिंदू खटिक जाति स्वभाव से ही हिंदू धर्म, संस्कृति और हिंदू जीवन-पद्धति की पूर्ण अनुपालक रही है। लाख प्रयास के बाद भी विदेशी मुसलिम आक्रांता और अंग्रेज शासक इस जाति का धर्म-परिवर्तन नहीं कर सके। विदेशी इसलामिक शासकों ने चमार और भंगी जाति की भाँति इनको भी इसलाम अस्वीकार करने पर प्रचंड उत्पीड़न, दमन

एवं दलन के साथ भारी से भारी दंड दिया था, परंतु इस जाति ने स्वयं ही इसलाम के शत्रु-पशु को अपने आवासों के इर्द-गिर्द बाँधकर एक ऐसी दीवार बना दी जिसे लाँघकर कोई भी जेहादी मुसलमान उनके घरों तक आ नहीं सकता था।

यह प्रकरण आश्चर्यचकित कर देता है कि हिंदू खटिक जाति ने मुगलों द्वारा अस्वच्छ व्यवसाय में लगाए जाने के पूर्व ही स्वयं को ऐसे अस्वच्छ एवं अपवित्र वृत्ति में लगा लिया जो इसलाम के शत्रु-पशु से संबंधित था। वे सुअर को पालते, घरों के आस-पास उनके द्वारा की गई गंदगी को बने रहने देते और सुअर को कठोरता से काटकर बेचते थे। खटिक जाति द्वारा धार्मिक अस्तित्व को बचाने के लिए किया गया यह उपाय सफल तो रहा, परंतु इससे न केवल मुगल शासक विचलित हुए, अपितु हिंदू भी अस्वच्छता के आधार पर खटिक जाति से दूरी रखने लगे। परंतु खटिक जाति ने हिंदू धर्म के अनुपालन, हिंदू संस्कृति के संवहन और हिंदू जीवन-पद्धति के नियमों को धारण करते हुए जीवन-यापन करने से बाह्य शासक रोक नहीं सके। हिंदू समाज से जुड़े रहने के लिए हिंदू खटिक जाति ने हिंदू धर्म, हिंदू संस्कृति और हिंदू जीवन-पद्धति का सदैव अनुपालन तो किया ही, इसकी रक्षा के लिए विदेशी शक्तियों के साथ निरंतर संघर्ष भी करते रहे। हजारों-लाखों लोगों ने विवश होकर विदेशी इसलामिक आक्रांता शासकों के दबाव के कारण इसलाम स्वीकार किया, परंतु हिंदू खटिक जाति ने भयंकर संघर्ष किया और अंतिम श्वास तक इसे अस्वीकार्य किया। इतिहास की घटनाएँ जिनका उल्लेख लगातार किया गया है, बतलाती है कि धर्मरक्षा और देशरक्षा के लिए संघर्ष करने में यह जाति प्रथम और अग्रणी रही है। आज भी हिंदुत्व के नाम पर खटिक जाति के लोग किसी भी गैर-हिंदू से संघर्ष करने के लिए तत्पर एवं अग्रणी रहते हैं। इस दृश्य को आज भी इसलाम समर्थकों द्वारा प्रायोजित सांप्रदायिक दंगों के अवसर पर देश के प्राय: सभी प्रमुख शहरों में देखा जा सकता है।

शिक्षा का संबंध मानव के सर्वोन्मुखी विकास से जुड़ा हुआ है, इसीलिए सभी जाति के लोग शिक्षा प्राप्त करने के लिए अवसर खोजते रहते हैं। इस जाति ने ऐसा कुछ नहीं किया जिसके कारण इसका विकास अवरुद्ध हो गया। खटिक जाति ने अपना विकास और विनाश दोनों हो जाने दिया, किंतु मध्यकाल में दासता की प्रतीक फारसी-उर्दू और अंग्रेजी भाषाओं में दी जानेवाली किसी भी विदेशी शिक्षा को अंगीकार नहीं किया। यही कारण है कि उपनिषद् की रचना करनेवाले पुरोधाओं के वंशज मध्यकाल में अपने धर्माभिमान एवं स्वाभिमान की रक्षा हेतु शिक्षा प्राप्ति को आवश्यक नहीं समझे और सभी क्षेत्र में पिछड़ गए। अब, सभी तथाकथित दलित जातियों के साथ खटिक जाति के लोग भी शिक्षा प्राप्ति हेतु स्वतंत्र हैं और बड़ी तीव्र गति से इस क्षेत्र में आगे बढ़ रहे हैं। वर्तमान समय में अपनी शिक्षा के स्तर के अनुसार खटिक समाज के लोग सरकारी नौकरियों में चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय और प्रथम श्रेणी तक के पदों को प्राप्त करने में सफल हुए हैं। प्रथम श्रेणी

की सरकारी सेवाओं में इनकी संख्या बहुत कम है, किंतु तृतीय श्रेणी में ये अधिक संख्या में लगे हैं। इसी से इनके शैक्षिक स्तर का पता चल जाता है। परंतु जितनी संख्या में यह जाति इस समय विद्यमान है उस अनुपात में सरकारी नौकरियों में इनकी संख्या अत्यंत अल्प है। इसका मुख्य कारण यह है कि इस जाति को सभी प्रांतों में अनुसूचित जाति की सूची में रखकर आरक्षण का लाभ नहीं दिया जा रहा है। जिन राज्यों में खटिक जाति को अनुसूचित जाति का दरजा है वहाँ आरक्षण का लाभ प्राप्त है एवं उन्हीं राज्यों में खटिक जाति शिक्षा एवं अन्य क्षेत्रों में पद प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकी है। जहाँ यह सुविधा मान्य नहीं की गई है, वहाँ खटिक जाति आर्थिक एवं शैक्षणिक विकास में पिछड़ गई है।

प्राचीन भारतीय इतिहास में खटिक जाति को सदैव सम्मान की दृष्टि से देखा जाता रहा। हिंदू राजाओं ने इनके राज्यों पर आक्रमण करने का कभी प्रयास नहीं किया बल्कि इनके शौर्य और पराक्रम का सम्मान करते हुए इनको अपने सैन्य-प्रबंधन में उच्च पदों का दायित्व तक सौंपा। महाराणा सांगा और राणा प्रताप आदि द्वारा भी यह जाति समादृत रही। इसका सम्मान इसलिए भी था कि यह जाति धर्मरक्षा और देशरक्षा का दोहरा दायित्व निर्वहन करती रही। विदेशी अरेबियन इसलामिक आक्रांताओं जैसे विश्वविजय का स्वप्न देखनेवाला सिकंदर, खूँखार लुटेरा महमूद गजनबी, क्रूर कालानाग मुहम्मद गौरी, मौत का सौदागर तैमूरलंग आदि से लोहा लेकर उनके दाँत खट्टे करनेवाली खटिक जाति ने अपनी प्राचीन प्रतिभा यानी लड़ाकू स्वभाव को अंग्रेजों के भारत छोड़कर भाग जाने तक बनाए रखा और अपने प्राचीन गौरवशाली इतिहास का कभी अवसान नहीं होने दिया। यह भी गर्व की बात है कि इस जाति का व्यक्ति विशेष ही नहीं, बल्कि संपूर्ण जाति ही अपने आक्रामक स्वभाव, धर्माभिमान, स्वाभिमान एवं राष्ट्राभिमान के कारण विदेशी आक्रांता शासकों की दृष्टि में अपनी एक पहचान एवं समाज का एक प्राचीन इतिहास अपने आप में समेटे हुए है। अंग्रेजों ने इनकी आक्रामकता एवं स्वतंत्रता की मानसिकता के कारण विवश होकर ही पूरी खटिक जाति को आक्रोशित होकर अपराधी (जरायम पेशा जाति की सूची में) घोषित किया था। स्वतंत्र भारत से पूर्व अंग्रेजों की दृष्टि में जो भी अपराधी थे, उन्हें आज स्वतंत्रता सेनानी की संज्ञा दी गई, उसी प्रकार संपूर्ण खटिक जाति को देश में स्वतंत्रता सेनानी का सम्मान मिलना चाहिए।

वैदिक काल में खट्टिक जाति यज्ञ-कर्म से जुड़ी हुई थी। समाज में उस समय धर्म-कर्म ही मुख्य था। अतएव यह जाति समाज की मुख्यधारा से जुड़ी हुई थी। खटिक जाति के लोग धार्मिक कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेते थे। इसकी पुष्टि उनके आज के धर्म-कर्म में उनकी भारी संलिप्तता से हो जाती है। किसी भी हिंदू धर्मिक आयोजन में कोई-न-कोई खटिक अवश्य महत्त्वपूर्ण भूमिका में रहता है, यह इस बात का प्रमाण है कि यह जाति वैदिक काल में भी प्रखर धर्मपरायण जाति थी।

हिंदू खटिक जाति को धार्मिक क्रियाओं के संपादन का मुख्य उत्तरदायित्व सौंपा गया था। उनके सहयोग के बिना वैदिककालीन यज्ञ पूरे ही नहीं हो सकते थे। अतएव जन्मगत उनकी प्रवृत्ति धार्मिक हो गई थी। धार्मिक क्रियाओं में उनकी भागीदारी और धार्मिक होने की उनकी स्वयं की मूलभूत प्रवृत्ति ने उनको स्वभाव से ही गैर-हिंदुओं, हिंदू धर्म के शत्रुओं, मुसलिम जेहादियों, विदेशी मुसलिम आक्रांताओं एवं शासकों तथा अंग्रेजों से निरंतर हिंदू धर्म और संस्कृति की रक्षा तथा हिंदू हितरक्षा के निमित्त जूझने के लिए विवश किया था।

ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर यह सत्य उद्घाटित है कि हिंदू खटिक जाति सदैव की शासन और सत्ता से टक्कर लेती रही। आरंभ में उसने अरब के विदेशी इसलामिक आक्रांताओं और उसके शासकों से संघर्ष जारी रखा और बाद में जब अंग्रेजों ने यहाँ शासन आरंभ किया तो इस जाति ने उसके बनाए हुए हिंदू विरोधी प्रत्येक शासनादेशों का उल्लंघन किया। नमक कानून को गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के माध्यम से भारी जनसमर्थन के साथ तोड़ा था, जबकि उनके बहुत पहले इस जाति ने नमक कानून की रक्षा के लिए बनाई गई अभेद्य 'कस्टम रेखा' अथवा 'दी ग्रेट हेज ऑफ इंडिया' तक का लंघन किया था। पवनपुत्र हनुमानजी ने जिस साहस का परिचय समुद्र-लंघन करके दिया था, उसी साहस का आदर्श खटिक जाति ने कस्टम रेखा का लंघन करके प्रस्तुत किया था। इसके कारण यह जाति सुल्तानों और बादशाहों द्वारा निर्धन बनाकर विविध प्रकार से उत्पीड़ित की गई उसे दर-ब-दर तक होना पड़ा और अंत में अंग्रेजों ने तथाकथित अपमानजनक जरायम पेशा जाति का नाम दे दिया।

अब हिंदुस्थान किसी का दास नहीं है। अपनी स्वतंत्रता और संप्रभुता का स्वामी है। यहाँ की प्रत्येक जाति और प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है। शासन अपना है। सत्ता भी अपनी है। ऐसे में अपने और अपने देश के विकास के लिए सबकुछ करना अपने उत्तरदायित्व के क्षेत्र में है। इस संदर्भ में सबसे पहले यह विचारधारा बनती है कि राष्ट्र का विकास जैसा सर्वोपरि लक्ष्य तभी पूरा हो सकता है जब हिंदुस्थान के प्रत्येक आदर्श नागरिक का विकास होगा। प्रत्येक नागरिक का अर्थ ही प्रत्येक जाति से है।

हिंदुस्थान की सभी जातियाँ अविकसित और दलित नहीं हैं, किंतु दलित और अविकसित जाति एवं उसकी जनसंख्या सर्वाधिक अवश्य है। इसीलिए देश के प्रमुख अर्थशास्त्री एवं जन-प्रतिनिधि तथा विकास की योजनाएँ बनानेवाले कहा करते हैं कि जब तक संपूर्ण दलित जनसंख्या को विकसित नहीं किया गया तब तक देश का विकास संभव ही नहीं है। यह विचारणीय बात है—केवल सरकार के लिए ही नहीं, बल्कि उन लोगों के लिए भी जो विकसित हैं और अविकसित लोगों को भी विकास करने में विविध प्रकार से सहयोग कर सकते हैं। संविधान में भी इस प्रकार की दलित जातियों के लिए संरक्षण

के नियम बने हुए हैं, परंतु शासन-सत्ता में स्थान पा जाने के बाद कुछ ऐसे राजनेता हैं, जो दलित वर्ग के भी होते हुए, अपने स्वहित हेतु संपूर्ण दलित समाज के हितों की उपेक्षा कर देते हैं। परंतु दलित हिंदुओं के प्रति कुछ राजनैतिक पार्टियाँ अवश्य हैं, जो शासन-सत्ता में आने के बाद दलित हित में कार्य करती हैं। ऐसे जनप्रतिनिधियों और राजनैतिक पार्टियों की पहचान स्वयं दलित समाज को ही करनी है। वे जैसा बोएँगे वैसा काटेंगे, यह सत्य है।

संविधान में आरक्षण सूची बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा निर्मित होने से उसमें त्रुटि का कोई प्रश्न ही नहीं है, परंतु रोजी-रोटी के लिए लोग देश के कई स्थानों में जाकर बस गए हैं और अब अपना पैतृक आवास तक वे भूल चुके हैं परंतु नए स्थानों पर उनको दलित जाति का होने का लाभ इसलिए नहीं मिल रहा है कि वहाँ की आरक्षण सूची में उनका नाम नहीं है। यह समस्या खटिक जाति के साथ भी व्यापक रूप में है। संपूर्ण देश के 35 राज्यों में मात्र 14 राज्य ही ऐसे हैं जहाँ पर खटिक जाति को अनुसूचित जाति की सूची में रखा गया है, शेष 8 राज्यों में ये पिछड़ी जाति का लाभ पाने को विवश हैं और अन्य शेष राज्यों में तो खटिक जाति को सामान्य वर्ग से सीधे प्रतिस्पर्धा करनी पड़ रही है। इसके लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक समिति बनाकर सीधे संसद् द्वारा ऐसी समस्त जातियों को पूरे देश में एक जैसी जाति श्रेणी दी जानी चाहिए। किसी-किसी राज्य में तो स्थिति शासन द्वारा स्वयं भ्रामक बना दी गई है।

दिल्ली में कुछ खटिक अनुसूचित जाति में हैं परंतु कुछ अनुसूचित जनजाति में भी रखे गए हैं। सूची में लिखा है (खटिक जो अनुसूचित जाति में न हो, अनुसूचित जनजाति के मान्य हैं)। अब एक समस्या खड़ी हुई कि कौन से खटिक अनुसूचित जाति में और कौन से जनजाति में हैं। ऐसे ही जम्मू-कश्मीर की स्थिति है, वहाँ खटिक अनुसूचित जाति में भी हैं और पिछड़ी जाति में भी हैं। यह विषमता किसी भी जाति के लिए न्यायसंगत नहीं है। इसके लिए मानक निर्धारित किया जाना, राज्य सरकारों से प्रस्ताव माँगना आदि में समय नष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। चूँकि यह जाति अनुसूचित जाति में घोषित है, इसलिए जैसे चमार जाति को पूरे देश की राज्य सूचियों में स्थान दिया गया है परंतु सबको अनुसूचित जाति का ही श्रेणी दी गई है, उसी तरह से खटिक जाति को भी पूरे देश की राज्य सूचियों में अनुसूचित जाति की श्रेणी तत्काल दिए जाने की आवश्यकता है, ताकि दलित जातियों एवं उनकी दयनीय स्थिति में जीवन-यापन कर रहे लोगों को न्याय मिल सके। यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि यह जाति आरंभ से ही अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करनेवाले स्वभाव की है, इसलिए शासन-सत्ता से उसे न्याय नहीं मिलता है, तो निश्चित है कि यह जाति अपने अधिकारों को पाने के लिए हिंदू और खटिक जाति विरोधी नीतियों की समर्थक राजनैतिक पार्टियों से सीधी टक्कर लेगी। □

# (हिंदू खटिक जाति एवं उपजातियों की सूची)

## ( अ )

(1) आकाशे—उपनाम (2) अगलदितीकर, अंगलदेतिकर—दक्षिण भारतीय संबोधन (3) अग्रपाल—उपनाम, (4) अग्रवार, अग्रवारे, अग्रवाल, अग्रवाले—चंद्रवंशी गोत्र यदुजी की संतान एवं राजा अग्रसेन के वंशज जो आगरा में रहने से अग्रवार, अग्रवाल कहलाए, देखें—क्षत्रिय वंशावली, भाग-2, पृष्ठ 425 (5) अग्नपाल—दिल्ली के चंद्रवंशी राजा अनंगपाल तंवर के वंशधर, (6) अग्निवंशी—चलुक या चालुक, चौहान, पड़िहार या परिमार या प्रमार और सोलंकी, देखें—जाति भाष्कर, पूष्ठ 224, (7) अचलपोता—सोलंकी, (8) अछाड़िया—उपनाम, (9) अजवरिया—गहलोत, (10) अजुध्यावासी—टांकवंशी, (11) अजैनिया—उपनाम, (12) अठभइया—चौहान, (13) अड़ायना—गहलोत, देखे—क्षत्रिय वंशावली, भाग-2, पृष्ठ 431, (14) अड़मनकर—उपनाम, (15) अणीवीघ—पवार, (16) अतरौलया, अतरौलिया—कछवाहा, (17) अदमान, अदमाने—उपनाम, (18) अदवार, अद्रंरवार, अद्रवासी—उपनाम, (19) अनमोलत—गहलोत, (20) चंदेकर, आंदेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (21) अपणीया—पंवार, (22) अमावत—सोलंकी, (23) अमेठिया—कछवाहा, देखें—क्षत्रिय वंशावली, भाग-2, पृष्ठ 25 एवं जाति भाष्कर, पृष्ठ 263, (24) अयोध्यावासकर, अयोध्यावासी—खटिक की 7 उपजातियों में से एक, (25) अरख—इसे पासी या बहेलिया जाति की उपशाखा और गोंड़—पासी की वर्णसंकर जाति कहते हैं। अरख की सात उपजातियाँ इस प्रकार हैं—गोदाम, चोरलिउ, टेकाम टेसली, मदई, माटिया, समाम, देखें—आर.वी.रसेल की पुस्तक भारत के मध्य प्रांतों की जातियाँ एवं जनजातियाँ, (26) अरडु—पवार, (27) अरहाड़िया—गहलोत, (28) अरुमानकर—उपनाम, (29) अर्कवंशी, आर्कवंशी, आर्कुवंशी—सभी रघुवंशी गोत्र

के गहलोत (30) अर्जुमनकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (31) अलंगा—पवार, (32) अलमचा, अलमेचा—सोलंकी, (33) अलवर—कछवाहा, (34) अलुरकर—उपनाम, (35) अवधि, अवधिया—उपनाम, (36) अवीघ, अवीद्रा, अवींद्रा—रघुवंशी गोत्र के सूर्यवंशी पवार, देखें—क्षत्रिय वंश की सूची, पृष्ठ 103, (37) अवैसीम—पवार, (38) अव्बालकर—उपनाम, (39) असवाल, असीवाल—रघुवंशी गोत्र के चौहान, दखें—जाति भाष्कर, पृष्ठ 253, (40) असेचा—गहलोत, (41) असोड़िया—उपनाम, (42) असोलया, असोलिया, असौलिया-चौहान, देखें—जाति भाष्कर, पृष्ठ 263 : ओसिया से ओसवाल और ओसवाल से असोलया हुआ, (43) अहड़ासल—पवार (44) अहरवार, अहवार—गहरवार, देखें—जाति भाष्कर, पृष्ठ 23, (45) अहवन, अहवासी—पवार, देखें—जाति भाष्कर, पृष्ठ 263, (46) अहाड़ा, अहाड़िया, अहेड़िया—गहलोत, (47) अहेरिया-पासी की उपजाति।

## ( आ )

(48) आभर—चौहान, (49) आदर—पवार, (50) आमेरा—अछवाहा, (51) आरकटिका—दक्षिण भारतीय खटिक समाज की छह प्रमुख जातियों में एक, (52) आर्य—उपनाम, (53) आर्वी—उपनाम, (54) आल—चौहान, गहलोत, (55) आवा—गहलोत, (56) आशाचय, आसायच—गहलोत, (57) आसावर—चौहान, (58) आसीमरी—चौहान, (59) आसीवाल, आशीवाल—क्रमांक 39 देखें।

## (इ, ई)

(60) इंगठे—उपनाम, (61) इंगले—उपनाम, (62) इंगोले, इगोले—उपनाम, (63) इंडाना, इडाना, एडिया—उपनाम, (64) इकोसिया—उपनाम, (65) इछ्वाकू, इक्ष्वाकु, इश्वाक, इस्वाकु—सूर्यवंशी, (66) इणीयार—पवार, (67) इनेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (68) इंदा—पडिहार, (69) इंदोर—पडिहार, (70) इंदौरिया—उपनाम, (71) इमलिहा—उपनाम, (72) इरछइयाँ—पवार, (73) इललकार—उपनाम, (74) इलेकर—उपनाम, (75) इसरदा—कछवाहा।

## (उ, ऊ, ए, ऐ)

(76) उजैनी, उजौनिया, उज्जैनिया—पवार, देखें—क्षत्रिय वंशावली, पृष्ठ 61, (77) उटगिरिया—बड़गूजर, (78) उड़िया—पवार, (79) उदन, उदने—खीचीवंश,उदानी से उदन हुआ, (80) उदमतिया—सूर्यवंशी, गोत्र—वत्स, देखें—क्षत्रिय वंशावली, पृष्ठ 43, (81) उदसेवा, उसेवा, ऊसेवा—गहलोत, (82) उदिया—पवार, (83) उदैतिया,

उदैनिया—उपनाम, (84) उड़न—यदुवंशी, (85) उनियारिया—सोलंकी, (86) उपातलोत—पवार, (87) उवहड़—गहलोत, (88) उमट—पवार, (89) उमठ—पवार, (90) उम्मत—पवार, (91) उषाकर, उषाकेकर—दक्षिण भारतीय उपनाम, (92) उहड़—गहलोत व राठौर दोनों में, (93) ऊगट—पंवार, (94) ऊदावत—राठौर, (95) ऊमर, ऊमरा—पवार, (96) ऊहत—राठौर, (97) एड़िया, देखें—क्रमांक 63, (98) एलरकार, देखें—क्रमांक 73।

## ( ओ, औ )

(99) ओजकर—गहलोत, (100) ओजाइडा—गहलोत, (101) ओजानिया—चौहान, असीवाल का रूपांतर ओजानिया, (102) ओड़—पवार,(103) ओड़ालिया—गहलोत, (104) ओमठिया—उपनाम, क्रमांक—23 देखें, (105) ओवाइडा—गहलोत, (106) ओसवाल—चौहान, ओसवाल से असोलया बना।

## ( क-कम )

(107) कंकन—पवार, (108) कंकेट, कंकोटक—गहलोत, (109) कंगनकर—उपनाम, (110) कंगया, कगवा—पवार, (111) कंटाले, कंठाले—उपनाम, (112) कंटेचा, कटेचा—राठौर, (113) कंठ पाहिड़ा—सोलंकी, (114) कंभाझी—कछवाहा, (115) ककथेरिया—उपनाम, (116) ककरेटिया—उपनाम, (117) कथेरा—गहलोत, (118) कदेला—चौहान, (119) कछवाया, कछवाहा—गोत्र—गौतम, कुशवाहा का परिवर्तन कछवाहा हुआ। कछवाहों की शाखा—प्रशाखा इस प्रकार है—

अतरौलया, अमेठिया (अमेठिया) अमोरा, अलवर, इसरदा, कंभाणी, कतरौलया, कन्यावत, कपूरका, कलछरिया, कंकरे, किरार, कील के ठगेले, कुंडल, कुहरी, कुशवाहा, कुंभाणी, कोहवाल, खगारोत (खूँगारोत) खितौत्या, गहलेंतु, गूंगरी, गूगलिया, गूलू, गोंगलीव, गोगावत, रंवालियर के, चिनासिये, जंबूवाल, असरोटिया, जाकवंत, जीगरवाल, जून्या, जोतावत,जौरिया, झाड़ी, टांकी, टोंगा, टोडा, ठकेले (कील के, बेसर के, भोंफोरा के), डोंगरा, ढाड़ी, ढिंगवार, ढूँढ़ास, ताजखानी, तालचिर, ताराणिए, दलपतिया, दागमन, दुवकुंडा, देहलपोत, घारके, नरवरिया, नरूका, नरैना, नाथावत, पचौरी, पाँचल, पिपरौलया, पोकड़ी, बड़ालांवा, बलभप्रोत,बांकावत, विकलपोता, विरम, विहट, वीरपुरये, भाऊ, भातरोत, भाटिया, मोफोरा ठकेले, मधुपुर के, मनकोटिया, मनहोस, महदवाड़िया, महरमूं, रतनावत, राजावत, रोहतक, लाउखानी, शेखात, श्योबहा, सखनपोता, ल्हिाथिया, सिंधिया, सिंघोद, सुजेपांता, सुरा, सेंगरवार, सेखावत, सेनियाल, सींखर, सोपले, (120) कछोटिया, कछोड़िया—पवार, (121) कटहारा—उपनाम, (122) कटहरिया—सूर्यवंशी, गोत्र—

वाशिष्ट, तथा निकुंभ की शाखा, देखें—खत्रिय वंशावली, पृष्ठ 31, (123) कटारिया—चौहान एवं सोलंकी, (124) कटाहरिया पटारिया—सूर्यवंशी चौहान, गोत्र—वशिष्ठ, कटाहरिया से पटारिया हुए। (125) कठवाड़ा—सोलंकी, (126) कठूंकड़ा—सोलंकी, (127) कठेरिया—उपनाम, (128) कठोलिया—उपनाम, (129) कड़ेचा—गहलोत, (130) कड़ल, कड़ेल—उपनाम, (131) कणकधर—उपनाम, (132) कण्व, कान्व वंशी—उपनाम, (133) कतटिया, कतरिया, कतारिया—चौहान, (134) कतरोलया, कतरोलिया, कतरोल्या, कतरौल्या—कछवाहा, (135) कथेरिया—गोत्र—कश्यप, चौहान शाखा के सूर्यवंशी, (136) कथेरिया—पवार, (137) कनकघर, कनकथर—उपनाम, (138) कनवजिया—राठौर, (139) कंडूल—सूर्यवंशी, (140) कन्नोजकर—उपनाम, (141) कन्नौजिया—गहवार जो बाद में राठौर कहलाए, (142) कन्यावत—कछवाहा, (143) कन्हावत—गहलोत, (144) कपूरका—कछवाहा, (145) कवरिया—राठौर, (146) कबाड़िया—उपनाम, (147) कव्बा—पंवार, (148) कमरिया—उपनाम, (149) कमानी—पासी की उपजाति, (150) कंबाल—चौहान, सूर्यवंशी कटाहरिया वंश की प्रशाखा, (152) कम्मभाल—गोत्र—कश्यप।

## (कय-कह)

(153) करछइया—चद्रवंशी हैहयवंशी, गोत्र—कश्यप, (154) करजिया—उपनाम, (155) करणोत—राठौर (156) करथ—गहलोत, (157) करनावत—गहलोत, (158) करमावत—सोलंकी, (159) करहरिया—पालवंशी, चौहानवंश, कहारिया से करहरिया हुआ, (160) कराड—यदुवंशी, (161) कराडिया—पालवंशी, चौहान वंश, कहारिया से कराड़िया हुआ, (162) करारिया—यदुवंशी, चंद्रवंशी, कुरेरा से करारिया हुआ, (163) करारिहा—चौहान, (164) कराले—उपनाम, (165) करियार—उपनाम, (166) करेचा—राठौर, (167) करेल, करेला—उपनाम, (168) करोशिया, करोसिया, करीचाया—चौहानवंश कीभदौरिया शाखा के, (169) कणकोटकर, कर्णकोटिकर—दक्षिण भारतीय उपनाम, (170) कलचा—सोलंकी, (171) कलचुरी—चंद्रवंशी, हैहयवंशी, गोत्र—कश्यप, (172) कल्छरिया—कछवाहा, (173) कलपूसर, कल्लपूसर—पवार, (174) कलमोह—पवार, (175) कलहरा—पडिहार, (176) कलाल—दक्षिण भारतीय छह प्रकार के खटिक जातियों में से एक, जो चंद्रवंशी यदुजी नहीं बल्कि सूर्यवंशी यदुजी की शाखा के हैं, (177) कलिया—गहलोत, (178) कलीलिया—पवार, (179) कलेचा—सोलंकी, (180) कल्याणकर—दक्षिण भारतीय संबोधन या उपनाम, (181) कवरिया, कवरीया—राठौर, (182) कवलभार—उपनाम, (183) कसकरकर—उपनाम, (184) कसनावत—गहलोत, (185) कसरेटिया—सूर्यवंशी निकुंभवंशी, कटहरिया शाखा, गोत्र—वशिष्ठ, चौहान वंश

के, (186) कसवा—पवार, (187) कसाव (कसाई), (188) कसुरजी—गहलोत, (189) कसेरुवा—खटिक की सज उपजातियों में से एक जाति, चक चिकवा की शाखा, (190) कहम—पवार, (191) कहारिया—चौहान वंश में सूर्यवंशी पालवंश शाखा के, किरार से कहारिया हुआ, (192) कहोरिया—पवार।

## (का-की)

(193) कांकरे—कछवाहा, (194) कांटेकर—उपनाम, (195) कांधलोत—राठौर, (196) काकतीय—गहरवार, गोत्र—वशिष्ठ, (197) काकसिया—उपनाम, (198) काकुस्त, काकुस्थ सूर्यवंशी इक्ष्वाकुवंश, (199) कागछारे, कागछोर, काकछरे—कछवाहा, (200) काथवटे उपनाम, (201) कालरे—उपनाम, (202) कावा—यदुवंशी, पवार, दोनों में, (203) कामले, कामलेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (204) कामिटेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (205) काम्मेटकर—उपनाम, (206) कांबले, कांबले, कांबलेकर—उपनाम, (207) कायत, कायस्थ—चौहान, गोत्र—वत्स, (208) कारतीं, कारतो—चौहान, (209) कारिया—उपनाम, (210) कारेझंगा, कारेझुंगा—भिलवारा के, (211) कालपा, काल्पा—पडिहार, (212) कालपुर, कालपुसर, कालमा, कालमुँह, काला, कालामोह, काले—पवार, (213) कालमोर—सालंकी, (214) कालोरिषा उपनाम, (215) किराड़, किराय, किरार, किरारक़र—यदुवंशी किरार बदलकर पालवंशी कहारियाहुआ, कछवाहा शाखा, गोत्र—कोडिण्य, (216) किलोलिया—पवार, (217) किवार, किंवार—पवार, गोत्र—रैकवार या किरार, (218) कील के ठगेले—कछवाहा।

## (कु-कै)

(219) कुंडले—कछवाहा, (220) कुंतज—पवार, ()221 कुंता—पवार, (222) कुंवरहा, कुंवराहा उपनाम, (223) कुड़री—कछवाहा, कुरी से कुहरी हुआ, (224) कुकराहा—उपनाम, (225) कुकराठे, कुकरोठे—पवार, (226) कुक्रेल, कुकरेलेकर, कुकरोलया, कुकरोलयो, कुकरोले, कुकरौलेकर, कुकरौल्या—काकतीय सूर्यवंशी गहरवार, गोत्र—वशिष्ठ, (227) कुचेरा—गहलोत, (228) कुड़ेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (229) कुणीदरा—सोलंकी, (230) कुने, कुनेकर, कुन्हेकर—उपनाम, (231) कुपायत—राठौर, (232) कुवारकर—उपनाम, (233) कुमावत—गहलोत, (234) कुंभपाल—उपनाम, (235) कुंभाल—चौहान, (236) कुंभभाल, गौत्र—कश्यप, देखें—क्रमांक 152, (237) कुंभारकर—उपनाम, (238) कुरड़—पवार, (239) कुरा—कौशक—कुरा, चंद्रवंशी कुरेरा से यदुवंशी करारिया रूपांतरित, (240) कुरी—चंद्रवंशी शाखा (241) कुलचोर—उपनाम, (242) कुलमोर—सोलंकी, (243) कुलीसुये—मराठा, (244) कुले—उपनाम, (245)

कुल्हइया—चौहान, (246) कुवारकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (247) कुशमइया—गहरवार, (248) कुशमाहा, कुशवाहा—उपनाम, (249) कुसवावारी—पड़िहार, (250) कूंकण चोपड़ा—पवार, (251) कूंकणी—पवार, (252) कूंभाणी—कछवाहा, (253) कून्हेकार—देखें—क्रमांक 230, (254) कृष्णावत—गहलोत, (255) केतगोयल—गहलोत, (256) केरल रघुवंशी, (257) कैरोछिया—उपनाम, (258) कैलण—यदुवंशी, (259) केलवा—गहलोत, (260) केशपोत—पड़िहार, (261) वैथवास—पासी की उपजाति, (262) कैन्थाहा—उपनाम, (263) कैलइहा—उपनाम, (264) कैलावा—गहलोत, (265) कैशरोलिहा—उपनाम।

## ( को, कौ, क्ष )

(266) कोटकरा—गहलोत, (267) कोटडिया—राठौर, (268) कोटपाल, कोर्टपाल—चंद्रवंशी, गहलोत, कोटिय और कोटपाल, दोनों एक ही हैं, (259) कोटारकर—उपनाम, (270) कोटिया, मनकोटिया—चंद्रवंशी गहलोत, कोटपाल, कोर्टपाल भी इसी में हैं, (271) कोटेचा—गहलोत, (272) कोतमिरे—उपनाम, (273) कोतिमितकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (274) कोथमीर, कोथमीरे कोथमीरकर—ये सभी उपनाम क्रमांक 272, 273 की ही तरह हैं, (275) कोयलकर—दक्षिण भारतीय उपनाम, (276) कोरबा, कोलव, कलार—यह सूर्यवंशी शाखा कौवल से कोलवा, पुनः कोरवा, फिर कलार हुए, (277) कोरोछिया—उपनाम, (278) कोहला, कोहवला, कोहवाल, कोशिला—सभी पवार शाखा के हैं, (279) कोहवाल—सूर्यवंशी कछवहा, (280) कौशिक (कुरा) (281) क्षेमानव—गहलोत।

## (ख)

(282) खंगारोत—कछवाहा, (283) कटकुल, खटवंशी, खटवा, सभी खश शाखा के हैं, (284) खटके—मराठा शाखा, (285) खटा—पवार, (286) खटिक—पासी की उपजाति, विस्तृत विवरण पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य, (287) खड़ीगेकर—उपनाम, (288) खत्ती, खत्री—क्षत्रिय से खत्री, (289) खरखोदवा—उपनाम, (290) खरल खरबड़, खरवर, खरबांग, खरबांड—पडिहार शाखा, (291) खरा, खरेड, खरेडा, खरेते—पवार शाखा, गोत्र—वशिष्ठ, (292) खल—पवार, गोत्र—वशिष्ठ, (293) खरंगा, रैब्बा, रंगिया—उपनाम, (294) खश गहरवार, गोत्र—खाश, (295) खहर—पवार, (296) खाजापुरी—उपनाम, (297) खाढोरा—सोलंकी, (298) खाररा—सालंकी, (299) खालंत—सोलंकी, (300) खलच—सोलंकी, (301) खलता—सोलंकी, (302) खितौलिया, खितौलया, खितौल्या—कुशवाहा वंश, कछवाहा शाखा, खंदोली से खितौलिया हुआ, (303)

खिरडकर—दक्षिण भारतीय उपनाम, (304) खिवाड़—पवार, (305) खींची, खिच्ची—चौहान, गोत्र—वत्स, (306) खींचीवार—पवार, (304) खिलवाड़—पवार, (305) खींची, खिच्ची—चौहान, गोत्र—वत्स, (306) खींचीवार—पवार, (307) खीटवाल—पवार, गोत्र—वशिष्ठ, (308) खीयावत—सोलंकी, (309) खुगंड़ा—पवार, (310) खुगार—पड़िहार, (311) खुडाना—सोलंकी, (312) खुणे—उपनाम, (313) खूँगारोत—कछवाहा, क्रमांक 282 सदृश, (314) खूँटल, खूँटा—पवार, (315) खेचड़—पवार, (316) खेचरवाल—चक, चिकवा की शाखा, (317) खेजर—पवार, (318) खेड़िया—उपनाम, (319) खेतवंशी—उपनाम, (320) खेरखाई—उपनाम, (321) खैरवार—पवार, गोत्र—वशिष्ठ (322) खैरांडा—सोलंकी, (323) खेरज्या—गहलोत, (324) खैदरू—उपनाम, (325) खैर—पवार, (326) खैरवार—पंवार शाखा एवं राठौर शाखा, दोनों में मान्य है। मौजा खैरागढ़, हाजारीबाग (खरूंगढ़) के आधार पर खरवार प्रसिद्ध हुआ, (327) खैरवाल—खैरवार सदृश खैरवाल व्यवहृत, (328) खैरा—पवार, (329) खैराडा—सोलंकी, (330) खैराहा—उपनाम, (331) खैरोबी—उपनाम, (332) खेआर—सूर्यवंशी चौहान की पडिहार शाखा की उपजाति जो खोक्खरा से ओखार हुई, (333) खोकरा—पवार एवं राठौर, दोनों शाखा में मान्य, गोत्र—वशिष्ठ, खोकरा भी इंगित, (334) खोका—पवार, गोत्र—वशिष्ठ, (335) खोक्खरा—चौहान व पडिहार शाखा, खोक्खरा से खोआर हुआ, (336) खोखर—राठौर, (337) खेखरा—पडिहार एवं राठौर, दोनों शाखा के, (338) खोडेरा—सोलंकी, (339) खोन्जापुरी—उपनाम, (340) खोवार, खोवार—उपनाम, (341) खेबाल—उपनाम।

## (गं-गह)

(342) गंगणे—उपनाम, (343) गंगतीर—उपनाम, (344) गंगनेरकर, गंगीनेनिकर—दक्षिण भारतीय उपनाम, (345) गंगवाल—यह ग्यारह गोत्रों के नाम से जाना जाता है, (346) गंगादास पंवार, (347) गंगावत—सोलंकी, (348) गंगुलिया—उपनाम, (349) गंजाहा, गंदाहा—उपनाम, (350) गंधवारया—पवार (351) गंधाली, गंधीला—सूर्यवंशी गुहिलवंश, गंधीला या गुरावा, राठौर, (352) गँवार—उपनाम, (353) गंहौर, गंहारे—गहलोत, (354) गज—यदुवंशी पवार, (355) गजमोती, गजमोतिया—गहरवार, (356) गंजरवंशी—बड़गूजर, (357) गजविंकर—उपनाम, (358) गटचा—गहलोत, (359) गढ़वाल—पवार (360) गढ़वालिया—पालवंश, (361) गढ़वासिया—चौहान वंश के पाल वंश की शाखा के एवं राठौर, (362) गणवीर—उपनाम, (363) गनावत—गहलोत, (364) गहड़वाल—चंद्रवंशी, गोत्र—कश्यप, (365) गहरवार—गहलोत, डोंगरा राजपूत, गहरवार से अहरवार हुआ, गहरवा से ही बुंदेला भी हुआ, गहरवार शाखाएँ कन्नोजिया,

कुकरोलया, कुकरोले, कुशमइया, खश रघुवंशी, गजमोती, झोड़ीवारे, टुंडेले, पीपर, फरसाटारे, बगवार, बुंदेला, भट्टटीवाल, माहुने, मोहना, मोहनिया, राजपाली, राठौर, होलकर, (366) गहलेड़िया—पवार, (367) गहलतु, गहलेतु, गहलोत—गोत्र गौतम, कछवाहा शाख, गुहलोट से गहलेतु हुआ, गहलोत की शाखा—प्रशाखाएँ निम्नलिखित हैं—

अजवरिया, अडायना, अनमोलत, अरहाड़िया अर्कवंश, असैचा, आहाड़ा, अहाड़िया, आल, आवा, आशायच, (आसायच) आहाड़िया (पहाड़िया), उदसेवा, उबहड़ उसेवा, उहड़, ओजाइडा, ओजाकर, ओडालिया, ओवाइडा, कंकेट, कंकोटक, कचेरा, कड़चा, कहावत, करथ, करनावत, कलिया, कसनावत, कसुरजी, कुचेरा, कुमावत, कष्णावत, केनगोंयल, केलवा, कैलाया, कोटकरा, कोटिया, कोटेचा, क्षेमावत, खैरुज्या, गंहोर, गहोर, गटचा, गनावत, गहरवार, गहलोत, (गौतमगोत्री), गुहिल, गोतमा, गोदारा, गोधड़ा, गोधा, गौर, गोरखा, गोरमा, गोहल, गोहिल, घरनिया, धोर, घोरणिया (घोरनिया), चंद्रावत, चंदरावत, चूड़ावत, चौधरी (पटेल), चौरावत, जगमालौत, जगलोत, जगावत, जसाद, जोरा, टांकछोड़ा, टीपणां, टीवण, टीवण, टीपर्ण, डाहलिया, ताहलिया, ताहड़गे, तिबड़किया, तोडा, दसोद, दुदैसिया, दुलावत, दोवण, दोवासा, धुड़या, नगराराजोत, नरूपउदसवा, नाचोता, नाजोड़िया, नाज्या, नादोड़या, नादौड़ा, नाधोता, निकास, निरूप, नीररूप, पंचावत, पटेल (चौधरी), परथीराजगेल, परथीराजगेलो, पहाड़िया, पानसिया, पारदी, पालरा, पाहा, पीपाड़ा, पुखत, पुरावत, पूरोत, फगोड़िया, बंसीवाल, बगरोण, बगरोया, बगरोया, बढ़ारिया, बड़वार, वमीला, वरसानिया, बाँसीपाल, पाणगोधा, वारतदलचंद्र, विरमदेनोव, बील्याजक, बुहाभूसड़या, बूंटया, बूंटीवाल, बूंलीला, बूसा, बोबा, बोसा, भटेवरा, भटोरा, भड़ेचा, भारज्या, भीमला, भींवला, भोजक, भोजकरा भोड़ीवार, भेनिया, भोपड़ा, भांसला, मंगरोपा, मंडइया, मंडवा, मंडाव, मंडावत, मडेले, मथुरायता, मनकोटिया, मन्डइया, मंडावत, माँगलिया, माहिल, मुंदोत, मेघावत, माटसिरा, मोटीसरा, मोर, रगिया, रणमालोत, राणावत, रानांवत, रुद्रोत (चार तरह के) लाखावत, लुसावा, लोनावत सकतावत, सगरावत, ससेदा, सहावत, सांगवत, सांगवत, सांगावत, सादवा, सिकाड़िया, सिकारिया, सीसोंदिया, सेहाड़िया, सोरा, हुल, (हूल), हुवासां, होत।

## (गा-गौ)

(368) गालिंदे—उपनाम, (369) गाएलवाल—चौहान (370) गागलिया, गोत्र—कश्यप, (371) गांढबे—उपनाम, (372) गायकवाड़—मराठा शाखा, (373) गायकवाड़कर—उपनाम, (374) गायकवाल—उपनाम, (375) गायगोले—उपनाम, (376) गायग्वाल—उपनाम, (377) गुगलिया—गागलिया एवं गूगलिया से गूगरी बना, गोगलीया एवं गोगलीबा भी यही हैं, कछवाहा शाखा, (378) गुठलया, गुठलवा भिलवारे के,

(379) गुप्तवंशी—सूर्यवंशी चौहानवंशी शाखा जो शाक्यवंशी तथा मौर्यवंशी (पंवारवंशी) थे, (380) गुरखंदा—उपनाम, (381) गुरड़ा, गुरहा—गुहिल व राठौर, (382) गुराव, गुरावा—चौहान, गोहिल एवं राठौर शाखा के गुराबा को गंधीला कहा गया, (383) गुरावर—उपनाम, (384) गुलहर के पटारिया—चौहानशाखा, (385) गुलाब—उपनाम, (386) गुलू—कछवाहा, गागलिया, गुगलिया से गूगरी और गूगरी से गुलू बना, (387) गुहिल—गोत्र—कश्यप, सूर्यवंशी गहलोतवंशी लब के वंशज सीसोदिया की शाखा, एवं राठौर शाखा भी, गुहिल एवं गोहिल एक ही हैं, (388) गूंगरी, गूगंरी—कछवाहा शाखा के हैं, गागलिया एवं गूगलिया से गूगरी बना, गूगरी का बिगड़ा हुआ रूप गुलू हुआ, (389) गूंगाहुरड—पवार, (390) गूजर, गुजर—पवार, बड़गूजरों की संतान और पासी की उपजाति मान्य, (391) गेट, गेटवारिया—चौहान व पालवंश, (392) गैदुहा—पासी की उपजाति, (393) गैलहड़ा, गैहलड़ा—पवार, (394) गोंदिया—उपनाम, (395) गोकलपाल—सोलंकी, (396) गोगदेव, गोगादे, गोगदेवा—राठौर, (397) गोगलिया, गोगलीबा—कछवाहा शाखा, गुगलिया, गूगलिया भी यही हैं, (398) गोगली—उपनाम, (399) गोगावत—कछवाहा, (400) गोगीकर—उपनाम, (401) गोडा—सोलंकी, (402) गोढला—पडिहार, (403) गोतकर, गोतरकर—उपनाम, (404) गोतमा—गहलोत, (405) गोदाम—अरख की उपजाति, (406) गोदारा, गोधड़ा, गोधा—गहलोत, (407) गोपालपुट्टकर, गोपालपुरीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (208)गोयडोडे—उपनाम, (409) गोर, गोरखा, गोरमा—गहलोत, (410) गोलवाल—चौहान, (411) गोविरकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (412) गोहल, गोहिल—गहलोत, सीसोदिया शाखा, गोत्र—कश्यप, गुहिल, गोहिल एक हैं, (413) गोंडकर—उपनाम, (414) गौड़कर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (415) गौदाकर—उपनाम, (416) गोलीकर—दक्षिण भारतीय नाम संबोधन, (417) ग्वालियरके—कछवाहा शाखा।

## (घ)

(418) घंघेरिया, घघेरिया—चौहान, रघुरइया ठाकुर यही हैं, ये दो तरह के हैं—घघेरिया मुड़िया और घघेरिया लहरया, (419) घटमाहा—उपनाम, (420) घड़केकर, घटकेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (421) घड़ासिया—पडिहार, (422) घड़ियार, घड़ियार—उपनाम, (423) घनघूते—उपनाम, (424) घनोरिया—पडिहार, (425) घमाहा—उपनाम, (426) घरघर का चंद्र—उपनाम, (427) घरनिया—गहलोत, (428) घवेचा—राठौर, (429) घाकपाठे, घाकपाडे—उपनाम, (430) घाघरिया—राठौर, (431) घाघा—चौहान अंतर्गत पडिहार की शाखा, (432) घीघल—उपनाम, (433) घुंता—पवार, (434) घुड़चढ़ा—पासी की उपजाति, (435) घुड़चढ़वा—चक, चिकवा की शाखा, (436)

घुरआ, घुरुआ, घुरइया, घुरंहा, घुराहा—सभी चौहान, (437) घुरखुड़े, घुरखुदे—उपनाम, (438) घूते—चंद्रवंशी तोमर, (439) घूरा—उपनाम, (440) घोघट—चंद्रवंशी तुवर वंश, (441) घोटकर, घोटकेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (442) घोटड़े, घोड़के—उपनाम, (443) घोड़चढ़ा—खटिक की उपजातियों में एक तो वर्तमान में उत्तर भारत में नहीं रह गए हैं, (444) घोणो—उपनाम, (445) घोर—गहलोत, (446) घोरणिया, घेरनिया—गहलोत, (447) घोराणां—पणिहार, (448) घोल, घोलये—उपनाम।

## (च-चा)

(449) चक, चिक, चिकवा, चिकये—खटिक की सात प्रमुख जातियों में से एक उपजाति जिसकी शाखाएँ हैं—कसेरूवाल, खेचरवाल, घुड़चढ़ाव, चक, चिक, किवा, मेवाफरोश, रंगिया, राजगीर, रैय्या, सोनकर, (450) चकित, चक्कित—राठौर, (451) चकोले, चकोलेकर, चकोलो—सभी उपनाम, (452) चक्रडाणा—चौहान, (453) चंद्रपुरिया, चंद्रपुरिया—भिलवारे के (454) चंदरावत, चंद्रावत, चंद्रावत—गहलोत, पडिहार, सोलंकी तीनों कुल में हैं, (455) चंदसेनिया, चंद्रसेनिया—उपनाम, (456) चंदेल—गोत्र—पराशर, चंद्रवंशी, (457) चंदोसिया—सूर्यवंशी चौहान शाखा, गोत्र—भारद्वाज, चंद्रसेनियासे चंदोसिया बना, (458) चंद्र—पवार, (459) चंद्रबंली—उपनाम, (460) चंद्रमा—उपनाम, (461) चंद्रवंशी, शाखाएँ—अग्रवार, करछाइया, करारिया, कलचुरी, कुरी, कोटपाल, कौशिक, घोधट, घूते, चंदेले, जयतुमाल, जादव, जैसवाल, टिगुलया, टुकलया, ढेंकया, तमर, तमोरी, तरेटिया, तावड़े, तांवरे, तुवर, तेरइया, तोमर,नेकया, नैनावार, फरेंजिया, बंगरवाल, बनाफर, बनीपाल, बंदीछोर, बवेड़िया, विलोदरिया, बूंटऔलिया, बेरुआर, बोरीवाल, मारौनी, यादव, (462) चंद्रवात—गहलोत, राठौर, (463) चमरुआ, चमरेठ—उपनाम, (464) चंपक—पवार, (465) चलनमहराव—खटिक की सात जातियों में एक जिसे अब रंगियाया रैय्या कहते हैं, पेशा—चर्मकर्म, पेशा के कारण संख्या घट रही है, (466) चलवार—पवार, (467) चलुक—अग्निवंशी, (468) चह्वाण—उपनाम (469) चांदरोसिया—चौहान, (470) चांदारा, चांदोरा—पडिहार, (471) चांदू—चौहान, (472) चांप, चांपा—पवार (473) चांपावत—राठौर, (474) चांवड़ा, चावड़ा, चावला—गोत्र—कश्यप, सूर्यवंशी चौहान, पवार दोनों शाखा में, (475) चाकूकोलेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (476) चाखना कलाल—दक्षिण भारतीय खटिक की छह उपजातियों में से एक, (477) चाचिक—राठौर, (478) चाचेरा—चौहान, (478) चापोटक, चापोत्कट—पवार, (480) चारलिउ—अरख की उपजाति, (481) चालुक, चालुक्य—चौहान वंश, चालुक्य ही सोलंकी हुए, (482) चाहडदे—राठौर, (483) चाहिल—चौहान, (484) चाहोडा—चौहान।

## ( चि-चौ )

(485) चिक, चिकवा—क्रमांक 449 सदृश, (466) चिड़िमार—पासी की उपजाति, (487) चित्तापुरिकर, चित्रापुरिकर—दक्षिण भारतीय संबोधन या उपनाम, (488) चिनासिये—कछवाहा, (489) चिंटोलिया—उपनाम, (490) चिन्नपहाड़िया—उपनाम, (491) चीता—सोलंकी, (492) चीतियार—गूजरवंशी, चितयार से चेतीवार बना, (493) चीबा—चौहान, (494) चुबराहा—उपनाम, (495) चुरिहार—उपनाम, (496) चुसाहा—उपनाम, (497) चूड़ावत—गहलोत, (498) चूड़ासमा—यदुवंशी, (499) चूड़ेलसा—पवार, (500) चूला—उपनाम, (501) चेतीवर—वड़गूजर शाखा, चितयार से चेतीवार हुआ, (502) चेतीवाल—उपनाम, (503) चेतीशल—उपनाम, (504) चेरि—उपनाम, (505) चैनिया—पडिहार, (506) चैलाहा—उपनाम, (507) चोपड़ा, चोवड़ा—पवार, पडिहार, (508) चौबरिया—चौहान, पालवंश, चौबरिया तथा चौरसिया एक ही हैं, (509) चोयल—पडिहार, (510) चोरसिया—उपनाम चौरसिया सदृश, (511) चोला—उपनाम, (512) चोहिल—पडिहार, (513) चौडला—उपनाम, (514) चौधरी—गहलोत जिन्हें पटेल कहते हैं, (515) चौरसिया—चौहान में पालवंश की शाखा चोबरिया, चोरसिया, चौरिसिया ख्यात्, (515) चौरसिया—चौहान में पालवंश की शाखा चोबरिया, चोरसिया, चौरिसिया ख्यात्, (516) चौरावत—गहलोत, (517) चौला—उपनाम, (518) चौसनी, उपनाम, (519) चौहान—गोत्र—वत्स, अग्निवंशी, सोमवंशी, भदौरिया शाख, चौहान की शाखा—प्रशाखाएँ इस प्रकार हैं—

अठभइया, असवाल, असीवाल, आमर, आल, असावर, आसीमेरी, ओजजानिया, कचेला, कटारिया, कटाहरिया, कतरिया, कथेरिया, कंबाल, करारिहा, कसरेटिया, कायस्थ (कायस्त), कारतो, कुंभाल, कुल्हइया, सीखी, गाएलबाल, गुप्तवंश, गुराव, गुराबा, गुहर के पटारिया, गोलवाल, घघेरिया मुडिया, घघेरिया, लहारया, घुरंहा, चक्रडाणां, चंदौसिया, चंद्रसेनिया, चांदू, चांदूर, चांदरोसिया, चाचेरा, चालुक, चावड़ा, चाहिल, चाहोड़ा, चीबा, जंगहरिया, जडुड़ेचक, जांगड़ा, जांगेरे, जोजा, झागेसिक, डंडोतिया, डिमाड़ा, ढिमड़िया, तनूर, तसेंला, तस्सेरा, तस्सेवरां, तिलैटिया, तोगी, तोसीना, तोसेचरा, दानिक, दिलवांचरे, दिलवारिया, देवड़ा, दोगइया, दोली, धनारिया, धामनेचा, घुंधाड़िया, नकौमी, नकुंप, नगसवाल, नव्वारिया, नहरवण, नहवीवाण, नागर नाडोला, नारनोलिया, नावते, निकुंभ, निन्नोनिया, निरवाण, निर्वाण, निर्माणी, नीमपुराणां नोहानी, पच्चीसया, पटारिया, पडिहार, पड़सेड़िया, पतरफोड़, पपड़िया, परसेड़िया, परेवा, पालवंश, पावजी, पाविया, पिरेटवाल, पुटवाल, पूरविया, प्रतिहार, पृथ्वीराजिया, पैरवा, फीमापुरिया, बुकट, बगड़िया, बगसरया, बगवासया, बगाड़, बघड़िया, बचगोती, बड़वारिया, बनसाल, बरगइया, बलिया, बसुकाल, बहुवाल, बांग, बाकला, वाकलेचा, बागड़ी, बड़वारिया, बनसाल, बरगइया, बलिया,

बसुकाल, बहुवाल, बांग, बाकला, वाकलेचा, बागड़ी, बागनिन्नोनिया, बाघोड़ा, बाचड़ागोती, बाड़ा, बालेचा, वालेस, वालोत, बिरहा, बील, भदकरया, भदकारिया, भदवरया, भदवरिया, भदौरिया, भवर, भांकर भावद, भावर, भुरेचा, भोपले, मंत्री, मदरेचा, मदुरिया, मंडइया, मवयचा, मलानी, महरवानियाँ, महालणां, महामना, मांदरेचा, मांदेड़चे, मारू, मालानी, मालौत, माल्हाण, मावर, मिर्णानिनिया, मुकराना, कुमलारा, मुडियाघंघेरिया, मैनी, मोयल, मोहिल, रावत, रासिया, लहारया घंघेरिया, संक्रेचा, संभरवार, सगन, समेरे, सप्रे, समराचक्र, सपटा, साचोंरा, साभरया, सांभरिया, सांगरी, सागर, सावरिया, सारगोत सूबर, सूरा, सेजपाल, सेपटा, सोनगरा, सोलंकी, हव्वासी, हमीरिया, हरिया, हरीणां, हाड़ा, हापड़, हैरंग।

## (छ)

(520) छगेल—उपनाम, (521) छजावत—सोलंकी, (522) छतनिहा—उपनाम, (523) छवपाल—राठौर, (524) छनपहाड़िया, छनपाड़िया, छिनवाड़िया, छिंदबाड़िया—राठौर, (525) छंदक, छंदपाल—नागवंशी, (526) छपानिया—राठौर, (527) छलेरिया—उपनाम, (528) छारछोलिया—राठौर शाखा में, (529) छावणी—उपनाम, (530) छाहड़—पवार, (531) छितमा, छीतमा—राठौर, (532) छिंदक—राठौर, (533) छिंदवाड़िया—राठौर, (534) छिन्नवार 'छंदक'—राठौर, छिलवार से छिन्नवार, छिंदक हुआ, (535) छिपाटिया, छिपाड़िया—राठौर, (536) छिलवार, छिवार, छत्रपाल—राठौर, (537) छुताहा, छुतिहा—उपनाम, (538) छुरीवेंताल—उपनाम।

## (ज)

(539) जखड़—पवार, (540) जगताप—मराठा, (541) जगमलोत, जगमालोत, जगमालौत, जगमालौता, जगलोत—ये सभी गहलोत शाखा के हैं, (542) जगरिया, जंगरिया—राठौर, (543) जगरेवा—उपनाम, (544) जगवत, जगावत—गहलोत एवं राठौर शाखा दोनों में, (445) जगहरिया, जंगहरिया—चौहान, (456) जग्रवाल—उपनाम (547) जठार—उपनाम, (548) जड़िचा—यदुवंशी, (549) जडुडेचक—चौहान, (550) जतावत—राठौर, (551) जातिंगकर, जाटंगकर—दक्षिण भारतीय संबोधन (552)जनप्री—पवार, (553) जनवती—पवार, (554) जमदाड़े—उपनाम, (555) जमदेदकर, जमुददेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (556) जमालकर, जमालपुरकर—उपनाम, (557) जमुल्यारीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (558) जंबूबाल—कछवाहा, (559) जयतुमाल, जयमुमाल—चंद्रवंशी, (560) जयसिंह—राठौर, (561) जवाहिरे—उपनाम, (562) जसरोटिया, मनकोटिया—कछवहा, (563) जसवंत—कछवाहा, (564) जसाद—गहलोत, (565) जसूना—यदुवंशी, (566) जसेलिया—राठौर, (567) जागड़ा, जांगड़े, जागेरे—

चौहान, (568) जागल्या—पवार, (569) जाखड़—पडिहार, (570) जागरा—पवार, (571) जागा—पवार, (572) जाड़गरे—उपनाम, (573) जाड़ेचा—यदुवंश, (574) यादव—चंद्रवंशी मराठा, (575) जादान—यदुवंशी, (576) जाधव—यदुवंशी, (577) जानबेकर—उपनाम, (578) जालपाउत—पवार, (579) जाला—पवार, (580) जावरिया—उपनाम, (581) जिझौतिया, (582) जिंती, (583) जिराकर, जीराकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (584) जिलबल्गूकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (585) जीगरवाल—कछवाहा, (586) जीपरा, जीप्रा—पवार, (587) जीराकर उपनाम, (588) जीराबेलकर, जीराबेलगुकर—उपनाम, (589) जीवरा—पवार, (590) जुझारिया, जुझातिया, जुझौतिया—चौहानवंशी सोलंकी शाखा के उपनाम जिनका विकास जुझारियासे जुझातिया, जुझौतिया हुआ, (591) जुमनौतिया—उपनाम, (592) जून्या—कछवाहा, (593) जेलवा—पडिहार, (594) जेतमालौत—राठौर, (595) जेपाल, जैपाल—पवार, (596) चैतमाला—पवार, (597) जैसवार—पासी की उपजाति, (598) जैसवाल—चंद्रवंशी, (599) जोखा—पवार, (600) जोगसिया—राठौर, 601 जोजा—चौहान, (602) जोतावत—कछवाहा, (603) जोधा—राठौर, (604) जोरा—गहलोत, राठौर, (605) जोरिया, जौरिया—कछवाहा, पास—पास को ब्रजभाषा में 'जोरे' कहते हैं, (606) जोवासिया—राठौर, (607) जौहरी—उपनाम।

## (झ)

(608) झर्राय—उपनाम, (609) झलाई—पडिहार, (610) झांगरा—पडिहार, (611) झागेसिक—चौहान, (612) झाड़ी—कछवाहा, (613) झारराय—उपनाम, (614) झिक्कजी—उपनाम, (615) झिबल—उपनाम, (616) झोड़ीवार, झोड़ीवारे—गहवारवंशी शाखा का उपनाम।

## (ट)

(617) टंकी—कछवाहा, टोंक, टांकी भी यही है, (618) टक्क—नागवंशी, (619) टंडन, टंडनकर—गहरवार, टुंडेलकर, टुंडेले भी यही हैं, (62) टल—पवार, (621) टांक—टांकवंशी, गोत्र—कोंडिय, नागवंशी, (622) टांकछोड़ा—गहलोत, (623) टांकी—कछवाहा, टंकी, टोंक, टाक, टांकी यही हैं, (624) टांटावत—सोलंकी, (625) टाइगरकर—उपनाम, (626) टाकसिया—पडिहार, (627) टिंगरीकर, टिंगरेकर, टिंगलीकर—दक्षिण भारतीय भारतीय संबोधन, (628) टिकोलिया—उपनाम, (629) टिंगुलया, टिंगुलिया, टुंकलया, टुकलिया सभी चंद्रवंशी, बनाफर सूरसेन वंश (फरेंजियावंश) के हैं, पिंगुल से टिगुलया बना, (630) टीकम—उपनाम, (631) टीका—पवार, (632) टीठा, टीपठा, टीपण, टीपणा, टीपरा, टेपण, टेपड, टेपन—सभी सूर्यवंशी गहलोत (633) टीमकी—

उपनाम, (634) टीला सोलंकी, (635) टीवण—गहलोत, (636) टुंडेलकर, टुंडेल—गहरवर, टंडन भी टुंडेलकर ही हैं, (637) टेसली—अरख की उपजाति, (638) टोंक, टोकनिहा—कछवाहा, टंकी—टाकी, टाँक—टाकछोड़ा सब एक ही हैं, (639) टोंगले—उपनाम, (640) टोंगा—कछवाहा, (641) टोपे—उपनाम, (642) टोडा, टोड़ा, टोढ़ा—कछवाहा शाखा।

## (ठ)

(643) ठगेला, ठगेले—कछवाहा शाखा के हैं (कुछ लोग पंवार भी मानते हैं) इनके संबोधन हैं—कील के ठगेले, ठकुरिया ठगेले, बेशर के ठगेले, भौ फोराँ के ठगेले, लकमार या लठमार ठगेले, और सफोरा के ठगेले, (644) ठुडेले—उपनाम, (645) ठूंठा—पवार, (646) ठेकेदार—उपनाम।

## (ड)

(647) डंडा, डंडोतिया—चौहान शाखा, डंडोतिया को भूलवश डंडा कहते हैं, ब्राह्मणों में ही डंडोतिया कहते हैं, जो एक गोत्र है जबकि क्षत्रियों में निन्नौतिया कहते हैं, जो एक शब्द है। (648) ठढूंवाल—उपनाम, (649) डब्बीकर—दक्षिण भारतीय उपनाम, (650) डव्मिय—पवार, (651) डहर—सोलंकी, (652) डाकपडिंठोकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (653) डागपड़ीकर—उपनाम, (654) डांगी—राठौर, (655) डाभी, डावी—पवार, (656) डायना—उपनाम, (657) डाहलिया, डाहलिए—शिशुपालवंशी गहलोत, (658) डाहिया—सोलंकी, (659) डिडवानिया—पवार, (660) डिपाल—पवार, (661) डिंमाडा—चौहान, (662) डूंढा—पवार, (663) डूराणा, डोराणा—पडिहार, (664) डोंगरवार, डांगवार, डोंगर, डोंगर—कछवाहा, (665) डोईफोर्ड—उपनाम, (665) डोंकी—सोलंकी, (667) डोड़, डोडा, डोड़वा, डोडिया—पवार, गोत्र—वशिष्ठ।

## (ढ)

(668) ढँकाहा, ढहा, ढड्ढा, ढंढास, ढल—सभी पवार शाखा के संबोधन, (669) ढाई—सोलंकी, (670) ढांडी, ढाड़ी—कछवाहा, (671) ढायल—सोलंकी, (672) ढिंगवार, ढिंगरवार, ढिंगरवाल—कछवाहा, (673) ढिढवनिया—उपनाम, (674) ढिमड़िया—चौहान, (675) ढुढ़ाई—उपनाम, (676) ढुंढेला, ढुंढेले—उपनाम, (677) ढूंडा, ढूँढ़ा—पवार, (678) ढूँढ़ास—कछवाहा, ढूंढास से ढिंगरवार बना, (679) ढूढाम—उपनाम, (680) ढेकया—चंद्रवंशी, नेकय भी यही हैं, ढेकया के दो प्रकार—चोरी के ढोकया, टांणे के ढोकया, (681) ढेखल—पवार, (682) ढोके—उपनाम, (683) ढोग—उपनाम, (684)

ढोडवा—उपनाम, (685) ढोडबा—उपनाम, (686) ढोराहा—उपनाम।

## (त)

(687) तंबकरा—सोलंकी, (688) तंवर—गोत्र—गर्ग, चंद्रवंशी, पाण्ववंशी, यदुवंशी, इसमें तुरु से तोर, तुंवर, तंवर, तोमर बना है। इसकी शाखा—प्रशाखा में ये उपनाम संबोधन हैं—तंवर, तोमर, बँटोला, बूंटेला, बरवार, अमेरुआर, वमेरवार, बेरुआर, (689) तक्षक—नागवंशी, (690) तनूर—चौहान, (691) तपस्वीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (692) तमर—क्रमांक 688 द्रष्टव्य, (693) तमोरी—चंद्रवंशी, (694) तमोली—उपनाम, (695) तरिहा—उपनाम, (696) तरेटिया—तवरवंशी राजा परीक्षित के वंशज, तातार से तरेटिया हुआ, (697) तसेला—चौहान, (698) तस्सेरा, तस्सेवरा—चौहान, (699) तांतया, तांतिया—सोलंकी, (700) तांवड़ा, तांबड़े, तांवरे—क्रमांक 688 द्रष्टव्य, (701) ताजखानी—कछवाहा, (702) ताटे—उपनाम, (703) ताड़माली—पासी की उपजाति, (704) ताडे—उपनाम, (705) तावड़ा—क्रमांक 688 द्रष्टव्य, (706) ताराणिए—कछवाहा, (707) तालचिर—कछवाहा, (708) ताहड़गे—गहलोत, (709) तितोरिया, तितौरिया—उपनाम, (710) तिबड़किया—गहलोत, (711) तिरसुलिया—पासी की उपजाति, (712) तिलहैटिया, तितहैटिया, तिलैटिया, तिल्हैटिया—चौहान, (713) तिलेरिया—उपनाम, (714) तिरवहिया—उपनाम, (715) तुंवर, तमर—गोत्र—गर्ग्य, चंद्रवंशी, मराठा शाखा देखें भी क्रमांक 688, (716) तुपुकर, तुपुरकर, तूरीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (717) तुमर—सोलंकी, (718) तुमाने, तूमाने—उपनाम, (719) तुरीकर—तूरीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (720) तेका—पवार, (721) तेगरेकर—उपनाम, (722) तेजाबत सोलंकी, (723) तेमसहिया—पडिहार, (724) तेरइया, तेरइया—चंद्रवंशी, (725) तैरणी—पडिहार, (726) तैरबी—पडिहार, (727) तोग—सोलंकी, (728) तोगी—चौहान, (729) तोटारकर—उपनाम, (730) तोड़ा—गहलोत, (731) तोतटकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (732) तोतारकर—उपनाम, (733) तोमर—चंद्रवंशी तवर शाखा, (734) तोल्ली—चौहान, (735) तोवड़े—उपनाम, (736) तोमर—चंद्रवंशी यदुवंशी तवर शाखा, (737) तोसावड़ा—उपनाम, (738) तोसीना—चौहान, (739) तोसेवरा—चौहान।

## (थ)

(740) थलवा, थलवार—पवार, (741) थाजीडा, थाजीणा—राठौर, (742) थोकडेडा—सोलंकी, (743) थेरात—उपनाम।

## (द)

(744) दंडोकीकर—उपनाम, (745) दत्तवंत—पवार, (746) दधिखटु, खट्बा—सूर्यवंशी खश वंश की शाखा में राजा खट्वाग के वंशज हैं जो कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में उत्तम कुल के ब्राह्मण माने जाते हैं। यह खटकुल कहलाते हैं, (747) दबुलकर—उपनाम, (748) दब्बीकर—उपनाम, (749) दमरोतकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (750) दमोग—उपनाम, (751) दरियावादी—उपनाम, (752) दलपतिया—कछवाहा, (753) दलालकर—उपनाम, (754) दलेरिया—उपनाम, (755) दसोद—गहलोत, (756) दहेलिया—उपनाम, (757) दागजिरा—राठौर, (758) दागमन भिलवारे के कछवाहा वंश, दागौन से दागमन हुआ, (759) दागौन—राठौर, दागोन से दागमन हुआ, (760) दानिक—चौहान, (761) दामाडे—मराठा शाखा, (762) दाहिमा, दायमा, दहिया दाहिमाकर—चौहान, (763) दिलवांचरे—चौहान, (764) दिलवारिया—चौहान, (765) दीपाल—चौहान में पालवंश, (766) दुगसा—पवार, (767) दगोठिया—पवार, (768) दुदेसिया—गहलोत, (769) दुधार—पवार, (770) दुपेसा—पवार, (771) दुबकुंडा—कछवाहा, (772) दुबेपुरिहा—उपनाम, (773) दुर्ग, दुर्गे—उपनाम, (774) दुलावत—गहलोत, (775) दुहुरिया—राठौर, (776) दूदावत—राठौर, (777) देवड़ा—चौहान, (778) देवराजोत—राठौर, (779) देवा—पवार, (780) देवालिया—सूर्यवंशी, (781) देशखेरे—उपनाम, (782) देशमुख—उपनाम, (783) देहलपोत—कछवाहा, (784) दोगइया, दो गाई वरगया, बघाड़िया, गोत्र—वत्स, चौहान वंश, (785) दोली—चौहान, (786) दोवण—गहलोत, (787) दोवासा—गहलोत।

## (ध)

(788) धंध—पवार, (789) धधेरिया, धंधेरिया—उपनाम, (790) धनगर—खटिक की सात जातियों में से एक उपजाति, चौहान में पालवंश अंतर्गत मान्य, (791) धनधंग—सोलंकी, (792) धनधूते—उपनाम, (793) धनपाली—चौहान में पालवंश (794) धनाड़े—उपनाम, (795) धनारिया—चौहान, (796) धनास्कर—उपनाम, (797) धनुष्कारीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (798) धरमकर, धर्मकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (799) धर्मकलीकर—उपनाम, (800) धर्मकामलेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन (801) धवलोतु—पवार, (802) धाधल—राठौर, (803) धांधिया—पडिहार, (804) धांधिला—पडिहार, (805) धांधु, धौधू—पवार, (806) धामनेचा चौहान, (807) धारके—कछवाहा, धाड़के से धारके हुआ, (808) धारवा—पवार, (809) धारिया—उपनाम, (810) धारीवार—उपनाम, (811) धीधल—उपनाम, (812) धीराण—पडिहार, (813) धुंता, धूता—पवार,

(814) धुंधकार—पवार, (815) धुंधदेवा—पवार, (816) धुंधाड़िया—चौहान, (817) धुनाता—पवार, (818) धुंडया—गहलोत, (819) धुरिया—पवार, (820) धुलायधुले—मराठा, (821) धुबेला—पडिहार, (822) धूते—उपनाम, (823) धूपर—राठौर, (824) धूरा—उपनाम, (825) धूल—राठौर, (826) धूहड़िया—राठौर, (827) धोदुल—राठौर, (828) धोटड़े—उपनाम।

## (न)

(829) नजरेकर—उपनाम, (830) नंडुकुडकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (831) नकाते—उपनाम, (832) नकुंप—चौहान, (833) नकोमी—चौहान, (834) नगराजोत—गहलोत, नरख्पनब्बरिया, नब्बारिया—चौहान, (840) नरमीदकर—उपनाम, (841) नरटिया—उपनाम, (842) नरवरकर—उपनाम (843) नरवरिया, नरवरियाकर, नरवरिहा—कछवाहा, गोत्र—गौतम, (844) नरहरदासका—सोलंकी (845) नरातिया, नरानिया—पवार, (846) नरावत—पवार, (847) नरूका—कछवाहा, (848) नरूपउदसवा—गहलोत, (849) नरैना—कछवाहा, (850) नल—पवार, (851) नवकुरी—भेलवारे के (852) नरहरवण—चौहान, (853) नहवीवाण—चौहान।

## (ना)

(854) नाईक—उपनाम, (855) नागभीड—उपनाम, (856) नागर, नागरा—नागवंशी, चौहान, दोनों की प्रशाखा के रूप में, (857) नागवंशी—गोत्र, कोडिय, शाखाएँ—छंदक, छंदपाल,टक्क, टांक, टाक, तक्षक, नागर, नागोर, नागोरा, (858) नागा—उपनाम, (859) नागोद राजवंश—पडिहार, (860) नागोरा, नागोर, नागोरिया—नागावंशी, टाकवंश की शाखा, गोत्र—कौडिण्य, (861) नागेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (862) नाघट—पडिहार, (863) नाडोला—चौहान, (864) नाचोता—गहलोत, (865) नाजोडिया—गहलोत, (866) नाज्या—गहलोत, (867) नाथावत—कछवाहा, (868) नादोडया—गहलोत, (869) नादौड़ा—गहलोत, (870) नाधोता—गहलोत, (871) नानोडिय—गहलोत, (872) नारनोलिया—चौहान, (873) नारामउहा—उपनाम, (874) नावरिया, नावरिया—उपनाम, (875) नावले—चौहान, निकुंभ नावले, (876) नाहटा—पवार, (877) नाहर—उपनाम।

## (नि-नौ)

(878) निकास—गहलोत, (879) निकुड़े—उपनाम, (880) निकुंभ—चौहान, गोत्र—वशिष्ठ शाखाएँ—कटहरिया, नावले, विरहा, विरहिया, श्रीनेत, (881) निचले—उपनाम, (82) निजामकर, नौजामकर—उपनाम, (883) निन्नौतिया, निन्नोनिया, निम्नोतिया,

निन्वोतिया, निन्डोतिया, डंडोतिया—वागनिन्नोनिया—चौहान, निरवानियासे निन्नोनिया बना, (884) निमटे उपनाम, (885) निरूप—गहलोत, (886) निर्माण निर्वाण, निर्वाण पहाड़िया—चौहान, गोत्र—वत्स, (887) निवाई—पडिहार, (888) नीमीवंश—गोत्र वशिष्ठ, (889) नीमुराणां—चौहान, (890) नीररूप—गहलोत, (891) नीवड़—पवार, (892) नैकया, ढकया—चंद्रवंशी, दो तरह के—एक वे चौर, चौरी, चोरी के नैकया जो देहली में रह गए, दूसरे वे टाणे के नेकया जो देहली से चले गए, (893) नेजोकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (894) नेतड़ा—पवार, (895) नेतकर, नैतीकर, नैथीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (896) नैनीवात, नैनीवार, नैनिवार, नैनिवाल—चंद्रवंशी, नैनीताल से नैनीवार बना, (897) नेमतवादकर, नेमथावेडकर, नेमथावादकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (898) नेलतुरकर, नेल्तुरकर, नेलथुरीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (899) नोल्यवरिया, नोल्यावरिया, नौल्यावारिया—पवार वंश, नागौद से नोल्यावारिया बना, (900) नोबले—उपनाम, (901) नोहानी—चौहान, जिनको मुगलों से 9 प्रकार की हानि हुई—एक, दिल्ली राजधानी गई, दो—साँभर राजधानी गई, तीन—अजमेर राजधानी गई, चार—राजपद गया, पाँच—धन गया, छह—चतुरगिणी सेना नष्ट हो गई, सात—मुसीबतें सहनी पड़ीं, आठ—वंश तितर—बितर हो गया, नौ—क्षत्रियन को छिपाकर हिंदू धर्म रखना पड़ा। देखें—डॉ. श्यामलाल भदकारिया (भदौरिया) की पुस्तक, पृष्ठ 114, क्रमांक 182।

## (प)

(902) पंचावत—गहलोत, (903) पंचारी, पचौरी—कछवाहा, (904) पंचोली—भाटिया वंश की शाखा, (905) पवार—पंवारकर—मौर्यवंशी, अग्निवंशी, मराठा शाखा, पवारवंशी 9 प्रकार के भिलवारे, गोत्र—वशिष्ठ, यह वंश चला भरतवंशी मोरध्वज तथा पुष्कर से पवार रूप में, देखें—क्षत्रिय वंशावली, पृष्ठ 60, पवारवंश की शाखा—प्रशाखाएँ निम्नलिखित हैं—अणीवीध, अपणीया, अवीध, अवींद्रा, अरड़, अवेसीम, अहडासल, अहवन, आदर, इणीयार, इरछइया, उजैनिया, उजैनी, उड़िया, उदिया, उपातलोत, उमट, उमठ, उम्मत, अलंगा, ऊँगट, ऊमर, ऊमरा, ओड़, कंकन, कंगवा, कगवा, कछोटिया, कछोड़िया, कथोरिया, कव्बा, कलपूसर, कल्पूसर, कलमोह, कलीलिया कसवा, कहम, कहारिया, कालपुर, कालपुसर, कालसा, कालमुँहा, कालमोह (कालामोह) काला, कावा किलोलिया, किवार, कुंतज, कुंता, कुकरोठे, कुरड़, कूंकण, चोपड़ा, कूंकणी, कोहला, कोहवला, कोहवाल, कोहिला खटा, खरा, खरेडं (खरेड़), खरेड़ा खरैतं, खल, खहर, खिंलवाड़, खचीवार खोटवाल, खुगड़ा, खूँटा, खूटल, खेचड़, खेजर, खर, खैरवार, खैरा, खैरोबी, खेका, गंगादास, गधवारयाँ गज, गढ़वाल, गहलड़िया गूंगांहुरड़, गूजर, गैलहड़ा, गैहलड़ा, घुता, चंद्र, चंपक, चलवार, चाप, चापा, चापोटक, तापोत्कट, चावड़ा, चूड़ेलसा,

चोपड़ा, चोवड़ा, छाहड़, जखड़, जप्री, जनवती, जांगलवा, जागरा, जागा, जालपाउत, जाला, जीपरा, जीप्रा, जीवरा, जैपाल, जैतमाला, जैपाल, जोखा, टल, टीक, ठूंठा, डब्भिय, डाभी, डावी, डीडवानयाँ, डीडवानियाँ, डीपाल, डूढा, डोड (डोड़), डोडवा, डोड़व, डोडा, डोडिया, ढहा, ढड्ढा, ढल, ढूँढ़ा, ढूंड़ा, ढकाहा, ढेखल,तेका, थंलवा, थलवार, दत्तवंत, दुगसा, दुगोठिया, दुधार, दुपेसा, देता, धंध, धवलोतु, धांधु (धांधू), धाखा, धुता (धूंता), धुंधकार, धुंधदेवा, धुनाता, धुरिया, नरातिया, नरावत, नल, नाहटा, नीवड़, नेतड़ा, नौल्यावरिया, पवार, पटेल, पड़त, पया, पाणी, पिगला, पीथलिया, पीथा, पील, पुगलिया, पुस्या, पूसया, पूनी, पेस, पोसरा, पोसवा, पोसरा, फल, वंभागज, बइया, बकछास, बाकछास, बजेरेठिया, बबिला, वमाला, बरकोटा, बरखेड़िया, बरड़, बरड, वरन, बरहर, बराह, बरेहा, बलवारा, बलहरा, बलहार, बलिहार, बहिया, बहिल, बाँधी, वाजुअनिया, वाफणां, बाबा, बागोते, बारड, बालही, बाला, बाहल, बिल्हाटिया, बीड, वीडाली, बेहिल, बोड़ा, बोरड, बौराणां, बोरी, भगेनिया, भमेवरिया, भाई, माथ, भादुर, भाभा, मामा, भावल, भिलवारे (9—कारेझंगा, गुठलया, चंदपुरिया, दागमन, पटाफार, मैली, भोंदू, रहोरा, रीजौनी, हतकाश), भीवा, भूपनिया, भोसले, भोजपुर्या, भोजपुरिया, भोरा, भोरी, मडेरे, मदन, मदनपुरिया, मनाके, मयन, मयपावत, मलवानिया, महपावत, महर, मानके, मेपाती, मेपावत, मैयावत, मोटसरा, मोटसी, मोनको, याकायिथ, रवड़िया, रहवार, राडीक, रिकमना, रिकुंबा, रूणेचा, रेवतवंशी, रेवाड़िया रैकवार, किवार, रैहार, रेहार, श्रेष्ठ, सनवरिया, संपल, संपल्य, सरतिया, सरवडिया, सरवरिया, सल, सलवइया, सवल, सांख्याल, सांवत, साबद, सामंत, सालाउत, सालोत, सावडा, सिढायच, सिघड़, घ्घिन, सीपोर, सीलोरा, सुगड़ा, सुगरा, सुजान, सुजानका, सुमरा, सुवल, सूपरा, सूमायचा, सोढा, सोढ़ा, सोरटिया, सोरतिया, सोरठिया, हमरोत, हरवार, हरिया, हरियार, हरेर, हरेरा, हरैर, हुँण, हूँण, हुँबड़, हुरड़, गूंगा हुरड, हडिया हूमड। (906) पकडेयर—उपनाम, (907) पकरीवादकर—उपनाम, (908) पकीरबारकर, (909) पखु—राठौर, (910) पच्चीसया, पच्चीसिया—चौहान, (911) पटाफार भिलवारे, (912) पटारिया—चौहान, निकुंभ, कटारिया तथा पटारिया, दोनों भिन्न हैं, कटाहरिया से पटारिया हुआ, गोत्र—वशिष्ठ, दो पटारियों में एक है गुलहर के पटारिया और दूसरा है मीठेकाले पटेरिया, (913) पटेल—चौधरी—गहलोत शाखा में पटेल को चौधरी कहते हैं, (914) पटेल—जमींदार—पवार शाखा में जमींदारों को पटेल कहते थे, (915) पटौदा, पटौदी—उपनाम, (916) पड़त—पवार, (917) पड़साटोर—उपनाम, (918) पड़सेड़िया, पड़सोड़िया—चौहान, (919) पड़ियार—अग्निवंशी, (920) पड़िवार—चौहान, गोत्र—कश्यप, परिहार से पड़िवार बना, (921) पड़िवाल—चौहान, पालवंश, (922) पड़िहाप—अग्निवंशी, चौहान, गोत्र—कश्यप, प्रतिहार से पड़िहार बना और ये शाखाएँ बनीं—

इंदा, इंदौर, कलहंस, कुसबावारी, कालपा (काल्पा), केशबोत, खरल, खरबड़, खरबर, खुगार, खोआर, खोखरा, गोढला, घड़सिया, थनेरिया, धाधा, घोराणा, चंदरावत, चंद्रावत, चांदारा, चांदौरा, चैनिया, चोपड़ा, चोयल, चोहिल, जाखड़, जेठवा, झलाई, झांगरा,टकसिया, डूराणां, डोराणा, तरवी, तेगसहिया, तेरणी, धाधिया, धांधिला, धीरण, धीराण, धुवेला, नागोदराजवंश, नाघट, निबाई, पडिहार, पडिहार (पड़िहार), परिमार, पहराना, पिलवाल,पूजोर, प्रतिहार, पेसवाल, फलू, बचलिया, बछेरिया, बचलिया, बच्छरी, वकफ, बघोड़िया, बड़गपा, बडगाँव, बधखेलिया, बाचलिया, बादणां, बारी, बूलणां, बुलाणां, वोजरा, बौथा, मछली के फुंदना, भटियाल, भद, भापणां, भंटियाल, भापणां, भांसू, भूभलिया, मलबिया, मोटूदां, माहम, मीणां रामटा, लुलरा, लुल्लरा, लूलोरा, सवर, सांमोर, सिंघक, सिंधू, सिमूका, सीथका, सुन्ध्य, सुरावता, सूरावत, सुवराणा, सोणपालोद। (923) पतरिहा—उपनाम, (924) परिफोड़, पथरकटा, बड़वारिया—उपनाम, (925) पनस्कर—उपनाम, (926) पन्हालकर—उपानाम, (927) पपड़िया—चौहान, (928) पपरेदहा—उपनाम, (929) पया—पवार, (930) परकीया—उपनाम, (931) परथीराजमेल, परथीराजमेवो—गहलोत, (932) परमदेवकर—उपनाम, (933) परवरिया, परिवरिया—राठौर, गोत्र—गौतम, (934) परसोडिया, पड़सेडिया—चौहान, (935) परिडवाल—उपनाम, (936) परिमार—अग्निवंश, चौहान, पड़िहार शाखा के, (937) परिहार—चौहान, गोत्र—कश्यप, परिहार सेपडिवार हुआ, (938) परेवा—चौहान, गोत्र—वत्स, (939) परेवाल—उपनाम, (940) पलंगतोडकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (941) पलंगे—उपनाम, (942) पलकिहा—उपनाम, (943) पलवान—उपनाम, (944) पलवार—उपनाम, (945) पलवाल—चौहान, पालवंश, (946) पलेमकर—उपनाम, (947) पल्लीवाल ब्राह्मण, (948) पसमंगता—पासी की उपजाति, (949) पहराना—पडिहार, (950) पहरोले—राठौर, पहरोलेवंशधर, (951) पहाड़कर—उपनाम, (952) पहाड़िया—गहलौत, अहाड़िया से पहाड़िया, (953) पहाड़िया (निर्वाण) देखें—क्रमांक 886, यह भी एक उपनाम है।

## (पा)

(954) पाँचल, पाँचाल—कछवाहा, भाटियावंश की शाखा, (955) पांरडे—उपनाम, (956) पाकुतेकीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (957) पाटिल—उपनाम, (958) पाडिवार, पाड़ीवार—उपनाम, (959) पाणी—पवार, (960) पातावत—राठौर, (961) पाथल—उपनाम, (962) पानसिया—गहलोत, (963) पारदी, पार्दी, पिपाड़ा—गहलोत, (964) पारधी, पारथे—उपनाम, (965) पारवे—उपनाम, (966) पारसोलिया—सूर्यवंशी इक्ष्वाकु वंश की शाखावाले, (967) पारिडवाल—उपनाम, (968) पालंगतोड़कर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (969) पालरी—गहलोत (970) पलवंशी—चौहान वंश के पालवंशी शाखा—

प्रशाखाएँ—करहरिया, कराडिया, कहारिया, गढ़वासिया, गेटवारिया, चोरसिया, चौवरिया, दीपाल, धनगर, धनपाली, पडिवाल, पलवाल, पालवंश, बगौड़ा, बढ़रिया, व्यावर, मांवानिया। (971) पावजो—चौहान, (972) पाबिया—चौहान, (973) पावेलकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (974) पासी—खटिक की सात उपजातियों में से एक उपजाति तो ताड़ी, मद्य के व्यवसाय करते थे, उनकी शाखा—प्रशाखा ये हैं—अरख, अहेरिया, कमानी, कैथवास, खटिक, गूजर, गेंदुहा, धुड़चढ़ा, चिड़ीमार, जैसवार, तिरसुलिया, ताड़माली, पसमंगता, पासी, पासीवान, फांसिया, बहेलिया, बिहारी, बेलखरिया, बौरासी, व्याघ, भर, मगता, महापासी, मोथी, राजपासी। (975) पासीवाल—पासी की उपजाति, (976) पाहा—गहलोत।

## (पि-पौ)

(977) पिंगला—पवार, (978) पिपरौलया—कछवाहा, (979) पिपाड़ा, पिवाड़ा, पारदी—गहलोत, (980) पिरटेवाल, पिरेटवाल—चौहान, (981) पिलन्नाल—पडिहार, (982) पीथपुरा—सोलंकी, (983) पीथलिया, पीथा—पवार, (984) पीपर, पीपरी—गहरवार, (985) पीपाड़ा—गहलोत, (986) पील—पवार, (987) पुगलिया, पुगलिया—यदुवंशी, पवार शाखा, (988) पुंडलीकर—उपनाम, (989) पुंडीर—उपनाम, (990) पुजारीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (991) पुटपाल—चौहान वंश, (992) पुरविया—चौहान, (993) पुरबत, पुरावत—गहलोत, (994) पुरोत—गहलोत, (995) पुरौलिहा—उपनाम, (996) पुलकुंडकर, पुलदंडकर, पुष्कलकर—उपनाम, (997) पुसया, पुस्या—पवार, (998) पुसालकर—उपनाम, (999) पूजोर—पडिहार, (1000) पूनी—पवार, (1001) पूलतोड़कर—उपनाम, (1002) प्रताबाहु—यदुवंशी शाखा, (1003) प्रतिहार—चौहान वंश, पडिहार, परिमार शब्द का रूपांतर प्रतिहार बना है और अब इसकी कुल 35 शाखाएँ हैं, देखें—जातिभाष्कर, पृष्ठ 223—4, (1004) प्रभाकर—उपनाम, (1005) प्रभाते—उपनाम, (1006) प्रभार—उपनाम, (1007) प्रभासी—उपनाम, (1008) प्रभार, परिमार—राठौर, (1009) प्रभार, पौरिया—पवार, (1010) पृथ्वी—रजिया, पृथ्वीराजियो—चौहान, (1011) पेडवारिया—उपनाम, (1012) पेस—पवार, (1013) पेसवाल—पडिहार, (1014) पैरवा—चौहान, (1015) पोकड़ी—कछवाहा, (1016) पोकरणां—राठौर (1017) पोकलकर—उपनाम, (1018) पोथेपुरा—सोलंकी, (1019) पोरये—उपनाम, (1020) पोरिया, पौरिया—प्रभार—पवार तथा राठौर, दोनों शाखा के हैं, पौहरी से पोरिया प्रभार प्रसिद्ध हुए, (1021) पोसरा—पोसरा—पवार शाखा।

## ( फ )

(1022) फटाफार भिलवारे,पटाफार लिवारे—उपनाम, (1023) फरशाटारे—गहरवार, (1024) फरेजियाबनाफर—टिगुलया चंद्रवंशी बनाफरशूरसेनवंश—फरेंजियावंश हुआ, बनाफर, फरेंजियाको ही महुबिया भी कहते हैं, (1025) फलंगतोड़कर—उपनाम, (1026) फल—पवार, (1027) फलू—पड़िंहार, (1028) फागोड़िया, फागोड़िया—गहलोत, (1029) फाड़के, फालके—राठौर, (1030) फासिया—पासी की उपजाति, (1031) फिरोजिया—उपनाम, (1032) फिलवार—राठौर, छिलवार से फिलवार हुआ, (1033) फिसके, फिस्कै—उपनाम, (1034) फीमापुरिया—चौहान, (1035) फुंदना मछली के, (1036) फूलडंडीकर—दक्षिण भारतीय (1037) फूलतोड़कर—उपनाम।

*(दोनों संबोधन सम्मिलित रूप से एक साथ प्रस्तुत है)।*

## ( बं-बघ )

(1038) बंकट—चौहान, (1039) बंगडिया—चौहान (1040) बंगरवाल—तंवरवंश शाखा, बारी से बंगरवार हुआ, (1041) बंदरिया—उपनाम, (1042) बंधवार—उपनाम, (1043) बंभागज—पवार, (1044) बंशधरपहरोले—राठौर, (1045) बंशीवाल, बाँसीवाल, बंशीवालकर, बंसीलाल—गहलोत, (1046) बंइया—पवार, (1047) बकछास, बाकछास—पवार, (1048) बकर का साव, बकरकसाव—खटिक की सात में से एक जाति, बकरा मांस विक्रेता, (1049) बक्सरिहा—उपनाम, (1050) बगरिया—उपनाम, (1051) बगरोण, बगरोया—गहलोत, (1052) बगवार—गहरवारवंश—बगरोहा—बगवार—बडवार हुआ, बडवार गहलोत शाखा में है, (1053) बगवासया—चौहान, (1054) बगसरया—चौहान, (1055) बगाड़—चौहान, (1056) बगीनिया—उपनाम, (1057) बगौड़ा—व्यावर, व्यापार—पालवंश शाखा, (1058) बघड़िया, वघाड़िया, बघौड़िया, बघरिया, बरगयाँ, दोगाई—गोत्र—वत्स, चौहानवंश की प्रशाखा पडिहारवंश में आते हैं, (1059) बघेल, बघेला, बघेले—चौहानवंश में सोलंकी की शाखा।

## ( बच-बन )

(1060) बचलिया—पडिहार, (1061) बछक—चौहान में पडिहार शाखा के, (1062) बछरी, बच्छरी, बछेरिया, बछोरिया, बच्छगोती—चौहान में पडिहार, बच्छगोती से बछेरिया से बछरी हुआ, (1063) बजरेटिवा, बजरेठिया—पवार, (1064) बटरोल्या, बकरोले—भदौरिया, (1065) बठारिया—उपनाम, (1066) बड़वार, बड़वारिया—पतरफोर बड़वारिया—चौहानवंशी गहलोत शाखा, बगरोहा—बगवार—बड़वार हुआ, (1067) बड़सी, बड़सीवाल—उपनाम, (1068) बड़गया, बड़गाँव—पढ़िहार, (1069) बड़गूजर—खटिक

की सात उपजातियों में से एक, सूर्यवंशी राठौर शाखा में भी ये हैं, गोत्र—वशिष्ठ, इसकी शाखा—प्रशाखा ये हैं—उटरिरिया, गजर, गूजर, चैतीवार, बड़गूजर,बोदले, मलकपुरिया, राजौरा, राजौरिया, सीकरवाल, सैकड़ी, सेखावत। (1070) बड़मवित—सोलंकी, (1071) बड़वा—गहलोत, (1072) बड़वारिया पतरफोड़—उपनाम, (1073) बड़सूका—सोलंकी, (1074) बड़ारिया—उपनाम, (1075) बड़ालांबा—कछवाहा, (1076) बड़ेल—उपनाम, (1077) बढ़ारिया—चौहान, पासवंश, गहलोत सभी में संबोधित, (1078) बणवीरथोता—सोलंकी, (1079) बदुरा—राठौर, (1080) कद्दक—चौहान, (1081) बद्धैल, बद्धैलवाल—सौलंकी, (1082) बधखेलिया, बधवा—पडिहार, (1083) बनफुकार—उपनाम, (1084) बनकटा, बनवटे—बौरिया की शाखा, (1085) बनसाल—चौहान, (1086) बनसाबड़ेकर—उपनाम, (1087) बनसोड़े—उपनाम, (1088) बनाफर—चंद्रवंशी, गोत्र—कौंडिय, यदुवंशी शाखा, पूवनाफर—टिगुलया, बनाफर, फरेंजिया, महुबिया, शूरसेन, (1089) बनारसी—उपनाम, (1090) बनारी—उपनाम, (1091) मनीपरिहा—उपनाम, (1092) बनीपाल—चंद्रवंशी चंदेल शाखा के खटिक, (1093) बनुवाल, बनुपाल—सूर्यवंशी चौहान शाखा, (1094) बनेरवाल—उपनाम, (1095) बंदाहा—उपनाम, (1096) बंदीछोर, बनीछोड़—चंद्रवंशी तोमर वंश की शाखा, वेरुआर से बंदीछोर हुआ।

## (बप-बह)

(1097) बबार—चौहान में सोलंकी शाखा के लोग, बादामी से बबार हुआ, (1980) बबिला—पवार, (1099) बबेडिया—चंद्रवंशी, बेरुआर गोत्र से परिवर्तित होकर बबेडिया हुआ, (1100) बबेरवाल, बबैरवैढ़—उपनाम, (1101) बमनिया—पवार, बामौते से बमनिया हुआ, (1102) बमैरवार, बमेरुआर—तंवर चंद्रवंशी, (1103) बमाला—पवार, (1104) बमीला—गहलोत, (1105) बंबुराहा, बंबोरिया—उपनाम, (1106) बरकोटा—पवार, (1107) बरखेडिया—पवार, (1108) बरगइया, बरगयाँ, दोगाई—चौहान, (1109) बरड, बरड़, बारड़—पवार शाखाा, (1110) बरबार—चंद्रवंशी तंवर शाखा, (1111) बरबोसिया—सोलंकी, (1112) बरसाना, बरसानिया—गहलोत, (1113) बरहर, बराह, बरेहा—पवार, (1114) बरौथ्लया—उपनाम, (1115) वर्मा—सूर्यवंशी मोखरी वंश की शाखा, (1116) बलभप्रोत—कछवाहा, (1117) बलरामोत—सोलंकी, (1118) बलवारा—पवार, (1119) बलहरा—बलहार, बलिहार, बलाहिर—पवार वंश, कोहला कानाम बलाहार पड़ा, (1120) बलिया—चौहान, (1121) बलोदरिया, बिलोदरिया—चंद्रवंशी शाखा, (1122) बल्लिचोरकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1123) बबेड़िया—उपनाम, (1124) बसंतिहा—उपनाम, (1125) बसवाल, बसुवाल, असींवाल—चौहान, (1126) बरवकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1127) बहला—सोलंकी, (1128) बहा—यदुवंशी, (1129) बिहिया—

पवार, (1130) बहिल—पवार, (1131) बहुबाल—चौहान, (1132) बहेला, बहैला—सोलंकी, (1133) बहेलिया—पासी की उपजाति।

## (बा-बाह)

(1134) बाकावत—कछावाहा, (1135) बांग—चौहान, (1136) बाँटोला, बूंट, औलिया—पूर्वनाम बटोला, गोत्र—गाग्य, चंद्रवंशी तवरशाखा, (1137) बांथी—पवार, (1138) बाँसीपाल—गहलोत, (1139) बाकला—चौहान, (1140) बाकलेचा—चौहान, (1141) बागड़िया, बागड़ी, बागड़ीकर—चौहान, (1142) बागनिन्नोनिया—चौहान, (1143) बागपती—उपनाम, (1144) बागवारकर—उपनाम, (1145) बागवे—मराठा शाखा, (1146) बागुण—राठौर, (1147) बागुल—उपनाम, (1148) बागोते—पवार, (1149) बागोरिया, बागौरिया, बागेरिया—चौहान, (1150) बाघाउत सोलंकी, (1151) बाघेला—सोलंकी, (1152) बाघोड़ा, बाघोड़िया—चौहान, (1153) बाचड़ामोती—चौहान, (1154) बाचतिया—पडिहार, (1155) बाजुआनियाँ—पवार, (1156) बाडमेरा—राठौर, (1157) बाडा, बाडिया, बाड़ेकर—चौहान, (1158) बाणगोधा—गहलोत, (1159) बादणां—पडिहार, (1160) बादेलवालावत—राठौर, (1161) बानकर—उपनाम, (1162) वानखेड़े, बानखेड़े—उपनाम, (1163) बाफड़ा—पवार, (1164) बाबने—उपनाम, (1165) बाबर—उपनाम, (1166) बाबा—पवार, (1167) बामोते—बमोते—पवार, बामोते से वमनिया हुआ, (1168) वारतदलचंद्र—गहलोत, (1169) वारी, बारीबैराग—पडिहार, तंवर शाखा, बारी से बंगरवाल हुआ, (1170) बालणोत, बालनोत—सोलंकी, (1171) बालही, बाला, बाहल पवार, (1172) बालेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1173) बालेचा—चौहान, (1174) बालेसा—चौहान, (1175) बालोत—चौहान, (1176) बाहुबाल—सूर्यवंशी चौहान।

## (बि-बी)

(1177) बिकर—सोलंकी, (1178) बिकलपोता—कछवाहा, (1179) बिकू—सोलंकी, (1180) बिजापुरीकर, बीजापुरकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1181) बिड़ीकीकर—उपनाम, (1182) बिदमन (विदमन)—यदुवंशी, (1183) बिदारी—उपनाम, (1184) विन्नोनिया (निन्नोनिया) उपनाम, (1185) बिंधी—यदुवंशी, (1186) विपरवाल—सूर्यवंशी डोडवंशी, (1187) बिरम—कछवाहा, (1188) बिंधी—यदुवंशी, (1189) बिखासिया—उपनाम, (1190) बिरहा, बिरहिया—सूर्यवंशी निकुंभवंश की शाखा, (1191) बिराह—उपनाम, (1192) बिलकर, बिल्हकर—उपनाम, (1193) बिलबोलकर—उपनाम, (1194) बिलरिहा, बिल्हारिया—उपनाम, (1195) बिलाटिया, बिल्हाटिया—पवार, (1196)

बिल्टोरिया—उपनाम, (1197) बिल्लीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1198) बिसलकर—उपनाम, (1199) बिहट—कछवाहा, (1200) बिहारी—पासी की उपजाति, (1201) बीका—राठौर, (1202) बीड, बीडली, बीडाली—पवार, (1203) बीदावते—राठौर, (1204) बीवलेकर—उपनाम, (1205) बीरपुरये—कछवाहा, (1206) बीरपुरा—सोलंकी, (1207) वीरवालजैन—उपनाम, (1208) बील—चौहान, (1209) बील्याजक—गहलोत।

## (बु-वा)

(1210) बुंदेला—गहरवार, (1211) बुकरोले, बटरोल्या—चौहान वंश की भदौरिया शाखा, (1212) बुग्याकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1213) बुदरा—राठौर, (1214) बुदु—यदुवंशी, (1215) बुयाकर—उपनाम, (1216) बुरकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1217) बुरसिया—राठौर, (1218) बुलाणां—पडिहार, (1219) बुलीवाल—उपनाम, (1220) बुबाला—सोलंकी, (1221) बुहाभूसड़्या—गहलोत, (1222) बूंटऔलिया, बूटोला, बाँटोला, बटोला, गोत्र—गाग्ये, तवरवंशी इनका पूर्वनाम बटोला था, (1223) बूंटया—गहलोत, (1224) बूंटीवाल—गहलोत, (1225) बूलणां—परिहार, (1226) बूंलीलाल—गहलोत, (1227) बूले—उपनाम, (1228) बूसा—गहलोत, (1229) बेंद्र, बेद्रे—उपनाम, (1230) बेकनवाल—खटिक की सात उपजातियों में से एक जिसे अंग्रेज हट्टन की पुस्तक में सोनकर से भिन्न माना गया है, क्योंकि बेकनवाल सूकर मांस बेचते हैं, जबकि सोनकर ऐसा नहीं करते, (1231) बेवरकाल, बकेरवाल—उपनाम, (1232) बेमटे—चौहान, सोलंकी, (1233) बेमन—चौहान, सोलंकी, (1234) बेरुआर—चंद्रवंशी तवरशाखा, गोत्र—कश्यप, बेरुआर से बदलकर बबेडिया, बोरीवाल हुआ, (1235) बेलखरिया—पासी की उपजाति, (1236) बैशर के ठगेले—कछवाहा शाखा में, (1237) बेहार—उपनाम, (1238) बेहिल—सोलंकी पवार, (1239) बैडा—सोलंकी, (1240) बैनीवाल—उपनाम, (1241) बैबाल—उपनाम, (1242) बैमाड़—उपनाम, (1243) वैश्यवंशी, गोत्र—भारद्वाज, सूर्यवंश की शाखा, शाखाएँ—भाले सुलतान, प्रतिष्ठानपुरी, कुंभी, नरवरिया, संदर्भ—क्षत्रियवंशावली, पृ. 35—37, (1244) बोजरा—पडिहार, (1245) बोडा—पवार, (1246) बोथा—पडिहार, (1247) बोदकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1248) बोदले—बड़गूजरशाखा, (1249) बोवड़े—उपनाम, (1250) बोवणीकर—उपनाम, (1251) बोवलेकर—उपनाम, (1252) बोब—गहलोत, (1253) बोव्बीदीराकर—दक्षिण भातीय संबोधन, (1254) बोरड, वोराणां, बोरी—पवार, (1255) बोरीवाल, बोलीवाल, बेरुआर—गोत्र—कश्यप, चंद्रवंशी तुवर शाखा, वेरुआर से बोरीवाल हुआ, (1256) बोसा—गहलोत, (1257) बौरासी—पासी की उपजाति, (1258) बौंरिया—खटिक की सात उपजातियों में

से एक, बोरा, टाट, रस्सी बनाने वाले बनवटे, सोमबट्टा, भूंजा नाम से ख्यात, (1259) व्याध—पासी की उपजाति, (1260) व्यावर—चौहानवंशी पालवंश की शाखा।

## (भ-भा)

(1261) भटियाल—पडिहार, (1262) भगनियाँ—पवार, (1263) भगवासिया—उपनाम, (1264) भगेले, भगोरिया—पवार, (1265) भटिया—पडिहार, (1266) भटेवरा—गहलोत (1267) भटोरा—गहलोत, (1268) भट्टी—यदुवंशी, (1269) भट्टीवाल—गहरवार, (1270) भड़गरा—सोलंकी, (1271) भड़ेल—राठौर, (1272) भड़ेचा—गहलोत, (1273) भद—पडिहार, (1274) भदकरया, भदकारिया, भदकालिया, भदवरया, भदवरिया—चौहान, (1275) भदारिकर—उपनाम, (1276) भदावत—राठौर, (1277) भदेल—राठौर, (1278) भदौरिया—चौहान, गोत्र—वत्स, शाखाएँ—करोचिया, करोसिया, चौहान, बुकरोले, बुकरौलया, भदकारिया, भदौरिया। (1279) भदौरियाकर—उपनाम, (1280) भमेबरिया—पवार, (1281) भम्भारिया, मम्भवारिया—उपनाम, (1282) भर—पासी की उपजाति, (1283) भरसूडा—सोलंकी, (1284) भरानिया—भगेड़े पवार, (1285) भला, भलेकर—सोलंकी, (1286) भवर—चौहान, (1287) भसुंडरा—सोलंकी, (1288) भांसू—पडिहार, (1289) भाई—पवार, (1290) भाऊ—कछवाहा, (1291) भाकर—चौहान, (1292) भाखरोत—कछवाहा, (1293) भागोरिया—शांडिल्य गोत्र के रघुवंशी, (1294) भाछड़ा—उपनाम, (1295) भाटिया—कछवाहा, दो शाखा—पंचोली और पाँचल, (1296) भाटी यदुवंश, (1297) भाणगोता—सोलंकी, (1298) भाथ—पवार, (1299) भादुर—पवार, (1300) भानुनाथकर—उपनाम, (1301) भानुवातीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1302) भापणा—पडिहार, (1303) भाभा, भामा—पवार, (1304) भारती—उपनाम, (1305) भावड़, भावर, भावल—चौहान।

## (भि-भौ)

(1306) भिलवारा, भिलवारे—पवारवंशी, कुल 35 शाखाएँ, कुल 12 प्रचलित है, जिनमें मुख्य हैं—9 : कारझंगार या कारझुंगा, गुठलया या गुठलवा, चंदपुरिया, दागमन, पटाफार, भेली—भोदु, रहोरा, रीजोनी, अन्य तीन हैं—नवकुरी, पटाकार या फटाकर, भोरकाले, हतकाश या हथकोश, (1307) भीमन—सोलंकी, (1308) भीमला, भींवला—गहलोत, (1309) भीवा—पवार, (1310) भुजाड़े—उपनाम, (1311) भुणगोता—सोलंकी, (1312) भुतौलिया, उपनाम, (1313) भुदौरिया—उपनाम, (1314) भुपनिया, भूपनिया—पवार, (1315) भुरेचा—चौहान, (1316) भुरेता—सोलंकी, (1317) भुसाहा—उपनाम, (1318) भूभलिया—पडिहार, (1319) भूहड़ सोलंकी, (1317) भुसाहा—उपनाम, (1318)

भूभलिया—पडिहार, (1319) भूहड़, सोलंकी, (1320) भेंडगरा—सोलंकी, (1321) भेदवरिया—उपनाम, (1322) भेमबरिया—उपनाम, (1323) भेली, भिलवारा—पवार, क्रमांक—1306 द्रष्टव्य, (1322) भैंसा, भैसामार—उपनाम, (1325) भैरमपुरिहा—उपनाम, (1326) भोंसला, भोंसले, भोंसलेकर—पवार, (1327) भोजक—गहलोत, (1328) भोजकरा—गहलोत, (1329) भोजपुरिया—पवार, (1330) भोदू भिलवारा भोदू भरिया—उपनाम, (1333) भोनिका—उपनाम, (1334) भोनिया—गहलोत, (1335) भोपड़ा—गहलोत, (1336) भोपले—चौहान, (1337) भोरकाले भिलवारे—उपनाम, (1338) भोरा, भोरी—पवार, (1339) भा फोरा के ठगेले—कछवाहा, (1340) भौराहा, भौवाल—उपनाम।

## (म-मय)

(1341) मंगता—पासी की उपजाति, (1342) मंगरोपा—गहलोत, (1343) मंगलगिरीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1344) मंडइया, मंडावत, मालौत—गहलोत, (1345) मंडल—राठौर, (1346) मंडवा—गहलोत, (1347) मंडालकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1348) मंत्री—चौहान, (1349) मकोने, माकोडे—उपनाम, (1350) मक्कारीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1351) मगवासिया—उपनाम, (1352) मगेले—उपनाम, (1353) मछरियाहा—उपनाम, (1354) मछली के फुंदना—पडिहार वंश, (1355) मछूलकर—उपनाम, (1356) मटीकेकर—उपनाम, (1357) मटुरिया—उपनाम, (1358) मडेरे—पवार, (1359) मडेले, मडैले—गहलोत, (1360) मणिवयालकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1361) मंडइया 'मालौत' सूर्यवंशी, सोमवती, गहलोत, मंडइया तथा मंडोत एवं मंडावत एक हैं, देखें—क्रमांक 1344, चौहान वंश में भी है, (1362) मंडमेये—उपनाम, (1363) मंडल, मंडला—देखें क्रमांक 1345, (1364) मंडवा—गहलोत, देखें—क्रमांक 1346, (1365) मंडालकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1366) मंडाले—उपनाम, (1367) मंडाक—गहलोत, (1368) मंडावत—गोत्र—गौतम, गहलोत, (1369) मंडेरे—उपनाम, (1370) मंडेला—उपनाम, (1371) मंडेले—गहलोत, (1372) मतेला—उपनाम, (1373) मदई—अरख की उपजाति, (1374) मदन, मदान, मदने, मदनपुरिया—पवार, (1375) मदरेचा—चौहान, (1376) मदुरायता—गहलोत, (1377) मदुरिया—चौहान, (1378) मधुपुरके—कछवाहा, (1379) मधुरिया—ब्राह्मण गोत्र, (1380) मनकपुरिया, मलकपुरिया—गूजर वंश, (1381) मनकोटिया, कोटिया—गहलोत, जसरोटिया—कछवाहा, (1382) मनहोस—कछवाहा, (1383) मनाके—पवार वंश, (1384) मंधनहा—उपनाम, (1385) मयन—पवार, (1386) मयपावत—पवार।

## ( मर-मह )

(1387) मरसिया—राठौर, (1388) मरहटे—उपनाम, (1389) मराठा खटिक—20 प्रकार के मराठे क्षत्रियों में 18वें क्रम पर है, 'खटके' (सूर्यवंशी राजा खट्वांग के वंशधर) गोत्र संज्ञा हुई—'खटके'। सभी 20 मराठाओं के नाम इस प्रकार हैं—अकारादिक्रम से खटके दूसरे स्थान पर हो गया है—कुलीसुर्वे, खटके, गायकवाड़, घोरपड़े, जगताप, जादववंश, तांवड़े, तुंवर, दाभाड़े, धुलायधुले, पवार, बागवे, भोंसले, महाड़िक, मोहिते, राणांकुल, शिंदे, कावंतकुल, सिरंके, सिसौदे। (1390) मलकपुरि—बड़गूजर, (1391) मलकर—उपनाम, (1392) मलत—उपनाम, (1393) मलयचा—चौहान, (1394) मलरो—सोलंकी, (1395) मलवानिया—पवार, (1396) मलवालिया—राठौर,(1397) मलबिया—पडिहार, (1398) मलावी—चौहान, (1399) मलाव, मलावला—राठौर, (1400) मलाबलिया, मलावालिया (मल्होत्रा), गोत्र—गौतम, (1401) मलोलिया—उपनाम, (1402) मल्लेकेडकर—उपनाम, (1403) मल्होत्रा (मलबालिया), (1404) महरमू—कछवाहा, (1410) महरवानिया—चौहान, (1411) महामना चौहान, (1415) महामारिया—उपनाम, (1416) महार—राठौर, महरवान से महार, (1417) महालणा—चौहान, (1418) महावत—उपनाम, (1419) महावारिया—उपनाम, (1420) महीड़ा—सोलंकी, (1421) महुविया—फरेजिया बनाफर, सभी एक हैं, (1422) महेचा—राठौर, (1423) महेंदवारिया—उपनाम, (1424) महेंद्रा—उपनाम।

## ( माँ-मी )

(1425) माँगलिया—गहलोत, (1426) मांजरेकर, मंजरेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1427) मांडणोत—राठौर, (1428) मांदरेचा—चौहान, (1429) मांदेडजे—चौहान, (1430) मांवानिया—पालवंश, (1431) माटिया—अरख की उपजाति, (1432) माडंगुलकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1433) माणिक्कर—उपनाम, (1434) मांडवे—उपनाम, (1435) माथकेडकर—उपनाम, (1436) मानकर—उपनाम, (1437) मानके, मानको—पवार, (1438) मारकेडुकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1439) मारू, मोरी—चौहान, (1440) मारोजी—उपनाम, (1441) मारौनी—तवरवंश, महरौली से मारौनी हुआ, (1442) मालकर—उपनाम, (1443) मालखानी—सोलंकी, (1444) मालजौनिया—राठौर, (1445) मालतुनकर—उपनाम, (1446) मालानी—चौहान, (1447) मालावत, मालाबल—राठौर, (1448) मालाबारी, माली—उपनाम, (1449) मालौत, मालोत, मंडइया—चौहान, (1450) माल्हण—चौहान, (1451) मावर—चौहान, (1452) मावानिया—चौहान, पालवंश, (1453) मावी—मौर्यवंश, (1454) माहम पडिहार, (1455) माहिल—गहलोत, (1456) माहीरे, माहुने, माहुरेमाहोरे—उपनाम, (1457) मिरसिया—राठौर, (1458)

मिर्णानिया—चौहान, (1459) मिर्यालकर—उपनाम, (1460) मिर्रालकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1461) मिलतकर, मिलतवार, मिलातवार—राठौर, (1462) मिशीनिया, उपनाम, (1463) मीठेकाले पटेरिया—उपनाम, (1464) मीण—पडिहार।

## (मू-मै)

(1465) मुंडे (मुंडे) उपनाम, (1466) मुकराना—चौहान, (1467) मुकराला—चौहान, (1468) मुचकुंदकर—उपनाम, (1469) मुड़ेचा—यदुवंशी, (1470) मुड़िया चचोरिया या रघुरइया ठाकुर—चौहान, (1471) मुदैचा—यदुवंशी, (1472) मुंदौत—गहलोत, (1473) मुराव—मौर्यवंशी, (1474) मुरारीकर—उपनाम, (1475) मुर्गिहा—उपनाम, (1476) मुहाती—राठौर, (1479) मुगोली—राठौर, (1480) मूंगा—उपनाम, (1481) मूंजा—बौरिया शाखा, (1482) मेंडतिया—राठौर, (1483) मेडवारिया—राठौर, (1484) मैथावत—गहलोत, (1485) मेधीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1486) मेनदमारनी—उपनाम, (1487) मेनवारिया—उपनाम, (1488) मैनी—चौहान, (1489) मेंदमारिया, मेंदवारिया—उपनाम, (1490) मेपाती—पवार, (1491) मेपावत—पवार, (1492) मेरतिया—राठौर, (1493) मेबलीवाल—उपनाम, (1494) मेवाफरोश—खटिक की सात जातियों में से एक, चक चिकवा की शाखा, फल विक्रेता, संदर्भ—हिंदी शब्दकोश, द्वि. सं. पृ. 120, (1495) मेवाल—उपनाम, (1496) मेहदवारिया, मेहंदवाड़िया—उपनाम, (1497) मैदरकर—उपनाम, (1498) मैनवारिया—उपनाम, (1499) मैयावत—पवार।

## (मो-मौ)

(1500) मोकाले—उपनाम, (1501) मोखरी—मौर्यवंश, (1502) मोगा—उपनाम, (1503) मोघा—उपनाम, (1504) मोचाला—सोलंकी, (1505) मोटर्सरा, मोटासी, मोटी—पवार, (1506) मोडक, मौडक—उपनाम, (1507) मोडावत—सोलंकी, (1508) मौथी—पासी की उपजाति, (1509) मोनको—पवार, (1510) मोयल—चौहान, (1511) मोर—गहलोत, (1512) मोरवाल—उपनाम, (1513) मोरी—चौहान वंश, देखे क्रमांक 1439, (1514) मोहता—गहरवार, (1515) मोहनियाँ, मोहना—गहरवार, (1516) मोहिते—मराठा, (1517) मोहिल—चौहान, (1518) मौर्यवंश—गोत्र—गौतम, पवार।

## (य)

(1519) यदि—चंद्रवंशी, (1520) यदु—चंद्रवंशी, (1521) यदुवंशी—यादव—चंद्रवंशी, यदुवंशी, गोत्र—कौडिय, शाखाएँ—उड़न, कराड़, काबा, किराड़, किरार, कैलण, गज, चूड़ासमा, जड़िचा, जस्सा, जाड़ेचा, जादौन, जाधव, पुंगलिया, प्रताबाहु, बनुर, वहा,

विदमन (विदमन), बिंधी, बुदु, भट्टी, भाटी, मुड़ेचा, मुदैचा, यदि, यदु, यादव, यादेकर, राज, रावलोत, शंघ, सखइया, सदचा, समेचा, सालवाहन, सुवाहु, सूरसेन, सोहा, हाला। (1522) याकायिथ—पवार शाखा, (1523) यादेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन।

## (र-राझ)

(1524) रंगिया—गहलोत, चक, चिकवा शाखा, रंगिया या रैय्या को खटिक की सात जातियों में से एक माना गया है, (1525) रघुवंशी—गोत्र वशिष्ठ, सूर्यवंशी खशों के वंशधर, गहरवार, शाखा के, (1526) रणमालोत—गहलोत, (1527) रतनमूलिया—गोत्र—गौतम, राठौर, रतनाकर भी यही हैं, (1528) रतनाकर—राठौर, (1529) रतनावत—कुछवाहा, (1530) रतमपारीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1531) रतवाया—उपनाम, (1532) रतवाहा—राठौरवंशी, (1533) रत्नाकर—राठौर, क्रमांक 1528 भी देखें, (1534) रथपारकर—उपनाम, (1535) रमखेरिया, रूपलेया एक हैं, सूर्यवंशी, (1536) रवडिंया—पवार, (1537) रवेड़िया—उपनाम, (1538) रहवार—पवार, (1539) रहौरा—भिलवारा, (1540) राउलकर—उपनाम, (1541) रागीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1542) राजणकर—उपनाम, (1543) राज—यदुवंशी, (1544) राजगीर—खटिक की सात जातियों में से एक, चक चिकवा की शाखा, (1545) राजपती—उपनाम, (1546) राजपाली—गहरवार, (1547) राजपासी—पासी की जाति, (1548) राजावत—कछवाहा, (1549) राजूकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1550) राजौरा, राजोरा—बड़गूजर, (1551) राजोरिया, राजौरिया—राठौर, बड़गूजर, (1552) राजोरे, राजौरे—राठौर, (1553) राजारेकर—उपनाम।

## (राठ-राह)

(1554) राठी—उपनाम, (1555) राठौर—राठौड़, गोत्र—गौतम, सूर्यवंशी गहरवार से राठौर बना शाखाएँ—ऊदावत, ऊहड, कंटेचा (कटेचा), कनवजिया, करणोत, करेचा, कवरिया, कवरीया, कांघलोत, कुपावत, कोटड़िय, खैरवार, खोखर, खोखरा, गंधीला, गढ़वासिया, गुरहा, गुराबा, गुहिल, गोगदेव, (गोददेवा), गोगादे, घवेचा, घाघरिया, चकित, चक्कित, चंद्रावत, चाचिक, चांपावत, चाहड़दे, छपनिया, छारछोलिया, छिंदक छिंदवाड़िया, छिन्नवार, छिपाड़िया, छीतमा, जगरिया, जगावत, जतावत, जयसिंह, जसेलिया, जैतमालोत, जोगसिया, जोधा, जोरा, जोवसिया, डांगी, थाजीडा, थाजीणां, दगजिरा, दागौन, दुहुरिया, दूदावत, देवराजोत, धांधल, धूमर, धूल, धूहड़िया, धोंदुल, ?खु, परवरिया, पहरोले, पातावत, पौकरणां, पौरिया, प्रभार, फालके, फिलवार, बड़गूजर, बदुरा, बुदरा, बागुण, बाडमेरा, बादेलवालावत, बीका, बीदावत, बुरसिया, भड़ेल, भदावत, भदेल, मंडला, मलवालिया, मलावत, मालावल, मिलतवार, मरसिया, मुहाती, मुहैली, मेड़वारिया, मेड़तिया,

मैरतिया, मोटनियाँ, रतनभूलिया, रतनाकर, रतवाहा, राजौर, राठौर, राड़दड़ा, रापोत रामदेव (रामदेवा), रूपावत, लादोकर, लारोवा, श्राविया, सड्डू, सींघल, सुंदु, सोहड़, हंटूडिया, हंटू दिया। (1556) राठौरकर—उपनाम, (1557) राडलकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1558) राडीक—पवार, (1559) राड़दड़ा—राठौर, (1560) राणकरा—सोलंकी, (1561) राणकिया—सोलंकी, (1562) राणाकुल—मराठा शाखा, (1563) राणावत—गहलोत, (1564) राना—उपनाम, (1565) रापोत—राठौर, (1566) रामटा—पडिहार, (1567) रामदेव, रामदेवा—राठौर, (1568) रायना—उपनाम, (1569) राया—सोलंकी, (1570) रारोकर—उपनाम, (1571) राव—उपनाम, (1572) रावकर—उपनाम, (1573) रावका—सोलंकी, (1574) रावकेर—उपनाम, (1575) रावत—चौहानवंशी, (1576) रावल—उपनाम, (1577) रावलोत—यदुवंशी, (1578) रासिया—चौहान।

## (रि-रौ)

(1579) रिकमना—पवार, (1580) रिकुंबा—पवार, (1581) रिवाड़िया, रिवारिया—उपनाम, (1582) रीजोनी भिलवारा, (1583) रूझा—सोलंकी, (1584) रूढ़कीवाल, रूड़कीवाल—उपनाम, (1585) रूणेचा—राठौर, (1586) रूद्रका—सोलंकी, (1587) रुद्रोत—गहलोत, (1588) रूपलेया—रमखेरिया—दक्षिण भारत में रूपलेया कहते हैं, (1589) रूपावत—राठौर, (1590) रूमन—उपनाम, (1591) रेगिया—उपनाम, (1592) रेवतवंशी—पवारशाखा, (1593) रेवाड़िया, रैवाड़िया—पवारवंशी, (1594) रैकवार, रेकवार, गोत्र—भारद्वाज, पवारशाखा, किवार भी इसी में हैं, (1595) रैंतगी—उपनाम, (1596) रैया (रंगिया या खलरंगा) खटिक की सात जातियों में से एक, चक चिकवा की शाखा, (1597) रैहार, रेहार—पवारवंश, (1598) रोड—उपनाम, (1599) रोहतक—कछवाहा शाखा, (1600) रोहतगी।

## (ल)

(1601) लकमार ठगेले—कछवाहा, (1602) लगेवा—उपनाम, (1603) लधा—सोलंकी, (1604) लठमार ठगेले—कछवाहा, (1605) लडूसे—उपनाम, (1606) लंथेकर—उपनाम, (1607) लवटे—उपनाम, (1608) लसनकार—उपनाम, (1609) लहंगा—सोलंकी, (1610) लहरिया, लहारया, लहेरिया—चौहान वंश, घघोरिया—लहारया, रघुरइया ठाकुर यही हैं, (1611) लाउखानी—कछवाहा शाखा, (1612) लाखावत—गहलोत, (1613) लाड खटिक—दक्षिण भारतीय सूर्यवंशी छह खटिक जातियों में एक, (1614) लादोकर—राठौर, (1615) लांदेशर—उपनाम, (1616) लारोकर, लारोकर, राठौर, (1617) लारोबा—राठौर शाखा, (1618) लाहड़—सोलंकी, (1619) लाहा—सोलंकी,

(1620) लिंग—बेलकर, लिंगवेल्लिकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1621) लिच्छवी—सूर्यवंशी लिच्छवीवंश, (1622) लुंलरा, लुल्लरा, लूलौत—पडिहारशाखा, (1623) लुसावा—गहलोत, (1624) लेमलोरां—उपनाम सूर्यवंशी लिच्छवीवंश, (1625) लोंगला—लिच्छवीवंश, (1626) लोगावात—गहलोतवंश, (1627) लोडारे—उपनाम, (1628) लोहे—उपनाम, (1629) लौदेकार—उपनाम।

## (श-श्र)

(1630) शंघ—यदुवंशी, (1631) शव्बालकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1632) शंभुकर—उपनाम, (1633) शरिपूरिजाकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1634) शापुरकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1635) शिंदे—मराठा, (1636) शिवकर—उपनाम, (1637) शिव्बाकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1638) शिशुपालवंशी डाहलिए, (1639) शीदीकेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1640) शूरसेन—बनाफर, (1641) शेडे—उपनाम, (1642) शेखावत—कछवाहा, (1643) शेगड़े—उपनाम, (1644) शेटरे—उपनाम, (1645) शेषवंश राजा मांधाता की वंशज, (1646) श्राविया—राठौर, (1647) श्रीनेत, श्रीनेतकर—निकुंभ की शाखा, गोत्र—भारद्वाज, (1648) श्रेष्ठ—पवर, (1649) श्योब्रल—कछवाहा।

## (सं-सह)

(1650) संकेचा—चौहान, (1651) संडू—राठौर, (1652) संभरवार—चौहान, (1653) सकतावत—गहलोत, (1654) सकवा—खटिक की सात में से एक जाति, खाल रंगने वाले, सोनखर लोग इनके अंग माने जाते हैं, (1655) सकूरावादी—उपनाम, (1656) सखइया—यदुवंशी, (1657) सखनपोता—कछवाहा, (1658) सगठिया—सोलंकी, (1659) सगन—चौहान, (1660) सगरावत—गहलोत, (1661) सगहिया—सोलंकी चौहानवंशी, (1662) सत्याकर—उपनाम, (1663) सथपुरकर—उपनाम, (1664) सदानंदे—उपनाम, (1667) सदापुरिया—उपनाम, (1668) सदाफल—सदाफले—उपनाम, (1669) सनवइया—उपनाम, (1670) सनवरिया, सनवारिया—पवार वंश, (1671) सपेरे, सप्रे—चौहान, (1672) सफोरा के ठगेले, (1673) समराचक—चौहान, (1674) समाम—अरब की उपजाति, (1675) समेचा—यदुवंशी, (1676) संपल, संपल्य—पवार, (1677) संभालिया, (1678) सरकिया—सोलंकी, (1679) सरग, सरगर—उपनाम, (1680) सरतिया—पवार, (1681) सरपटा—चौहान, (1682) सरब—पडिहार, (1683) सरवइया—उपनाम, (1684) सरबडिया—पवार, (1685) सरवरिया—उपनाम, (1689) सल—पवार, (1690) सलपलिया—उपनाम, (1691) सलवइया—पवार, (1692) सलावत—सोलंकी, (1693) सल्हाथिया—कछवाहा, (1694) सबई, सबाई—उपनाम, (1695) सबल—

पवार, (1696) सबारिया—उपनाम, (1697) ससेदा—गहलोत, (1698) सहरिया, साहरिया—उपनाम, (1699) सहावत—गहलोत।

## (सा-साह)

(1700) सांकला—उपनाम, (1701) सांखला—पवार, गोत्र—वशिष्ठ, (1702) सांगरिया—सोलंकी, (1703) सांगरी—चौहान, (1704) सांगवत, सांगाँवत—गहलोत, (1705) सांचोरा—चौहान, (1706) सांडवे—उपनाम, (1707) बांवड़ा—पवार, (1708) सांभरया—चौहान, गोत्र—वत्स, सांमरिया, (1709) सांभोर—पडिहार, (1710) सांवत—पवार, (1711) सावंरिया—चौहान वंश, (1712) सांइरा, साइश—चौहान सोलंकी, (1713) सागर, सागरकर—चौहान, (1714) साथेल—सोलंकी, (1715) सदानंदीकर—उपनाम, (1716) सादबा—गहलोत, (1717) साबद—पवारवंशीय, (1718) साभरकोटकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1719) सामंत—पवार, (1720) समारकोतकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1721) सारगोत—चौहान, (1722) सालवाहन—यदुवंशी, (1723) सालाउत—पवार, (1724) सालोत—पवार, (1725) साल्वेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1726) सावनकर—उपनाम, (1730) साह—उपनाम, (1731) साहजीकर, साहूजीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1732) साहरिया—उपनाम, (1733) साहेब दादाकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1734) साहेबवादकर—दक्षिण भारतीय संबोधन।

## (सिं-सू)

(1735) सिंघक—पडिहार, (1736) सिंघड़—पवार, (1737) सिंघन—पवार, (1738) सिंघोद—कछवाहा, (1739) सिंढायच—पवार, (1740) सिंधिया, सेंधव—कछवाहा, गोत्र—कौंडिय, (1741) सिंधू—परिहार, (1742) सिंह—उपनाम, (1743) सिकांड़िया—सिकारिया—गहलोत, (1744) सिमूका—पडिहार, (1745) सिरके—मराठा, (1746) सिरवारिया—सोलंकी, (1747) सिसौदे—मराठा, (1748) सींघल—राठौर, (1749) सीकरवार, सीकरवाल—गोत्र—भारद्वाज, बडगूजर (1750) सीथका—पडिहार, (1751) सीपोर—पवार, (1752) सीमेंटरी—चौहान, सोलंकी, (1753) सीलोरा—पवार, (1754) सीसोदिया—गहलोत, (1755) सुखसे—उपनाम, (1756) सुगड़ा, सुगरा—पवार, (1757) सुजातेमललकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1758) सुजानसुजानका, सुजानभुलकर—उपनाम, (1759) सुजेपात—कछवाहा, (1760) सुनकर—उपनाम, (1761) सुंदु—राठौर, (1762) सुंधा—पडिहार, (1763) सुबराणा—पडिहार, (1764) सुबल, सुबलकर—पवार, गोत्र—भारद्वाज, (1765) सुबाहु—यदुवंशी, (1766) सुभागिया—उपनाम, (1767) सुमरा—पवार, (1768) सुरकी—सोलंकी, (1769) सुरजनपोता—सोलंकी, (1770) सुरा—

कछवाहा, (1771) सुरावत—पडिहार, (1772) सूपरा—पवार, (1773) सूमायचा—पवार, (1774) सूरावक—सूरवीर—रघुवंशी, गोत्र—गार्ग्य, (1775) सूरसेन—यदुवंशी, (1776) सूरा चौहान, (1777) सूरावत—पडिहार, (1778) सूयकाल—उपनाम, (1779) सूर्यवंशी, सूर्यवंशीलाड—दक्षिण भारतीय खटिक की छह में से एक उपजाति, (1780) सूर्याकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1781) सूल—उपनाम, (1782) सूबर—चौहान।

## (से-स्व)

(1783) सेकड़ी—बड़गूजर, कछवाहा, (1784) सेखसागर—उपनाम, (1785) सेखावत बड़गूजर, कछवाहा, (1786) सैगर, सैगरवार, सैगुवार—चौहान, कछवाहा, (1787) सेजपाल—चौहान, (1788) सेजवार—चौहान, (1789) सेजवाल—चौहान, (1790) सेडगे—उपनाम, (1791) सेदमकर, सेदामकर—उपनाम, (1792) सेनरिहा—उपनाम, (1793) सेनिपाल—कछवाहा, (1794) सेपटा—चौहान, (1795) सेहाड़िया—गहलोत, (1796) सेंधव, सैंधव—कछवाहा, (1794) सेपटा—चौहान, (1795) सेहाड़िया—गहलोत, (1796) सेंधव, सैंधव—कछवाहा, गोत्र—कौडिया, (1797) सोंड़इया—सोलंकी, (1798) सोखर—कछवाहा, (1799) सोखरकर—उपनाम, (1800) सोझातिया—सोलंकी, (1801) सोणपालौद—पडिहार, (1803) सोनकर—खटिक की सात उपजातियों में से एक जाति, मेवाफरोश इसी में आते हैं। इनका संबंध सुअर से नहीं है। ये फल, सब्जी, भेड़, बकरी मांस विक्रेता तथा चक चिकवा की शाखा में आते हैं, (1804) सोनखर—ये सकबा लोगों के एक अंग हैं, सकबा की उपजाति भी कह सकते हैं, सोनकर से भिन्न माने जाते हैं, (1805) सोनगरा—चौहान, (1806) सोपले—कछवाहा, (1807) सोंमबटा, सोमबट्टा—खटिक की सात उपजातियों में एक हैं, ये बौरिया खटिक वर्ग की शाखा हैं जो रस्सी बनाते हैं, उत्तर भारत में ये लोग प्रायः नहीं रह गए हैं, (1808) सोमवंश, सोमवंशी—इनके 24 गोत्र हैं—अगस्त्य, अत्रि, कण्व, कपिल, काश्यप, कौशिक, गौतम (ब्रह्म), जमदग्नि, दुर्बासा, नारद, पाराश्वर, प्रहलाद, भारद्वाज, मकन, मालावति, मुद्गल, याज्ञवल्क्य, लोमश, वत्स, वशिष्ठ, विश्वामित्र, व्यास, शांडिल्य, शुक, (संतकुमार), और सैनक (शौनक), (1809) सोमवंशकर—उपनाम, (1810) सौरठिया, सौरतिया—पवार, (1811) सौरा—गहलोत, (1812) सोलंकी—गोत्र भारद्वाज, चौहान, अग्निवंशी, चंद्रवंशी, शाखाएँ—अचलपोता, अमावत, अलमचा, अलमेचा, उनियारिया, कंठपाहिड़ा, कटारिया, कठवाड़ा, कठूंकड़ा, कमावत, करमावत, कलचा, कलेचा, कालमोर, कुणीदरा, कुलंमोर, खाढौरा, खाररा, खालच, खालंत, खालता, सीयावत, खुड़ाना, खेराडा, खैराडा, खोडेरा, गंगावत, गोकलपाल, गोडा, चंदावत, चीता, छजावत, जुझारिया, जुझौरिया, टांटावत, टीला, डहर, डाहिया, डोकी, ढाई, ढायल, तंबकरा, तातिया,

तांतया, तुमर, तेजावत, तोगरू, थोकडेडा, धनथंध, नरहरदासका, नायावत, पीथपुरा, पीथा, पोथेपुरा, बद्धैल, बद्धेलवाल, बघेला, (बघेल), बधेले, बड़भविल, बड़सूका, वणवीरथोता, बवार, बरवोसिया, बलरामोत, बहला, बहेला, बहैला, बाघाउत, बाघेला, बालणोत, बालनोत, विकर, विकू, वीरपुरा, बुवाला, वेंमनवेमटे, वैहिल, बैंडा, भडंगरा, भरसूंडा, भला, भसुंडरा, माणगोता, भीमन, भुणगोता, भुरेता, भूहड़, भोजावतका, मलरो, महलणोत, महीड़ा, मालखानी, मोचाला, मोड़ावत, राणकरा, राणकिया, राया, रावका, रूझा, रुद्रका, लघा, लहंगा, लाहड़, लाहा, सगठिया, सरकिया, सरवहिया, सलावत, सागरिया, साईरा, साथेल, सिरवरिया, सीमेंटरी, सुरकी, सुरजनपोता, सोझतिया, सोलंकी, सोलके, स्वरूरा, हररानोत, हलावट, हासवाय। (1813) सोलंकीकर—उपनाम, (1814) सोलवे—सोलंकी (1815) सोबड़—उपनाम, (1816) सोखला—उपनाम, (1817) सौदागर, सौदागरकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1818) सौनिक—उपनाम, (1819) सौरठिया—उपनाम, (1820) सौरूकर—उपनाम, (1821) स्वरूरा—सोलंकी।

## (ह)

(1822) हंटूडिया—राठौर, (1823) हंटूदिया—राठौर, (1824) हंतागले—उपनाम, (1825) हकीमकर—उपनाम, (1826) हनूमंतकर—उपनाम, (1827) हतकाश, (1828) हतांगले, हत्तागले—उपनाम, (1829) हथकोश भिलवारे, (1830) हनुकर—उपनाम, (1831) हनुमानकर—उपनाम, (1832) हनूमंतकर—उपनाम, (1833) हव्वासी—चौहान, (1834) समरोत—पवार, (1835) हमीरिया—चौहान, (1836) हररानोत—सोलंकी, (1837) हरवार—पवार, (1838) हरागोस्कर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1839) हरापुरिया—उपनाम, (1840) हरिया—चौहान, पवार, (1841) हरियार—पवार, (1842) रीणां—चौहान, (1843) हरेर, हरेरा—पवार, (1844) हलाल—उपनाम, (1845) लावट—सोलंकी, (1846) हसगोरकर—उपनाम, (1847) हसनपुरिया—उपनाम, (1848) सिवाय—सोलंकी, (1849) हाडा—चौहान, (1850) हापड़—चौहान, (1851) हाला—यदुवंशी, (1852) हिमोलीकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1853) हिंदरे—उपनाम, (1854) हिन्नवार—सूर्यवंशी राजा दीक्षित की शाखा, गोत्र—कश्यप, (1855) हिमरखले—उपनाम, (1856) हीरेकर—उपनाम, (1857) हुँण—पवार, (1858) हुरड़—पवार, (1859) हुल—गहलोत, (1860) हुबड़—पवार, (1861) हुँवासर—गहलोत, (1862) हूडिया—पवार, (1863) हूण—पवार, (1864) हूमण—पवार, (1865) हूल—गहलोत, (1866) हेरंग—उपनाम, (1867) होत—गहलोत, (1868) होतिकेकर—दक्षिण भारतीय संबोधन, (1869) होलकर—गहरवार, (1870) होल्कर—गहरवार, (1871) हौदोकर—उपनाम।

□

# संदर्भ ग्रंथ सूची

## (अ) मूल ग्रंथ


### 1. वेद ग्रंथ

ऋग्वेद - सायण भाष्य सहित, संपादक-एफ. मैक्समूलर, 1890-92, 5 भाग, वैदिक संशोधन मंडल, पूना, 1933-51।

ऋग्वेद - सायणकृत व्याख्या, श्रीराम शर्मा द्वारा संपादित, संस्कृत संस्थान बरेली, 1962।

यजुर्वेद - सायणकृत व्याख्या, श्रीराम शर्मा द्वारा संपादित, संस्कृत संस्थान, बरेली, 1963।

सामवेद - सायणकृत व्याख्या, श्रीराम शर्मा द्वारा संपादित, संस्कृत संस्थान, बरेली, 1964।

सामवेद - श्रेडर बेनफे संपादिक, लाइपजिंग, 1848।

अथर्ववेद - सायणभाष्य सहित, बंबई, 1996।

अथर्ववेद - वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, 1985।

अथर्ववेद - संपादक, आर. रोथ और डब्ल्यू. डी. ह्विट्ने, बर्लिन, 1856, संपादक, श्रीपाद शर्मा, औधनगर, 1938।

### 2. संहिताएँ

काठक संहिता - श्रेडर संपादित, लाइपजिंग, 1990।

तैत्तिरीय संहिता - महादेव शास्त्री संपादित, मैसूर, 1884।

तैत्तिरीय संहिता - श्रीपाद शर्मा औधनगर, 1945, कलकत्ता, 1854।

मैत्रायणी संहिता - श्रेडर संपादित, लाइपजिंग, 1888।

यजुर्वेद संहिता (मूल) – सकलियत महर्षि देवरात, वाराणसी, 1973।

ऋग्वेद संहिता – पदपाठ संहिता, सायणाचार्यकृत-भाष्यसवलिता सैव हिंदी भाषा मंत्रानुवादसमन्विता), अनुवादक—पंडित रामगोविंद त्रिवेदी, चौखंबा विद्या भवनम्, वाराणसी, 1997।

वाजसनेयी संहिता – बेबर संपादित, बर्लिन 1852।

वाजसनेयी संहिता – वासुदेव शास्त्री संपादित, निर्णय सागर प्रेस, बंबई, 1929।

### 3. ब्राह्मण ग्रंथ

ऐतरेय ब्राह्मण (ऋ) – ए. हाग संपादित, बंबई 1863।

ऐतरेय ब्राह्मण (ऋ) – षड्गुरुशिष्यकृत सुखप्रदावृत्ति सहित, त्रावणकोर विश्वविद्यालय संस्कृत सीरीज, त्रिवेंद्रम।

ऐतरेय ब्राह्मण (ऋ) – सत्यव्रत सामश्रसी संपादित, कलकत्ता, 1895।

गोपथ ब्राह्मण (अथर्व) – गास्ट्रा संपादित, लीडेन, 1919।

तैत्तिरीय ब्राह्मण (कृयुजु) – लिंडेनर संपादित, मैसूर, 1921।

तांडय (पंचविंश) ब्राह्मण (साम) – वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, 1928।

शतपथ ब्राह्मण – अच्युत ग्रंथमाला कार्यालय, वाराणसी, संवत् 1994-97।

शतपथ ब्राह्मण (शुयजु) – बेबर अल्वेर्न संपादित, लाइपजिंग, 1924।

शतपथ ब्राह्मण (शुयजु) – गोविंदराम ब्रह्मानंद द्वारा अनूदित, दिल्ली, 1988।

शतपथ ब्राह्मण (शुयजु) – चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, 1967।

षड्विश ब्राह्मण (शुयजु) – चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, 1967।

सांख्यायन (कौषितीक) – निर्णय सागर प्रेस, बंबई, 1927।

### 4. आरण्यक ग्रंथ

ऐतरेय आरण्य (ऋ) – संपादक, कीथ, ऑक्सफोर्ड, 1909।

तैत्तिरीय आरण्यक (कृयजु) – आनंदाश्रम संस्कृत सीरीज, 1926।

### 5. उपनिषद् ग्रंथ

ईशावास्योपनिषद् (शुयजु) – गीता प्रेस, गोरखपुर।

*श्रौत सूत्र–*

आश्वलायन श्रौतसूत्र (ऋ) – बिब्लियोथिका इंडिका, 1879

## 6. गृह्य सूत्र

आपस्तंब गृह्यसूत्र – सुदर्शनाचार्य की टीका सहित, मैसूर गवर्नमेंट संस्कृत लाइब्रेरी सीरीज।

आश्वलायन गृह्यसूत्र (ऋ) – नारायण की टीका सहित, निर्णय सागर प्रेस, बंबई, 1894।

पारस्कर गृह्यसूत्र (शुयजु) – गुजराती प्रेस संस्करण, 1917।

## 7. धर्मसूत्र ( स्मृतियाँ )

आपस्तंबस्मृति – हरदत्त टीका, 1910।

गौतम धर्मसूत्र – हरदत्त टीका सहित, आनंदाश्रम संस्कृत सीरीज, 1910।

गौतमस्मृति – सेक्रेड बुक अब दि ईस्ट, ऑक्सफोर्ड, 1897।

नारदस्मृति – कल्याण भट्ट, 1940, डॉ. जाली द्वारा संपादित।

पाराशस्मृति – माधव, 1940, बंबई संस्कृत माला संस्करण।

मनुस्मृति – टीका. कुल्लू भट्ट, मेधातिथि तथा वूल्हर, वर्ष 1910, पूना, कलकत्ता 1932, बांबे 1946।

याज्ञवल्क्यस्मृति – विश्वरूप-त्रिवेंद्रम आनंदाश्रम पूना, माघशास्त्री-निर्णय सागर संस्करण, त्रिवेंद्रम, 1917।

याज्ञवल्क्यस्मृति – संपादक घरपुरे, बंबई, 1926, आनंदाश्रम संस्कृत सीरीज, पूना, 1903-04।

वशिष्ठस्मृति – वशिष्ठ धर्मसूत्र मातृदत्त, 1905, आनंदाश्रम स्मृति, संग्रह, मैसूर।

विष्णु धर्मसूत्र – संपादक, जोली, कलकत्ता, 1881, मातृदत्त, बंगाल एशियाटिक सोसाइटी।

विष्णुस्मृति – बीस स्मृतियाँ, बरेली, 1966।

वृहस्पतिस्मृति – डॉ. जाली, बड़ौदा, 1941।

व्यासस्मृति – धर्मशास्त्र संग्रह, खंड 2, कलकत्ता, 1876।

हिरण्येकिश-धर्मसूत्र – मातृदत्त, 1927, आनंदाश्रम, पूना

## 8. पुराण ग्रंथ

अग्निपुराण – संपादक—राजेंद्रलाल मिश्र, बिब्लिओथिका इंडिका, कलकत्ता, 1873-79।

कूर्मपुराण – संपादक—नीलमणि मुखोपाध्याय, बिब्लियोथिका इंडिका, कलकत्ता, 1890।

गरुड़पुराण – खेमराज श्रीकृष्णदास, बंबई, 1906।

देवी भागवत पुराण – बिब्लियोथिका इंडिका, 1903।

नारदपुराण – आनंदाश्रम, पूना, 1910।

नीलमत पुराण – संपादक—डि व्रीजे, लाहौर, 1924।

पद्मपुराण – संपादक—बी.एन. मांडलिक, 4 भाग, आनंदाश्रम संस्कृत सीरीज, पूना, 1893-94।

## 9. निबंध साहित्य

गृहस्थरत्नाकर – चंडेश्वर, बिब्लियोथिका इंडिका, 1925।

संस्काररत्नमाला – संपादक—एस. श्रीनिवासाचार्य, मैसूर, 1914-21।

शुक्रनीतिसार – मद्रास, 1882, अंग्रेजी अनुवाद—वी.के. सरकार, इलाहाबाद, 1923।

## 10. साहित्यिक कृतियाँ

अभिज्ञानशाकुन्तलम् – कालिदास, चौखंभा संस्कृत सीरीज।

कुमारसंभव – कालिदास, निर्णयसागर प्रेस, बंबई, 1927।

रामचरितमानस – तुलसीदास, ठाकुर प्रसाद पुस्तक भंडार, वाराणसी 2005।

## 11. ऐतिहासिक ग्रंथ

कल्हण – राजतरंगिणी, एम.ए. स्टीन, दो भाग, 1900, वाराणसी, 1961, आर.एस. पंडित, 1935।

कौटिल्य – कौटिल्य अर्थशास्त्र, संपादक—आर. शामशास्त्री, मैसूर, 1909, 1929, आनंदाश्रम, पूना।

चंदवरदायी – पृथ्वीराजरासो, संपादक—श्यामसुंदरदास, वाराणसी, 1904।

बाणभट्ट – हर्षचरित, अनुवाद—कावेल और टामस, 1897।

राजशेखर – कर्पूरमंजरी, कलकत्ता, 1948।

संध्याकर नंदी – रामचरित, संपादक, रमेशचंद्र मजूमदार, राजशाही, 1931।

## 12. बौद्धसाहित्य

अंगुत्तरनिकाय – पालि, भाग 4, सहसंपादक-भिक्षु जगदीश कश्यप, बिहार, 1960।

जातक – (हिंदी अनुवाद—भदंत कौसल्यायन) प्रयाग सं. 1946-2014।

दीघनिकाय – संपादक, रीज डेविड्स और ई. कार्पोन्टर, लंदन,

1890-1811, हिंदी अनुवाद—राहुल सांकृत्यायन, सारनाथ, वाराणसी, 1936।

धम्मपद अट्ठकथा – अंग्रेजी अनुवाद—ई. डब्ल्यू. बरलिंगम, लंदन, 1969।

संयुत्त निपात – संपादक—लियोन फ्रियर और मिसेजू रीज डेविड्स, लंदन, 1884।

## 13. जैन साहित्य

आचारांग सूत्र – अनुवाद—जेकोबी, 22, ऑक्सफोर्ड, 1884।

मेरुतुंग – प्रबंध चिंतामणि, मुनि जिन विजय, अंग्रेजी अनुवाद—सी.एच. टानी, हिंदी अनुवाद—हजारीप्रसाद द्विवेदी, 1933, 1940।

हलायुध – अभिधानरत्नमाला, लंदन, 1861।

हेमचंद्र – अभिधानचिंतामणि, संपादक—हरगोविंददास बेचरदास और मुनि जिन विजय, भावनगर, 1914, 1919।

हेमचंद्र राय – परिशिष्ट पर्वण (संपादित) एच. जैकोबी, कलकत्ता, 1921।

## (ब) समीक्षा-ग्रंथ (हिंदी)

आर्य – लाला ज्ञानचंद वर्णव्यवस्था का वैदिक रूप विजय गुजरात फाउंडेशन, नई दिल्ली, 1994।

डॉ. कृष्णगोपाल – बाबा साहब व्यक्तित्व और विचार (सुरुचि प्रकाशन, झंडेवालान, नई दिल्ली)।

गोयल श्रीराम – नंद साम्राज्य का इतिहास, मेरठ, 1992।

ग्रोवर – वी.एल. एवं यशपाल—आधुनिक भारत का इतिहास (एस. चंद्र एंड कंपनी, दिल्ली 2000)।

चौधरी राधाकृष्ण – प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पटना, 1989।

चौबे और श्रीवास्तव – मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, लखनऊ, 1979।

तोमर देवेंद्रपाल सिंह – हिंदू अछूत जातियों में छुआछूत (कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, दिल्ली)।

दिनकर, डॉ. रामधारी सिंह – संस्कृति के चार अध्याय (लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 2004)।

पाठक, डॉ. विशुद्धानंद – उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास, लखनऊ,1982।

पांडेय, गोविंदचंद्र – बौद्धधर्म के विकास का इतिहास, लखनऊ, 1963।

भदकारिया – ठा. श्यामलाल (भदौरिया) : सूर्यवंशी 360 गोत्रिय क्षत्रिय वंशावली, ग्वालियर, मुरार।

भारती, परमानंद – खटिक क्षत्रिय वंशावली (श्रीलक्ष्मी प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर, देवली की छावनी)।

दने स्व. श्री देवाजी राव – खटिक समाजाचा मूलवंशावली इतिहास।

माथुर, विजयेंद्र कुमार – ऐतिहासिक स्थानावली (राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1990)।

मिश्र, जयशंकर – प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास (बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना)।

मोतीचंद्र – प्राचीन भारतीय वेशभूषा, इलाहाबाद, सं. 2007।

रिवाड़िया मामचंद – खटिक समाज का इतिहास, 2000।

लोहिया, राममनोहर – जातिप्रथा, राममनोहर लोहिया समता विद्यालय न्यास, हैदराबाद, 1964।

विद्यालंकार निरुपण – हिंदू धर्मशास्त्रों में शूद्रों की स्थिति, शास्त्री प्रकाशन, मेरठ, 1975।

शर्मा, द्वारका प्रसाद – अनुशासनपर्व, संपादित—व्यास · कृष्ण दैपायम, इलाहाबाद, 1930।

शर्मा, ब्रह्मदेव – आदिवासी विकास एक सैद्धांतिक विवेचन (मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1980)।

शर्मा, रामशरण – पूर्वकालीन भारतीय समाज तथा अर्थव्यवस्था पर प्रकाश, दिल्ली, 1977।

शास्त्री राजनाथ सोनकर – खटिक जाति की उत्पत्ति और विकास (कुशल पब्लिकेशंस एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स, वाराणसी, 2005)।

शास्त्री, डॉ. विजय सोनकर – हिंदू वैचारिकी : एक अनुमोदन (विश्व हिंदू परिषद् संकटमोचन, नई दिल्ली, 2006)।

श्रीवास्तव, प्रो. अशोक – दिल्ली सल्तनत का उत्थान और पतन (712– 1526 ई.) (पूर्वांचल प्रकाशन, गोरखपुर, 1998)।

सावरकर, विनायक दामोदर – हिंदुत्व के पंच प्राण, अनु.—विक्रम सिंह, हिंदी साहित्य सदन, नई दिल्ली, 2001।

सिंह, परमानंद – बौद्ध साहित्य में भारतीय समाज म.गां. काशी विद्यापीठ, वाराणसी, 1996।

सोनी, सुरेश – हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्रोत (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2003)।

काणे, पी.वी. – धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग-1, अनु.—अर्जुन काश्यप चौबे, हिंदी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ 1962।

गैरोली, बी. – भारतीय धर्मशाखाएँ और उनका इतिहास, सुरभा प्रकाशन, चौखंभा, वाराणसी, 1988।

मिश्र, गिरिजाशंकर – अनु. वाकाटकलेख (जे.एफ. फ्लीट : गुप्त इंसक्रिप्शंस), जयपुर 1974।

## (स) समीक्षा ग्रंथ (अंग्रेजी)

Abraham, p. – Aambedkar's contribution for Economic Pianning and Development. Its Relevance, Kanishka Publishers, Distributeors, New Delhi, 2002.

Aiyangar, K.V.R. – Aspects of Ancient Indian Economic Thought, Banaras, 1934.

Alexander, J.W. – Economic Geograph, New Jersey, 1963.

Alteker, A.S. – The Positionof Women in Hindu Civilization, Banaras, 1956.

अंबेडकर, बी.बार. – कास्ट इन इंडिया, विकास पब्लिकेशंस, न्यू देहली 1917।

अंबेडकर, बी.आर. – ऐनीहिलेशन ऑफ कास्ट, भीम पत्रिका पब्लिकेशंस, जालंधर सिटी, 1945।

Amberkar, B.R. – The Untouchables, Shravasti, Balaampur, Jetavan Mahavihar, 1969.

आजाद, ए.के. – इंडिया विंस फ्रीडम, ओरिएंटल लोंगमैन, हैदराबाद, 1988।

एन्डरसन, जे.डी. – पीपल विंस इंडिया, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1913।

बर्न, आर. – 'कबीर, कबीरपंथीज' एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एंड ऐथिक्स, जेम्स होस्टिंग्स (स.) चार्ल्स स्क्रिवनर एंड सन्स, न्यूयॉर्क (यू.एस.ए.) 1981।

बेली, एफ.जी. – कास्ट एंड इकनोमिक फ्रंटियर, मानचेस्टर, यूनिवर्सिटी प्रेस, मानचेस्टर (यू.के.) 1957।

Bahadur, K.P. – Caste, Tribe and Cultue of Ancient India, 1978.

Bandopadhyaya, N.C. – Economic Life and Progress in Ancient India, Calcutta, 1945.

Banerje, J.N. – Development of Hindu IconoGraphy, Calcutta, 1941A

Barth, A. – Religion of India, New Delhi, 1969.

Barua, K.L. – Early History of Kamarupa, Shillong, 1933.

Beal, S. – Buddhist Records of the Western World,

Translation from Chinese-Hiuen Tsang.
Bels. R. – The Social Order, New York, 1957.
Bliot, C. – Hinduism and Buddhism, 3 Vols, London.
Briggs, J. – History of the Rise of Muham Madan Power, 4 Vols, Calcutta, 1910.
Buhler, G. – The Laws of manu, Clarendon Press, Oxford, 1886.
Carpenter J.e. – Theism in Medieval India, London, 1921.
Charleswoth, M.P. – Trade Routes and Commerce of the Roman Empire, London, 1921
Coomaraswamy, A.K. – History of Indian Indonesan Art, London, 1927.
Cooper, E. – The Harim and the Purdah, London, 1915.
Dube, S.C. – Indian Village, 1950.
Dumont, L. and Pocock, D. – contributions ot Indian Sociology, Paris, 1958.
Elphinstone, M. – History of India, London, 1857.
Farquar, J.N. – An Outline of the Religious Litera ture of India, Oxford, 1920.
Faruki, Z. – Aurangzeb and His Times, Bombay, 1935.
फलिप, जी.ई. – आऊट कास्ट्स होप, यूनाइटेड काउंसिल फॉर मिशिनरी एजूकेशन, लंदन, 1912।
Ganguli, D.C. – History of the Paramar Dynasty Dacca, 1933.
Ghoshal, U.N. – A History of Indian Political Ideas, Oxford, 1959.
Ghurye, G.S. – Caste and Class in India, New York, 1950.
Gode, P.K. – Studies in Indian Literary History, Bombay, 1953.
Gupta, K.M. – The Land System in South India Between C. 800 A,D, and 1200 A.D., Lahore, 1933.
Hazra, R.C. – Studies in the Puranic Records of Hindu Rites and Customs, Dacca, 1940.
Jolly, J. – Hindu Law and Custom, Calcutta, 1968.
करुणाकरन, के.पी. – रिलीजन एंड पालिटिकल अवेकनिंग इन इंडिया, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1965।
कामले, एन.डी. – द शैड्यूल कास्ट्स, न्यू देहली, 1982।
लायल, सर ए.सी. – एशिटिक स्टडीज-रिलीजस एंड सोशल (भारतीय पुनर्मुद्रण 1976) कास्मो पब्लिकेशंस, न्यू देहली, 1882।
Legge, J.H. – Record of the Buddhist Kingdoms, being and Account of the Chinese Monk Fahiens Travel, London, 1896.

Majumdar, R.C. – Corporate Life in Ancient India, Calcutta, 1922.

Macdonell, A.A. – History of Sanskrit Literature, London, 1928.

Max Weber – The Theory of Social and Economic Organization, New York, 1967.

मैरट, मैककिम (स.) – विलेज इंडिया, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो।

Mirashi, V.V. – Inscription of the Kalachuri-Chedi Era, 1955.

Mookerji, R.K. – Ancient Indian Education, London, 1951.

Jiyogi, R. – The History of Gahadwal Dynasty, Calcutta, 1959.

Nainer, S.N. – Arab Grographers Knowledge of Southern India, Madras, 1942.

पन्नीकर, के.एम. – एशिया एंड वैस्टर्न डोमीनेंस, ऐलेन आलविन एंड कं. लंदन, 1955।

Pandey, L.P. – Sun Worship in Ancient India, 1971.

Pram Nath – A Study in the Economic Condition of Ancient India, London, 1924.

Radhakrishan, S. – Indian Pholosophy, 2 Vols, 1923-1927.

Rawlinson, H.G. – Intercourse between India and Western World, London 1916.

Rhys Davids – Buddhist India, London, 1903.

Risley, H.H. – The People of India, London, 1915.

Sharma, B.N. – Social and Cultural History of Northern India (1000-1900), 1932.

Shah, V.P. (Ed.) – Removal of Untouchability Dept. Gujarat University, Ahmedabad, 1980.

Sinha, K.K. – Excavations at Sravasti, 1967.

Subba Rao, N.S. – Economic and political Conditions in Ancient India, Mysore, 1911.

Thapar R. – A History of India Vol. IIm Pelican Book, London, 1966.

Tripathi, S.D. – Transformation of Agrarian Structure of India-1765-1990 (With special reference to Peasant Move ments in India) BHU, Varanasi, 1991.

Wheeler, Sir R.E.M. – The Indus Civilisation, London 1953.

## (द) समीक्षा ग्रंथ (फारसी उर्दू)

Abdul Haqq Dehlavi – Akhbaril Akhiar, Delhi, 1889.

Abu Yusuf – Kitabul Kharaj, Bulaq, 1886.

अबुल फजल अल बेहकी – तारीखुस सुबुक्तगीन, उद्धृत इलियट एवं डाउसन (मूल

संपादक) भारत का इतिहास, अनुवादक—मथुरा लाल शर्मा, भाग–2, आगरा, 1974।

Beiggs, J. – Tarikh-i-Firishta of Muhammad Qasim, 4 Vols, London 1827-29.

## (य) विदेशी यात्रा-वृत्तांत

Sachau, E.C. – Alberuni's India, 2 Vols, London 1888.

Gibb, H.A.R. – Trevels of Ibna-Batuta, London, 1921.

Baal, S. – Life of Hiuen Tsang, London, 1911.

## (र) निबंध

जेलट, ऐलीनर – 'लौगमैन द यूज ऑफ पॉलिटिकल मींस' कास्ट इन इंडियन पालिटिक्स, रजनी कोठारी (स.) में ओरियंटल लौगमैन नई दिल्ली (द्वितीय संस्करण), 1973।

पांडे, वी.के. – 'गांधीयन एप्रोच टू सोशल टेंशन' गांधी मार्ग, खंड-10, गांधी पीस फाउंडेशन, न्यू देहली।

भगत, एम.जी. – द अनटचेबिल क्लास ऑफ महाराष्ट्र जनरल ऑफ द यूनिवर्सिटी ऑफ बांबे, वाल्यूम–1, पार्ट–1, 1935।

पनिक्कर, के.एन. – द स्ट्रक्वर ऑफ पनिशमेंट : मनुस्मृति रीएग्जमिंड, डॉ. निरुपण विद्यालंकार अभिनंदन ग्रंथ 1984, मेरठ विश्वविद्यालय, संस्कृत अध्यापक परिषद्, मेरठ।

शेबरिंग, जेम्स.एम. – 'द फारमेशन ऑफ न्यू कास्ट्स : ए प्रोबेविल केस प्रॉम नार्थ इंडिया' अमेरिकन एंथ्रोपोलोजिस्ट, 74-587-600।

शेराक, जे.ए. – कास्ट एंड क्रिश्चयनिटी, इंडियन चर्च क्वार्टरली, रिव्यू 8, (अप्रैल, 1892)।

□□□

सामरस्यविधानाय यतमानो बुधो महान्।
चन्द्रमौलिकृपादृष्ट्या वर्धतामभिवर्धताम्॥

'उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्' इति सूक्तिं वेदवाक्यवद्धारयन्तो महान्तः लोकहितायैव सर्वथा यतमाना विलसन्ति। तत्पथे अस्माकं प्रियशिष्यः डॉ. विजय सोनकर शास्त्री सामाजिकसामरसतादर्शनाय ग्रन्थारचनमातनोदिति ज्ञात्वा नितरां मोमुद्यते चेता नः। तदिदं ग्रन्थरत्नं सम्पूर्णस्य समाजस्य सर्वांगीणविकासाय तथा राष्ट्रिय-ऐक्याय च स्वीयं योगदानं प्रकटीकुरुते। ग्रन्थकर्ता सामाजिकराजनैतिकक्षेत्रेषु समार्जितेन स्वीयेन वैदुष्येण तदिदं ग्रन्थरत्नं निरमादिति सुष्ठुवगम्यते।

वैदिककालादारभ्य अद्य यावत् हिन्दूखटिकजातेः सम्पूर्णजीवनयात्रा अत्र चित्रिता। तदिदं ग्रन्थरत्नं श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यम्बासमेत श्रीचन्द्रमौलीश्वरकृपया एवमेव समाजसामरस्यसौरभं प्रसारयन्ती विलसेदिति तन्निर्वाहकाश्च ऐहिकामुष्मिकश्रेयःपरम्परा अवाप्नुयुरिति चाशास्महे।

सामाजिक समरसता का प्रयास करने वाले लोग महान हैं।
उनकी प्रभु चन्दमौली की कृपा दृष्टि से अभिवृद्धि हो॥

''उदार चरित्र वाले लोगों को पूरी पृथ्वी ही कुटुम्ब एवं परिवार की भाँति है।'' इस सूक्ति के अनुसार महान पुरुष संसार का संवर्धन करते हैं अथवा करें। संसार के कल्याण के लिए हर तरह से प्रयास करने वाले सुशोभित होते हैं। सन्मार्ग से तत्पर मेरे शिष्य डॉ. विजय सोनकर शास्त्री ने सामाजिक समरसता दर्शन हेतु ग्रन्थ की रचना की है। ऐसा विचार कर मेरा मन अत्यंत प्रफुल्लित है। उनका यह ग्रंथ संपूर्ण समाज के सर्वांगीण विकास तथा राष्ट्रीय एकता के लिए अपने योगदान को प्रकट करता है। ग्रंथकर्ता ने सामाजिक राजनैतिक क्षेत्रों में लब्धप्रतिष्ठित होकर अपने इस ग्रन्थ का निर्माण किया है। ऐसा सम्यक् निश्चय होता है।

वैदिक काल से लेकर आजतक हिंदू खटिक जाति की जीवन यात्रा इस ग्रंथ में वर्णित है। उनका यह ग्रंथ रत्न महात्रिपुर सुंदरी के सहित चंद्रमौलीश्वर की कृपा से इसी तरह सामाजिक समरसता की सुगंध का प्रसार देशभर में करता रहे, सुशोभित होता रहे।

ग्रंथकर्ता ऐहिक, पारलौकिक कल्याण परंपरा को प्राप्त करें, ऐसी मैं अभिलाषा करता हूँ एवं आशीर्वाद देता हूँ।

॥ नारायणस्मृतिः॥

जगद्गुरु श्री शंकराचार्य
स्वामी जयेन्द्र सरस्वतिजी महाराज
श्री काञ्चिकामकोटि पीठाधिपति, काञ्चिपुरम्

**लेखक की अन्य पुस्तकें**

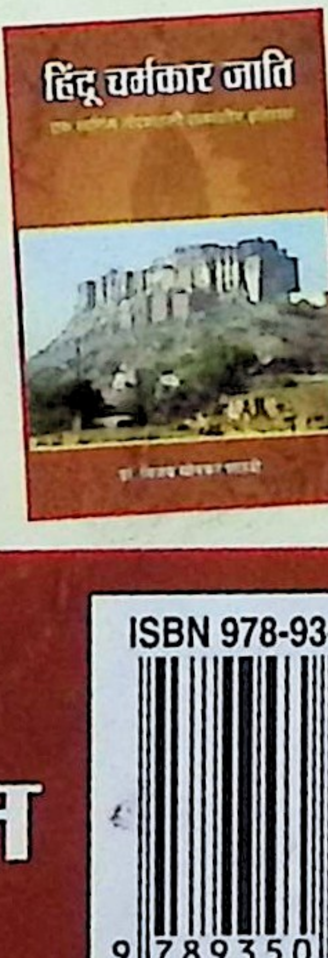

ISBN 978-93-5048-567-5

प्रभात प्रकाशन
ISO 9001 : 2008 प्रकाशक
www.prabhatbooks.com

₹ 500/-